ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

शशि कुमार उर्फ शशि कुमार बेलदार

cuke

भारत कोकिंग कोल लिमिटेड एवं अन्य

W.P. (S) No. 5376 of 2011. Decided on 6th January, 2014.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ VI का खंड 9.5.0(iii)—एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ VI के खंड 9.5.0 (iii) में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो अवयस्क के लिए 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक जीवित रोस्टर पर स्वयं को रखने के लिए आवेदन देना आवश्यक बनाता है–जब एक बार मृतक कर्मचारी के पुरुष आश्रित का नाम सेवा पुस्तिका में पाया गया है और उसे जीवित रोस्टर पर रखा गया है, एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ में उपदर्शित ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है कि मृतक कर्मचारी के ऐसे पुरूष आश्रित द्वारा अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन दिया जाना चाहिए–प्रत्यर्थीगण को याची के दावा पर नया निर्णय लेने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 8 से 11)

निर्णयज विधि.–(2007) 8 SCC 549—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Rajesh Kumar, Om Prakash Prasad, For the Petitioner; M/s Anoop Kr. Mehta, Amit Kumar Sinha, For the Respondents.

आदेश

दिनांक 12/16.4.2011 के आदेश को चुनौती देते हुए याची वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया है।

2. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

3. याची के पिता की मृत्यु दिनांक 17.8.2004 को हो गयी। अपने पिता की मृत्यु के समय पर याची लगभग 14 वर्ष का था। धनीय लाभ प्रदान करने अथवा विकल्प में अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा दिनांक 10.8.2007 के आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। याची डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5418 वर्ष 2010 में इस न्यायालय के पास आया और डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 5418 वर्ष 2010 में पारित दिनांक 3.1.2011 के आदेश द्वारा दिनांक 10.8.2007 के आक्षेपित आदेश को प्रत्यर्थी सं॰ 4 को याची के दावा पर विचार करने एवं सकारण आदेश पारित करने के निर्देश के साथ अभिखंडित कर दिया गया था।

4. दिनांक 3.1.2011 को इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश के अनुसरण में दिनांक 12/16.4.2011 का आदेश पारित किया गया है, जिसे वर्तमान कार्यवाही में याची द्वारा चुनौती दिया गया है।

5. यह दृष्टिकोण अपनाते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है कि चूँकि याची का अभ्यावेदन 18 माह की विहित अवधि के परे दाखिल किया गया था, याची का दावा सही प्रकार से अस्वीकार किया गया है।

6. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि मृतक कर्मचारी के आश्रित का नाम अग्रसारित करने का कार्मिक प्रबंधक/क्षेत्रीय प्रबंधक को निर्देश देने वाले प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के दिनांक 6.1.2004 के पत्र का विषय वस्तु प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ पर बाध्यकारी होगा। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार (एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰) के खंड 9.5.0 सह-पठित

दिनांक 6.1.2004 के पत्र के निबंधनानुसार जीवित रोस्टर पर याची का नाम रखना और वयस्कता प्राप्त करने पर उसको नियुक्ति का प्रस्ताव देना प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ का कर्तव्य था और यदि कार्यरत रहते हुए कर्मचारी की मृत्यु हो जाती है, अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करते हुए पृथक आवेदन देना आश्रित के लिए विधि में आवश्यक नहीं है। इस प्रकार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि मात्र इसलिए कि अनुकंपा आधार पर अनुकंपा नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन 18 माह की अवधि के परे दिया गया है, प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा याची का दावा का अस्वीकार नहीं किया जा सकता था।

7. उक्त के विरुद्ध, प्रत्यर्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अमित कुमार सिन्हा ने प्रतिशपथ पत्र में अपनाए गए दृष्टिकोण को दोहराया और दिनांक 12/16.4.2011 के आक्षेपित आदेश का समर्थन किया। उन्होंने निवेदन किया है कि अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति का मामला एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के प्रावधानों द्वारा विनियमित किया जाएगा और चूँकि अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन देने के लिए 18 माह की अवधि विहित की गयी है, प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा सही प्रकार से याची का दावा अस्वीकार किया गया है। विद्वान अधिवक्ता ने **''मोहन महतो बनाम सेंट्रल कोल फील्ड लि॰ एवं अन्य,'' (2007)8 SCC 549,** में दिए गए निर्णय पर यह प्रतिवाद करने के लिए विश्वास किया है कि अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन युक्तियुक्त अवधि के भीतर दिया जाना चाहिए।

8. एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ VI के खंड 9.5.0 (iii) का परिशीलन उपदर्शित करता है कि खान दुर्घटना के कारण अथवा किसी अन्य कारण से हुई मृत्यु के मामले में और चिकित्सीय अस्वस्थता के मामले में यदि मृतक कर्मचारी अपने पीछे 12 वर्ष की आयु से उपर का पुरुष आश्रित छोड़ गया है, पुरुष आश्रित को जीवित रोस्टर पर रखा जाएगा और उसके 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर उसकी दक्षता एवं अर्हता के अनुरुप नियोजन प्रदान किया जाएगा। दिनांक 6.1.2004 के पत्र द्वारा अनुदेश जारी किए गए हैं जिसके अधीन संबंधित इकाई/क्षेत्र के कार्मिक अधिकारी/कार्मिक प्रबंधक को कंपनी के पे-रॉल से मृतक कर्मचारी का नाम विलोपित करने के लिए कदम उठाने के लिए और मृतक कर्मचारी के आश्रित के नाम को मुख्यालय को सूचित करने के लिए जिम्मेदारी दी गयी है।

9. यद्यपि, मृत्यु अथवा नि:शक्तता की तिथि से मृतक कर्मचारी के आश्रितों द्वारा आवेदन देने के लिए 18 माह की अवधि विहित की गयी है, खंड 9.5.0 (iii) के अधीन प्रावधान और दिनांक 6.1.2004 के पत्र का संयुक्त पठन उपदर्शित करेगा कि प्रत्यर्थी प्राधिकारी अर्थात् संबंधित क्षेत्र का कार्मिक अधिकारी/कार्मिक प्रबंधक मुख्यालय को मृतक कर्मचारी के आश्रितों का नाम तुरन्त सूचित करने के कर्तव्य के अधीन है और इस प्रकार मृतक कर्मचारी के पुरुष आश्रित का नाम स्वत: जीवित रोस्टर में प्रविष्ट होगा यदि वह पात्र है। ऐसा प्रावधान बनाने का प्रयोजन यह प्रतीत होता है कि मृतक कर्मचारी का परिवार अनभिज्ञता के कारण पीड़ित नहीं हो। एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ VI के प्रावधान के अधीन 12 वर्ष की आयु से उपर मृतक कर्मचारी के पुरुष आश्रित का नाम जीवित रोस्टर पर रखा जाता है और मैं आक्षेपित आदेश में अथवा प्रतिशपथ पत्र में ऐसा कोई प्रावधान नहीं पाता हूँ जिसके द्वारा और जिसके अधीन मृतक कर्मचारी के पुरुष आश्रित को जीवित रोस्टर पर रखे जाने के लिए आवेदन देने की आवश्यकता है। एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ VI के खंड 9.5.0 में ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक जीवित रोस्टर पर स्वयं को रखने के लिए आवेदन देना अवयस्क के लिए आवश्यक

बनाता है। एन० सी० डब्ल्यू० ए० VI में ऐसे अभिव्यक्त प्रावधान की अनुपस्थिति सुविचारित और आशयपूर्ण प्रतीत होती है। अत:, 18 माह के भीतर आवेदन देने के लिए मृतक कर्मचारी के ऐसे पुरुष आश्रित पर अतिरिक्त शर्त रखना, जैसा दिनांक 6.1.2004 के पत्र में अंतर्विष्ट है, पक्षों के आशय के विपरीत होगा जो एन० सी० डब्ल्यू० ए० VI के खंड 9.5.0 में परिलक्षित है। जब एक बार मृतक कर्मचारी के अवयस्क पुरुष आश्रित का नाम सेवा पुस्तिका में पाया गया है और उसे जीवित रोस्टर पर रखा गया है, एन० सी० डब्ल्यू० ए० में उपदर्शित ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है कि मृतक कर्मचारी के ऐसे पुरुष आश्रित द्वारा अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन दिया जाना चाहिए। यद्यपि दिनांक 6.1.2004 के पत्र में, अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन देने के लिए 18 माह की अवधि उपदर्शित की गयी है, मेरे मत में, यह अवयस्क पुरुष आश्रित के मामले में आकृष्ट नहीं होता है जिसका नाम मृतक कर्मचारी की सेवा पुस्तिका में स्थान पाता है। अठारह माह के भीतर आवेदन देने की आवश्यकता ऐसे मामलों में आकृष्ट होती है जहाँ (a) आश्रित 18 वर्ष की आयु के परे का है, अथवा (b) मृतक कर्मचारी के सेवा पुस्तिका में आश्रित का नाम स्थान नहीं पाता है। दिनांक 6.1.2004 के पत्र के अधीन प्रावधान, जो 12 वर्ष की आयु के उपर के पुरुष आश्रित के लिए अनुकंपा नियुक्ति के लिए 18 माह के भीतर आवेदन देना आवश्यक बनाता है, एन० सी० डब्ल्यू० ए० VI के खंड 9.5.0 (iii) के अधीन अंतर्विष्ट प्रावधान के विपरीत है। एन० सी० डब्ल्यू० ए० ने सांविधिक प्रावधान का दर्जा अर्जित किया है। प्रत्यर्थी कंपनी, भारत सरकार और कर्मकार यूनियन के बीच त्रिपक्षीय करार हस्ताक्षरित किया गया था। इस प्रकार, एन० सी० डब्ल्यू० ए० में अंतर्विष्ट प्रावधान को करार के अन्य पक्षों की सहमति के बिना उपांतरित अथवा संशोधित नहीं किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, कार्यपालिका आदेश द्वारा एन० सी० डब्ल्यू० ए० के प्रावधान को केवल पूरित और/अथवा स्पष्ट किया जा सकता है। किंतु, 18 माह के भीतर आवेदन देने की आवश्यकता, जैसा दिनांक 6.1.2004 के पत्र में अंतर्विष्ट है को स्पष्टकारी नहीं कहा जा सकता है जहाँ तक यह 12 वर्ष की आयु से उपर के पुरुष आश्रितों से संबंधित है जिसके नाम को कार्मिक अधिकारी/कार्मिक प्रबंधक द्वारा मुख्यालय को अग्रसारित करने की आवश्यकता है। एन० सी० डब्ल्यू० ए० VI का खंड 9.5.0 (iii) ऐसा प्रावधानित नहीं करता है कि 12 वर्ष की आयु से उपर के पुरुष आश्रित को भी आवेदन देना चाहिए। मेरे मत में, यदि मृतक कर्मचारी की सेवा पुस्तिका में पुरुष आश्रित का नाम दर्ज किया गया है और वह 12 वर्ष की आयु से अधिक का है, चूँकि स्थानीय अधिकारी आश्रित के नाम को मुख्यालय को संसूचित करने के कर्तव्य के अधीन है, कर्मचारी की मृत्यु के 18 माह के भीतर नियुक्ति इप्सित करने वाला पृथक आवेदन देना पुरुष आश्रित के लिए विधि में आवश्यक नहीं है। कई मामलों में, पुरुष आश्रित मृतक कर्मचारी की मृत्यु के 18 माह के भीतर 18 वर्ष की आयु प्राप्त नहीं कर सकता है।

10. यद्यपि, प्रत्यर्थी बी० सी० सी० एल० ने सही प्रकार से अनुकंपा नियुक्ति के लिए आवेदन देने की अवधि प्रावधानित किया है जो यहाँ उपर गौर किए गए मामलों में प्रयोज्य होगा, किंतु उद्देश्य जिसके लिए समय सीमा विहित की गयी है विफल हो जाएगा यदि कृत्रिम टेक्निकल आधारों पर अनुकंपा नियुक्ति से इनकार किया जाता है। मैं पाता हूँ कि याची के दावा को विलंबित के रूप में स्वीकार करने वाला दिनांक 10.8.2007 का पूर्व आदेश इस न्यायालय द्वारा डब्ल्यू० पी० (एस०) सं० 5418 वर्ष 2010 में अभिखंडित कर दिया गया था और इसलिए, इसी आधार पर याची द्वारा दाखिल अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा अस्वीकार नहीं किया जा सकता था।

11. अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन यथासंभव शीघ्र विनिश्चित करना होगा। किंतु, याची के आवेदन को कई वर्षों तक लंबित रखा गया था और इस न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप

के बाद भी उक्त आवेदन इस आधार पर अस्वीकार कर दिया गया है कि यह 18 माह की अवधि के परे दिया गया था। मैं याची के दावा को अस्वीकार करने के लिए दिनांक 12/16.4.2011 के आक्षेपित आदेश में कोई औचित्य नहीं पाता हूँ और इसलिए, दिनांक 12/16.4.2011 का आक्षेपित आदेश एतद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है। प्रत्यर्थी सं॰ 4 को याची के दावा पर नया निर्णय लेने का निर्देश दिया जाता है और जाँच चतुर्थवर्गीय पद पर नियुक्ति के लिए याची की पात्रता तक सीमित रहेगी।

12. पूर्वोक्त निर्देश के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

अमरदीप सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 1732 of 2011. Decided on 15th January, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 190 एवं 209— भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 307—हत्या का प्रयास–संज्ञान–यदि किसी अभियुक्त को अन्य अभियुक्तगण के साथ विचारण के लिए नहीं भेजा जाता है, दंडाधिकारी केवल आरोप-पत्रित व्यक्ति के विरुद्ध अपराध का संज्ञान ले सकता है और न कि उस व्यक्ति जिसे विचारण के लिए नहीं भेजा गया है और जिसका नाम रिपोर्ट के कॉलम 2 में सम्मिलित किया जाता है, के विरुद्ध–किंतु, न्यायालय को यह पता लगाने की आवश्यकता है कि क्या विचारण के लिए नहीं भेजे गए व्यक्ति के विरुद्ध सामग्री है या नहीं जिस पर सत्र न्यायालय द्वारा विचार किया जाएगा–यदि दंडाधिकारी पुलिस रिपोर्ट में दिए गए निष्कर्ष के साथ असहमत है, तब उसे पुलिस के मत से असहमत होने के लिए कारण देने की आवश्यकता है–जब एक बार संज्ञान लिया जाता है, उसी अपराध का संज्ञान लेने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किया गया और मामला वापस दंडाधिकारी के पास भेजा गया। (पैराएँ 6, 8, 9, 11 से 15)

निर्णयज विधि.–2014(1) JBCJ 539 (SC): 2014 (1) JLJ 212 (SC); 2013 (3) East. Cr. C.3 (SC); (1996) 4 SCC 495; (2004) 13 SCC 11; (2001) 6 SCC 670; (2001) 8 SCC 522; (1993) 2 SCC 16; (1998) 2 SCC 132 : 2012(1) JLJ 166 (JHC) : (2012) 2 SCC 188—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. K.P. Choudhary, For the Petitioner; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन देवघर शहर (कुंडा) पी॰ एस॰ केस सं॰ 108 वर्ष 2009 (जी॰ आर॰ केस सं॰ 250 वर्ष 2009) में मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, देवघर द्वारा पारित दिनांक 13.1.2011 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धारा 307 एवं अन्य सहयोगी धाराओं के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान याची एवं अन्य के विरुद्ध लिया गया है।

3. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 307 के अधीन अपराध की कारिता के लिए याची सहित 16 व्यक्तियों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता

की धारा 307 के अधीन देवघर टाउन (कुंडा) पी॰ एस॰ केस सं॰ 108 वर्ष 2009 (जी॰ आर॰ सं॰ 250 वर्ष 2009) के रूप में मामला दर्ज किया गया था। पुलिस ने अन्वेषण के दौरान याची एवं एक अन्य व्यक्ति की ओर से कोई सह–अपराधिता नहीं पाया था यद्यपि 14 व्यक्तियों के विरुद्ध सह अपराधिता पायी गयी थी और इसलिए उनके विरुद्ध आरोप–पत्र दाखिल किया गया था जबकि याची और अन्य अभियुक्त को विचारण के लिए नहीं भेजा गया था। आरोप–पत्र दाखिल किए जाने पर न्यायालय ने न केवल व्यक्तियों जिन्हें आरोप पत्रित किया गया था के विरुद्ध बल्कि इस याची और अन्य के विरुद्ध भी, जिन्हें विचारण के लिए कभी नहीं भेजा गया था, दिनांक 13.1.2011 के अपने आदेश के तहत अपराध का संज्ञान लेते हुए आदेश पारित किया है और तद्द्वारा न्यायालय ने **धरमपाल बनाम हरियाणा राज्य, (2013)3 East Cr. C.3 (SC) [:2014(1) JBCJ 539 (SC) : 2014 (1) JLJ 212 (SC)]** मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में अपराध का संज्ञान लेने में अवैधता किया।

4. निवेदनों के संदर्भ में, **धरमपाल बनाम हरियाणा राज्य (उपर)** को ध्यान में लेने की जरुरत है जिसके तथ्य ये हैं कि अपीलार्थियों धरमपाल एवं अन्य को सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य मामले में नफे सिंह के साथ मामले में अभियुक्त बनाया गया था। पुलिस ने अन्वेषण के बाद अभियुक्तों में से एक नफे सिंह के विरुद्ध आरोप–पत्र दाखिल किया जबकि धरम पाल एवं अन्य जिनके नामों को पुलिस रिपोर्ट के कॉलम 2 में सम्मिलित किया गया था को इस तथ्य के बावजूद विचारण के लिए नहीं भेजा गया था कि उन्हें भी प्राथमिकी में अभियुक्तों के रूप में नामित किया गया था। पुलिस रिपोर्ट का परिशीलन करने के बाद विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, हाँसी ने अपीलार्थी एवं तीन अन्य जिन्हें आरोप–पत्र में सम्मिलित नहीं किया गया था को नफे सिंह के साथ विचारण का सामना करने के लिए समन किया। उस पर, दंडाधिकारी ने संहिता की धारा 190 में अंतर्विष्ट अपनी शक्ति के प्रयोग में उनके विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया। उस आदेश को पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी। पुनरीक्षण न्यायालय ने आवेदन खारिज कर दिया। जब मामला उच्च न्यायालय के समक्ष आया, उच्च न्यायालय ने भी आवेदन खारिज कर दिया। तत्पश्चात, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष विशेष अनुमति अपील दाखिल की गयी थी। जब मामला आरंभ में सुनवाई के लिए माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लिया गया था, न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किया गया था कि इस बिंदु पर परस्पर अनेक विरोधी निर्णय हैं। एक ओर, **राजकिशोर प्रसाद बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य, (1996)4 SCC 495,** मामले में और **किशोर सिंह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (2004)13 SCC 11,** मामले में भी यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दंडाधिकारी को आरोप–पत्रित अभियुक्त के साथ किसी अभियुक्त को जोड़ने की शक्ति नहीं है बल्कि यह शक्ति दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 319 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने वाले सत्र न्यायाधीश को है जब इसकी सुपुर्दगी पर मामला उनके पास आता है जबकि **एस॰ डब्ल्यू॰ आई॰ एल॰ लिमिटेड बनाम दिल्ली राज्य एवं अन्य, (2001)6 SCC 670,** मामले में और **राजिन्दर प्रसाद बनाम बशीर एवं अन्य, (2001)8 SCC 522,** मामले में भी यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दंडाधिकारी को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 193 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार संज्ञान लेने की शक्ति है। ऐसी स्थिति में मामला संवैधानिक पीठ के समक्ष निर्दिष्ट किया गया था जिसके द्वारा विचार किए जाने के लिए निम्नलिखित विवाद्यकों को विरचित किया गया था.–

1. D;k lfinxh nMkfèkdkjh dh ifyl fjikV l ;g iku ij fd ekeyk l= U;k;ky; }kjk fopkj.k ;kX; g] l= U;k;ky; dk ekeyk lin dju d ckn dkb vU; Hkfedk g

2. ;fn nMkfèkdkjh ifyl fjikV d lkFk vlger vkj vk'oLr g fd fjikV d dkye 2 e j[k x, 0;fDr ;k d fo#) Hkh fopkj.k d fy, ekeyk curk g] D;k

mldk ifyl fjikV e cuk, x, ekey d fopkj.k d lcèk e fopkj.k dk lkeuk dju d fy, uQ flg d lkFk mud ukek dk lfEefyr dju d fy, mud fo#) Hkh leu tkjh dju dh vfèkdkfjrk g

3. vihykfFk;k d fo#) leu tkjh dju dk Qlyk dju ij D;k nMkfèkdkjh dk fopkj.k dk lkeuk dju d fy, mudk lin dju d igy ifjokn ekey dh çfØ;k dk vulj.k dju vkj lk{; yu dh vko';drk Fkh vFkok D;k og ,lh çfØ;k dk vulj.k fd, fcuk mud fo#) leu tkjh dju e U;k;kfpr Fk

4. D;k l= U;k;ky; ey vfèkdkfjrk d U;k;ky; d :i e n0 ç0 l0 dh èkkjk 193 d vèkhu leu tkjh dj ldrk Fkk

5. l= U;k;ky; dk ekeyk lin dj fn, tku ij D;k l= U;k;kèkh'k lfgrk dh èkkjk 193 d vèkhu iFkd :i l leu tkjh dj ldrk Fkk vFkok ml mldk lgkjk yu d fy, lfgrk dh èkkjk 319 d pj.k ij igpu rd çrh{kk djuk gkxk

6. D;k jthr flg ekeyk (Åij) ft lu fd'ku flg ekey (Åij) e fu.k; vkLr dj fn;k] lgh çdkj l fofuf'pr fd;k x;k Fkk ;k ugh

5. माननीय न्यायाधीशों ने धाराओं 193, 204, 209, 319 जैसे प्रासंगिक प्रावधानों और उपर निर्दिष्ट मामलों में दिए गए निर्णयों को विचार में लेने के बाद पक्षों में से एक का निवेदन कि सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य मामले में यदि अभियुक्त को विचारण के लिए नहीं भेजा जाता है दंडाधिकारी के पास मामले को सत्र न्यायालय को सुपुर्द करने के अलावा कोई अन्य कार्य नहीं था जो केवल विचारण का सामना करने के लिए विचारण के लिए नहीं भेजे गए अभियुक्तों को अभियोजित करने के लिए संहिता की धारा 319 का सहारा ले सकता था, को अस्वीकार कर दिया। ऐसे निवेदन को अस्वीकार करते हुए माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

24. ^^gekj nf"Vdk.k e] nMkfèkdkjh d ikl n0 ç0 l0 dh èkkjk 173 (3) d vèkhu mld le{k nkf[ky ifyl fjikV ij lKku yu oky l= U;k;ky; dk ekeyk lin djr g, fuHkku d fy, Hkfedk gA ;fn nMkfèkdkjh] ifyl fjikV d lkFk vlger gkrk g] mld ikl nk fodYi gA og vH;kifÙk ;kfpdk ft l nkf[ky fd;k tk ldrk g d vkèkkj ij ÑR; dj ldrk g vFkok og ifyl fjikV d lkFk vlger gkr g, vknf'kdk tkjh dj ldrk g vkj vfHk;Dr dk leu dj ldrk gA rRi'pkr] lr"V gku ij fd fjikV d dkye 2 e ukfer 0;fDr;k d fo#) vxlj gku d fy, ekeyk curk Fkk] mDr 0;fDr;k dk fopkj.k dju d fy, vxlj gk ldrk g vFkok ;fn og lr"V Fkk fd ekeyk curk Fkk tk l= U;k;ky; }kjk fopkj.k ;kX; Fkk] og ekey e vkx vxlj gku d fy, l= U;k;ky; dk ekeyk lin dj ldrk gA

25. ;g ge nMkfèkdkjh }kjk vulj.k dh tku okyh çfØ;k d ifr rhlj ç'u ij ykrk g ;fn og lr"V Fkk fd ifyl }kjk nkf[ky vfre fjikV d ckotn fopkj.k d fy, çFke n"V;k ekeyk curk FkkA ,lh fLFkfr e] ;fn nMkfèkdkjh u vfHk;Drx.k d fo#) vxlj gku dk fu.k; fd;k] ml Lo; ifyl fjikV d vkèkkj ij vxlj gkuk gkxk vkj ;k rk ekey dh tkp djuk gkxk ;k fQj bl l= U;k;ky; dk lin djuk gkxk ;fn bl l= U;k;ky; }kjk fopkj.k ;kX; ik;k x;k FkkA

27. ;g ge vxy ç'u ij ykrk g fd D;k èkkjk 209 d vèkhu nMkfèkdkjh dk ekeyk l= U;k;ky; dk lin dju d igy vijkèk dk lKku yu dh

vko';drk FkhA ;g lfuf'pr g fd vijkèk dk lKku doy ,d ckj fy;k tk ldrk gA ;fn nMkfèkdkjh vijkèk dk lKku yrk g vkj rc ekeyk l=U;k;ky; dk lin djrk g] vijkèk dk u;k lKku yu vkj] rRi'pkr] leu tkjh dju d fy, vxlj gku dk ç'u fofèk d vu#i ugh gA ;fn vijkèk dk lKku fy;k tkuk g] bl nMkfèkdkjh }kjk vFkok l=U;k;ky; }kjk fy;k tk ldrk FkkA lfgrk dh èkkjk 193 dh Hkk"kk vR;Ur Li"Vr% minf'kr djrh g fd tc ,d ckj nMkfèkdkjh }kjk ekeyk l=U;k;ky; dk lin fd;k tkrk g] l=U;k;ky; ey vfèkdkfjrk vkj tk dN Hkh ,lh vfèkdkfjrk d lkFk èkkj.k djrk gA vr%] èkkjk 209 d çkoèkkuk dk ifyl fjikV l ;g iku ij fd ekeyk l=U;k;ky; }kjk fopkj.k ;kX; Fkk] l=U;k;ky; dk ekeyk lin dju e nMkfèkdkjh }kjk fuHkk;h x;h fuf'Ø; Hkfedk d :i e le>uk gkxkA nMkfèkdkjh }kjk fy, tk jg vkf'kd lKku vkj fo}ku l=U;k;kèkh'k }kjk fy, tk jg vkf'kd lKku dk ç'u gk gh ugh ldrk gA

*28. ekey d ml nf"Vdk.k e] ge fd'ku flg d ekey (Åij) e vfHk0;Dr nf"Vdk.k d lkFk lger gku e dkb ldkp ugh g fd l=U;k;ky; dk bldk ekey dh linxh ij 0;fDr;k] ftUg vijkèkdrk d :i e ukfer ugh fd;k x;k g fdr ekey e ftudh lg&vijkfèkrk vfHky[k ij miyCèk lkefx;k l Li"V gkxh] d vijkèkk dk lKku yu dh vfèkdkfjrk gA vr%] lk{; nt fd, fcuk Hkh] èkkjk 209 d vèkhu linxh ij l=U;k;ky; ifyl fjikV e igy l ukfer 0;fDr;k d lkFk ifyl fjikV d dkye 2 e n'kk, x, 0;fDr;k dk fopkj.k dk lkeuk dju d fy, leu dj ldrk gA***

6. इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि माननीय न्यायालय ने विधि अधिकथित किया है कि यदि किसी अभियुक्त को अन्य अभियुक्तों के साथ विचारण के लिए नहीं भेजा जाता है, दंडाधिकारी केवल आरोप-पत्रित व्यक्ति के विरुद्ध अपराध का संज्ञान ले सकता है और न कि विचारण के लिए नहीं भेजे गए व्यक्ति जिसका नाम रिपोर्ट के कॉलम 2 में सम्मिलित किया जाता है के विरुद्ध। साथ ही, माननीय न्यायालय ने कहा है कि ऐसा नहीं है कि दंडाधिकारी को कुछ भी करने की शक्ति नहीं है बल्कि उसके पास छोड़ा गया एक मात्र रास्ता मामले को सत्र न्यायालय को सुपुर्द करना है और उनके विरुद्ध संज्ञान लेने का काम सत्र न्यायालय पर छोड़ दिया जाए। माननीय न्यायाधीशगण ने ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए उस दृष्टिकोण को संपुष्ट किया है जिसे **किशुन सिंह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य, (1993)2 SCC 16,** में अपनाया गया है। उस मामले के तथ्य ये थे कि 20 व्यक्तियों के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया था जिन्हें हमलावरों के रूप में नामित किया गया था। अन्वेषण पूरा करने के बाद जब आरोप-पत्र दाखिल किया गया था, इसने दो व्यक्तियों किशुन सिंह एवं एक अन्य जिनके विरुद्ध पुलिस ने कोई सह-अपराधिता नहीं पाया था का नाम सम्मिलित नहीं किया था और तद्द्वारा अंतिम फॉर्म दाखिल किया गया था। चूँकि 18 नामित व्यक्तियों के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था, संबंधित दंडाधिकारी ने संहिता की धारा 209 के अधीन 18 व्यक्तियों के मामले को सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया। जब मामला सत्र न्यायाधीश, दरभंगा के समक्ष आया, संहिता की धारा 309 के अधीन उसमें गैर-आरोप पत्रित दो अपीलार्थियों को समन करने की प्रार्थना करते हुए आवेदन दाखिल किया गया था क्योंकि अन्वेषण के दौरान संग्रहित सामग्रियों ने उन दो व्यक्तियों की अंतर्ग्रस्तता प्रकट किया था। सत्र न्यायाधीश ने नोटिस जारी करने के बाद धारा 319 में अंतर्विष्ट प्रावधान के फलस्वरुप अभियुक्त के रूप में विचारण का सामना करने के लिए उन अभियुक्तों को अभियोजित किया। उस आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी।

उच्च न्यायालय ने आवेदन अस्वीकार किया और उस पर जब मामला माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष आया, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रासंगिक प्रावधान पर विचार करने के बाद निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

"13. rc ç'u ;g g fd D;k lfgrk dh èkkjk 319 l vlc) le#i 'kfDr dk lfgrk d fdlh vU; çkoèkku rd vujf[kr fd;k tk ldrk g vFkok ,lh 'kfDr lfgrk dh ;ktuk l foof{kr dh tk ldrh g\ geu igy gh nk odfYid <xk dk bfxr fd;k g ft le nkfMd fofèk xfr'khy cuk;h tk ldrh g% lfgrk dh èkkjk 154 d vèkhu ifyl d ikl lpuk nkf[ky djd vFkok nMkfèkdkjh }kjk ifjokn ;k lpuk dh çkfIr ijA igyk <x ifyl }kjk vUo"k.k dh vkj y tk ldrk g vkj lfgrk dh èkkjk 173 d vèkhu ifyl fjikV e lekIr gk ldrk g ft ld vkèkkj ij nMkfèkdkjh }kjk lfgrk dh èkkjk 190(1) (b) d vèkhu lKku fy;k tk ldrk gA nlj <x e] nMkfèkdkjh lfgrk dh èkkjk 156 (3) d vèkhu ifyl }kjk vUo"k.k dk vkn'k n ldrk g vFkok èkkjk 190(1) (a) ;k (c) ;FkkfLFkfr d vèkhu vijkèk dk lKku yu d igy lfgrk dh èkkjk 202 lgifBr èkkjk 204 d vèkhu Lo; tkp dj ldrk gA tc ,dckj nMkfèkdkjh vijkèk dk lKku yrk g] og vijkèkh d fopkj.k dh dk;okgh dj ldrk g (flok, tgk ekeyk èkkjk 191 d vèkhu vrfjr fd;k x;k g) vFkok lfgrk dh èkkjk 209 d vèkhu fopkj.k d fy, mldk lin dj ldrk g ;fn vijkèk vuU; :i l l=U;k;ky; }kjk fopkj.k ;kX; gA tlk igy bfxr fd;k x;k g] lKku vijkèk dk] vkj u fd vijkèkh dk] fy;k tkrk gA bl U;k;ky; u j?ko'k nc cuke fcgkj jkT; e dFku fd;k g fd tc ,d ckj vijkèk dk lKku fy;k tkrk g] ;g irk yxkuk fd vijkèkhx.k oLrr% dku g] U;k;ky; dk dr0; cu tkrk g vkj ;fn U;k;ky; ikrk g fd ^ifyl }kjk Hkt x, 0;fDr;k d vfrfjDr dN vU; 0;fDr vrxLr g] mudk leu djd mu 0;fDr;k d fo#) vxlj gkuk bldk dÙk0; g D;kfd vfrfjDr vfHk;Dr dk leu djuk vijkèk dk lKku ydj bld }kjk vkjHk dh x;h dk;okgh dk Hkkx gA oreku lfgrk d çHkko e vku d ckn Hkh fofèkd voLFkk ifjofrr ugh gb g(bld foijhr nc ekey dk fu.k;kèkj gjjke lriFkh cuke Vhdkjke vxoky e vfHki"V fd;k x;k FkkA bl çdkj] ;gk rd dkb ef'dy ugh gA*

14. vc ge viuh ;k=k d fu.kk;d nkj e igp x, gA lfgrk dh èkkjk 190(1) d vèkhu lKku yu d ckn okjUV ekeyk e U;k;ky; dk vfHkdfFkr vijkèk d le; ,o LFkku vkj 0;fDr (;fn gk) ft ld fo#) vFkok pht (;fn gk) ft ld lcèk e bl fd;k x;k Fkk] d çfr fof'kf"V;k dk vrfo"V dju oky vkjki dk fojfpr dju dh vko';drk gA fdr vkjki fojfpr fd, tku d igy lfgrk dh èkkjk 227 çkoèkkfur djrh g fd ;fn ekey d vfHky[k vkj mld lkFk nkf[ky nLrkotk ij fopkj dju ij l= U;k;kèkh'k le>rk g fd vfHk;Dr d fo#) vxlj gku d fy, i;kIr vkèkkj ugh g] og nt fd, tkuoky dkj.kk l vfHk;Dr dk mUekfpr djxkA doy rc tc U;k;kèkh'k dk er g fd ;g mièkkfjr dju dk vkèkkj g fd vfHk;Dr u vijkèk fd;k g] og vkjki fojfpr dju d fy, vkj vfHk;Dr dk vfHkopu nt dju d fy, (èkkjk 228 d rgr) vxlj gkxkA ;g rjUr Li"V gk tkrk g fd ;g fofuf'pr dju d lhfer ç;ktu l fd D;k vfHk;Dr d fo#) vkjki fojfpr fd;k tk, ;k ugh] U;k;kèkh'k dk ekey d vfHky[k vkj mld lkFk nkf[ky nLrkotk tk ifyl fjikV] lfgrk dh èkkjk 161

d vèkhu nt xokgk d c;kuk] tCrh Kkiu] vkfn dk xfBr djx] dk ijh{k.k dju dh vko';drk gA ;fn bl lhfer ç;ktu d fy, food d bLreky ij U;k;kèkh'k ikrk g fd mld le{k nk"kkjkfir vfHk;Dr d vfrfjDr vijkèk dh dkfjrk e vU; dh lg&vijkfèkrk vFkok vrxLrrk çFke n"V;k mld le{k çLrr lkexh l lkeu vkrh g] ml dkjokb dk dku lk jkLrk viukuk pkfg,\

15. vr%] jkT; d fo}ku vfèkoDrk u rd fd;k fd Hky gh nk nf"Vdk.k lHko g] bldk çfØ;k dk ekeyk gku d ukr ft ldh leu fd, tku d fy, çLrkfor 0;fDr vFkok 0;fDr;k ij çfrdyrk dkfjr dju dh lHkkouk ugh g] U;k;ky; dk ml nf"Vdk.k dk Lohdkj djuk pkfg, tk U;k; dk gr vxlj djxk vFkkr okLrfod vijkèkh dh nk"kflf)A ;fn ,lk jo;k ugh viuk;k tkrk g] ekeyk vUo"k.k vfèkdkjh d gkFk e pyk tk,xk tk fopkj.k d fy, fdlh vijkèk dk Hkt ldrk g vFkok ugh Hkt ldrk g Hky gh çFke n"V;k lk{; fo|eku g] tk nh x;h fLFkfr e fopkj.k U;k;ky; dk cph tk ldu okyh ef'dyk dk dkfjr dj ldrk gA mnkgj.k d fy, ,lk ekeyk y tgk nk 0;fDr A vkj B X ij geyk djr g vkj mldh gR;k djr g vkj U;k;kèkh'k d le{k çLrr lkefx;k l ;g ik;k tkrk g fd A }kjk ?kkrd okj fd;k x;k Fkk tcfd B }kjk fd;k x;k okj X d 'kjhj d xj&egRoi.k vxk ij gvk FkkA ;fn ifyl }kjk A dk pukrh ugh nh tkrh g] U;k;kèkh'k HkkO n0 l0 dh èkkjk 34 dh enn l X dh gR;k d fy, B dk vkjkfir dju e ef'dy ik ldrk gA ;fn og A dk leu ugh dj ldrk g] og fdl çdkj B d fo#) vkjki fojfpr dj ldrk g\ ,l ekey e ml lfgrk dh èkkjk 319 dk voyc yu d fy, viu dk l{ke cuku d fy, fopkj.k e lk{; fn, tku rd çrh{kk djuh iM ldrh gA rc ml tkM x, vfHk;Dr d lcèk e u, flj l dk;okgh vkjHk djuh gkxh vkj xokgk dk okil cykuk gkxkA jkT; d vfèkoDrk u fuonu fd;k fd bldk ifj.kke ykd le; dh cph tk ldu okyh cckn e gkxkA vr%] mUgku fuonu fd;k fd bl U;k;ky; dk ,lk vFkkUo;u djuk pkfg, tk U;k; dk xyk ?kkVu d ctk, bldk gr vxlj djxkA

16. geu j?ko'k nc vkj gjjke ekeyk e bl U;k;ky; d fu.k;k d fu.k;kèkkj l igy gh minf'kr fd;k g fd tc ,d ckj U;k;ky; vijkèk (vkj u fd vijkèkh) dk lKku yrk g] okLrfod vijkfèk;k dk irk yxkuk U;k;ky; dk dÙk0; cu tkrk g vkj ;fn ;g bl fu"d"k ij vkrk g fd ifyl }kjk fopkj.k d fy, Hkt x, 0;fDr;k d vfrfjDr dN vU; Hkh vijkèk dh dkfjrk e vrxLr g] igy l gh ukfer 0;fDr;k d lkFk fopkj.k dk lkeuk dju d fy, mudk leu djuk U;k;ky; dk dr0; g D;kfd mudk leu djuk doy lKku yu dh çfØ;k dk Hkkx gkxkA geu nk lfgrkvk dh èkkjk 193 dh Hkk"kk e vrj dk Hkh bfxr fd;k g(ijkuh lfgrk d vèkhu l= U;k;ky; dk ey vfèkdkfjrk d U;k;ky; d :i e fdlh vijkèk dk lKku yu l vioftr fd;k x;k Fkk tc rd vfHk;Dr dk bld lin ugh fd;k x;k Fkk tcfd oreku lfgrk d vèkhu otuk 'kCn vfHk;Dr dk 'kCn ekeyk }kjk çfrLFkkfir djd iryk cuk;k x;k gA bl çdkj] èkkjk 193 tk ;g vHkh fo|eku g d lkn iBu ij] tc ,d ckj nMkfèkdkjh }kjk ekeyk l= U;k;ky; dk lin fd;k tkrk g] lfgrk d vèkhu] ey vfèkdkfjrk d U;k;ky; d :i e vijkèk dk lKku yu dh l= U;k;ky; dh 'kfDr ij LFkkfir fucèku gVk fn;k tkrk gA nMkfèkdkjh }kjk èkkjk 209 d vèkhu ekey dk l= U;k;ky; dk lin dju ij èkkjk 193 dh otuk gVk nh tkrh g vkj rn}kjk vijkèk dk lKku yu d fy, l= U;k;ky; e ey vfèkdkfjrk d U;k;ky; dh i.k ,o vfu;f=r vfèkdkfjrk fufgr gk tkrh g tk 0;fDr vFkok 0;fDr;k] ftudh vijkèk dh dkfjrk e lg&vijkfèkrk dk vfHky[k ij miyCèk lkexh l çFke

n"V;k ,df=r fd;k tk ldrk g] dk leu fd;k tkuk lfEefyr djxhA iVuk mPp U;k;ky; dh i.kihB u 'k[k yrQj jgeku d ekey e ijkuh lfgrk l lfgrk dh èkkjk 193 e f'k¶V dk lgh çdkj l fuEufyf[kr :i e vfèkeY;u fd;k

vr%] vc èkkjk 193 d vèkhu fofèk tk dfYir vkj çkoèkkfur djuk bfllr djrh g] ;g g fd linxh ij l= U;k;ky; }kjk vijkèk xfBr dju okyh li.k ?kVuk dk lKku fy;k tkuk g vkj u fd çR;d vijkèkh dk bl çdkj lin djuk gkxk vFkok fd ;fn ,lk ugh fd;k tkrk g] rc l= U;k;ky; 0;fDr;k d fo#) vxlj gku e 'kfDrghu gkxk ftud lcèk e ;g fopkj.k dh ngyht ij gh ijh rjg vk'oLr gk ldrk g fd o Hkh vijkèk d çFke n"V;k nk"kh g-------tc ,d ckj ekeyk lin fd;k tkrk g] èkkjk 193 dh otuk gVk nh tkrh g vFkok nlj 'kCnk e l= U;k;ky; dk vijkèk d çR;d vfHk;Dr dk leu dju dh i.kre vfèkdkfjrk l fufgr djr g, 'kr dk ijk fd;k tkrk gA

*ge ijkuh èkkjk 193 vkj fo|eku çkoèkku d chp dh x;h lfHkUurk l lEekuiod lger gA***

ऐसा अभिनिर्धारित करने के बाद माननीय न्यायाधीशों ने आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता नहीं पाया।

7. इन परिस्थितियों के अधीन, संवैधानिक पीठ ने किशुन सिंह मामले में अधिकथित निर्णयाधार को मान्य ठहराया है जबकि किशोर सिंह एवं रंजीत प्रसाद मामलों में अधिकथित निर्णयाधार अनुमोदित किया गया प्रतीत नहीं होता है।

8. इस प्रकार, अवस्था जो सामने आती है यह है कि यदि सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य अपराध/अपराधों के लिए दो अथवा अधिक अभियुक्तगण के विरुद्ध मामला दर्ज किया जाता है और उनमें से कुछ के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया जाता है और शेष को विचारण के लिए नहीं भेजा जाता है, तब दंडाधिकारी को केवल आरोप-पत्रित व्यक्ति के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने की शक्ति है। किंतु, न्यायालय को यह पता करने की भी आवश्यकता है कि क्या सत्र न्यायालय द्वारा किए जाने वाले विचारण के लिए नहीं भेजे गए व्यक्ति के विरुद्ध सामग्री है या नहीं। यदि न्यायालय विचारण के साथ अग्रसर होने के लिए प्रथम दृष्टया सामग्री पाता है, उस मामले को सत्र न्यायालय को सुपुर्द करने की आवश्यकता है। इसी प्रकार से, यदि कुछ अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया जाता है और कुछ अभियुक्तगण के विरुद्ध आगे अन्वेषण के लिए मामला खुला रखा जाता है और न्यायालय आरोप-पत्रित व्यक्तियों के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लेता है, उसे दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 209 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार मामले को सत्र न्यायालय को सुपुर्द करने की आवश्यकता है।

9. बाद में, यदि अन्य अभियुक्तगण, जिन्हें पहले आरोप-पत्रित नहीं किया गया था, के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया जाता है, न्यायालय को उसी रास्ते को अपनाया जाना है अर्थात् यह पता करना कि क्या विचारण के साथ अग्रसर होने के लिए उस व्यक्ति के विरुद्ध सामग्री है और यदि दंडाधिकारी संतुष्ट है कि सामग्री है, उसे केवल मामले को सत्र न्यायालय को सुपुर्द करने की आवश्यकता है और तद्द्वारा सत्र न्यायालय को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 193 में अंतर्विष्ट प्रावधान के निबंधनानुसार अपराध का संज्ञान लेना है और विचारण के साथ अग्रसर होना है।

10. उपर किए गए विवाद्यक के सदृश एक अन्य स्थिति उद्भूत हो सकती है जब सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य मामले में समस्त अभियुक्तगण को पुलिस द्वारा विमुक्त किया गया है और विचारण

के लिए नहीं भेजा गया है। प्रश्न जो स्पष्टत: सामने आएगा यह है कि दंडाधिकारी के पास अपनाए जाने के लिए कौन सा रास्ता है। पहला रास्ता **धरमपाल बनाम हरियाणा राज्य (ऊपर)** के मामले में अधिकथित निर्णयाधार का सहारा लेना है कि दंडाधिकारी अपराध का संज्ञान लेने में पंगु होगा क्योंकि अभियुक्तगण को विचारण के लिए नहीं भेजा गया है। यह रवैया किसी भी दृष्टिकोण में विधि की मंजूरी कभी नहीं पाता है जब संहिता की धारा 190(1) (b) में अंतर्विष्ट प्रावधान दंडाधिकारी को अपराध का संज्ञान लेने के लिए सशक्त बनाता है यद्यपि माननीय न्यायालय ने उपर निर्दिष्ट किए गए मामले में अभिनिर्धारित किया है कि दंडाधिकारी को विचारण के लिए नहीं भेजे गए व्यक्ति के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने की शक्ति नहीं है किंतु वह प्रतिपादना इस आधार पर अधिकथित की गयी है कि संज्ञान अपराध का, और न कि अपराधी का, लिया जाता है और इसलिए जब एक बार संज्ञान लिया जाता है, उसी अपराध का संज्ञान लेने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है और इसलिए, माननीय न्यायाधीशों ने संप्रेक्षित किया है कि या तो दंडाधिकारी को या फिर सत्र न्यायालय को अपराध का संज्ञान लेना है। किंतु ऐसे मामले में जहाँ समस्त व्यक्तियों, जो अभियुक्त थे, को विचारण के लिए नहीं भेजा जाता है, दंडाधिकारी मामले को सत्र न्यायालय को सुपुर्द करने के लिए संहिता की धारा 209 के प्रावधान का सहारा लेने की अवस्था में नहीं होगा और तद्द्वारा यह न्याय की विडंबना होगी कि भले ही अभियुक्तगण के विरुद्ध सामग्री है, उनका विचारण नहीं किया जा सकता है। यदि यह रवैया अपनाया जाता है, यह संहिता की योजना के विरुद्ध होगा जिसमें धारा 190(1) (b) में अंतर्विष्ट प्रावधान स्पष्टत: दंडाधिकारी को पुलिस रिपोर्ट पर संज्ञान लेने की शक्ति देता है।

11. अत:, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (2) के अधीन पुलिस रिपोर्ट की प्राप्ति पर दंडाधिकारी धारा 190(1) (b) के अधीन अपराध का संज्ञान लेने का हकदार है भले ही पुलिस रिपोर्ट इस प्रभाव का है कि अभियुक्त के विरुद्ध मामला नहीं बनाया गया है। दंडाधिकारी आई॰ ओ॰ द्वारा पहुँचे गए निष्कर्ष को अनदेखा कर सकता है और अन्वेषण से सामने आने वाले तथ्यों के प्रति अपने विवेक का इस्तेमाल स्वतंत्र रूप से कर सकता है और यदि वह सुयोग्य समझता है, धारा 190(1) (b) के अधीन शक्ति के प्रयोग में अपराध का संज्ञान ले सकता है और अभियुक्त के विरुद्ध आदेशिका जारी करने का निर्देश दे सकता है। पूर्वोक्त प्रतिपादना **मेसर्स इंडिया कोरट प्रा॰ लि॰ बनाम कर्नाटक राज्य एवं अन्य (1989)2 SCC 132,** मामले में अधिकथित की गयी है।

12. बाद में, **राजिन्दर प्रसाद बनाम बशीर एवं अन्य (ऊपर)** के मामले में भी समरुप दृष्टिकोण अपनाया गया है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *^^, l 0;fDr d fo#) Hkh] ftl vfHk;Dr d :i e ifyl }kjk fxj¶rkj ugh fd;k x;k g] vijkèk dk lKku yu dh vfèkdkfjrk nMkfèkdkjh dk g ;fn ifyl }kjk lxfgr lk{; l ;g çrhr gkrk g fd o vfHkdfFkr :i l fd, x, vijkèk d çFke n"V;k nk"kh FkA èkkjk 209 okil èkkjk 190 dk fufn"V djrh g tl lfgrk dh èkkjk 190(1) (b) e ç;Dr 'kCnk ^ifyl fjikV ij lfLFkr* l Li"V gA nMkfèkdkjh }kjk fy;k x;k lKku vijkèk dk Fkk vkj u fd vijkèkh dkA vijkèk dk lKku yu ij nMkfèkdkjh irk yxk ldrk g fd okLrfod vijkèkh dku Fk vkj ;fn og bl fu"d"k ij vkrk g fd ifyl }kjk Hkt x, 0;fDr;k d vfrfjDr dN vU; 0;fDr Hkh vrxLr Fk] mu 0;fDr;k d fo#) vxlj gkuk ml dk dr0; gA***

13. यहाँ यह दर्ज करना उपयुक्त होगा कि यदि दंडाधिकारी पुलिस रिपोर्ट में दिए गए निष्कर्ष से असहमत होता है, तब उसे पुलिस रिपोर्ट से असहमत होने के लिए कारण देने की आवश्यकता है जिस प्रतिपादना को **नुपूर तलवार बनाम केंद्रीय जाँच ब्यूरो, (2012)2 SCC 188 [:2012 (1) JLJ 166 (JHC)]** में अधिकथित किया गया है।

14. यहाँ वर्तमान मामले में, जैसा उपर गौर किया गया है, दंडाधिकारी ने पुलिस मत से असहमत होकर याची जिसे विचारण के लिए नहीं भेजा गया था के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया है और तद् द्वारा वह उक्त निर्दिष्ट निर्णयों की दृष्टि में गलती करता प्रतीत होता है।

15. तद्नुसार, संज्ञान लेने वाला आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है जहाँ तक याची का संबंध है। किंतु, उपर उपदर्शित तरीके से विधि के अनुरुप मामले में अग्रसर होने के लिए मामला पुनः दंडाधिकारी के पास वापस भेजा जाता है।

---

ekuuh; ç'kkr dekj ,o vferkHk dekj xIrk] U;k;efrx.k

राजेन्द्र शर्मा उर्फ पिन्टू

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 656 of 2004. Decided on 29th January, 2014.

सत्र विचारण सं॰ 327 वर्ष 2001 में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट VIII, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 9.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 15.12.2003 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—पत्नी की हत्या–आजीवन कारावास–जलने की उपहति के कारण मृत्यु–घटना के पहले अपीलार्थी का मृतका की हत्या करने का आशय नहीं था–घटना के क्रम में अपीलार्थी यह देखकर कि मृतका ने अपने शरीर पर किरासन तेल डाला था, अचानक उत्तेजित हो गया और उक्त उकसावा के कारण उसने मृतका के शरीर को आग लगा दिया–वर्तमान मामला भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 300 के अपवाद (1) के अंतर्गत आता है–अपीलार्थी के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध नहीं बनता है जहाँ अपीलार्थी भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 भाग I के अधीन अपराध का दोषी है–अपीलार्थी वस्तुतः 12 वर्ष 11 माह 23 दिन के लिए अभिरक्षा में बना हुआ है–भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 भाग I के अधीन दोषसिद्धि और पहले ही भुगत ली गयी अवधि के लिए दंडादेश उपांतरित किया गया। (पैराएँ 11 से 14)

अधिवक्तागण.–Sri. Yogesh Modi, For the Appellant; Sri. Ravi Prakash, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील सत्र विचारण सं॰ 327 वर्ष 2001 में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट VIII, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 9.12.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 15.12.2003 के दंडादेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन अपीलार्थी को अपनी पत्नी अर्थात निर्मला देवी की हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया गया और आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया।

2. मृतका निर्मला देवी के फर्दबयान के मुताबिक संक्षेप में अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 24.1.2001 को सायं लगभग 6 बजे उसका पति अर्थात् राजेन्द्र शर्मा उर्फ पिन्टू (अपीलार्थी) उसके साथ

झगड़ा करने लगा और उसको अपने भाई के घर से साइकिल लाने को कहा। तब यह अभिकथित किया गया है कि पूर्वोक्त झगड़ा के कारण उसने अपीलार्थी को डराने की दृष्टि से अपने शरीर पर किरासन तेल डाल लिया, किंतु, अपीलार्थी ने उसके शरीर में आग लगा दिया जिस कारण उसने जलने की उपहति प्राप्त किया। यह प्रतीत होता है कि उसे इलाज के लिए एम॰ जी॰ एम॰ अस्पताल लाया गया था, जहाँ उसका फर्दबयान दर्ज किया गया था।

3. पूर्वोक्त फर्दबयान के आधार पर, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 498A/324/307 के अधीन दिनांक 24.1.2001 का सिदगोरा पी॰ एस॰ केस सं॰ 16 वर्ष 2001 संस्थित किया गया। यह प्रतीत होता है कि घटना के अगले दिन अस्पताल में मृतका की मृत्यु हो गयी। तद्नुसार, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध जोड़ा गया। अन्वेषण के दौरान, पुलिस ने मृतका के मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया और इसे शव परीक्षण के लिए भेजा। यह भी प्रतीत होता है कि अन्वेषण अधिकारी ने गवाहों का बयान दर्ज किया और अन्वेषण पूरा करने के बाद अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 498A/324/307/302 के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया। यह प्रतीत होता है कि विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी ने अपराधों का संज्ञान लिया। तत्पश्चात, मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302 और 307 के अधीन अपराध अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य हैं।

4. विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट VIII, जमशेदपुर ने अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 498A/307/302 के अधीन आरोपों को विरचित किया और इन्हें अपीलार्थी को स्पष्ट किया जिसने निर्दोष होने का अभिवचन किया और विचारण का दावा किया। तत्पश्चात् अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में कुल सात गवाहों का परीक्षण किया। अभियोजन ने प्रदर्श 1 (शव परीक्षण रिपोर्ट), प्रदर्श 2 (फर्दबयान), प्रदर्श 3 (औपचारिक प्राथमिकी), प्रदर्श 4 (मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट), प्रदर्श 5 (सिदगोरा पी॰ एस॰ केस सं॰ 155/2000 की प्रमाणित प्रति) और प्रदर्श 6 (जी॰ आर॰ केस सं॰ 1965/ 2001 की दिनांक 8.1.2001 के आदेश की प्रमाणित प्रति) जैसे दस्तावेजों को दाखिल किया। यह प्रतीत होता है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद विद्वान सत्र न्यायाधीश ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 498A/307 के अधीन दोषमुक्त कर दिया, किंतु, उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया और उसको आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया। दोषसिद्धि और दंडादेश के पूर्वोक्त निर्णय के विरुद्ध वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

5. विद्वान न्यायमित्र श्री योगेश मोदी (झालसा के बचाव अधिवक्ता के पैनल से नियुक्त) निवेदन करते हैं कि वर्तमान मामले में अपीलार्थी को मृतका के अभिकथित मृत्युकालिक कथन के आधार पर दोषसिद्ध किया गया है। यह निवेदन किया गया है कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि अभिकथित मृत्यु कालिक कथन दर्ज किए जाने के समय पर मृतका होश में थी और बोलने की अवस्था में थी। वह निवेदन करते हैं कि फर्दबयान में यह दर्शाने के लिए डॉक्टर का प्रमाणपत्र नहीं लिया गया है कि पूर्वोक्त फर्दबयान दर्ज किए जाने के समय पर वह होश में थी। श्री मोदी आगे निवेदन करते हैं कि डॉक्टर, जिन्होंने मृतका के मृत शरीर का शव परीक्षण किया, ने उसके शरीर पर 98% जलने की उपहति पाया था। ऐसी परिस्थितियों के अधीन, वह बोलने की अवस्था में नहीं थी। इस प्रकार, अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने के लिए अभिकथित मृत्युकालिक कथन पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। श्री मोदी आगे निवेदन करते हैं कि यह उपधारित करने पर भी कि मृतका ने घटना के संबंध में पूर्वोक्त बयान दिया था, तब भी भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध नहीं बनता है। वह निवेदन करते हैं कि फर्दबयान और अ॰ सा॰ 3 एवं अ॰ सा॰ 5 के बयानों के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि मृतका ने

स्वयं अपने शरीर पर किरासन तेल डाला था और उसके शरीर में आग लगाने के लिए अपीलार्थी को उकसाया था। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि पूर्वोक्त घटना अपीलार्थी और मृतका के बीच झगड़ा के परिणामस्वरुप गंभीर एवं अचानक उकसावा के चलते हुई। अत:, भारतीय दंड संहिता की धारा 300 का अपवाद (1) इस मामले पर लागू होगा। यह निवेदन किया गया है कि पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग II के अधीन दंडित किया जा सकता है। यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी पहले से ही 12 वर्षों से अधिक से अभिरक्षा में बना हुआ है, अत:, उसे उसके कुकृत्यों के लिए पर्याप्त रूप से दंडित किया जा चुका है।

6. दूसरी ओर, विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री रवि प्रकाश निवेदन करते हैं कि अपीलार्थी ने जानबूझकर मृतका के शरीर में आग लगाया गया था। वह आगे निवेदन करते हैं कि वर्तमान मामले में डॉक्टर, जिन्होंने शव परीक्षण किया, ने कथन किया है कि उपहति प्राप्त करने के बाद मृतका कुछ समय के लिए होश में रह सकती है। वह आगे निवेदन करते हैं कि गवाहों का प्रति परीक्षण करते हुए उनको कोई सुझाव नहीं दिया गया था कि जब वे अस्पताल में मृतका से मिले, वह बेहोश थी। तद्नुसार, वह निवेदन करते हैं कि बचाव ने स्वीकार किया है कि प्राथमिकी दर्ज किए जाने और/अथवा अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 5 के साथ मृतका से बात करते समय मृतका होश में थी। इस प्रकार, यद्यपि डॉक्टर द्वारा प्रमाण पत्र नहीं दिया गया था, मृतका का मृत्युकालिक कथन विश्वसनीय है और इसे अपीलार्थी को दोष सिद्ध करने के लिए विचार में लिया जा सकता है। श्री रवि प्रकाश आगे निवेदन करते हैं कि वर्तमान मामले में अपीलार्थी ने आशयपूर्वक मृतका को आग लगाया। वह आगे निवेदन करते हैं कि अपीलार्थी आग लगाने के तुरन्त बाद भाग गया। यह दर्शाता है कि उसका आशय मृतका की हत्या करना था। तद्नुसार वह निवेदन करते हैं कि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध बनाता है। अत:, अवर न्यायालय ने सही प्रकार से अपीलार्थी को उक्त अपराध के लिए दोषसिद्ध एवं दंडादेषित किया है।

7. निवेदनों को सुनने पर हमने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है।

8. अ॰ सा॰ 4 डॉक्टर है जिन्होंने मृतका (निर्मला देवी) के मृत शरीर का शव परीक्षण किया। उन्होंने अभिसाक्ष्य दिया कि उन्होंने मृतका के मृत शरीर पर 98% शव पूर्व जलन उपहति पाया था। उन्होंने आगे मत दिया कि मृतका की मृत्यु जलन उपहति से हुए आघात के कारण हुई। उन्होंने आगे मत दिया कि जलने की प्रकृति दुर्घटनावश नहीं है। अ॰ सा॰ 4 के पूर्वोक्त अभिसाक्ष्य को प्रति परीक्षण में चुनौती नहीं दी गयी है। प्रदर्श 4 मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट भी अ॰ सा॰ 4 के विवरण का समर्थन करता है। पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार करते हुए हमारा निष्कर्ष है कि मृतका की मृत्यु मानववध मृत्यु थी।

9. अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 5 जो मृतका के भाई एवं माता है ने कथन किया है कि घटना के बारे में जानकारी होने के बाद वे एम॰ जी॰ एम॰ अस्पताल गए। उस समय मृतका होश में थी। जब उन्होंने पूछा, मृतका ने प्रकट किया कि साइकिल लाने के लिए मृतका एवं अपीलार्थी के बीच झगड़ा हुआ था। उक्त झगड़ा के दौरान अपीलार्थी ने मृतका पर प्रहार किया। उसने आगे प्रकट किया कि उसने अपीलार्थी को डराने की दृष्टि से अपने शरीर पर किरासन तेल डाला। किंतु अपीलार्थी ने उसके शरीर में आग लगा दिया जिस कारण उसने जलन उपहति प्राप्त किया। हम पाते हैं कि मृतका ने पुलिस सब-इंस्पेक्टर अर्थात् श्याम किशोर सिंह जिसने अस्पताल में उसका फर्दबयान दर्ज किया के समक्ष समरुप बयान दिया था।

10. श्री मोदी का प्रतिवाद कि फर्दबयान दर्ज किए जाने के समय पर और/अथवा उस समय पर जब अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 5 एम॰ जी॰ एम॰ अस्पताल पहुँचे और मृतका से मिले, मृतका होश में थी,

को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। डॉक्टर जिन्होंने शव परीक्षण किया ने प्रति परीक्षण के क्रम में पैराग्राफ 5 में स्पष्टत: कथन किया कि मृतका जलन उपहति प्राप्त करने के बाद कुछ समय तक होश में रह सकती थी। हम आगे पाते हैं कि अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 5 को कोई सुझाव नहीं दिया गया था कि जब वे एम॰ जी॰ एम॰ अस्पताल पहुँचे, मृतका बेहोश थी और बोलने की अवस्था में नहीं थी। पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों की दृष्टि में श्री मोदी का प्रतिवाद खारिज किए जाने का दायी है।

11. मृतका के बयान की दृष्टि में, हम पाते हैं कि अपीलार्थी ने मृतका के शरीर में आग लगाया था जिसके परिणामस्वरुप उसने उपहति पाया और उसकी मृत्यु हो गयी। अब, विनिश्चयकरण के लिए उद्भूत होने वाला एकमात्र प्रश्न यह है कि **क्या अपीलार्थी ने उसकी हत्या करने के आशय से मृतका के शरीर में आग लगाया था?**

12. वर्तमान मामले में अभियोजन द्वारा स्वीकार किया गया है कि घटना के समय पर मृतका एवं अपीलार्थी के बीच अ॰ सा॰ 3 के घर से साइकिल लाने के संबंध में झगड़ा हो रहा था। अभियोजन ने यह स्वीकार किया कि उक्त झगड़ा के क्रम में अपीलार्थी द्वारा मृतका को पीटा गया था। उक्त झगड़ा एवं प्रहार के कारण मृतका ने अपीलार्थी को डराने की दृष्टि से अपने शरीर पर किरासन तेल डाला। स्वयं उस अवधि के दौरान अपीलार्थी ने उसके शरीर को आग लगाया। यह दर्शाता है कि घटना के पहले अपीलार्थी का मृतका की हत्या करने का आशय नहीं था। यह प्रतीत होता है कि घटना के क्रम में अपीलार्थी ने यह देख कर कि मृतका ने अपने शरीर पर किरासन तेल डाला था, उत्तेजित हो गया और उक्त उकसावा के कारण उसने मृतका के शरीर में आग लगा दिया। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, हमारे सुविचारित मत में, वर्तमान मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 300 के अपवाद (1) के अंतर्गत आता है। अत:, हम निष्कर्षित करते हैं कि अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध नहीं बनता है, जबकि अपीलार्थी भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग–I के अधीन अपराध का दोषी है।

13. अभिलेख से यह प्रकट होता है कि अपीलार्थी वस्तुत: 12 वर्षों 11 माह 23 दिन से अभिरक्षा में बना हुआ है। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन अवधि जिसके लिए वह अभिरक्षा में बना रहा है पर्याप्त है और उसके विरूद्ध किसी पृथक दंडादेश को पारित करने की आवश्यकता नहीं है।

14. उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, यह अपील अंशत: अनुज्ञात की जाती है और सत्र विचारण सं॰ 327 वर्ष 2001 में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, जमशेदपुर द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को एतद् द्वारा उपांतरित किया जाता है और अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 भाग I के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है और उसे पहले ही अभिरक्षा में भुगत ली गयी अवधि के लिए दंडादेशित किया जाता है। अपीलार्थी अर्थात् राजेन्द्र शर्मा उर्फ पिन्टू जो अभिरक्षा में है को तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

न्यायालय स्वयं अपने प्रस्ताव पर

cuke

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (P.I.L.) No. 3486 of 2012. Decided on 1st March, 2014.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—पी॰ आई॰ एल॰–सरकारी अस्पतालों एवं डिस्पेंसरियों में डॉक्टरों द्वारा हड़ताल–डॉक्टरों ने शपथ पर कथन किया है कि वे पूरे साल के लिए रात-दिन चिकित्सीय मदद की आवश्यकता रखने वाले व्यक्तियों की सेवा करने के लिए बाध्य हैं–उन्होंने उन मरीजों की देखभाल करने का वचन भी दिया है जो चिकित्सीय सहायता के लिए उनके पास आते हैं और कि वे उनके इलाज से इनकार नहीं करेंगे–न्यायालय आशावान है कि डॉक्टर अपने कर्तव्य पर बने रहेंगे और अपने द्वारा किए गए शपथ का पालन करेंगे। (पैराएँ 5 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Md. Mokhtar Khan, For the Union of India; Mr. Rajesh Kumar, For the RIMS.

आदेश

दिनांक 26.6.2012 को इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने दिनांक 26.6.2012 को अनेक समाचार पत्रों में प्रकाशित समाचार को ध्यान में लिया जिसने उपदर्शित किया कि इंडियन मेडिकल एसोसियेशन के आह्वान पर अनेक सरकारी अस्पतालों एवं डिस्पेंसरियों के डॉक्टर दिनांक 25.6.2012 को अपने कर्तव्य से अनुपस्थित रहे और परिणामस्वरुप अनेक मृत्यु होने के रिपोर्ट आये थे। विद्वान एकल न्यायाधीश ने भारतीय आयुर्विज्ञान परिषद (पेशेवर आचरण, शिष्टाचार एवं नैतिकता) विनियमन, 2002 के विनियमनों 2.1.1 और 2.4 को ध्यान में लिया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

2.1.1. ;|fi fpfdRld mldh lok dh ekx dju oky çR;d 0;fDr dk bykt dju d fy, ckè; ugh g] ml u doy chekj ,o ?kk;y dh lok dju d fy, ge'kk r;kj jguk pkfg, cfYd ml viu fe'ku d mPp pfj= vkj viu i'koj dr0;k d mUekpu d Øe e mÙkjnkf;Ro d çfr lpr jguk pkfg,A bykt dju d nkjku ml dHkh ugh Hkyuk pkfg, fd mldh n[kHkky dk U;Lr 0;fDr;k dk LokLF; ,o thou mldh n{krk ,o ,dkxrk ij fuHkj djxkA fpfdRld dk ejhtk dk minf'kr le; ij mud ikl tkdj chekjk dk vkjke nu dk ç;kl djuk pkfg,A fpfdRld dk fdlh ejht dk fdlh vU; fpfdRld dh lok bfllr dju dh lykg nuk Lohdk; g fdr vkikrdky e fpfdRld dk ejht dk bykt djuk gh gkxkA dkb Hkh fpfdRld eueku :i l ejht dk bykt dju l budkj ugh djxkA fdr Hkh vPN dkj.kk l] tc ejht ,lh chekjh l ihfMr g tk bykt dju oky fpfdRld d vuHko d {k= d vrxr ugh g] fpfdRld bykt dju oky l budkj dj ldrk g vkj ejht dk fdlh vU; fpfdRld dk fufn"V dj ldrk gA

*2.4. ejht dh mi{kk ugh dh tkuh pkfg, fpfdRld mudk puu d fy, Lor= g ftudh og lok djxkA fdr] ml vkikrdky e mldh enn d fy, fdlh vujkèk dk çR;Ùkj nuk pkfg,A ,d ckj ekeyk gkFk e yu ij fpfdRld dk ejht dh mi{kk ugh djuh pkfg, vkj u gh ejht ,o mld ifjokj dk i;kIr ukfVl fn, fcuk ekey l vyx gkuk pkfg,A vufre :i l vFkok i.kr% jftLVM fpfdRlh; i'koj tkuc>dj mi{kk dk ÑR; ugh djxk tk mld ejht dk vko';d fpfdRlh; n[kHkky l ofpr dj ldrk gA***

2. मामले को झारखंड उच्च न्यायालय नियमावली, 2001 के नियम 24 के मुताबिक समुचित पीठ के समक्ष सूचीबद्ध किया गया था और इसे डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰) सं॰ 3486 वर्ष 2012 के रूप में दर्ज किया गया था। प्रत्यर्थीगण उपस्थित हुए और अपना उत्तर दाखिल किया।

3. निदेशक, आर॰ आई॰ एम॰ एस॰, राँची की ओर से यह कथन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है कि यद्यपि दिनांक 25.6.2012 को आई॰ एम॰ ए॰ द्वारा हड़ताल बुलायी गयी थी, निदेशक, आर॰ आई॰ एम॰ एस॰, राँची की अपील पर डॉक्टरों और छात्रों ने हड़ताल नहीं किया और अपने कर्तव्यों

का पालन किया यद्यपि उन्होंने सांकेतिक विरोध प्रदर्शित किया। दैनिक उपस्थिति रजिस्टर और सामान्य दिन पर और दिनांक 26.6.2012 को संचालित औसत बड़ी शल्य चिकित्साओं के संबंध में आँकड़ा इस न्यायालय के समक्ष यह प्रदर्शित करने के लिए प्रस्तुत किया गया था कि दिनांक 26.6.2012 को भी डॉक्टर अपने कर्तव्य पर उपस्थित थे।

4. आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ के अधीन कार्यरत डॉक्टरों, जिनके फोटोग्राफों को समाचार पत्रों में छापा गया था, ने भी यह कथन करते हुए शपथ पत्रों को दाखिल किया है कि उन्होंने निम्नलिखित शपथ लिया है:–

^^e lR;fu"Bk l çfrKku ij viuk thou ekuork dh lok dk lefir djrk gA

èkedh fn; tku ij Hkh e ekuork d fl)krk d foijhr viu efMdy Kku dk mi;kx ugh d#xkA

e xHkèkkj.k d le; l ekuo thou d çfr viuh vlhe lEeku cuk, j[kxkA

e èke] jk"Vh;rk] uLy] nyxr jktuhfr vFkok lkekftd gfl;r dk viu dr0; ,o ejht d chp gLr{ki dju dh vuefr ugh nxkA

e vrjkRek ,o e;knk d lkFk viuk i'kk d#xkA

ej ejht dk LokLF; ejh çFke çkFkfedrk gkxhA

e xkiuh;rk dk lEeku d#xk ftll e> voxr djk;k x;k gA

e viu f'k{kdk dk mudk n; J)k ,o ÑrKrk nxkA

e viuh 'kfDr d leLr lkèkuk l fpfdRlk i'kk dk lEeku ,o vkn'k ijijk dk cuk, j[kxkA

e fpfdRlh; ufrdrk dk ikyu d:xk tlk Hkkjrh; vk;foKku ifj"kn (i'koj vkpj.k] f'k"Vkpkj ,o ufrdrk) fofu;eu] 2002 e çfrikfnr fd;k x;k gA

*e lR;fu"Bk l] Lor=rkiod vkj viuh çfr"Bk ij ; lHkh ifrKk djrk gA***

5. डॉक्टरों ने शपथ पर कथन किया है कि वे पूरे वर्ष के लिए रात-दिन उन व्यक्तियों की सेवा करने के लिए बाध्य हैं जिन्हें चिकित्सीय मदद की जरूरत है। उन्होंने उन मरीजों की देखभाल करने का वचन भी दिया है जो चिकित्सीय मदद के लिए उनके पास आते हैं और कि वे उनके इलाज से इनकार नहीं करेंगे।

6. हमने आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजेश कुमार को सुना है जिन्होंने निवेदन किया है कि दिनांक 26.6.2012 को आर॰ आई॰ एम॰ एस॰ में डॉक्टर हड़ताल पर नहीं थे और वे अपने काम पर उपस्थित थे। वह निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थीगण एवं डॉक्टरों द्वारा दाखिल शपथपत्रों की दृष्टि में यह जनहित याचिका बंद की जा सकती है।

7. प्रत्यर्थीगण द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण एवं अभिलेख पर लायी गयी सामग्री को ध्यान में लेने पर यह न्यायालय आशा करता है कि डॉक्टर अपने कर्तव्य पर उपस्थित बने रहेंगे और अपने द्वारा लिए गए शपथ का पालन करेंगे। यह उम्मीद की जाती है कि डॉक्टरों की ईमानदारी उनके अस्पतालों, नर्सिंग होम, और डिस्पेंसरियों में मरीजों का समुचित इलाज सुनिश्चित करने में सहायक होगी।

8. इन संप्रेक्षणों के साथ यह जनहित याचिका बंद की जाती है।

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

बनवारी साहू उर्फ बनवारी साव

cuke

श्रीमती माया देवी

F.A. No. 35 of 2012. Decided on 21th February, 2014.

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955—धारा 25—स्थायी निर्वाहिका एवं मासिक भरण-पोषण–3,00,000/- रुपयों की एकमुश्त स्थायी निर्वाहिका अधिनिर्णीत–भरण-पोषण के मात्रा के प्रति कोई कठोर नियम अथवा कोई नियत मापदंड नहीं है और निर्धारण का मामला न्यायालय के स्वविवेक पर छोड़ दिया जाता है–4,000/- रुपया प्रति माह का भरण-पोषण भत्ता मान्य ठहराने के बजाए 2,40,000/- रुपयों की अतिरिक्त एकमुश्त राशि अधिनिर्णीत करना दोनों पक्षों के हितों में होगा–आक्षेपित निर्णय एवं डिक्री उपांतरित की गयी। (पैराएँ 19 से 22)

अधिवक्तागण.–M/s Sohail Anwar, Affaque Ahmed, For the Appellant; Mr. Ayush Aditya, For the Respondent.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश.–कुटुम्ब न्यायालय अधिनियम, 1894 की धारा 19 के अधीन इस प्रथम अपील को उस निर्णय के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 89 वर्ष 2006 में श्री रामरुद्र प्रसाद देव, प्रमुख न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 18.1.2012 के निर्णय और दिनांक 23.1.2012 को हस्ताक्षरित डिक्री के तहत अपीलार्थी (पति) को प्रत्यर्थी (पत्नी) को उसका पुनर्विवाह होने तक 3,00,000/- (तीन लाख) रुपयों की राशि को स्थायी निर्वाहिका के रूप में और 4,000/- (चार हजार) रुपयों का मासिक भरण–पोषण भत्ता का भुगतान करने का निर्देश दिया गया है।

2. वस्तुतः, अपीलार्थी ने तलाक इप्सित करते हुए प्रत्यर्थी पत्नी के विरुद्ध एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 89 वर्ष 2006 के तहत उक्त वाद दाखिल किया था जहाँ वाद अनुज्ञात किया गया था और तलाक की डिक्री प्रदान की गयी है और प्रत्यर्थी पत्नी को 3,00,000/- (तीन लाख) रुपयों की स्थायी निर्वाहिका और 4000/- (चार हजार) रुपयों का मासिक भत्ता भी अधिनिर्णीत किया गया है। अवर न्यायालय द्वारा नियत स्थायी निर्वाहिका एवं मासिक भरण–पोषण की राशि से व्यथित होकर अपीलार्थी पति ने इस अपील को दाखिल किया है।

3. संक्षिप्त रूप से अपीलार्थी का मामला निम्नलिखित है:–

अपीलार्थी (पति) का विवाह प्रत्यर्थी (पत्नी) के साथ दिनांक 21.5.1990 को हिंदू रीति रिवाज के अनुसार हजारीबाग में हुआ। तत्पश्चात, वे दोनों बोकारो जिला में बालीडीह में अपना वैवाहिक जीवन बिताने लगे। अपीलार्थी के ससुर ने विवाह के कुछ दिन बाद इस आश्वासन के साथ कि प्रत्यर्थी गौना (विवाह की द्वितीय रीति) के बाद अपने पति के घर वापस चली जाएगी, प्रत्यर्थी को अपने घर हजारीबाग ले गया।

आगे यह अभिवचन किया गया है कि संबंधियों के काफी दबाव के बाद, क्योंकि प्रत्यर्थी का पिता सहमत नहीं था, गौना समारोह संपन्न किया गया था और तब प्रत्यर्थी नवंबर, 1991 में बालीडीह में अपने दांपत्य गृह आयी। प्रत्यर्थी वहाँ लगभग एक माह रही और तब प्रत्यर्थी का पिता उसे गलत सलाह देने लगा और दिनांक 15.10.1992 को वह अपने पिता के घर वापस चली गयी। अपीलार्थी ने उसको अनेक

बार वापस आने के लिए समझाया किंतु निरर्थक रहा। अंततः, दिनांक 13.4.1999 को प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी के साथ दांपत्य जीवन व्यतीत करने से इनकार किया और अपीलार्थी से भरण–पोषण के रूप में 2000/- (दो हजार) रुपया मांगा।

आगे यह अभिकथित किया गया है कि अपीलार्थी के ससुर ने उसको हजारीबाग में घरजमाई के रूप में रहने के लिए कहा। यह प्रकथन भी किया गया है कि प्रत्यर्थी ने अंततः स्वयं को अपीलार्थी के समाज से अलग कर लिया और दिनांक 15.10.1992 से किसी युक्तियुक्त बहाना के बिना उसका परित्याग कर दिया। तब अपीलार्थी ने हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 9 के अधीन दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए वाद एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 22 वर्ष 1999 दाखिल किया था और दोनों पक्षों को सुनने के बाद तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, बोकारो ने अपीलार्थी के पक्ष में दिनांक 22.11.2002 को निर्णय पारित किया जिसके द्वारा दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए वाद प्रत्यर्थी को निर्णय की तिथि से तीन माह के भीतर अपना दांपत्य जीवन पुनः चालू करने के निर्देश के साथ डिक्री किया गया था। प्रत्यर्थी द्वारा डिक्री का अनुपालन नहीं किया गया था और इसलिए अपीलार्थी ने अपीलार्थी और प्रत्यर्थी के बीच विवाह के विघटन के लिए तलाक डिक्री इप्सित करते हुए वाद एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 89 वर्ष 2006 दाखिल किया जिसके निर्णय और डिक्री को इस न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी है जहाँ तक यह स्थायी निर्वाहिका और भरण–पोषण भत्ता से संबंधित है।

4. प्रत्यर्थी माया देवी उक्त वैवाहिक मामले अर्थात् एम॰ टी॰ एस॰ केस सं॰ 89 वर्ष 2006 में उपस्थित हुई और अपना लिखित कथन दाखिल किया। अपने बयान में उसने स्वीकार किया कि अपीलार्थी के साथ विवाह के बाद डेढ़ माह की अवधि के लिए और अपने दांपत्य गृह में उसके संक्षिप्त निवास के दौरान उसके साथ अपीलार्थी और उसके परिवार के सदस्यों द्वारा समुचित व्यवहार नहीं किया जाता था। उसने अभिकथित किया कि उसे दहेज मांग के लिए मानसिक एवं शारीरिक क्रूरता के अध्यधीन किया जाता था और उसके पति के परिवार के सदस्य अर्थात भाई, भाई की पत्नी और माता उसको गाली देते थे और उस पर प्रहार करते थे और उसे भोजन–वस्त्र नहीं देते थे। प्रत्यर्थी ने आगे अभिवाक् किया कि उसे कलर टी॰ वी॰ और हीरो होंडा मोटरसाइकिल लाने का निर्देश देकर अपने पिता के घर भेजा गया था किंतु प्रत्यर्थी का पिता दहेज मांग पूरा करने में अक्षम था। इस पर, प्रत्यर्थी के पिता और भाई ने अपीलार्थी को समझाने का प्रयास किया और काफी समझाने बुझाने के बाद प्रत्यर्थी को अपीलार्थी द्वारा अपने पैतृक स्थान बालीडीह (जिला बोकारो) ले जाया गया था और प्रत्यर्थी वहाँ लगातार जून, 1993 तक रही जब अंततः उसे वापस नहीं आने की धमकी के साथ घर से निकाल दिया गया था। अवर न्यायालय के समक्ष अपने अभिवाक् में उसने आगे कथन किया है कि शुभचिंतकों के मध्यक्षेप पर अपीलार्थी उसे फरवरी, 1995 में वापस ले गया और वह अगस्त, 1997 तक वहाँ रही जिसके बाद अपीलार्थी प्रत्यर्थी के साथ हजारीबाग आया और उसे उसके पिता के घर छोड़ दिया और तत्पश्चात उसने प्रत्यर्थी को साथ रखने से इनकार कर दिया। प्रत्यर्थी ने अभिकथित किया कि प्रत्यर्थी को कारित क्रूरता एवं यातना के अपराध से अपने को बचाने की दृष्टि से अपीलार्थी द्वारा हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा 9 के अधीन दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए वाद एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 22 वर्ष 1999 दाखिल किया गया था। प्रत्यर्थी ने आगे अभिकथित किया कि अपीलार्थी ने उसको उसकी हत्या करने की धमकी दी थी यदि वह अपने पति के घर वापस आती है और अभिवचन किया कि उसके अलग रहने के लिए अपीलार्थी मुख्य रूप से जिम्मेदार है और कथन किया कि अपीलार्थी किसी अनुतोष का हकदार नहीं था और वाद खारिज करने के लिए प्रार्थना किया।

5. अवर न्यायालय ने पक्षों के अभिवचनों के आधार पर निम्नलिखित विवाद्यकों को विरचित किया:–

(i) D;k oreku okn viu oreku :i e lik"k.kh; g

(ii) D;k vihykFkh d ikl okn nkf[ky dju d fy, okn grd g

(iii) D;k vihykFkh u çR;Fkh d lkFk Øj crko fd;k vkj fueerkiod çR;Fkh ij çgkj djrk Fkk

(iv) D;k vihykFkh u fdlh i;kIr dkj.k d fcuk nk o"kk l vfèkd dh yxkrkj vofèk d fy, çR;Fkh dk i.kr% vfHkR;tu dj fn;k

(v) D;k gd (ookfgd) okn lO 22/99 e ikfjr fu.k; çR;Fkh ij ckè;dkjh g

(vi) D;k vihykFkh çR;Fkh d lkFk g, fookg d fo?kVu dk gdnkj g

(vii) vihykFkh fdl vurk"k vFkok fdu vurk"kk dk gdnkj g

6. इन विवाद्यकों पर पक्षों का विचारण किया गया। अपीलार्थी ने अपनी ओर से चार गवाहों अर्थात् मो॰ मिन्हाज (अ॰ सा॰ 1), शिवनंदन साहू (अ॰ सा॰ 2), अर्जुन महतो (अ॰ सा॰ 3) और बनवारी साहू (अ॰ सा॰ 4 स्वयं अपीलार्थी पति) का परीक्षण किया। प्रत्यर्थी ने अपनी ओर से छह गवाहों अर्थात् गोपाल कृष्ण (प्र॰ सा॰ 1), तोला राना (प्र॰ सा॰ 2), कुंदन कुमार गुप्ता (प्र॰ सा॰ 3), मुरारीलाल (प्र॰ सा॰ 4), ओम प्रकाश (प्र॰ सा॰ 5) और माया देवी (प्र॰ सा॰ 6 प्रत्यर्थी पत्नी) का परीक्षण किया।

पक्षों द्वारा दिए गए मौखिक साक्ष्य के अतिरिक्त, अपीलार्थी ने अपनी ओर से दस्तावेजी साक्ष्य दिया जो प्रदर्श 1 अर्थात् निर्णय की प्रमाणित प्रति और प्रदर्श 1/1 जो तृतीय अपर जिला न्यायाधीश, बोकारो द्वारा दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन के लिए वाद एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 22 वर्ष 1999 में पारित डिक्री की प्रमाणित प्रति है। अपीलार्थी ने प्रदर्श 2 भी प्रदर्शित किया है जो जुलाई, 2011 का अपीलार्थी का वेतन पर्ची है।

7. अवर न्यायालय ने दोनों पक्षों की ओर से दिए गए मौखिक एवं दस्तावेजी साक्ष्य पर चर्चा के बाद विवाद्यक सं॰ (i) से (vii) को अपीलार्थी (पति) के पक्ष में विनिश्चित किया और विवाह के विघटन के लिए वाद डिक्री किया और तद्नुसार हिंदू विवाह अधिनियम के अधीन तलाक डिक्री पारित करके अपीलार्थी (पति) और प्रत्यर्थी (पत्नी) के बीच वैवाहिक संबंध विघटित कर दिया गया था। अवर न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी स्थायी निर्वाहिका के रूप में प्रत्यर्थी को 3,00,000/- (तीन लाख) रुपयों का भुगतान करेगा और आगे अपीलार्थी को प्रत्यर्थी को उसका पुनर्विवाह होने तक मासिक भरण–पोषण के रूप में 4000/- प्रतिमाह भुगतान करने का निर्देश दिया।

8. एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 89 वर्ष 2006 में पारित दिनांक 18.1.2012 के निर्णय से व्यथित होकर अपीलार्थी ने स्थायी निर्वाहिका के रूप में 3,00,000/- (तीन लाख) रुपयों और उसके पुनर्विवाह तक प्रत्यर्थी को मासिक भरण–पोषण भत्ता के रूप में 4000/- (चार हजार) रुपया प्रतिमाह के भुगतान के संबंध में आदेश को चुनौती देते हुए इस अपील को दाखिल किया है। प्रत्यर्थी ने अपीलार्थी के पक्ष में प्रदान की गयी तलाक डिक्री को चुनौती देते हुए कोई अपील दाखिल नहीं किया है। इस प्रकार, यह अपील केवल प्रत्यर्थी को अधिनिर्णीत भरण–पोषण की मात्रा तक सीमित है।

9. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री सोहेल अनवर प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री आयुष आदित्य सुने गए। अभिलेख पर प्रस्तुत सामग्री एवं निर्णय का परिशीलन किया गया।

10. अपीलार्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने गलत रूप से अपीलार्थी को प्रत्यर्थी को स्थायी निर्वाहिका के रूप में 3,00,000/- (तीन लाख) रुपयों और प्रतिमाह भरण–पोषण भत्ता के रूप में 4,000/- (चार हजार) रुपयों का भुगतान करने का निर्देश दिया। यह निवेदन किया गया था कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 25 के अधीन अवर न्यायालय केवल ''ऐसी कुल अथवा मासिक अथवा अवधिकालिक राशि'' का आदेश दे सकता था और अवर न्यायालय ने 3,00,000/- (तीन लाख) रुपया स्थायी निर्वाहिका और 4,000/- (चार हजार) रुपया प्रतिमाह भरण–पोषण भत्ता के भुगतान का निर्देश देते हुए निर्णय पारित करने में गलती किया। आगे यह निवेदन किया गया था कि अवर न्यायालय इस तथ्य को विचार में लेने में विफल रहा कि अपीलार्थी को अनुकंपा के आधार पर बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ में नियुक्त किया गया है और वह अपनी वृद्ध माता के अतिरिक्त अपने परिवार के अन्य सदस्यों जो पूर्णत: उस पर आश्रित हैं का भरण–पोषण करने के लिए बाध्य है और इस तथ्य के आलोक में कि अपीलार्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ में लोको ऑपरेटर है, उसके लिए स्थायी निर्वाहिका के रूप में 3,00,000/- (तीन लाख) रुपयों और प्रत्यर्थी के पुनर्विवाह तक उसे प्रति माह 4,000/- (चार हजार) रुपयों की भरण–पोषण राशि का भुगतान करना असंभव है। अपीलार्थी की ओर से यह प्रतिवाद भी किया गया है कि प्रमुख न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, हजारीबाग ने गलत रूप से अभिनिर्धारित किया कि अपीलार्थी प्रतिमाह 31,053/- (इकतीस हजार तिरपन) रुपया पा रहा था और प्रदर्श 2 (जुलाई, 2011 का वेतनपर्ची) अनदेखा किया जो बताता है कि अपीलार्थी का शुद्ध भुगतान केवल 10,750/- (दस हजार सात सौ पचास) रुपया है। यह निवेदन किया गया था कि भरण–पोषण की मात्रा अत्यधिक है और वास्तविक वेतन जिसे अपीलार्थी अर्जित कर रहा है को विचार में लिए बिना अधिनिर्णीत किया गया है।

11. प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अवर न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध समस्त साक्ष्यों का अधिमूल्यन करने के बाद सही प्रकार से आदेश पारित किया है और अपीलार्थी ने अवर न्यायालय द्वारा पारित स्थायी निर्वाहिका एवं भरण–पोषण के आदेश के भुगतान से बचने के असद्भावपूर्ण आशय के साथ इस अपील को दाखिल किया है। यह तर्क किया गया है कि अपीलार्थी बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ में नियोजित है और अवर न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत भरण–पोषण का भुगतान करने के लिए उसकी आय पर्याप्त है, अत: अपील खारिज किए जाने योग्य है।

12. एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 89 वर्ष 2006 में पारित निर्णय एवं डिक्री का दो भाग है। प्रथम भाग हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13 (1) (ia) के अधीन प्रदान की गयी तलाक डिक्री है। यद्यपि अवर न्यायालय के निर्णय में धारा 13 (1) (ia) के अधीन क्रूरता के आधार पर तलाक प्रदान किया गया था, क्रूरता के पहलू पर साक्ष्य की अधिक चर्चा नहीं है। निर्णय के पैराग्राफ 16 में अवर न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 22/99 में पारित दांपत्य अधिकारों के प्रत्यास्थापन डिक्री के बावजूद प्रत्यर्थी पत्नी अपने पति के पास नहीं गयी थी। यह संप्रेक्षित करते हुए कि चूँकि 12 वर्ष से अधिक बीत गए हैं और पुनर्मिलन की संभावना नहीं है और विवाह पूरी तरह टूट गया है, अवर न्यायालय ने तलाक प्रदान किया और अपीलार्थी एवं प्रत्यर्थी के बीच विवाह विघटित कर दिया। अपीलार्थी को निर्णय एवं डिक्री के प्रथम भाग से कोई शिकायत नहीं है। तलाक प्रदान करने वाले निर्णय के उस भाग के विरुद्ध प्रत्यर्थी पत्नी ने अपील दाखिल नहीं किया है। अत: क्रूरता के पहलू पर पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य को निर्दिष्ट करना हमारे लिए आवश्यक नहीं है।

13. अपीलार्थी की शिकायत भरण–पोषण आदेश से है जिसके अधीन अपीलार्थी को स्थायी

निर्वाहिका के रूप में 3,00,000/- (तीन लाख) रुपयों और प्रत्यर्थी के पुनर्विवाह तक मासिक भरण–पोषण भत्ता के रूप में प्रत्यर्थी को 4,000/- रुपया प्रतिमाह का भुगतान करने का निर्देश दिया गया है।

14. अभिलेख से देखा जाता है कि अवर न्यायालय ने वाद में स्थायी निर्वाहिका अथवा भरण–पोषण से संबंधित विवाद्यक विरचित नहीं किया था। अवर न्यायालय में प्रत्यर्थी पत्नी ने तलाक वाद एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 89 वर्ष 2006 के लंबित रहने के दौरान अंतरिम भरण–पोषण इप्सित करते हुए याचिका दाखिल किया और दिनांक 5.12.2007 को अवर न्यायालय ने 1000/- (एक हजार) रुपया प्रतिमाह का अंतरिम भरण–पोषण प्रत्यर्थी पत्नी को देने का निर्देश देते हुए आदेश पारित किया। दिनांक 5.9.2011 को प्रत्यर्थी पत्नी ने अन्य बातों के साथ यह प्रार्थना करते हुए पुनः याचिका दाखिल किया कि यदि तलाक डिक्री अपीलार्थी के पक्ष में पारित की गयी है, प्रत्यर्थी को स्थायी निर्वाहिका दिया जाए और कि भरण–पोषण भत्ता 10,000/- (दस हजार) रुपया प्रतिमाह तक बढ़ा दिया जाए। अपीलार्थी 31,000/- (इकतीस हजार) रुपया से अधिक अर्जित करने वाला बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ का कर्मचारी है और उसकी तब की कुल वेतन 31,053.07/- रुपया था। अपीलार्थी ने अभिवचन किया कि कटौती के बाद उसका कुल वेतन 8000/- (आठ हजार) रुपया प्रतिमाह है और उस पर उसके वृद्ध माता–पिता एवं परिवार के अन्य सदस्य आश्रित हैं और इसलिए वह प्रत्यर्थी को भरण–पोषण भत्ता का भुगतान करने की अवस्था में नहीं है। यह इंगित करते हुए कि प्रत्यर्थी गृहिणी है और उसके पास आय का कोई स्रोत नहीं है, अवर न्यायालय ने प्रत्यर्थी की आर्थिक दशा और दर्जा तथा अपीलार्थी की आमदनी पर विचार करने के बाद 3,00,000/- (तीन लाख) रुपया स्थायी निर्वाहिका का आदेश दिया और आगे अपीलार्थी को भरण–पोषण के रूप में प्रत्यर्थी को 4000/- (चार हजार) रुपया प्रतिमाह भुगतान करने का निर्देश दिया।

15. विचारार्थ आया प्रश्न यह है कि क्या 3,00,000/- (तीन लाख) रुपयों की एकमुश्त स्थायी निर्वाहिका और 4000/- (चार हजार) रुपया का मासिक भरण–पोषण भत्ता उच्चतर पक्ष पर है।

16. हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 25 अधिकथित करती है कि आदेशित किए जाने वाले स्थायी भरण–पोषण की मात्रा पर आने के लिए न्यायालय को प्रत्यर्थी की अपनी आय एवं संपत्ति तथा अपीलार्थी की आय और संपत्ति और पक्षों के आचरण एवं मामले के तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखना होगा। भरण–पोषण की मात्रा के प्रति कोई कठोर नियम अथवा कोई नियत मापदंड नहीं है और निर्धारण का मामला न्यायालय के स्वविवेक पर छोड़ दिया जाता है। न्यायालय को पक्षों के दर्जा एवं काम, पति–पत्नी की अर्जन क्षमता और उनकी भावी संभावनाओं तथा प्रत्यर्थी की युक्तियुक्त आवश्यकता को दृष्टि में रखकर समस्त प्रासंगिक परिस्थितियों पर विचार करना होगा।

17. अपीलार्थी का प्रतिवाद यह है कि प्रत्यर्थी अनेक वर्षों से अलग रह रही थी और वह जीवनयापन अर्जित करने में सक्षम थी और इसलिए प्रत्यर्थी को मासिक भत्ता देने का आदेश नहीं दिया जाए। हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 25 के अधीन भरण–पोषण का आदेश पारित करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है।

18. अपीलार्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 25 के अधीन न्यायालय स्थायी निर्वाहिका के रूप में कुल राशि का अथवा ऐसी मासिक या अवधि कालिक राशि का आदेश दे सकता था किंतु दोनों का नहीं। चूँकि अपीलार्थी ने एकमुश्त भरण–पोषण राशि के रूप में सारवान राशि का भुगतान करने में अपनी मुश्किल अभिव्यक्त किया, अवर न्यायालय

भरण–पोषण राशि को स्थायी निर्वाहिका और 4000/- (चार हजार) रुपया प्रतिमाह मासिक भरण–पोषण भत्ता के रूप में बाँटता हुआ प्रतीत होता है। तीन लाख (3,00,000/-) रुपया स्थायी निर्वाहिका और 4000/- (चार हजार) रुपया मासिक भत्ता का निर्देश देने वाले अवर न्यायालय के निर्णय में दोष नहीं निकाला जा सकता है।

19. अवर न्यायालय का निर्णय दिनांक 18.1.2012 को पारित किया गया था और यद्यपि दो वर्ष बीत चुके हैं, अपीलार्थी ने 4,000/- (चार हजार) रुपया प्रतिमाह के भरण–पोषण भत्ता की ओर किसी राशि का भुगतान नहीं किया था। जब अपील सुनवाई के लिए आयी, हमने अपीलार्थी को प्रत्यर्थी के भरण–पोषण के बकायों का भुगतान करने का निर्देश दिया। अपीलार्थी ने (दिनांक 25 नवंबर 2013 के आदेश के तहत) 25,000/- रुपयों का भुगतान किया है और (दिनांक 9 दिसंबर, 2013 के आदेश के तहत) 15,000/- रुपयों की अतिरिक्त राशि का भुगतान किया है यानि कुल 40,000/- (चालीस हजार) रुपयों का जिसे प्रत्यर्थी द्वारा प्राप्त किया गया था। अपीलार्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चूँकि अवर न्यायालय द्वारा तलाक डिक्री प्रदान की गयी है, पक्षों के बीच विवाद शांत करने के लिए एकमुश्त राशि के रूप में 4000/- (चार हजार) रुपयों के मासिक भरण–पोषण भत्ता के भुगतान के निर्देश को उपयुक्त रूप से उपांतरित किया जा सकता है। प्रत्यर्थी के विद्वान अधिवक्ता भी उक्त रास्ते से सहमत थे।

20. चूँकि न्यायालय के निर्णय एवं डिक्री द्वारा पक्षों के बीच विवाह विघटित कर दिया गया है, प्रत्यर्थी के लिए मासिक भरण–पोषण भत्ता पर निर्भर होने के बजाए एकमुश्त स्थायी निर्वाहिका का लेना अधिक सुविधाजनक एवं लाभदायी होगा क्योंकि यदि अपीलार्थी मासिक भत्ता का भुगतान नहीं करता है, इसे वसूल करना प्रत्यर्थी पत्नी के लिए कष्टकर प्रक्रिया होगी। चार हजार (4000/-) रुपयों के मासिक भत्ता के बदले स्थायी निर्वाहिका में वृद्धि दोनों पक्षों के हित में होगी। अत:, हमारा दृष्टिकोण है कि 4000 (चार हजार) रुपयों के भरण–पोषण भत्ता को मान्य ठहराने के बजाए 4000/- रुपया प्रतिमाह भरण–पोषण भत्ता के बदले 2,40,000/- (दो लाख चालीस हजार) रुपया की अतिरिक्त एकमुश्त राशि अधिनिर्णीत करना दोनों पक्षों के हित में होगा। इस प्रकार, अवर न्यायालय द्वारा पहले ही अधिनिर्णीत 3,00,000/- (तीन लाख) रुपयों के स्थायी निर्वाहिका में 2,40,000/- (दो लाख चालीस हजार) रुपयों की एकमुश्त भरण–पोषण की राशि जोड़ कर स्थायी निर्वाहिका 5,40,000/- (पाँच लाख चालीस हजार) रुपया तक बढ़ायी जाती है जो हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में पर्याप्त और उचित होगी।

21. चार हजार (4000/-) रुपया के मासिक भरण–पोषण भत्ता के बदले 2,40,000/- (दो लाख चालीस हजार) रुपयों की एकमुश्त राशि अधिनिर्णीत की जाती है और स्थायी निर्वाहिका को 3,00,000/- (तीन लाख) रुपया से 5,40,000/- (पाँच लाख चालीस हजार) रुपया तक बढ़ाया जाता है। चालीस हजार (40,000/-) रुपयों की राशि, जिसका भुगतान अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय के समक्ष प्रथम अपील के लंबित रहने के दौरान किया गया है, को 5,40,000/- (पाँच लाख चालीस हजार) रुपयों की स्थायी निर्वाहिका के विरुद्ध समायोजित किया जाएगा और स्थायी निर्वाहिका 5,00,000/- (पाँच लाख) रुपया पर भुगतेय है। अपीलार्थी को इस आदेश की तिथि से छह माह के भीतर 5,00,000/- (पाँच लाख) रुपयों की पूर्वोक्त राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया जाता है जिसमें विफल रहने पर प्रत्यर्थी न्यायालय की प्रक्रिया के माध्यम से उक्त राशि वसूल करने के लिए स्वतंत्र है।

22. एम॰ टी॰ एस॰ सं॰ 89 वर्ष 2006 में श्रीराम रुद्र प्रसाद देव, प्रमुख न्यायाधीश, कुटुम्ब न्यायालय, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 18.1.2012 का निर्णय (डिक्री दिनांक 23.1.2012 को हस्ताक्षरित) उस सीमा तक उपांतरित किया जाता है और यह प्रथम अपील अंशत: अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; çkkr dekj ,o vferkHk dekj xlrk] U;k;efrx.k

देबू महतो एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 454 of 2003. Decided on 19th February, 2014.

सत्र विचारण सं॰ 149 वर्ष 1987 में श्री कुमार कमल, अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट I, बेरमो, तेनूघाट द्वारा पारित दिनांक 28.2.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दिनांक 6.3.2003 के दंडादेश के विरुद्ध।

(क) भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या–सामान्य आशय–दोषसिद्धि–अ॰ सा॰ के साक्ष्य परस्पर रूप से संपुष्टकारी हैं–अभियोजन मामला डॉक्टर द्वारा भी संपुष्ट किया गया–आई॰ ओ॰ का अपरीक्षण परिणामहीन होगा जब अभियुक्तगण पर प्रतिकूलता कारित नहीं हुई थी–किंतु अपराध स्थल पर अपराध को सुकर बनाने के लिए भागीदारी के बिना अपराधकर्ता की उपस्थिति मात्र उसको भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 34 के अधीन दायी अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त नहीं है–दोषसिद्धि अंशत: संपुष्ट की गयी। (पैराएँ 8 से 14)

(ख; भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872—धारा 6—संबंधित तथ्य और कार्य–स्वीकृत किए जाने के लिए इप्सित बयानों को कृत्यों का समकालीन होना होगा और कोई अंतराल नहीं होना चाहिए। (पैरा 8)

निर्णयज विधि.–(1999) 9 SCC 507; (2004) 7 SCC 487—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s B.M. Tripathi, N.K. Jaiswal, Nutan Sharma, For the Appellant; Mr. T.N. Verma, For the State.

अमिताभ कुमार गुप्ता, न्यायमूर्ति.–यह अपील सत्र विचारण सं॰ 149 वर्ष 1987 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट I, बेरमो, तेनूघाट द्वारा पारित दिनांक 28.2.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 6.3.2003 के दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता (संक्षेप में भा॰ दं॰ सं॰) की धारा 302 सह–पठित 34 के अधीन आरोपों के लिए दोषसिद्ध किया गया है और आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है।

2. दिनांक 24.4.1985 को रेफरल अस्पताल, जेना मोड़ में दर्ज रूपचंद्र महतो (अ॰ सा॰ 3) के फर्दबयान के मुताबिक संक्षेप में अभियोजन मामला यह है कि अ॰ सा॰ 3 अपने चाचा गोपी महतो (जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है) के साथ गाँव के तालाब में स्नान करने गया था। स्नान के बाद अ॰ सा॰ 3 तालाब के किनारे खड़ा था और गोपी महतो अपना चप्पल धो रहा था जब अचानक अपीलार्थी सं॰ 1 अर्थात् देबू महतो टांगी से लैस होकर आया और किसी उकसावा के बिना गोपी महतो के मस्तक पर टांगी से प्रहार किया जिस कारण गोपी महतो पानी में गिर गया, कि सूचक गोपी महतो को पानी से बाहर निकालना चाहता था जिस पर अपीलार्थी सं॰ 1 ने उसको जान से मारने की धमकी दी और इस बीच अपीलार्थी सं॰ 2 अर्थात्

स्वपन महतो लाठी से लैस होकर आया और गोपी महतो पर प्रहार करने के आशय से गोपी महतो को पानी से बाहर निकाला; कि जब सूचक ने उनसे प्रहार नहीं करने के लिए कहा तब अपीलार्थियों ने उस पर प्रहार करने के आशय से उसका पीछा किया; कि सूचक भाग गया और गोपी महतो के भाई सुलोचन महतो को घटना के बारे में सूचित किया। जिसके बाद गोपी महतो का भाई सुलोचन महतो, उसकी माता और पत्नी तालाब पर पहुँचे जहाँ उन्होंने गोपी महतो को बेहोश पड़ा पाया; कि अपीलार्थीगण टांगी एवं लाठी के साथ भाग गए और सुलोचन महतो विनोद महतो, फुलेश्वर महतो, गोपाल महतो, मीठन महतो, दारा महतो घायल गोपी महतो को इलाज के लिए अस्पताल ले गए।

3. फर्दबयान के आधार पर भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 324/307/34 के अधीन दिनांक 24.4.1985 का जसीडीह पी॰ एस॰ केस सं॰ 26/85 दर्ज किया गया था। बाद में इलाज के क्रम में घायल की मृत्यु हो गयी जिस पर भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 जोड़ी गयी थी। संज्ञान लिया गया था और मामला विचारण के लिए सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था। अपीलार्थियों/अभियुक्तों ने निर्दोषिता का अभिवचन किया और विचारण का दावा किया; कि अभियोजन द्वारा 11 गवाहों का परीक्षण किया गया था जिसके बाद दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अपीलार्थियों का बयान दर्ज किया गया था और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य के आधार पर विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ I ने आक्षेपित निर्णय द्वारा अपीलार्थियों को दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया।

4. अपीलार्थियों के विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री बी॰ एम॰ त्रिपाठी ने निर्णय को आक्षेपित करते हुए निवेदन किया है कि विचारण न्यायालय इस तथ्य का अधिमूल्यन करने में विफल रहा कि अ॰ सा॰ 3 अर्थात् सूचक ने कथन किया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने (मृतक) गोपी महतो के मस्तक पर टांगी से प्रहार किया था जो तेज धार वाला हथियार है किंतु डॉक्टर अर्थात् अ॰ सा॰ 9 जिन्होंने घटना के दिन गोपी महतो का परीक्षण किया था ने कथन किया है कि उपहति कड़े एवं भोथरी वस्तु द्वारा कारित की गयी थी और उपहतियों की आयु 48 घंटे के भीतर का बताया, जो दर्शाता है कि मृतक की उपहति ताजी नहीं थी और यह इस तथ्य को झुठलाता है कि अभिकथित घटना दिनांक 24.4.1985 को हुई थी और अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता है क्योंकि वह चश्मदीद गवाह नहीं है; कि परीक्षण किए गए अन्य गवाह अनुश्रुत गवाह है; स्वीकृत रूप से कोई चश्मदीद गवाह नहीं है और विद्वान विचारण न्यायालय ने यह कथन करके गलती की है कि अ॰ सा॰ 3 का परिसाक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य और अभियोजन के अन्य गवाहों द्वारा संपुष्ट किया गया था। यह तर्क किया गया है कि अ॰ सा॰ 3 का परिसाक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य और अभियोजन के अन्य गवाहों द्वारा संपुष्ट किया गया था। यह तर्क किया गया है कि अ॰ सा॰ 3 और अपीलार्थियों के बीच पूर्व से चली आ रही दुश्मनी है और विचारण न्यायालय को संपुष्टिकरण के लिए अन्य गवाहों के परिसाक्ष्य पर विचार करना चाहिए था किंतु विचारण न्यायालय द्वारा इस पर विचार नहीं किया गया है; कि केवल अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य के आधार पर विचारण न्यायालय का निष्कर्ष संपोषणीय नहीं है क्योंकि इससे न्याय विफल हुआ है कि विचारण न्यायालय ने इस तथ्य को विचार में नहीं लिया है। यह कि घटना स्थल गाँव का तालाब है जहाँ अन्य गाँव वाले भी आते हैं और विचारण न्यायालय ने इस तथ्य को विचार में लिए बिना स्वतंत्र गवाहों के किसी संपुष्टिकरण के बिना यांत्रिक रूप से अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य पर निष्कर्ष दिया है और इस तथ्य पर भी विचार नहीं किया है कि इस मामले में अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण नहीं किया गया है। यह तर्क किया गया है कि घटना दिनांक 24.4.1985 को हुई थी और मृतक गोपी महतो की मृत्यु इलाज के क्रम में दिनांक 29.4.1985 को हुई थी। इस प्रकार, वास्तविक घटना और मृतक की मृत्यु के बीच समय अंतराल पर विचार करते हुए विचारण न्यायालय को अभिनिर्धारित करना चाहिए था कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध

नहीं बनता है बल्कि अपराध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 304 (II) अर्थात् हत्या की कोटि में नहीं आने वाला आपराधिक मानव वध के कार्य क्षेत्र के अंतर्गत आता है क्योंकि कोई मध्यक्षेपी परिस्थिति नहीं है; कि विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित करके विधि में गलती की कि दोनों अपीलार्थीगण भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सह-पठित 34 के अधीन अपराध के दोषी थे। अभिलेख पर कोई साक्ष्य मौजूद नहीं है कि दोनों अपीलार्थीगण एक साथ घटनास्थल पर आए थे और न ही यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कोई साक्ष्य मौजूद है कि अपीलार्थी सं॰ 2 ने मृतक पर लाठी से कोई वार किया था, इस प्रकार, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सह-पठित 34 के अधीन उसकी दोषसिद्धि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के अधिमान के विरुद्ध है। बचाव पक्ष के विद्वान वरीय अधिवक्ता द्वारा यह आग्रह किया गया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 का मृतक ही हत्या करने का आशय नहीं था और एकमात्र साक्ष्य यह है कि उसने केवल एक वार किया था जिसे यदि तर्क के लिए सत्य माना भी जाए, तब भी अपीलार्थी सं॰ 1 का एकमात्र आशय मृतक पर उपहति कारित करना था और न कि उसकी हत्या करना। तद्नुसार, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन निर्णय एवं दोषसिद्धि अभिलेख पर मौजूद सामग्री के अनुरुप नहीं है और अपीलार्थी सं॰ 2 के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सह-पठित 34 के अधीन दोष मढ़ने के लिए तात्विक साक्ष्य नहीं है, अत:, उक्त आक्षेपित निर्णय एवं दोषसिद्धि अपास्त किए जाने योग्य है।

5. राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क किया है कि अ॰ सा॰ 3 अर्थात् रुप चंद्र महतो का परिसाक्ष्य अक्षुण्ण बना हुआ है और उसने न्यायालय में पुलिस द्वारा दर्ज फर्दबयान का समर्थन किया है जिसे अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 7 द्वारा संपुष्ट भी किया गया है। यह कथन भी किया गया है कि अ॰ सा॰ 9 डॉक्टर जिन्होंने दिनांक 24.4.1985 को मृतक की उपहतियों का परीक्षण किया था ने उपहतियों को पाया था और उपहति रिपोर्ट अर्थात प्रदर्श 2 अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य को संपुष्ट करता है; कि अ॰ सा॰ 10 अर्थात् डॉ॰ डी॰ के॰ धीरज ने शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 3) सिद्ध किया है जो अ॰ सा॰ 3 के मुताबिक मृतक द्वारा पायी गयी उपहतियों को संपुष्ट करता है।

6. विद्वान अधिवक्ताओं के निवेदनों को सुनने पर, यह विश्लेषण करने के लिए कि क्या आक्षेपित निर्णय अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य की कसौटी पर संपोषणीय है, परिसाक्ष्य एवं अभिलेख पर साक्ष्य का परीक्षण करना आवश्यक है।

7. प्राथमिकी के मुताबिक, अ॰ सा॰ 3 वर्तमान मामले का एकमात्र चश्मदीद गवाह है और उसने पुलिस द्वारा दर्ज किए गए अपने फर्दबयान का समर्थन किया है। अपने परिसाक्ष्य में उसने कथन किया है कि घटना के दिन वह गोपी महतो (मृतक) के साथ स्नान के लिए तालाब पर गया था और स्नान के बाद जब वह तालाब के किनारे खड़ा था, अपीलार्थी सं॰ 1, देबू महतो कुल्हाड़ी से लैस होकर आया और गोपी महतो जो अपना चप्पल धो रहा था के मस्तक पर कुल्हाड़ी से वार किया और कुल्हाड़ी के प्रहार के कारण गोपी महतो तालाब में गिर गया और जब अ॰ सा॰ 3 ने गोपी महतो को बाहर निकालना चाहा, अपीलार्थी सं॰ 1 ने उसको जान से मारने की धमकी दी; कि अपीलार्थी सं॰ 2 स्वपन महतो वहाँ आया और गोपी महतो को पानी से बाहर निकाला और तत्पश्चात अपीलार्थी सं॰ 1 ने पुन: अ॰ सा॰ 3 को धमकाया जिस पर वह भाग गया और गोपी महतो के घर आया और उसके भाई सुलोचन महतो, अ॰ सा॰ 5, और मृतक की बहन मीना देवी अ॰ सा॰ 1 एवं अ॰ सा॰ 2 जालेशर देवी मृतक की माता अ॰ सा॰ 2 को सूचित किया। अ॰ सा॰ 1 अ॰ सा॰ 2 को अभियोजन द्वारा पेश किया गया है। किंतु, अ॰ सा॰ 5 ने कथन किया है कि अ॰ सा॰ 3 आया था और उसको बताया कि अपीलार्थी सं॰ 1 और 2 ने कुल्हाड़ी से उसके भाई (मृतक गोपी महतो) पर प्रहार किया था और परिणामस्वरुप उसका भाई गोपी महतो पानी में गिर गया था; कि वह अ॰ सा॰ 1 और अ॰ सा॰ 2 के साथ गया था और गोपी महतो को बाँह, हाथ और पैर पर उपहतियों के साथ बेहोश पड़ा देखा था। वे उसे घर लाए थे और चारपाई पर पहले उसे जरीडीह पुलिस थाना ले गए थे और वहाँ से उन्हें जरीडीह अस्पताल भेजा गया था; कि जरीडीह अस्पताल

से वे बोकारो अस्पताल गए थे जहाँ इलाज के क्रम में गोपी महतो की मृत्यु हो गयी। अ॰ सा॰ 8 ने यह कथन भी किया है कि बोकारो अस्पताल में मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गयी थी। अ॰ सा॰ 4 ने कथन किया है कि उसने घटना स्थल तालाब पर मृतक को घायल दशा में देखा था जिसके बाद गोपी महतो को अस्पताल ले जाया गया था। प्रति परीक्षण में उसने कथन किया है कि घायल को पहले जरीडीह पुलिस थाना ले जाया गया था और वहाँ से अस्पताल ले जाया गया था।

8. विद्वान वरीय अधिवक्ता का प्रतिवाद कि अ॰ सा॰ 5 अनुश्रुत गवाह है और उसके साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता है, कुस्थापित है क्योंकि उक्त गवाह ने कथन किया है कि अ॰ सा॰ 3 आया था और उसको घटना के बारे में सूचित किया था जिस पर वह अ॰ सा॰ 1 और 2 के साथ वहाँ गया था और अपने भाई को उपहतियों के साथ तालाब पर पड़ा पाया था। साक्ष्य अधिनियम की धारा 6 के प्रावधान सामान्य नियम के अपवाद हैं जिसके अधीन अनुश्रुत साक्ष्य ग्राह्य बन जाता है परन्तु यह कि स्वीकृत किए जाने के लिए इप्सित बयान को कृत्यों का समकालीन होना होगा और कोई अंतराल नहीं होना चाहिए जो गढ़े जाने की अनुमति देगा। संबंधित तथ्य और कार्य के सिद्धांत का सार यह है कि तथ्य जो यद्यपि विवाद्यक में नहीं है को विवाद्यक में तथ्य से इस प्रकार संबंधित है कि यह उसी संव्यवहार का भाग निर्मित करता है कि यह स्वयं प्रासंगिक बन जाता है जैसा **सुखर बनाम उ॰ प्र॰ राज्य, (1999)9 SCC 507,** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है। अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य से यह प्रकट है कि अ॰ सा॰ 5 ने कथन किया है कि अ॰ सा॰ 3 आया था और उसको अपीलार्थीगण द्वारा गोपी महतो पर प्रहार किए जाने के बारे में सूचित किया था जिस पर वह तुरन्त वहाँ गया था और गोपी महतो पर प्रहार किए जाने के बारे में सूचित किया था जिस पर वह तुरन्त वहाँ गया था और गोपी महतो को उपहतियों के साथ देखा था। अत: वह संबंधित तथ्य एवं कार्य गवाह है और उसने अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य को संपुष्ट किया है।

9. डॉ॰ एम॰ एल॰ दोकानिया, अ॰ सा॰ 9 जिन्होंने उसी दिन मृतक का परीक्षण किया ने दाएँ कोलेसे का फ्रैक्चर, बाऐं ह्यूमरस का फ्रैक्चर, बाएँ कोलेसे का फ्रैक्चर और बाएँ हिस्से के टिबिया और फिबुला दोनों का फ्रैक्चर पाया। उन्होंने सिर की खाल पर 2" x 1/2" x खोपड़ी गहरा विदीर्ण उपहति भी पाया।

10. विद्वान वरीय अधिवक्ता का तर्क कि टांगी द्वारा प्रहार के मामले में कटा हुआ जख्म होना चाहिए किंतु अ॰ सा॰ 9 ने तेज धारदार हथियार से कटने का जख्म नहीं पाया था बल्कि विदीर्ण उपहति पाया था, इस प्रकार, यह इस तथ्य को विश्वास प्रदान करता है कि अ॰ सा॰ 3 ने घटना नहीं देखा था, स्वीकार्य नहीं है क्योंकि प्रहार के बिंदु पर अ॰ सा॰ 3 का साक्ष्य प्रति परीक्षण के दौरान अक्षुण्ण बना रहा है और अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य पर अविश्वास करने के लिए कोई महत्वपूर्ण विरोधाभास सामने नहीं लाया गया है। यद्यपि दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन बयान सारवान साक्ष्य नहीं है, किंतु जब अभियुक्त को परिस्थिति स्पष्ट करने का अवसर दिया जाता है, उसे मौन बने रहने अथवा अपना विवरण देने का अधिकार है और वर्तमान मामले में अपीलार्थी सं॰ 1 ने प्रहार से इनकार किया है किंतु उसने घटनास्थल पर अपनी उपस्थिति से इनकार नहीं किया है। कटने का जख्म की अनुपस्थिति अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य को अविश्वसनीय नहीं बनाती है जिसने विनिर्दिष्टत: कथन किया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने गोपी महतो के मस्तक पर टांगी का वार किया था और मस्तक पर उपहति पायी गयी है जैसा अ॰ सा॰ 9 अर्थात् डॉक्टर द्वारा उपर चर्चा किया गया है जिन्होंने विदीर्ण उपहति पाया था जो खोपड़ी तक गहरा था जो प्रहार संपुष्ट करता है और किसी विपरीत स्पष्टीकरण की अनुपस्थिति में निष्कर्ष निकाला जा सकता है और यह उपधारित किया जा सकता है कि कुल्हाड़ी से लैस अपीलार्थी सं॰ 1 ने अ॰ सा॰ 3 की सूचना पर गवाहों के आने के पहले समय अंतराल में मृतक पर अनेक उपहतियाँ कारित करते हुए मृतक पर प्रहार किया ही होगा।

11. विद्वान वरीय अधिवक्ता का प्रतिवाद कि अन्वेषण अधिकारी के गैर–परीक्षण ने बचाव पर प्रतिकूलता कारित किया है, आधारहीन है क्योंकि अभियोजन गवाह अ॰ सा॰ 3 और 5 के प्रति परीक्षण में कोई तात्विक विरोधाभास नहीं बताया गया है जिससे यह कहा जा सके कि उसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 161 के अधीन दर्ज बयान अथवा अन्वेषण के दौरान उसके द्वारा उठाए गए कदमों के प्रति निर्देश में उसका प्रति परीक्षण करने के लिए बचाव को अवसर देने के लिए आई॰ ओ॰ की पेशी आवश्यकत: आवश्यक थी किंतु अन्वेषण अधिकारी के गैर परीक्षण के कारण बचाव पर प्रतिकूलता कारित की गयी थी। वस्तुत: यदि अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण किया जाता, अभियोजन का मामला और भी सुदृढ़ होता और यह सुनिश्चित विधि है कि प्रत्येक मामले का अधिमूल्यन स्वयं इसके अपने तथ्यों पर और पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य के आलोक में करना होगा और यह विनिश्चित करने के लिए कि क्या अभियोजन समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे अपना मामला सिद्ध करने में सक्षम हुआ है, न्यायालय को साक्ष्य के समेकित प्रभाव का परीक्षण करना होगा और वर्तमान मामले में गवाहों के परिसाक्ष्य से यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी सं॰ 1 द्वारा मृतक पर प्रहार के संबंध में अ॰ सा॰ 3 का परिसाक्ष्य अडिग बना रहा है। **कर्नाटक राज्य बनाम भाष्कर कुशाली कोठर का एवं अन्य, (2004)7 SCC 487,** में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि आई॰ ओ॰ का गैर–परीक्षण परिणामहीन होगा जब अभियुक्त पर प्रतिकूलता कारित नहीं हुई थी।

अपीलार्थी के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने यह तर्क भी किया है कि घटना के पाँच दिन बाद मृतक की मृत्यु हुई जो दर्शाता है कि अपीलार्थी सं॰ 1 का आशय मृतक की हत्या करना नहीं था बल्कि आशय उपहति कारित करना था और मृतक की मृत्यु ऐसे समय अंतराल के बाद हुई, ऐसा कारक है जो दर्शाता है कि अपराध धारा 304 (II) के परन्तुक के अंतर्गत आता है।

इस संबंध में यह कथन करना आवश्यक है कि यह दर्शाने के लिए कोई सामग्री सामने नहीं लायी गयी है यह दर्शाने के लिए कि मामला हत्या की कोटि में नहीं आने वाले आपराधिक मानववध के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत आता है, अपीलार्थी का कृत्य पाँच अपवादों के भीतर आता है जैसा भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 300 के अधीन संगणित किया गया है।

अ॰ सा॰ 10 डॉक्टर जिन्होंने मृतक गोपी महतो के मृत शरीर का शव परीक्षण किया था, खरोंच, पैर की दोनों हड्डियों का फ्रैक्चर, कलाई के उपर बाँह की उपरी हड्डी का और बाएँ बाँह की हड्डी का फ्रैक्चर पाया और दाएँ अगली बाँह के कलाई के उपर दोनों अगली बाँह की हड्डी का भी फ्रैक्चर था। ब्रेन विघटन के चरण में था। अ॰ सा॰ 9 डॉक्टर जिन्होंने आरंभ में घायल गोपी महतो (जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है) का परीक्षण किया ने फ्रैक्चर भी पाया था जैसा शव परीक्षण रिपोर्ट में ध्यान में लिया गया है और सिर की खाल पर 2" x 1/2" x खोपड़ी तक गहरा विदीर्ण उपहति भी पाया। अ॰ सा॰ 10 ने मत दिया कि मृतक द्वारा प्राप्त की गयी उपहतियों से लगे आघात के कारण मृत्यु हुई। यह स्पष्ट है कि प्रहार द्वारा कारित शारीरिक उपहतियों को मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त पाया गया था, इस प्रकार, भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 300 के खंड III के मुताबिक धारा 302 के अधीन दायित्व के लिए आवश्यक आपराधिक मन:स्थिति संतुष्ट होती है। परिणामस्वरुप, विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद मान्य नहीं है।

तद्नुसार, यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने उसकी मृत्यु में परिणत होने वाली उपहति कारित करने के आशय से मृतक पर प्रहार किया था।

12. जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 2 का संबंध है, यद्यपि विद्वान न्यायालय ने निर्णय में कथन किया है कि ''यह प्रकट है कि स्वपन महतो लाठी से लैस होकर वहाँ पहुँचा था किंतु उसे अ॰ सा॰ 3 द्वारा रोक दिया गया था अन्यथा उसने भी मृतक पर उपहति कारित किया होता,'' अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य के अनुरुप नहीं है। अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य (जैसी चर्चा उपर की गयी है) से स्पष्ट है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने कुल्हाड़ी से गोपी महतो (मृतक) पर प्रहार किया था और जब अ॰ सा॰ 3 ने गोपी महतो को उठाने का प्रयास किया,

तब अपीलार्थी सं॰ 1 ने उसको धमकाया; कि स्वपन महतो वहाँ आया और गोपी महतो को पानी से बाहर निकाला जिसके बाद अपीलार्थी सं॰ 1 ने पुन: अ॰ सा॰ 3 को धमकाया जो भाग गया। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य से स्पष्ट है कि अपीलार्थी सं॰ 2 अपीलार्थी सं॰ 1 के साथ था अथवा किसी हथियार से लैस था बल्कि उसने केवल मृतक को पानी से बाहर निकाला था। इसका कोई साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी सं॰ 2 ने सूचक को धमकाया था अथवा एक शब्द भी कहा था अथवा कोई प्रत्यक्ष कृत्य किया था।

यह सुनिश्चित सिद्धांत है कि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 34 के अधीन दायित्व का अवलंब लेने के लिए अभियोजन को स्थापित करना होगा कि पूर्व नियोजित योजना के अनुसरण में साथ मिल कर दांडिक कृत्य किया गया था तद्द्वारा जिसका अर्थ है कि धारा 34 सामान्य आशय को अग्रसर करने में आपराधिक कृत्य करने के लिए अभियुक्तगण के सामान्य आशय के साथ भागीदारी के तत्व से गठित सुभिन्न लक्षण का समावेश करने वाले साक्ष्य के नियम को समाविष्ट करती है।

यह सत्य है कि सामान्य आशय के निर्माण पर प्रत्यक्ष साक्ष्य सामने नहीं आ सकता है किंतु परिस्थितियों को मतैक्य सामने लाना होगा।

वर्तमान मामले में, अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य से प्रकट है कि अपीलार्थी सं॰ 2 अपीलार्थी सं॰ 1 के साथ अपराध स्थल पर नहीं गया था बल्कि बाद में आया था। अ॰ सा॰ 3 के मुताबिक अपीलार्थी सं॰ 2 किसी हथियार से लैस नहीं था, और न ही उसने अ॰ सा॰ 3 को गंभीर परिणाम की धमकी दी थी अथवा कोई प्रत्यक्ष कृत्य किया था उसने केवल गोपी महतो को पानी से बाहर निकाला था।

यह सुनिश्चित सिद्धांत है कि अपराध को सुकर बनाने के लिए किसी भागीदारी के बिना अपराध स्थल पर अपराधकर्ता की उपस्थिति मात्र भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 34 के अधीन उसको दायी अभिनिर्धारित करने के लिए पर्याप्त नहीं है।

ऐसे मामले में सतर्कता के साथ साक्ष्य को तौलने की आवश्यकता है और केवल तब जब सामान्य आशय का निष्कर्ष निश्चित है, निष्कर्ष दिया जा सकता है। किंतु अभिलेख पर मौजूद परिसाक्ष्य के मुताबिक यह दर्शाने के लिए सकारात्मक साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी सं॰ 2 का अपीलार्थी सं॰ 1 के साथ मृतक पर प्रहार करने का सामान्य आशय था। इस प्रकार, इन परिस्थितियों में वह युक्तियुक्त संदेह के लाभ का हकदार है जो अपीलार्थी सं॰ 2 को प्रोद्भूत होता है।

13. उपर की गयी चर्चा और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य की दृष्टि में यह न्यायालय पाता है कि अभियोजन अपीलार्थी सं॰ 1 के साथ सामान्य आशय रखते हुए मृतक गोपी महतो की मृत्यु कारित करने के लिए अपीलार्थी सं॰ 2 अर्थात् स्वपन महतो के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 सह-पठित 34 के अधीन आरोप स्थापित करने में सक्षम नहीं हुआ है। तद्नुसार, अवर न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत अपीलार्थी सं॰ 2 के विरुद्ध दोषसिद्धि का निर्णय और दंडादेश अपास्त किया जाता है और उसे आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। अपीलार्थी सं॰ 2 जमानत पर है, तद्नुसार उसे जमानत बंध के दायित्वों से उन्मोचित किया जाता है।

14. उपर की गयी चर्चा और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य की दृष्टि में यह न्यायालय विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट I, बेरमो, तेनूघाट द्वारा अपीलार्थी सं॰ 1 देबू महतो के विरुद्ध पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश में हस्तक्षेप करने के लिए कोई तर्कपूर्ण कारण नहीं पाता है और इसे एतद् द्वारा संपुष्ट किया जाता है। अपीलार्थी सं॰ 2 स्वपन महतो के संबंध में अपील अंशत: अनुज्ञात की जाती है और अपीलार्थी सं॰ 1 देबू महतो के संबंध में खारिज की जाती है।

प्रशान्त कुमार, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

ekuuh; i'kkUr dekj ,o vferkHk dekj xlrk] U;k;efrx.k

गैना मुर्मु

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (DB) No. 1419 of 2003. Decided on 23rd January, 2014.

जगन्नाथ मिश्रा, प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ द्वारा सत्र केस सं॰ 102 वर्ष 1999 में पारित क्रमशः 1.8.2003 के दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय तथा 4.8.2003 के दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860–धारा 302–हत्या–आजीवन कारावास–अभियोजन मामला अभियोजन साक्षियों के साक्ष्य द्वारा पूर्णतः समर्थित है–अभियोजन मामला चिकित्सीय साक्ष्य द्वारा भी पूर्णतः समर्थित–बचाव पक्ष ने घटना स्थल को चुनौती नहीं दिया है–अन्वेषण पदाधिकारी की अपरीक्षा के कारण बचाव पक्ष को कोई प्रतिकूलता कारित नहीं–दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय तथा दंडादेश में कोई अवैधता नहीं–अपील खारिज। (पैराएँ 10 से 14)

अधिवक्तागण.–M/s B.M. Tripathy, Navin Kumar Jaiswal, For the Appellant; Mr. Krishna Shankar, For the State.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील सत्र केस सं॰ 102 वर्ष 1999 में प्रथम अपर सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ द्वारा पारित दिनांक 1.8.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय तथा 4.8.2003 के दंडादेश के विरूद्ध निर्दिष्ट है, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन नोनी सरकार उर्फ नोरी राजबंशी तथा सिकन्तो सरकार उर्फ श्रीकान्तो सरकार के हत्या कारित करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए अपीलार्थी की दोषसिद्धि की गयी है तथा आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश सुनाया गया है। अवर न्यायालय ने अपीलार्थी को 2000 रुपये का जुर्माना चुकाने का भी निर्देश दिया था तथा जुर्माने का भुगतान न किये जाने की दशा में छह महीनों का साधारण कारावास भुगतना था।

2. मृतक सिकान्तो सरकार के फर्दबयान के अनुसार अभियोजन का मामला संक्षेप में यह है कि 5.11.1998 को 6.30 बजे अपराह्न में वह तथा उसके पिता नोनी सरकार अपनी आमलेट की दुकान पर मौजूद थे, उस समय स्वयं अपीलार्थी गैना मुर्मु, मुस्तकीन सोमटुडू, मोरल मरांड़ी, रसका मरांड़ी, सैम हंसदा उनकी दुकान पर आये थे। गैना मुर्मु ने आमलेट तैयार करने का आदेश दिया था। यह अभिकथित किया गया है कि सूचनादाता ने आमलेट तैयार किया था तथा इसे अभियुक्त व्यक्तियों को दे दिया था। तत्पश्चात्, आमलेट में प्याज की कम मात्रा मिलाने के संबंध में गैना मुर्मु तथा सूचनादाता के पिता नोनी सरकार के बीच कुछ झगड़ा हो गया था। तत्पश्चात्, गैना मुर्मु ने सूचनादाता के पिता की पीठ पर चाकू का एक वार किया था जिसके कारण वह नीचे गिर पड़ा था तथा कराहना प्रारंभ कर दिया था। यह भी अभिकथित किया गया है कि जब सूचनादाता अपने पिता के बचाव में गया था, गैना मुर्मु ने उसकी गर्दन पर चाकू का एक वार किया था तथा उसे घायल कर दिया था। यह भी कथित किया गया है कि घटना के अनुक्रम में सूचनादाता के भाई तथा मामा घटना स्थल पर पहुँचे थे तथा वे उसे इलाज के लिए अस्पताल ले गये थे, जहां उसका फर्दबयान अभिलिखित किया गया था।

3. पूर्वोक्त फर्दबयान के आधार पर, भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 447, 324, 326, 307, 302/34 के अधीन पाकुड़ (मुफस्सिल) पुलिस थाना केस संख्या 240 वर्ष 1998 दर्ज किया गया था तथा पुलिस ने अन्वेषण किया था। अन्वेषण के अनुक्रम में, पुलिस ने मृतक नोनी सरकार की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट

तैयार की थी। तत्पश्चात्, उसका शव पोस्टमार्टम परीक्षण के लिए भेजा था। यह प्रतीत होता है कि जो चिकित्सक सूचनादाता सिकन्तो सरकार की देखभाल कर रहा था, उसने बेहतर इलाज के लिए उसे कलकत्ता निर्दिष्ट किया था। तत्पश्चात, सूचनादाता के परिवार के सदस्य उसे कलकत्ता ले गये थे, जहां 5.12.1998 को कलकत्ता राष्ट्रीय चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल में इलाज के अनुक्रम में उसकी मृत्यु हो गयी थी। यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण पूरा करने के उपरान्त, पुलिस ने भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/34 के अधीन प्रथम सूचना रिपोर्ट में नामजद अपीलार्थी तथा अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के विरूद्ध अभियोग पत्र दाखिल किया था। तद्नुसार, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा अपराधों का संज्ञान लिया गया था। यह प्रतीत होता है कि विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी ने मामला सत्र न्यायालय को भेज दिया था क्योंकि भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपराध अनन्य रूप से एक सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय होता है।

4. अभिलेख की प्राप्ति के उपरान्त, विद्वान सत्र न्यायाधीश ने विचारण के लिए मामले की संचिका अपर सत्र न्यायाधीश, पाकुड़ के न्यायालय में अन्तरित कर दी थी। विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने दिनांक 8.9.1999 के अपने आदेश द्वारा भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 302/34 के अधीन अपीलार्थी तथा अन्य अभियुक्त व्यक्तियों के विरूद्ध आरोप विरचित किया था तथा इसे उन्हें स्पष्टीकृत किया था जिनका उन्होंने दोषी न होने का अभिवाक् किया था तथा विचारण किये जाने का दावा किया था। तत्पश्चात्, अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में कुल मिलाकर 6 गवाहों को परीक्षित किया था। अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में अभिलेख पर प्रदर्श 1 (पोस्टमार्टम रिपोर्ट), प्रदर्श 2 (फर्दबयान), प्रदर्श 3 (औपचारिक प्राथमिकी), प्रदर्श 4 (सिकन्तो सरकार का मृत्यु प्रमाण पत्र) को भी प्रस्तुत किया था। यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों पर विचार करने के उपरान्त सह-अभियुक्त सैम हंसदा, रस्का मरांडी, मोरल मरांडी एवं सोम टुडू को दोषमुक्त कर दिया था। परन्तु नोनी सरकार एवं सिकन्तो सरकार की हत्या कारित करने के लिए भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी गैना मुर्मू की दोषसिद्धि की थी तथा उसे आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश सुनाया था। दोषसिद्धि के पूर्वोक्त निर्णय तथा दंडादेश के विरूद्ध वर्तमान अपील दाखिल की गयी थी।

5. विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री बी॰ एम॰ त्रिपाठी, जिनकी श्री नवीन कुमार जायसवाल सहायता कर रहे हैं, निवेदन करते हैं कि प्रस्तुत मामले में तथाकथित चश्मदीद गवाहों अ॰ सा॰ 4 एवं 5 के बयान पर भरोसा नहीं किया जा सकता है क्योंकि घटना के समय वह घटना स्थल पर मौजूद नहीं थे। यह निवेदन किया गया है कि सूचनादाता ने प्रथम सूचना रिपोर्ट में कथित नहीं किया है कि सूचनादाता की माता अ॰ सा॰ 4 घटना के दौरान घटना स्थल पर मौजूद थी। यह भी निवेदन किया गया है कि सूचनादाता के भाई अ॰ सा॰ 5 ने कथित किया था कि मृतक नोनी सरकार पर चाकू के दो बार कारित किये गये थे, परन्तु चिकित्सक को केवल एक उपहति मिली है। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 5 का कथन अ॰ सा॰ 1 के साक्ष्य से सम्पोषण नहीं पाता है। यह निवेदन किया गया है कि पूर्वोक्त दोनों गवाह अ॰ सा॰ 4 एवं 5 अतिहितबद्ध गवाह हैं क्योंकि वे दोनों मृतकों के निकट संबंधी हैं। यह निवेदन किया गया है कि प्रस्तुत मामले में दूसरे मृतक, अर्थात सिकन्तो सरकार की मृत्यु अभियोजन द्वारा सिद्ध नहीं की गयी थी। यह निवेदन किया गया है कि अभिलेख पर ऐसा कोई दस्तावेजी साक्ष्य यह दर्शाने के लिए उपलब्ध नहीं है कि सिकन्तो सरकार को घटना के अनुक्रम में कोई उपहति आई थी तथा ऐसी उपहति के कारण उसकी मृत्यु हो गयी थी। उक्त परिस्थितियों के अधीन, फर्दबयान में उसके कथन को महत्व नहीं दिया जा सकता है। यह निवेदन किया गया है कि यह दर्शाने के लिए चाकू पेश नहीं किया गया है कि इसका वर्तमान अपराध कारित करने में इस्तेमाल किया गया था। यह भी निवेदन किया गया है कि अन्वेषण पदाधिकारी की परीक्षा नहीं की गयी है तथा इस प्रकार बचाव पक्ष को एक गंभीर प्रतिकूलता कारित की गयी थी। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि अन्वेषण पदाधिकारी की अपरीक्षा अभियोजन मामले के लिए घातक है।

6. दूसरी ओर, विद्वान अपर लोक अभियोजक श्री कृष्णा शंकर निवेदन करते हैं कि प्रस्तुत मामले में, सूचनादाता सिकन्तो सरकार की मृत्यु से इनकार नहीं किया गया है। वह यह भी निवेदन करते हैं कि अ॰ सा॰ 4 एवं 5, जो मृतक सिकन्तो सरकार की माता एवं भाई हैं, ने स्पष्टत: कथित किया था कि सिकन्तो सरकार की गर्दन पर चोट आई थी तथा इलाज के अनुक्रम में उक्त उपहति के कारण उसकी मृत्यु हो गयी थी। यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 4 एवं 5 के पूर्वोक्त बयानों को प्रतिपरीक्षा में चुनौती नहीं दी गयी थी। वह यह भी निवेदन करते हैं कि प्रदर्श 4 के परिशीलन से, यह स्पष्ट है कि 5.12.1998 को कलकत्ता राष्ट्रीय चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल में सिकन्तो सरकार की मृत्यु हुई थी। इस प्रकार, प्रदर्श 4 अ॰ सा॰ 4 एवं 5 के बयानों का पूर्णत: समर्थन करता है कि इलाज के अनुक्रम में सूचनादाता की अस्पताल में मृत्यु हुई थी। श्री कृष्णा शंकर यह भी निवेदन करते हैं कि पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों की दृष्टि में फर्दबयान में मृतक सिकान्तो सरकार का बयान भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 32 के अधीन सुसंगत एवं ग्राह्य बन गया था। वह निवेदन करते हैं कि फर्दबयान में मृतक सिकन्तो सरकार ने कथित किया था कि अपीलार्थी गैना मुर्मू ने उसकी गर्दन पर चाकू का वार किया था जिसके कारण उसे उसकी गर्दन पर उपहति आई थी। वह निवेदन करते हैं कि सूचनादाता का पूर्वोक्त बयान दर्शाता है कि अपीलार्थी ने वर्तमान अपराध कारित किया था। यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 4 एवं 5 के बयानों के साथ पठित मृतक सिकन्तो सरकार के बयान की दृष्टि में, अभियोजन ने अपीलार्थी के विरूद्ध लगाये गये आरोप को सभी युक्तिसंगत संदेह की छाया से परे सिद्ध किया था। इस प्रकार, इस अपील में इस न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

7. निवेदनों को सुनकर, हमने मामले के अभिलेख का अवलोकन किया है। अ॰ सा॰ 1 डॉक्टर सुरेश चन्द्र शर्मा ने नोनी सरकार उर्फ नोनी राजवंशी के शव का पोस्टमार्टम परीक्षण किया था। उन्होंने अभिसाक्ष्य दिया था कि मृतक को उसकी पीठ पर छुरे का विदीर्ण घाव किया गया था। उन्होंने राय दिया था कि पूर्वोक्त उपहति द्वारा कारित सदमें तथा रक्तस्राव के कारण मृतक नोनी सरकार उर्फ नोनी राजवंशी की मृत्यु हुई थी। इस प्रकार, नोनी सरकार उर्फ नोनी राजवंशी की मानव वध रूपी मृत्यु अभियोजन द्वारा सिद्ध की गयी है। जहां तक एक अन्य अभियुक्त सिकान्तो सरकार उर्फ सिकान्तो राजवंशी की मृत्यु का सवाल है, यह प्रतीत होता है कि उसकी पोस्टमार्टम रिपोर्ट तथा उपहति रिपोर्ट अभिलेख पर नहीं है, परन्तु अ॰ सा॰ 4 एवं 5 ने स्पष्टत: कथित किया था कि गैना मुर्मू ने उसकी गर्दन पर चाकू का वार किया था तथा उक्त उपहति के इलाज के अनुक्रम में उसकी कलकत्ता में अस्पताल में मृत्यु हो गयी थी। अभियोजन ने कलकत्ता नगर निगम, स्वास्थ्य विभाग द्वारा निर्गत सिकन्तो सरकार का मृत्यु प्रमाण पत्र (प्रदर्श 4) भी अभिलेख पर लाया था, जो दर्शाता है कि सिकन्तो सरकार की कलकत्ता राष्ट्रीय चिकित्सा महाविद्यालय अस्पताल में 5.12.1998 को मृत्यु हो गयी थी। यह उल्लिखित करना सुसंगत है कि बचाव पक्ष ने अ॰ सा॰ 4 एवं 5 के बयान को चुनौती नहीं दिया था कि इस घटना के अनुक्रम में मृतक सिकन्तो सरकार को आई उपहति के कारण उसकी मृत्यु हुई थी। यह भी प्रतीत होता है कि अ॰ सा॰ 2 एवं 3 जो पक्षद्रोही गवाह हैं, ने भी कथित किया था कि सिकन्तो सरकार तथा नोनी सरकार नामक उसके पिता की उसी घटना में हत्या कारित कर दी गयी थी, जो उसके अभिसाक्ष्य के एक वर्ष पहले घटित हुई थी। इस प्रकार, प्रदर्श 4 के साथ पठित अ॰ सा॰ 2, 3, 4 एवं 5 के साक्ष्य की दृष्टि में, हम पाते हैं कि अभियोजन ने सूचनादाता सिकन्तो सरकार की मानव वध रूपी हत्या को सिद्ध किया था।

8. अब प्रश्न अभिनिर्धारण के लिए इस संबंध में उठा था कि वर्तमान अपराध कारित करने में अपीलार्थी का कोई हाथ है या नहीं? यह हमें अभिलेख पर उपलब्ध अन्य साक्ष्यों पर विचार करने के लिए लाता है। अ॰ सा॰ 2 एवं 3 को पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है, क्योंकि उन्होंने अभियोजन मामले का पूर्णत: समर्थन नहीं किया है। अ॰ सा॰ 4 मृतक सिकन्तो सरकार की माता तथा एक अन्य मृतक नोनी सरकार उर्फ नोनी राजवंशी की पत्नी है। उसने अभिसाक्ष्य दिया था कि घटना के समय वह घटना स्थल

पर मौजूद थी तथा देखा था कि गैना मुर्मू ने उसके पति नोनी राजवंशी की पीठ पर चाकू का वार कारित किया था। उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया था कि जब उसका पुत्र सिकन्तो राजवंशी अपने पिता को बचाने के लिए गया था, गैना मुर्मू ने चाकू से उसकी गर्दन पर उपहति कारित की थी। उसने यह भी अभिसाक्ष्य दिया था कि उसके पुत्र को पाकुड़ अस्पताल ले जाया गया था, जहां उसने पुलिस को अपना बयान दिया था। बाद में उसके पुत्र सिकन्तो सरकार को बेहतर ईलाज के लिए कलकत्ता चिकित्सा महाविद्यालय अस्पताल ले जाया गया था जहां ईलाज के अनुक्रम में उसकी मृत्यु हो गयी थी। घटना के ढंग के संबंध में इस गवाह से कोई प्रतिपरीक्षा ही नहीं हुई है। तथापि, इस गवाह को एक संकेत दिया गया था कि घटना के समय वह घटना स्थल पर मौजूद नहीं थी। उक्त सुझाव से इनकार किया गया है। यह सुस्थापित है कि स्वीकार किया गया एक सुझाव साक्ष्य नहीं होता है। बचाव पक्ष ने अभिलेख पर यह दर्शाने के लिए कुछ भी नहीं लाया है कि अ॰ सा॰ 4 घटना स्थल पर मौजूद नहीं थी। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, हम पाते हैं कि अ॰ सा॰ 4 का बयान विश्वसनीय एवं स्वीकार्य है।

9. अ॰ सा॰ 5 सिकन्तो सरकार का भाई तथा नोनी सरकार का पुत्र है। उसने कथित किया था कि घटना के समय वह घटना स्थल पर पहुँचा था तथा देखा था कि गैना मुर्मू ने उसके पिता की पीठ पर चाकू की उपहति कारित की थी। उसने यह भी कथित किया था कि जब उसका भाई सिकान्तो सरकार अपने पिता को बचाने के लिए गया था, गैना मुर्मू ने उसकी गर्दन पर चाकू का वार कारित किया था जिसके कारण वह घायल हो गया था तथा इलाज के लिए पाकुड़ अस्पताल ले जाया गया था। जहां से उसे कलकत्ता चिकित्सा महाविद्यालय अस्पताल निर्दिष्ट कर दिया गया था, जहां इलाज के अनुक्रम में उसकी मृत्यु हो गयी थी। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि इस गवाह ने कथित किया है कि अपीलार्थी ने उसकी पिता के पीठ पर चाकू के दो वार कारित किये थे, परन्तु चिकित्सक अ॰ सा॰ 1 ने पीठ पर केवल एक उपहति पाई है। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया है कि इस गवाह ने स्वयं अपने आंखों से घटना को नहीं देखा था। हमारी राय में अ॰ सा॰ 5 के साक्ष्य में पूर्वोक्त विसंगति इतनी गंभीर नहीं है कि उसके पूरे साक्ष्य को नकारा जा सकता है। हम पाते हैं कि अ॰ सा॰ 5 तथा/या अभियोजन पक्षकारों का अभियुक्त व्यक्तियों के साथ कोई शत्रुतापूर्ण संबंध नहीं था। इस प्रकार, अपीलार्थी समेत अभियुक्त व्यक्तियों को झूठ-मूठ फंसाने के लिए उनके पास कोई वैयक्तिक दुर्भाव नहीं था। यह सुस्थापित है कि ऐसे गवाह, जो मृतक के रिश्तेदार हैं, वास्तविक दोषी को नहीं छोड़ेंगे तथा झूठ-मूठ अन्य को फंसा देंगे, जबतक कि उनके पास ऐसा करने का कोई अकाट्य कारण न हो।

10. जैसा कि हमने इसमें पहले ही निष्कर्ष दिया है कि सूचनादाता सिकन्तो सरकार की एक मानववध रूपी मृत्यु हुई थी, अतएव, हमारी दृष्टि में फर्दबयान (प्रदर्श 2) के तौर पर अ॰ सा॰ 6 द्वारा अभिलिखित उसका बयान मृत्युकालिक घोषणा बन जायेगा, क्योंकि उक्त बयान में वह उस सम्व्यवहार के बारे में बात करता है, जिसके परिणामत: उसकी मृत्यु हुई थी। प्रदर्श 2 का एक कोरा परिशीलन दर्शाता है कि मृतक ने कथित किया था कि अपीलार्थी ने चाकू द्वारा उसकी गर्दन पर उपहति कारित किया था। अ॰ सा॰ 4 एवं 5 के साक्ष्य में यह आया है कि पूर्वोक्त उपहति के लिए सूचनादाता का राष्ट्रीय चिकित्सा महाविद्यालय अस्पताल, कलकत्ता में ईलाज किया जा रहा था तथा ईलाज के अनुक्रम में 5.12.1998 को उसकी मृत्यु हो गयी थी। उक्त परिस्थिति के अधीन, प्रदर्श 2 यह भी दर्शाता है कि अपीलार्थी ने सूचनादाता पर चाकू की उपहति कारित की थी जिसके कारण उसकी मृत्यु हो गयी थी।

11. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि प्रस्तुत मामले में अ॰ सा॰ 6 को एक सुझाव दिया गया था कि मृतक सिकन्तो सरकार पाकुड़ अस्पताल में चेतनावस्था में नहीं था, जहां उसका अभिकथित फर्दबयान अभिलिखित किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि यह दर्शाने के लिए चिकित्सक का कोई प्रमाण पत्र नहीं है कि फर्दबयान अभिलिखित करने के समय मृतक सिकन्तो सरकार सचेत था तथा बोलने की स्थिति में था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि

अभिकथित मृत्यु कालिक घोषणा का साक्ष्य में अवलोकन नहीं किया जा सकता है। तथापि, अ॰ सा॰ 5 की प्रतिपरीक्षा में उसके बयान के परिशीलन से, हम पाते हैं कि उसने उसकी मौजूदगी में स्पष्टत: कथित किया था कि उसके भाई ने पाकुड़ अस्पताल में पुलिस को बयान दिया था। यह उल्लिखित करना सुसंगत है कि अ॰ सा॰ 5 ने एक गवाह के तौर पर प्रदर्श 2 पर अपने अंगूठे का चिन्ह लगाया था। यह सुस्थापित है कि अगर प्रतिपरीक्षा में कुछ बयान आये थे, यह उस व्यक्ति द्वारा एक स्वीकरण के तुल्य होगा जो उसकी प्रतिपरीक्षा करता है। पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों के अधीन, हम पाते हैं कि बचाव पक्ष ने स्वीकार किया था कि अस्पताल में सूचनादाता सचेत था तथा बयान देने की स्थिति में था। इस प्रकार, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उठाया गया पूर्वोक्त निवेदन एतद्द्वारा अस्वीकार किया जाता है।

12. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अन्वेषण पदाधिकारी की अपरीक्षा के कारण अपीलार्थी को गंभीर प्रतिकूलता कारित हुई थी। इस प्रकार, वर्तमान मामले में अन्वेषण पदाधिकारी की अपरीक्षा अभियोजन मामले के लिए घातक है। इस संबंध में, हम पाते हैं कि बचाव पक्ष ने घटना स्थल को चुनौती नहीं दिया है। अ॰ सा॰ 4 की कोई प्रतिपरीक्षा ही नहीं हुई है तथा खंडन प्राप्त करने के लिए उसे कोई सुझाव नहीं दिया गया है। इसी प्रकार अ॰ सा॰ 5 को ऐसा कोई सुझाव नहीं दिया गया था कि उसने पुलिस के समक्ष यह बयान नहीं दिया है कि अपीलार्थी ने मृतक नोनी सरकार की पीठ पर चाकू का वार किया था तथा मृतक सिकन्तो सरकार की गर्दन पर चाकू का वार किया था। इस प्रकार, हमारी राय में अन्वेषण पदाधिकारी की अपरीक्षा के कारण बचाव पक्ष को कोई प्रतिकूलता कारित नहीं हुई थी।

13. उपरोक्त की गयी परिचर्चाओं की दृष्टि में, हम दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय तथा दंडादेश में कोई अवैधानिकता एवं अनियमितता नहीं पाते हैं, जिसके साथ इस न्यायालय द्वारा किसी हस्तक्षेप की कोई आवश्यकता हो।

14. परिणामत:, यह अपील विफल होती है तथा तद्नुसार खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pUn'k[kj] U;k;efr

सुधीर कुमार

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P (S) No. 7667 of 2013. Decided on 16th January, 2014.

(क) झारखंड न्यायिक सेवा (भर्त्ती) नियमावली, 2004–नियम 5–आरक्षण–सिविल न्यायाधीश (कनीय डिवीजन) के पद पर नियुक्ति–अनुसूचित जाति/अनुसूचित जन-जाति कोटा के अधीन आयु में छूट के लिए दावा–केवल अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जन-जाति को तथा महिला उम्मीदवारों को आयु की उपरी सीमा में छूट दी जाती है, परन्तु पिछड़े वर्गों को उपरी आयु सीमा में ऐसी कोई छूट नहीं दी जाती है–किसी नियम की अनुपस्थिति में, याची पिछड़े वर्गों को ऊपरी आयु सीमा में छूट की ईप्सा नहीं कर सकता है मात्र इस आधार पर कि कतिपय सीटें पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित हैं–चूँकि रिट याचिका अंतिम क्षण में दाखिल की गयी हैं, न्यायालय रिट याचिका ग्रहण करने का इच्छुक नहीं है–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 6 एवं 9)

(ख) भारत का संविधान–अनुच्छेद 16(4)–आरक्षण–अनुच्छेद 16(4) एक सक्षमकारी प्रावधान है तथा यह नागरिकों के पिछड़े वर्ग के पक्ष में नियुक्तियों में आरक्षण करने के लिए

राज्य को केवल एक विवेकाधीन शक्ति प्रदान करता है जिनका, उसकी राय में, राज्य की सेवाओं में प्रर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है–संवैधानिक सीमाओं के भीतर किस सीमा तक, किस ढंग से तथा कौन सी सेवाओं में आरक्षण रखा जाना चाहिए, इसपर सुसंगत कारकों पर विचार करके निर्णय लेने का कार्य सरकार का है–न्यायालय आरक्षण रखने या जिस ढंग से इसे रखा जाना है एवं जिस सीमा तक इसे रखा जाना चाहिए, इसपर सरकार को निर्देश नहीं दे सकता है।

(पैराएँ 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.–AIR 1968 SC 507; (1999) 7 SCC 209; 1995 Supp (3) SCC 146; (1996) 11 SCC 742—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Vijay Ranjan Sinha, For the Petitioners; Mr. Jai Prakash, For the Resp.-State; Mr. Sanjoy Piprawall, For the Resp.-JPSC; Mr. Ajit Kumar, For the High Court.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश एवं श्री चन्द्रशेखर, न्यायमूर्ति.–अन्य पिछड़े वर्गों के लिए आयु में छूट हेतु केन्द्र सरकार तथा राज्य सरकार द्वारा निर्गत परिपत्र को क्रियान्वित करने के लिए प्रत्यर्थीगण को एक निर्देश निर्गत करने हेतु तथा अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की आयु में छूट को पुनः निर्धारित करने के लिए तथा तीन वर्षों के स्थान पर पाँच वर्षों की छूट का प्रावधान करने के लिए भी समुचित निर्देश हेतु यह रिट याचिका दाखिल की गयी है।

2. झारखंड लोक सेवा आयोग (जे॰ पी॰ एस॰ सी॰) ने 10.12.2003 को विभिन्न समाचार पत्रों में प्रकाशित विज्ञापन संख्या 4/2013 निर्गत किया था, जिसके द्वारा पिछड़े वर्गों समेत सामान्य कोटि के उम्मीदवारों के लिए अधिकतम आयु 35 वर्ष निर्धारित करते हुए सुपात्र उम्मीदवारों से सिविल न्यायाधीश (कनीय डिवीजन) (मुंसिफ) के पद के लिए आवेदन आर्मंत्रित किए गये थे। नियम 5 के परंतुक के अनुसार, महिला उम्मीदवार या अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित उम्मीदवारों के मामले में, ऊपरी आयु सीमा में तीन वर्ष की छूट होनी थी। नियम 5 के अनुसार, पिछड़े वर्ग के लिए ऊपरी आयु सीमा में कोई छूट नहीं है।

3. रिट याची परीक्षा का आकांक्षी उम्मीदवार है। याची का मामला यह है कि पदों को पहले ही पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित किया जा चुका है, अर्थात, बी॰ सी॰–I के लिए 9 सीटें जबकि बी॰ सी॰–II के लिए 7 सीटें, जबकि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिए स्थान आरक्षित किए गये हैं जिन्हें ऊपरी आयु सीमा में 3 वर्ष की छूट दी गयी है, पिछड़े वर्गों को आयु में ऐसी कोई छूट नहीं दी गयी है। याची का यह पक्ष है कि चूँकि पिछड़े वर्ग समाज के कमजोर तबके की परिधि के भीतर आते हैं, केन्द्र सरकार एवं अन्य राज्य सरकारें भी अन्य पिछड़े वर्गों के आयु निर्धारण में ऊपरी आयु सीमा में पाँच वर्ष की छूट प्रदान कर रही हैं तथा आयु में अतिरिक्त छूट भी प्रदान कर रही हैं तथा ऐसा होने पर, प्रत्यर्थीगण को भी अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के साथ पिछड़े वर्गों की ऊपरी आयु सीमा में पाँच वर्ष की छूट पर विचार करना है। अतएव, यह रिट याचिका दाखिल की गयी है।

4. हमने याची के विद्वान अधिवक्ता श्री विजय रंजन सिन्हा, राज्य के विद्वान ए॰ ए॰ जी॰ श्री जय प्रकाश, झारखंड लोक सेवा आयोग के विद्वान अधिवक्ता श्री संजय पीपरवाल तथा उच्च न्यायालय के विद्वान अधिवक्ता श्री अजीत कुमार को सुना।

5. सिविल जज, कनीय डिवीजन (मुंसिफ) की भर्त्ती के लिए, झारखंड न्यायिक सेवा (भर्त्ती) नियमावली, 2004 का नियम 5 सुसंगत होने के कारण निम्नवत् पठित है:–

*^^5. **ik=rk-**&,d mEehnokj bu fu;ek d vèkhu flfoy U;k;kèkh'k] duh; fMohtu (eflQ) d rkj ij fu;Dr fd; tkus dk ik= gkxk] o'kr fd&*

(a) og ml o"k dh tuojh d vfre frfFk] ftl o"k ijh{kk d fy, vkonu vkef=r fd; tkr g] dk 22 o"k l vfèkd gk rFkk 35 o"k l de gkA

ijUr ;g fd ,d efgyk mEehnokj] ;k vulfpr tkfr ;k vulfpr tutkfr l lcfèkr mEehnokjk d ekey e Åijh vk; lhek e rhu o"kk dh NV gkxhA

(b) og ,d ekU;rk ikIr fo'ofo|ky; l fofèk e Lukrd gk rFkk vfèkoDrk vfèkfu;e] 1961 d vèkhu ,d vfèkoDrk d rkj ij fucfèkr gk] rFkk

*(c) ml dk mÙke LokLF; gk] mÙke ufrd pfj= dk gk rFkk ufrd vèkerk dk vrxLr dju oky fdlh nkfMd ekey e lfylr u gk] ;k bll lcfèkr u gkA***

6. नियम 5 के पठन से, यह प्रकट है कि ऊपरी आयु सीमा में छूट केवल अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति को तथा महिला उम्मीदवारों को प्रदान की गयी है, परन्तु पिछड़े वर्गों को ऊपरी आयु सीमा में ऐसी कोई छूट नहीं दी गयी है। किसी नियम की अनुपस्थिति में, याची पिछड़े वर्गों को ऊपरी आयु सीमा में छूट की ईप्सा नहीं कर सकता है मात्र इस आधार पर कि कतिपय रिक्तियां पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षित हैं।

7. अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति की आयु में छूट पांच वर्षों के तौर पर पुनः निर्धारित करने के लिए याची द्वारा एक अन्य अनुतोष की भी ईप्सा की गयी है क्योंकि संवैधानिक योजना के तौर पर अन्य राज्य इसे उपलब्ध करा रहे हैं। झारखंड न्यायिक सेवा (भर्त्ती) नियमावली, 2004 के नियम 5 के परन्तुक के अनुसार, महिला उम्मीदवारों या अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति से संबंधित उम्मीदवारों के मामले में ऊपरी आयु सीमा में तीन वर्षों की छूट दी गयी है। झारखंड न्यायिक सेवा (भर्त्ती) नियमावली, 2004 पिछले 10 वर्षों से अस्तित्व में है, याची ने नियमों को कभी भी चुनौती नहीं दी है, न ही अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों के लिए अधिकतम आयु की सीमा पुनः निर्धारित करने के एक निर्देश की ईप्सा करते हुए कोई रिट याचिका दाखिल किया है। यह रिट याचिका सिविल न्यायाधीश (कनीय डिवीजन) (मुंसिफ) भर्त्ती, 2013 की परीक्षा के लिए आवेदनों को दाखिल करने के अंतिम तिथि के छोर पर दाखिल की गयी है। चूँकि यह रिट याचिका अंतिम क्षन में दाखिल की गयी है, हम इस रिट याचिका को ग्रहण करने के इच्छुक नहीं हैं।

8. संविधान का अनुच्छेद 16(4) एक सक्षमकारी प्रावधान है तथा नागरिकों के पिछड़े वर्ग के पक्ष में नियुक्तियों में आरक्षण करने के लिए यह राज्य को केवल एक विवेकाधीन शक्ति प्रदान करता है जिनका, उसकी राय में राज्य की सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं है। **AIR 1968 SC 507** में रिपोर्ट किये गये **''सी॰ ए॰ राजेन्द्रण बनाम भारत संघ''** में निर्णय को ध्यान में रखते हुए, माननीय उच्चतम न्यायालय ने **(1999) 7 SCC 209** में रिपोर्ट किये गये **''अजीत सिंह (II) बनाम पंजाब राज्य''** में माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि, ''1963 से ही कई प्रामाणिक निर्णयों की दृष्टि में, हम अभिनिर्धारित करते हैं कि अनुच्छेद 16(4) एवं अनुच्छेद 16(4A) कोई मौलिक अधिकार प्रदान नहीं करते हैं और न ही कोई संवैधानिक दायित्व अधिरोपित करते हैं बल्कि, आरक्षण उपलब्ध कराने पर विचार करने के लिए राज्य में एक विवेकाधिकार निहित करते हुए ये केवल सक्षमकारी प्रावधानों की प्रकृति के हैं, अगर इन अनुच्छेदों में वर्णित परिस्थितियां ऐसा उचित बनाती हैं।''

9. 1995 Supp. (3) SCC 146 में रिपोर्ट किये गये **''सी॰ उदय कुमार बनाम भारत संघ''** में, माननीय उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि सरकार अपनी सेवाओं में पदों को आरक्षित

रखने के लिए बाध्य नहीं है। संवैधानिक सीमाओं के भीतर किस सीमा तक, किस ढंग से तथा कौन सी सेवाओं में आरक्षण रखा जाना चाहिए, यह सुसंगत कारकों पर विचार करके राज्य सरकार को निर्णय करना है। आरक्षण रखने के लिए या जिस ढंग से तथा जिस सीमा तक इसे रखा जाना चाहिए, इसपर न्यायालय राज्य को निर्देश प्रदान नहीं कर सकते हैं। माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नवत् अभिनिर्धारित किया है:–

> *3. ^^lfoèkku Lo; vkj{k.k d ekey e vulfpr tkfr;k] vulfpr tutkfr;k ,o vU; fiNM oxk d chp vrj dk ekU;rk nrk gA ek= bl dkj.k fd vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k d fy, vkj{k.k fd; tkr g ;k NV inku dh tkrh g tk vU; fiNM oxk dk foLrkfjr ugh fd; tkr g] vkj{k.k ,o fj;k;r Hkn&Hkko i.k ugh cu tkrh gA***

10. (1996) 11 SCC 742 में रिपोर्ट किये गये **छत्तर सिंह बनाम राजस्थान राज्य** में, राजस्थान राज्य एवं अधीनस्थ सेवायें (संयुक्त प्रतियोगिता परीक्षाओं द्वारा सीधी भर्त्ती) नियमावली, 1962 के नियम 13 के अधीन प्रावधान को भेदभावपूर्ण एवं अनुच्छेद 14, अनुच्छेद 16(1) एवं अनुच्छेद 16(4) के प्रावधानों का उल्लंघनकारी बताते हुए चुनौती दी गयी थी क्योंकि नियम 13 ने अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों से संबंधित उम्मीदवारों के लिए कट–ऑफ अंकों में 5 प्रतिशत तक छूट उपलब्ध कराया था जबकि ऐसी रियायत अन्य पिछड़े वर्गों से संबंधित उम्मीदवारों को प्रदान नहीं की गयी थी। माननीय उच्चतम न्यायालय ने निम्नांकित शब्दों में मुद्दे पर परिचर्चा किया है:–

> *^^17. vxyk i'u ;g g fd D;k fu;e 13 d ijrd d vèkhu vU; fiNM oxk d lkFk vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k d leku 0;ogkj fd;k tkuk g rFkk ikjfHkd ijh{kk e ikp ifr'kr dV&vkQ vd inku fd; tku g rFkk D;k bldk foyki vuPNn 14 e vfHkdfFkr lekurk d vfèkdkj dk fuf"k) djrk g\ vuPNn 14 volj dh lekurk ,o fofèk d leku lj{k.k d vfèkdkj dk miyCèk djkrk gA vuPNn 15 ,o 16 vuPNn 14 d gh ox d gA vuPNn 16(1) Hkn&Hkko dk fuf"k) djrk g rFkk jkT; d vèkhu fdlh in ij fu;ktu ;k fu;fDr l lcfèkr ekeyk e iR;d ukxfjd dk volj dh lekurk inku djrk gA vuPNn 16(4) ldkjkRed dkjokb }kjk ukxfjdk d fdlh ,l fiNM ox] ftudk] jkT; dh jk; e] jkT; d vèkhu lok e i;klr ifrfufèkRo ugh g] d i{k e ink d fy, fu;fDr;k e vkj{k.k dk ikoèkku djuk jkT; d fy, vko';d cukdj vleku 0;fDr;k d fy, volj dh lekurk dk foLrkfjr djrk gA vc ;g lLFkkfir fofèkd fLFkfr g fd vuPNn 16(4) ,d viokn ugh g cfYd vuPNnk 14 ,o 16(1) dk ,d igy gA ;g jkT; dk ukxfjdk d fdlh fiNM ox dk lekurk dk volj iHkkoh cuku d fy, 'kfDr inku djrk gA vuPNn 366(24) vulfpr tkfr dk ifjHkkf"kr djrk g rFkk vuPNn 366(25) vulfpr tutkfr;k dk ifjHkkf"kr djrk gA vuPNn 341 jk"Vifr dk jkT; d jkT;iky d lkFk e=.kk djd lkotfud vfèklpuk }kjk ;g fofufn"V dju e l'kDr cukrk g fd ml jkT; ;k l?k jkT; {k=] tk Hkh fLFkfr gk d lcèk e tutkfr;k ;k tutkrh; lenk;k ;k tutkfr;k d fgLLk ;k mud Hkhrj d legk ;k tutkrh; lenk;k dk bl lfoèkku d mí';k d fy, vulfpr tutkfr;k ekuk tk;xkA blh idkj] vuPNn 342(1) jk"Vifr dk mu tutkfr;k ;k tutkrh; lenk; dk fofufn"V dju dh 'kfDr inku djrk g ftUg] lfoèkku d mí'; d fy,] jkT; ;k l?k jkT; {k=k] tk Hkh fLFkfr gk] d lcèk e vulfpr tkfr;k ekuk tk;xkA ;g mld vuPNnk 341 ,o 342(2) d [kM nk d vèkhu lln }kjk cuk;h x;h fofèk d vèkhu gkxkA fiNM ox ^^vfHk0;fDr dk lfoèkku d vèkhu ifjHkkf"kr ugh fd;k*

x;k g ijUr dfBukb;k dk nj dju d fy, rFkk mudh voLFkkvk e lèkkj dju d fy, l?k ;k jkT; ljdkjk }kjk fd; tku oky mik;k d lcèk e vu'kla d fy, fiNM oxk dh ifjfLFkfr;k dh tkp iMrky d fy, jk"Vifr dk ,d vk;kx fu;Dr dju e l'kDr cuk;k x;k gA dkdk dkyydj vk;kx rFkk eMy vk;kx tl vk;kx jk"Vifr }kjk fu;Dr fd; x; Fk ftUgku fiNM oxk dh f'kuk[r fd;k FkkA lkekftd rFkk 'k{kf.kd fiNMiu dh f'kuk[r ij rFkk lefpr ljdkj }kjk mld Lohdj.k ij] jk"Vifr ;k jkT; ljdkj dk jkT;iky mud gkykr dk lèkkju d fy, ykHk inku djr g, lkotfud vfèklpuk fuxr djxkA tcrd fd ,lh vfèklpuk idkf'kr ugh dh tkrh g] fiNM ox lfoèkku d vuPNn 15(4) ;k 16(4) d vèkhu vkj{k.k d ykHk d gdnkj ugh gkr gA vuPNn 14 ,o 16 iLrkouk d lkFk ifBr fd; tku ij jkT; d vèkhu fdlh in rd fu;ktu ;k fu;fDr l lcfèkr ekeyk e lekurk dk volj inku djr g ---

lkekftd vkfFkr tur= dk loèkkfud mí'; ijk ugh fd;k tk ldrk g tcrd fd lekt d lHkh ox viuh tkfr] lenk;] uLy] èke ,o fyx d fuji{k jkT; dh 'kfDr e leku :i l Hkkx ugh yr gA bu vkèkkjk ij jkT; dh 'kfDr e Hkkx yu e fd, x, lkj Hkn Hkkok dk ldkjkRed mik;k }kjk nj fd;k tkuk gA vr,o] lekurk dh ifjdYiuk vko';d cukrh g fd lekurk dk ijk dju d fy, fofèk dk lek;ktu ;kX; gkuk pkfg,A vuPNn 38 u doy 0;fDr;k d chp cfYd ykxk d legk d chp Hkh thou d lHkh {k=k e mRÑ"Vrk e lèkkj dju d fy, mUg i;klr lkèku miyCèk djku gr vk; e vlekurk dk U;ure djuk rFkk ntk] lfoèkkvk ,o volj k e vlekurk dk nj djuk vko';d cukrk gA vuPNn 46 jkT; dk fo'k"k lkoèkkuh d lkFk lekt d detkj rcdk rFkk] fo'k"kdj vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k d 'k{kf.kd ,o vkfFkd fgrk dk ikRlkfgr dju rFkk mUg lkekftd vU;k; ,o 'kk"k.k d lHkh idkjk l cpku dk fun'k nrk gA vr,o] lj{k.k dk [kM] vleku fLFkfr e ektn 0;fDr;k d fy, ldkjkRed dkjokb vko';d cukrk gA vlekuk d fy, lekurk mud lkFk vleku 0;ogkj djd iklr dh tkrh gA vr,o] ldkjkRed dkjokb ;k ldkjkRed HknHkko] lfoèkku d vuPNnk 14 ,o 16(1) e of.kr nt e volj dh lekurk e vrfufer gA vr,o] vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k nk iFkd oxk d rkj ij g rcfd vU; fiNM ox bul vyx gA

18. jkT; u volj] lkekftd nt ;k 0;fDr dh xfjek dk lekurk inku dju d fy,] tl k fd vuPNnk 14] 15] 16] 21] 38] 39] 39A, 46 bR;kfn e vkn'k fd;k x;k g] ,d loèkkfud uhfr d rkj ij lkekftd] 'k{kf.kd] vkfFkd fiNMiu dk nj dju d fy, lfoèkku dh iLrkouk] ey vfèkdkjk ,o uhfr fun'kd fl)krk] tk lfoèkku d e[; Hkkx g e iR;kHkr lkekftd vkfFkd U;k; inku dju d fy, ,d ldkjkRed dkjokb d rkj ij jkT; d fdlh dk;ky; ;k in e vkj{k.k d fl)kr dk fodkl fd;k FkkA vuPNn 335 jkT; dk i'kklu dh d'kyrk d llxr jgr g, jkT; dh lokvk e fdlh dk;ky;@in ij fu;fDr d fy, nfyrk ,o tutkfr;k d nkok dk fopkj e yuk vfuok;Z cukrk gA ;|fi vU; fiNM ox lkekftd ,o 'k{kf.kd :i l mUur ugh g] og mUgh lkekftd fu;kX;rk l xLr ugh g tk vulfpr tkfr ,o vulfpr tutkfr;k ij vfèkjkfir gA vuPNn 15(2) ,o 17 mud lkFk fd; x; ,frgkfld ,o lkekftd HknHkko dk lk{; miyCèk djkrk gA vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k d fy, vkj{k.k dk mí'; mUg jk"Vh; thou dh e[; èkkjk e ykuk g] tcfd

*fiNM oxk d lcèk e mí'; mudh lkekftd rFkk 'k{kf.kd ckèkkvk dk nj djuk gA vr,o] vuPNnk 16(4) ;k 15(4) d mí'; d fy, mUg lno vle: i ekuk tkrk g rFkk og nfyrk ,o tutkfr;k d lkFk ,d lefdr ox dk xBu ugh djr gA vr,o] Li"Vr% fu;e 13 dk ijrd lkekU; mEehnokjk d fy, fuèkkfjr fuEure i{k= l ikjfHkd ijh{kk e dV&vkQ vdk l vkj 5 ifr'kr dh NV rd lhfer gA bl idkj] ;g doy mu vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k rd lhfer g tk lkekU; mEehnokjk d leku dy vd ikIr ugh dj ld FkA fu;e Li"Vr% ijrd dk ykHk vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k rd lhfer djrk gA 0;k[;k dh ifØ;k }kjk] vU; fiNM oxk dk vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k d leku ?kkf"kr ugh fd;k tk ldrk gA vr,o] ;g rd fd vuPNn 16(4) e ^^ukxfjdk d fdlh fiNM ox** dk lfEefyr dju d fl)kr dh nf"V e] vkj{k.k d mí'; d fy, vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k ,o vU; fiNM oxk dk iFkd oxk d rkj ij vfrfjDr :i l oxhdj.k djuk rFkk vU; fiNM oxk dk bUgh ykHkk dk inku dju e foyki vuPNn 14 dk mYy?ku djrk g] lkj l jfgr gA vxj vYi er oky U;k;kèkh'k }kjk ;Fkk ifrikfnr lekurk d rd dk LohNfr inku dh tkrh g] og rkfdd :i l ykd lHkk ;k jkT; dh foèkku lHkkvk e Hkh lhVk d vkj{k.k d gdnkj g] tk ;fi lfoèkku d vuPNn 334(a) e fufgr ,d lokifj [kM d ifjpkyu }kjk vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k rd lhfer gA lfoèkku d lLFkkidk u vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k rFkk lekt d vU; rcdk d lkekftd vkfFkd ,o 'k{kf.kd voLFkkvk dh vlekurkvk d ifr lpr jgr g, lfoèkku e mUg iFkd LFkku fn;k gA lfoèkku u lefpr ljdkj }kjk fofufn"V vkn'kk ,o lkotfud vfèklpukvk d flok; vU; fiNM oxk dk Li"V :i l ,l ykHk inku ugh fd; gA vr,o] ;g vrkfdd rFkk vokLrfod gkxk fd vulfpr tkfr;k ,o vulfpr tutkfr;k dk ;Fkk miyCèk djk; x; bUgh ykHkk dk vU; fiNM oxk dk miyCèk djku e foyki lfoèkku d vuPNnk 16(1) ,o 14 d vèkhu ukfLr FkkA***

9. (1996) 11 SCC 742 में रिपोर्ट किये गये **छत्तर सिंह बनाम राजस्थान राज्य** के मामले में अधिकथित निर्णयाधार का अनुसरण करते हुए तथा मात्र इस कारण कि अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति को ऊपरी आयु सीमा में छूट प्रदान की गयी है, इसे पिछड़े वर्गों को विस्तारित नहीं किया जा सकता है तथा याची इस रिट याचिका में ईप्सा किये गये किसी अनुतोष का हकदार नहीं है। चूँकि झारखंड न्यायिक सेवा (भर्त्ती) नियमावली, 2004 के नियम 5A के परन्तुक की वैधता, जहां तक यह अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों को ऊपरी आयु सीमा में छूट से संबंधित है, चुनौती के अधीन नहीं है, अतएव, याची द्वारा किये गये आग्रह को ग्रहण नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

देवमुनि देवी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 7996 of 2012. Decided on 12th September, 2013.

सेवा विधि–पेंशन–याची, जिसके पति, तृतीय वर्ग कर्मचारी, की मृत्यु सेवारत रहते हो गयी, को अंतिम पारिवारिक पेंशन के मंजूरी को रोकने वाले आदेश के विरुद्ध रिट याचिका–परिवारिक पेंशन की अंतिम मंजूरी रोकने वाले उक्त आदेश को इस आधार पर पारित किया गया था कि याची का पति ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान किए जाने के पहले विभागीय परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हुआ था–याची के पति को ए॰ सी॰ पी॰ का प्रदान सचिव, विधि विभाग द्वारा संपुष्ट किया गया था–इस प्रकार प्रत्यर्थी द्वारा इसको रोकने का कोई औचित्य नहीं था–पारिवारिक पेंशन नियत करने के लिए और याची को अनंतिम पारिवारिक पेंशन के बकाया का भुगतान करने के लिए निर्देश दिया गया। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Atanu Banerjee, For the Petitioner; JC to AG, For the State; Mr. Sudarshan Shrivastava, For the Respondent No. 5.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची का पति जो सिविल न्यायालय, धनबाद में तृतीय वर्ग कर्मचारी था की मृत्यु उसकी सेवा के दौरान दिनांक 6 फरवरी 2008 को हो गयी। याची अपने पारिवारिक पेंशन एवं अन्य मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति देयों का भुगतान करने के लिए संबंधित प्रत्यर्थी को निर्देश देने के लिए वर्तमान रिट आवेदन में इस न्यायालय के पास आयी है। याची के पति को अपनी सेवा के दौरान दो ए॰ सी॰ पी॰, दिनांक 9 अगस्त, 1999 के प्रभाव से प्रथम ए॰ सी॰ पी॰ और दिनांक 19 मई, 2003 के प्रभाव से द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰, के लाभों को प्रदान किया गया था। दिनांक 10 फरवरी, 2011 को सचिव, विधि (न्याय) विभाग, झारखंड सरकार द्वारा इन वित्तीय उत्क्रमण को आगे संपुष्ट किया गया था जिसका कथन संबंधित सचिव (विधि) की ओर से दाखिल प्रतिशपथ पत्र में किया गया है।

3. किंतु, याची की शिकायत है कि जिला लेखा अधिकारी, धनबाद (प्रत्यर्थी सं॰ 6) ने मृतक कर्मचारी की सेवा पुस्तिका में प्रासंगिक प्रविष्टियों, अर्थात् क्या वह उक्त ए॰ सी॰ पी॰ के प्रदान के पहले विभागीय परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ था, के सत्यापन के बिंदु पर याची को अंतिम पेंशन की मंजूरी रोक दिया है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि सचिव, विधि (न्याय) विभाग द्वारा ए॰ सी॰ पी॰ के प्रदान के सम्यक संपुष्टिकरण पर और दिनांक 6 फरवरी, 2008 को संबंधित कर्मचारी की मृत्यु के बाद इस चरण पर याची को कोई कारण बताओ अथवा नोटिस जारी किए बिना ऐसे विवाद्यक पर पेंशन बकाया को रोकने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 6 के पास कोई औचित्य नहीं है। याची के अनुसार, उसके पति ने दिनांक 28 मई, 1979 को सेवा में प्रवेश किया था और 28 वर्ष 8 माह 8 दिन की सेवा पूरा करने पर दिनांक 6 फरवरी, 2008 को सेवारत रहते हुए उसकी मृत्यु हो गयी। अतः, क्रमशः 24 वर्ष और 12 वर्ष की सेवा पूरी करने पर वह अन्यथा भी ए॰ सी॰ पी॰ के प्रदान का हकदार था। याची के विद्वान अधिवक्ता यह भी निवेदन करते हैं कि सम्यक प्रक्रिया और मृतक कर्मचारी के अभिलेखों के संवीक्षण के बाद उक्त लाभ प्रदान किया गया है जिसे सचिव, विधि द्वारा सम्यक रूप से संपुष्ट किया गया है। इस चरण पर, इसे रोकने के लिए प्रत्यर्थी जिला लेखा अधिकारी के पास कोई औचित्य नहीं था।

5. प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि मृतक कर्मचारी के सेवा लाभों का संवीक्षण प्रत्यर्थी सं॰ 6 जिला लेखा अधिकारी द्वारा किया गया था और जब यह गौर किया गया था कि

संबंधित कर्मचारी की सेवा पुस्तिका में विभागीय परीक्षा में उत्तीर्ण होने अथवा इसका छूट दिए जाने की प्रविष्टि नहीं है, इसके संबंध में सक्षम अधिकारी से पूछा गया है। किंतु उनके अनुसार, याची को पारिवारिक पेंशन के प्रदान को रोकने का विनिर्दिष्ट आदेश नहीं है।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख पर मौजूद प्रासंगिक सामग्री के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि याची के पति की मृत्यु सेवारत रहते हुए दिनांक 28 फरवरी, 2008 को हो गयी थी और उस समय तक उसे प्रथम एवं द्वितीय ए॰ सी॰ पी॰ का लाभ प्रदत्त किया गया था। इसके अतिरिक्त, ऐसे ए॰ सी॰ पी॰ का प्रदान सचिव, विधि (न्याय) विभाग, झारखंड सरकार के आदेश द्वारा रिट आवेदन के परिशिष्ट-4 के तहत दिनांक 10 फरवरी, 2011 को भी संपुष्ट किया गया था जो सक्षम प्राधिकारी है। प्रत्यर्थी सचिव, विधि के शपथ पत्र में इसे स्वीकार भी किया गया है। याची को जनवरी, 2012 से अभिकथित रूप से उसका पारिवारिक पेंशन रोके जाने के पहले कारण बताओ या नोटिस भी जारी नहीं किया गया है। ऐसी परिस्थितियों में, उसके पति जिसकी मृत्यु सेवारत रहते हो गयी, की जगह विधवा याची को देय पारिवारिक पेंशन और अन्य मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति देयों के प्रदान को रोकने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 6 के पास औचित्य नहीं है। अत:, मृतक कर्मचारी के पारिवारिक पेंशन एवं मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति देयों के प्रदान को रोकने के लिए संबंधित प्रत्यर्थी का अभिवचन स्वीकार नहीं किया जा सकता है और वह भी विधवा याची को किसी नोटिस अथवा अवसर के बिना।

7. तद्नुसार, प्रत्यर्थी सं॰ 6 जिला लेखा अधिकारी, धनबाद सहित संबंधित प्रत्यर्थीगण सुनिश्चित करेंगे कि याची की अंतिम पारिवारिक पेंशन राशि नियत की जाय और इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर अनंतिम पारिवारिक पेंशन के बकाया का भुगतान किया जाय। जहाँ तक मृतक कर्मचारी के अन्य मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति देयों के दावा का संबंध है, यदि यह अभी भी बकाया है और कोई विधिक रुकावट नहीं है, इसे भी सांविधिक ब्याज के साथ उक्त अवधि के भीतर निर्मुक्त किया जाएगा।

पूर्वोक्त संप्रेक्षणों एवं निर्देशों के साथ रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vkjs vkjs çlkn] U;k;efr

रमेश यादव

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 2999 of 2013, Decided on 13th January, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 409, 406 एवं 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग एवं छल—संज्ञान—संज्ञान लेने वाले आदेश को इस आधार पर चुनौती दी गयी है कि पक्षों ने अपना धनीय विवाद सुलझा लिया है और उन्होंने सुलह कर लिया है और संयुक्त सुलह याचिका न्यायालय के समक्ष दाखिल की गयी है—कोई लोक नीति अंतर्ग्रस्त नहीं करने वाला पक्षों के बीच विवाद निजी प्रकृति का होने के नाते सुलह में समाप्त हुआ—परिवाद मामला अभिखंडित—आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.–Mr. Atanu Banerjee, For the Petitioner; APP., For the State; Mr. Rajesh Kumar Singh, For the O.P. No. 2.

अधिवक्तागण.–(2008)4 SCC 582—Followed.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. इस अभिकथन पर परिवाद मामला दर्ज किया गया था कि परिवादी ने मासिक आय योजना के अधीन नोदखुर्की डाकखाना में दिनांक 14.8.2002 को 1,10,000/- रुपयों की राशि जमा किया था। योजना के अधीन, परिवादी को प्रतिमाह 792/- रुपयों की राशि का भुगतान किया जाना था। दिसंबर, 2002 तक भुगतान किया गया था। तत्पश्चात, कोई भुगतान नहीं किया गया था। बाद में वह जान सकी थी कि इस याची, जिसने इस आधार पर उससे पासबुक लिया था कि वह खाता से धन निकालेगा और उसे सौंपेगा, ने वस्तुत: पोस्ट मास्टर की मौनानुकूलता से धन निकाल लिया था और इसका दुर्विनियोग कर लिया था।

3. उक्त परिवाद सी॰ पी॰ केस सं॰ 60 वर्ष 2008 के रूप में दर्ज किया गया था। जब याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 406 और 420 के अधीन दिनांक 20.10.2008 के आदेश के तहत अपराध का संज्ञान लिया गया था, इसे इस न्यायालय के समक्ष इस आधार पर चुनौती दी गयी थी कि पक्षों ने अपना धनीय विवाद सुलझा लिया है और तद्द्वारा सुलह कर लिया है और सत्र न्यायालय के समक्ष संयुक्त सुलह याचिका दाखिल की गयी थी जबकि अपर सत्र न्यायाधीश, बेरमो, तेनूघाट के समक्ष अग्रिम जमानत से संबंधित मामला लंबित था।

4. आगे यह निवेदन किया गया था कि यद्यपि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 406, 420 के अधीन अपराध का संज्ञान लिया गया है किंतु धारा 409 के अधीन अपराध नहीं बनता है भले ही याची के विरुद्ध अभिकथन सत्य माना जाता है।

5. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर एवं अभिकथन को विचार में लेने पर, मेरा दृष्टिकोण है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 409 के अधीन अपराध नहीं बनता है।

6. जहाँ तक अन्य अपराध का संबंध है जिनके अधीन संज्ञान लिया गया है, अभिकथन निजी प्रकृति के हैं जो किसी लोकनीति को अंतर्ग्रस्त नहीं करते हैं और तद्द्वारा याची को विचारण की कठिनाई का सामना करने देना न्याय के हित के विरुद्ध होगा जबकि **[2008(4) SCC 582] मदन मोहन एबोट बनाम पंजाब राज्य** के एक मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में, पक्षों ने अपना धनीय विवाद सुलझा लिया है, और इसलिए संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किया जाता है।

7. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता स्वीकार करते हैं कि पक्षों ने अपना धनीय विवाद सुलझा लिया है और सुलह कर लिया है।

8. इन परिस्थितियों के अधीन यह प्रतीत होता है कि किसी लोकनीति को अंतर्ग्रस्त नहीं करने वाले पक्षों के बीच विवाद निजी प्रकृति का होने के नाते सुलह में समाप्त हुआ और इसलिए **मदन मोहन बनाम पंजाब राज्य (ऊपर)** में अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में दांडिक कार्यवाही जारी रहने देना आवश्यक नहीं है।

9. तद्नुसार, सी॰ पी॰ केस सं॰ 60 वर्ष 2008 में पारित दिनांक 20.10.2008 का आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है जहाँ तक याची का संबंध है।

10. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

आरती सिन्हा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1853 of 2013. Decided on 29th January, 2014.

सेवा विधि–विभागीय कार्यवाही–याची के पति जिसकी मृत्यु सेवारत रहते हो गयी, के विरुद्ध आरोप विरचित किया गया और दंड आदेश पारित किया गया–चूँकि आरोप विरचित किए जाने के तुरन्त बाद याची के पति की मृत्यु हो गयी, उसके पास अपना बचाव करने का अवसर नहीं था–इस प्रकार, उसकी मृत्यु के बाद याची के पति के विरुद्ध दंड का आदेश पारित नहीं किया जा सकता था–आक्षेपित आदेश अभिखंडित–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैरा 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Sujit Narayan Prasad, For the Petitioner; Mr. P.K. Singh, For the Respondents.

आदेश

दिनांक 24.5.2012 के अंतिम आदेश से व्यथित होकर मृतक कर्मचारी की पत्नी वर्तमान रिट याचिका दाखिल करके इस न्यायालय के पास आयी है। मृतक कर्मचारी पर निम्नलिखित दंडों को अधिरोपित किया गया है:–

"1. ou fodkl ifj;kstuk ;kstuk 'kh"k d vèkhu nh x;h 18,66,866/- #i;k dh jkf'k dk y[kk&tk[kk ugh fn;k tkukA

2. 18,66,866/- #i;k dh ljdkjh jkf'k dk n#i;kx ,o nfofu;kxA

3. mPp inkfèkdkfj;k dh vkKk dh voKkA

4. ljdkjh dke dh mi{kk ,o vogyukA

5. viuh bPNkulkj ljdkjh dke djukA"

2. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

3. दिनांक 29.3.2012 को आरोप विरचित किया गया था और दिनांक 4.4.2012 को इसे याची के पति पर तामील किया गया था। याची के पति की मृत्यु सेवारत रहते हुए दिनांक 10.4.2012 को हो गयी और दिनांक 24.5.2012 को दंड आदेश पारित किया गया था।

4. यह अभिवचन करते हुए कि चूँकि 18,66,866/- रुपयों की राशि असमायोजित बनी रही, लोक मांग वसूली अधिनियम के अधीन उक्त राशि की वसूली के लिए आदेश पारित किया गया है।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री सुजीत नारायण प्रसाद ने निवेदन किया है कि कर्मचारी की मृत्यु के बाद दिनांक 24.5.2012 का अंतिम आदेश पारित नहीं किया जा सकता था। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि 'निंदा' का दंड अधिरोपित करने और प्रोन्नति वापस रोकने के

अतिरिक्त 18,66,866/- रुपयों की राशि की वसूली के लिए आदेश पारित किया गया है जिसे कर्मचारी की मृत्यु हो जाने के कारण प्रभावकारी नहीं बनाया जा सकता है।

6. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थी झारखंड राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिशपथ पत्र में लिया गया दृष्टिकोण दोहराया और निवेदन किया कि मृतक कर्मचारी के जीवनकाल के दौरान अनेक नोटिस जारी किए गए थे किंतु, मृतक कर्मचारी ने प्रत्युत्तर नहीं दिया और अपने द्वारा लिए गए अग्रिम का समायोजन नहीं किया था और इसलिए, दिनांक 24.5.2012 का दंड आदेश पारित किया गया है।

7. दिनांक 24.5.2012 के दंड आदेश का परिशीलन दर्शाएगा कि अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा ध्यान में लिया गया है कि दिनांक 10.4.2012 को कर्मचारी की मृत्यु हो गयी। स्वीकृत रूप से, मामले की जाँच नहीं की गयी थी। आरोप में 18,66,866/- रुपयों की राशि के दुर्विनियोग का अभिकथन है। दिनांक 24.5.2012 के दंड आदेश से आगे प्रतीत होता है कि अनियमितता एवं उपेक्षा का आरोप प्रकटत: सिद्ध होता कहा गया है। मेरा मत है कि आरोप ज्ञापन में अभिकथन केवल अभिकथन है और इसे अपचारी कर्मचारी के विरुद्ध विरचित आरोप के प्रमाण के रूप में नहीं माना जा सकता है।

8. स्वीकृत रूप से, चूँकि दिनांक 10.4.2012 को याची के पति की मृत्यु हो गयी, उसके पास विभागीय प्राधिकारी के समक्ष अपना बचाव करने का अवसर नहीं था। मृतक कर्मचारी के विरुद्ध विरचित आरोप और सरकारी धन के दुर्विनियोग के अभिकथन की दृष्टि में मेरा दृष्टिकोण है कि उसकी मृत्यु के बाद याची के पति के विरुद्ध दिनांक 24.5.2012 का दंड आदेश पारित नहीं किया जा सकता था। तद्नुसार, दिनांक 24.5.2012 का दंड आदेश अभिखंडित किया जाता है।

9. यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और परिणामस्वरुप, याची समस्त लाभों की हकदार होगी यदि यह विधि में उसको ग्राह्य है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

छाया देवी

cuke

सेंट्रल कोल फील्ड्स लिमिटेड एवं अन्य

W.P. (S) No. 1725 of 2013. Decided on 17th September, 2013.

सेवा विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–पहले ही जारी नियुक्ति पत्र की दृष्टि में याची को पद ग्रहण करने और काम करने की अनुमति के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश के लिए रिट याचिका–दावा कर्मचारी की मृत्यु पर अनुकंपा नियुक्ति और मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति देयों से संबंधित है–याची को अपनी शिकायत दूर करवाने के लिए समस्त आवश्यक तत्वों के साथ नए अभ्यावेदन के साथ संबंधित प्राधिकारी के पास जाने की स्वतंत्रता दी गयी जो विधि के अनुरुप इस पर विचार करेगा। (पैराएँ 7 एवं 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Atanu Banerjee, For the Petitioner; M/s. Ananda Sen, Amit Kumar Verma, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची प्रत्यर्थी सं॰ 3, महाप्रबंधक (के॰ टी॰ ए॰), सेंट्रल कोल फील्ड्स लि॰, कथरा क्षेत्र, जिला बोकारो द्वारा जारी दिनांक 13 जनवरी, 2012 के नियुक्ति पत्र की दृष्टि में पदग्रहण करने और काम करने के लिए उसको अनुमति देने के लिए प्रत्यर्थीगण को निदेश देने के लिए इस न्यायालय के पास आयी है।

3. याची के अनुसार, उसका विवाह दिनांक 28 जून, 2006 को किसी दुर्योधन महाली के साथ हुआ था और विवाह से दो संतानों का जन्म हुआ था। उक्त दुर्योधन महाली कथरा कोलियरी में ग्रेड-एक्स-इ॰ पी॰ एच॰ में कार्यरत था जब दुर्घटना के कारण दिनांक 13 जनवरी, 2012 को स्वयं कंपनी के परिसर के भीतर दुर्घटना के कारण उसकी मृत्यु हो गयी। याची का फर्दबयान यू॰ डी॰ केस सं॰ 2 वर्ष 2012 गोमिया पुलिस थाना के एस॰ आई॰ द्वारा दर्ज किया गया था। याची की ओर से निवेदन किया गया है कि स्वयं प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ ने याची के पति दुर्योधन महाली की अचानक मृत्यु की दृष्टि में इस शर्त के साथ कि एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ VIII के खंड 9.3.0 के अधीन अनिवार्य आवश्यकताओं एवं औपचारिकताओं को याची द्वारा एक माह के भीतर परिपूर्ण किया जाएगा, दिनांक 13 जनवरी, 2012 का नियुक्ति पत्र (परिशिष्ट 7) जारी किया। याची की ओर से प्रतिवाद किया गया है कि उसने और उसकी सास ने उसके दावा के समर्थन में शपथ पत्र दाखिल किया था। उसकी सास ने कथन किया कि उसे उसकी नियुक्ति (परिशिष्ट 8 श्रृंखला) पर आपत्ति नहीं है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने न्यायालय के ध्यान में लाया है कि मृतक ने अपनी तत्कालीन पत्नी किसी अनीता देवी के विरुद्ध वैवाहिक हक वाद सं॰ 3 वर्ष 1997 विवाह के विघटन के लिए दाखिल किया था जिसे दिनांक 10.12.2001 को डिक्री किया गया था। याची के अनुसार, उसके पास मृतक के साथ अपने विवाह का पर्याप्त प्रमाण है। किंतु, प्रत्यर्थीगण ने उसको पदग्रहण करने, जहाँ उसकी नियुक्ति की गयी थी, और काम करने की अनुमति नहीं दी है। प्रत्यर्थीगण ने मृतक कर्मचारी के किसी मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति देयों को निर्मुक्त अथवा इसका भुगतान नहीं किया है। याची ने प्रत्यर्थी सं॰ 4, परियोजना अधिकारी, सी॰ सी॰ एल॰ के समक्ष मृत्यु-सह-सेवानिवृत्ति देयों का दावा करते हुए और उसको उस स्थान पर जहाँ उसे नियुक्त किया गया है पदग्रहण करने के लिए अनुमति देने के अनुरोध के साथ परिशिष्ट 12 के तहत दिनांक 2 जनवरी, 2013 को अभ्यावेदन दिया है। किंतु कोई कार्रवाई नहीं की गयी है, अत: उसे इस न्यायालय के पास आने के लिए मजबूर होना पड़ा है।

5. अत:, याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि प्रत्यर्थीगण को समस्त पृष्ठभूमि तथ्यों जिन्हें रिट आवेदन में कथित किया गया है की दृष्टि में याची के अभ्यावेदन पर सही निर्णय लेने का निर्देश दिया जाय।

6. प्रत्यर्थीगण-सेंट्रल कोल फील्ड्स लि॰ के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यदि याची समस्त आवश्यक तथ्यों एवं दस्तावेजों के साथ नए अभ्यावेदन के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 3, महाप्रबंधक (के॰ टी॰ ए॰), सेंट्रल कोल फील्ड्स लि॰, कथरा क्षेत्र, जिला बोकारो के पास जाती है, आवश्यक अभिलेखों के सम्यक सत्यापन के बाद विधि के अनुरुप समुचित निर्णय लिया जाएगा।

7. ऐसी परिस्थितियों में, अनुकंपा नियुक्ति और मृत्यु-सह-सेवा निवृत्ति देयों के भुगतान से संबंधित दावा में, जहाँ याची ने यह कथन भी किया है कि किसी दुर्योधन महाली की मृत्यु पर उसी तिथि को प्रत्यर्थीगण द्वारा दिनांक 13 जनवरी, 2012 के परिशिष्ट 7 के तहत अर्नतिम नियुक्ति पत्र जारी किया गया था, इस चरण पर, याची के दावा पर कोई टिप्पणी किए बिना, यह रिट याचिका याची को अपनी शिकायत

दूर करवाने के लिए तीन सप्ताह की अवधि के भीतर समस्त आवश्यक तथ्यों एवं दस्तावेजों के साथ नए अभ्यावेदन के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 3, महाप्रबंधक (के॰ टी॰ ए॰), सेंट्रल कोल फील्ड्स लि॰, कथरा क्षेत्र, जिला बोकारो के पास जाने की स्वतंत्रता के साथ निपटायी जाती है। ऐसे अभ्यावेदन की प्राप्ति पर प्रत्यर्थी सं॰ 3, महाप्रबंधक (के॰ टी॰ ए॰), सेंट्रल कोल फील्ड्स लि॰, कथरा क्षेत्र जिला बोकारो मृतक कर्मचारी के समस्त प्रासंगिक सेवा अभिलेख के सम्यक सत्यापन के बाद और ऐसी समस्त आनुषंगिक औपचारिकताओं सहित राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार के निबंधनों एवं शर्तों को पूरा किए जाने पर विधि के अनुरुप इस पर विचार करेंगे और तत्पश्चात 12 सप्ताह की अवधि के भीतर तार्किक एवं सकारण आदेश पारित करके निर्णय लेंगे जिसे याची को भी संसूचित किया जाएगा।

8. तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

पंकज कुमार दांगी

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 216 of 2013. Decided on 6th September, 2013.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406 एवं 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 397 एवं 401—न्यास का दांडिक भंग एवं छल–दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 239 के अधीन उन्मोचन के लिए आवेदन अस्वीकार करते हुए अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण–अवर न्यायालय ने पाया कि भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406 और 420 के अधीन आरोप विरचित करने के लिए याची के विरुद्ध सामग्री थी और तद्नुसार उन्मोचन के लिए आवेदन अस्वीकार कर दिया–इसके अतिरिक्त, अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री के आधार पर दांडिक अपराध भी बनता है–आक्षेपित आदेश में अवैधता अथवा अनियमितता नहीं पायी गयी–आवेदन खारिज।

(पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajesh Kumar Mahtha, For the Petitioner; APP, For the State; Mr. Atanu Banerjee, For the Opp. Party No. 2.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और अभियोजन के विद्वान ए॰ पी॰ पी॰ और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची गोमिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 90 वर्ष 2009, जी॰ आर॰ सं॰ 715 वर्ष 2009 के तत्सम, में श्री एफ॰ किरमानी विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, बेरमो, तेनूघाट द्वारा पारित दिनांक 1.12.2012 के आदेश से व्यथित है जिसके द्वारा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 239 के अधीन उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है।

3. याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 एवं 420 के अधीन अपराध के लिए गोमिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 90 वर्ष 2009, जी॰ आर॰ सं॰ 715 वर्ष 2009 के तत्सम, में अभियुक्त बनाया गया है जिसे परिवादी विरोधी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा दाखिल परिवाद मामले के आधार पर संस्थित किया गया था और अभिकथन किया गया है कि परिवादी ने अभियुक्त से ट्रैक्टर और हाइड्रोलिक ट्रेलर खरीदा था जिसके

लिए धन का भुगतान किया गया था, किंतु परिवादी को हाइड्रोलिक ट्रेलर की आपूर्ति कभी नहीं की गयी थी। परिवाद को पुलिस मामला के संस्थापन के लिए भेजा गया था जिसके आधार पर मामला संस्थित किया गया था और अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण के बाद, पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 और 420 के अधीन याची के विरुद्ध आरोप–पत्र दाखिल किया और उसके विरुद्ध संज्ञान भी लिया गया था। तत्पश्चात्, याची ने यह बिंदु उठाते हुए कि यह पक्षों के बीच करार का मामला था और मामला सिविल प्रकृति का था और तद्नुसार, दांडिक मामला पोषणीय नहीं था, द॰ प्र॰ सं॰ की धारा 239 के अधीन उन्मोचन के लिए अपना आवेदन दाखिल किया। उक्त आवेदन को अवर न्यायालय द्वारा इस न्यायालय के निर्णय को विचार में लेते हुए अस्वीकार कर दिया गया है जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि दिए गए संव्यवहार में दोनों प्रकृति अर्थात् सिविल एवं दांडिक मामला बनता है। दांडिक अपराध अभिखंडित नहीं किया जा सकता है। अभिलेख पर मौजूद सामग्री के आधार पर विद्वान अवर न्यायालय ने पाया कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406 और 420 के अधीन आरोप विरचित करने के लिए याची के विरुद्ध सामग्री है और तद्नुसार उन्मोचन के लिए याची का आवेदन अस्वीकार कर दिया है।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची को इस मामले में झूठा फँसाया गया है और यह शुद्धत: सिविल प्रकृति का मामला है क्योंकि यह व्यवसायिक संव्यवहार से उद्भूत होने वाला मामला है और भले ही याची के विरुद्ध अभिकथन स्वीकार किया जाता है, परिवादी के पास सिविल उपचार है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विधि की दृष्टि में आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है।

5. दूसरी ओर, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर दस्तावेज लाया है कि याची ने हाइड्रोलिक ट्रेलर की आपूर्ति के लिए भी धन स्वीकार किया था जिसकी आपूर्ति कभी नहीं की गयी थी। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले में यद्यपि सिविल दायित्व हो सकता है किंतु दांडिक दायित्व भी बनता है और इस प्रकार, उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा सही प्रकार से अस्वीकार कर दिया गया है।

6. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर दस्तावेज लाया गया है कि याची ने परिवादी को हाइड्रोलिक ट्रेलर की आपूर्ति करने के लिए 90,000/- रुपयों की राशि प्राप्त किया था और अभिकथन की दृष्टि में इसकी आपूर्ति कभी नहीं की गयी थी, मेरे सुविचारित दृष्टिकोण में याची के विरुद्ध दांडिक अपराध भी बनता है।

7. मैं उन्मोचन के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार करने वाले आक्षेपित आदेश में कोई अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस आवेदन में गुणागुण नहीं है और तद्नुसार, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

विष्णु कुमार महतो उर्फ विष्णु महतो

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Revision No. 751 of 2013. Decided on 6th September, 2013.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 311—गवाह को वापस बुलाना–ब॰ सा॰ के परीक्षण के लिए धारा 311 के अधीन दाखिल याचिका खारिज करते हुए अपर सत्र न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण–अभिकथन की प्रकृति को विचार में लेते हुए यह आवश्यक प्रतीत होता है कि याची को अपना बचाव साक्ष्य देने के लिए मौका दिया जाए यदि विचारण समाप्त नहीं हुआ है और अभी भी लंबित है–आक्षेपित आदेश अपास्त–आवेदन अनुज्ञात।

(पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Atanu Banerjee, For the Petitioner; APP, For the State.

आदेश

याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची एस॰ टी॰ सं॰ 452 वर्ष 2010 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश II, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 23.7.2013 के आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा बचाव गवाह का परीक्षण करने के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 311 के अधीन याची द्वारा दाखिल आवेदन अवर न्यायालय द्वारा अस्वीकार कर दिया गया है।

3. आक्षेपित आदेश दर्शाता है कि दिनांक 5.7.2013 को दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन अभियुक्त का बयान दर्ज किया गया था जिस तिथि पर याची के कनीय अधिवक्ता ने निवेदन किया कि बचाव कोई साक्ष्य देना नहीं चाहता था जिस पर बचाव साक्ष्य बंद कर दिया गया था और तर्क के लिए मामला दिनांक 11.7.2013 पर नियत किया गया था। यह प्रतीत होता है कि मामले पर आंशिक रूप से तर्क किया गया था और आगे तर्क के लिए दिनांक 19.7.2013 नियत किया गया था, जब बचाव द्वारा एक गवाह के परीक्षण के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन याचिका दाखिल की गयी थी। अवर न्यायालय ने याची द्वारा दाखिल आवेदन यह कथन करते हुए अस्वीकार कर दिया कि याची की प्रार्थना पर बचाव साक्ष्य बंद किया गया था और दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज बयान में भी याची ने कथन नहीं किया था कि वह कोई साक्ष्य देना चाहता था और तद्नुसार अवर न्यायालय द्वारा याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि इस अभिकथन पर कि उसने उसके साथ विवाह करने के झूठे बहाने पर सूचक का यौन शोषण किया, याची भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 376 के अधीन अपराध के लिए विचारण का सामना कर रहा है। सूचक याची की सह-ग्रामीण है और याची केवल यह दर्शाने के लिए साक्ष्य देना चाहता था कि वह पहले से इस तथ्य से अवगत थी कि याची विवाहित था। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि मामले में न्यायपूर्ण निर्णय के लिए साक्ष्य देने के लिए याची को अवसर देने की आवश्यकता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि विचारण अभी तक समाप्त नहीं हुआ है और अभी भी अवर विचारण न्यायालय में लंबित है। विद्वान अधिवक्ता वचन देते हैं कि याची गवाह का परीक्षण करने के लिए केवल एक तिथि लेगा और गवाह का परीक्षण करने के लिए आगे कोई स्थगन नहीं लेगा।

5. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया है और निवेदन किया है कि कि उसको साक्ष्य देने का समुचित अवसर देने के बाद याची की प्रार्थना पर बचाव साक्ष्य बंद किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि याची अब केवल विचारण को लंबा खींचने का प्रयास कर रहा है। तद्नुसार, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने प्रार्थना का विरोध किया।

6. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि अभियोजन साक्ष्य बिल्कुल हाल में अर्थात दिनांक 5.7.2013 को बंद किया गया था और

वह भी बचाव साक्ष्य के लिए मामला विशेषत: नियत किए बिना। मैं बचाव साक्ष्य देने के लिए याची को एक मौका देना समुचित समझता हूँ। अन्यथा भी, अभिकथन की प्रकृति को विचार में लेते हुए, जिसके लिए याची विचारण का सामना कर रहा है, मामले में न्यायपूर्ण निर्णय के लिए याची को अपना बचाव साक्ष्य देने के लिए एक अवसर देने के लिए यह आवश्यक प्रतीत होता है बशर्ते कि विचारण अभी तक समाप्त नहीं हुआ हो और अभी भी अवर विचारण न्यायालय में लंबित है।

7. तद्नुसार, एस॰ टी॰ सं॰ 452 वर्ष 2010 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश-II, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 23.7.2013 का आक्षेपित निर्णय एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और अवर न्यायालय को याची को अपना बचाव साक्ष्य देने के लिए एक अवसर देने का निर्देश दिया जाता है। यह स्पष्ट किया जाता है कि साक्ष्य देने के लिए अभियुक्त याची को आगे अवसर नहीं दिया जाएगा और बचाव साक्ष्य दर्ज करने के बाद विचारण शीघ्रातिशीघ्र समाप्त किया जाएगा। यह स्पष्ट किया जाता है कि यदि विचारण पहले ही समाप्त हो गया है, यह आदेश प्रभावी नहीं होगा।

8. इन निर्देशों के साथ, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है। इस आदेश को याची के व्यय पर फैक्स के माध्यम से संबंधित न्यायालय को संसूचित किया जाए।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

कृष्णा गोप

cuke

नित्यानंद पांडे एवं एक अन्य

Cr. M. P. No. 1083 of 2012. Decided on 3rd February, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 146 एवं 482—धारा 146 के अधीन पारित आदेश के विरुद्ध आवेदन–पोषणीयता–धारा 146 के अधीन पारित आदेश पोषणीय नहीं है क्योंकि यह अंतर्वर्ती आदेश है–अभिनिर्धारित, कि पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पारित आदेश को न्यायोचित अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है–विधि के अनुरुप पुनरीक्षण आवेदन विनिश्चित करने के लिए मामला पुनरीक्षण न्यायालय को वापस भेजा गया। (पैराएँ 3, 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–Mr. Atanu Banerjee, For the Petitioner; APP., For the State; Mr. Yogesh Modi, For the O.P. No. 2.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि वर्ष 2007 में विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की प्रेरणा पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी। यह कि उसमें यह अभिनिर्धारित करते हुए कि विवाद सिविल प्रकृति का प्रतीत होता है, दिनांक 8.1.2008 को कार्यवाही छोड़ दी गयी थी। किंतु, पुन: विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की प्रेरणा पर दिनांक 13.10.2008 को दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन कार्यवाही आरंभ की गयी थी। उसे दिनांक 28.8.2009 को छोड़ दिया गया था क्योंकि प्रथम पक्ष-विरोधी पक्षकार सं॰ 2 द्वारा इस पर जोर नहीं दिया गया था। जब मामला लंबित था, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 144 के अधीन कार्यवाही आरंभ करने के लिए दिनांक 12.11.2008 को आवेदन दाखिल किया गया था जिस पर विविध मामला सं॰ 147 वर्ष 2008 दर्ज किया

गया था। उक्त मामले में, नोटिस जारी किया गया था। इस बीच, जब तक नोटिस का तामील किया जा सकता था, दिनांक 24.11.2008 को आवेदन दाखिल किया गया था जिसमें विवादित भूमि कुर्क करने की प्रार्थना की गयी थी। उसी दिन पर अर्थात् दिनांक 24.11.2008 को आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा संपत्ति कुर्क की गयी थी और रिसीवर भी नियुक्त किया गया था। जब याची को उस आदेश के बारे में पता चला, उसने पुनरीक्षण आवेदन दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 63 वर्ष 2009 दाखिल किया। पुनरीक्षण दाखिल करने के पहले याची ने आदेश, जिसके अधीन कुर्की आदेश पारित किया गया था, वापस लेने के लिए विद्वान दंडाधिकारी के समक्ष दिनांक 12.2.2009 को आवेदन दाखिल किया था जिसे अस्वीकार कर दिया गया था। पूर्वोक्त पुनरीक्षण आवेदन दोनों आदेशों के विरुद्ध दाखिल किया गया प्रतीत होता है। उस पुनरीक्षण आवेदन को यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज किया गया था कि धारा 146 (2) में अंतर्विष्ट प्रावधान की दृष्टि में पुनरीक्षण आवेदन पोषणीय नहीं है क्योंकि धारा 146 के अधीन पारित आदेश अंतर्वर्ती आदेश होता है। इस बीच आदेश, जिसके अधीन कुर्की आदेश पारित किया गया था, दिनांक 25.11.2011 को वापस ले लिया गया था। विरोधी पक्षकार सं॰ 2 ने पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष पुनरीक्षण आवेदन दाखिल किया। उसे उसमें यह अभिनिर्धारित करते हुए अनुज्ञात किया गया था कि जब एक बार कुर्की आदेश पारित किया जाता है जिसे पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट किया गया है, उसे वापस नहीं लिया जा सकता है।

3. उस आदेश से व्यथित होकर, याची ने इस आवेदन को दाखिल किया है।

4. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि विद्वान पुनरीक्षण न्यायालय इस आधार पर पुनरीक्षण आवेदन अनुज्ञात करने में न्यायोचित नहीं थे कि जब एक बार कुर्की आदेश पारित किया जाता है और पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा अभिपुष्ट किया जाता है, उसे इस कारण से वापस लेने की अनुमति नहीं दी जा सकती है कि धारा 146 में अंतर्विष्ट प्रावधान अनुबंधित करता है कि जब कभी भी आपात्कालीन स्थिति समाप्त हो जाएगी, कुर्की आदेश निष्प्रभावी/उपांतरित किया जा सकता है। उस स्थिति में, दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 137 वर्ष 2011 में दिनांक 14.5.2012 को पुनरीक्षण न्यायालय द्वारा पारित आदेश को न्यायोचित अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है। तद्नुसार, उस आदेश को एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

5. तद्नुसार, विधि के अनुरुप पुनरीक्षण आवेदन विनिश्चित करने के लिए मामले को पुनः पुनरीक्षण न्यायालय के पास वापस भेजा जाता है।

6. इस प्रकार, यह आवेदन निपटाया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

काशीनाथ सिंह एवं एक अन्य

cuke

साबू देवी एवं अन्य

W.P. (C) No. 5223 of 2013. Decided on 27th January, 2014.

संपत्ति विधि–अभिधान वाद–अभिलेख पर पहले से ही मौजूद दस्तावेजों को सिद्ध करने के लिए औपचारिक गवाहों के परीक्षण के लिए आवेदन अस्वीकार करते हुए मुंसिफ द्वारा अभिधान वाद में पारित आदेश के विरुद्ध रिट याचिका–अभिनिर्धारित, कि यदि दस्तावेज महत्वपूर्ण है और वादीगण के मामले के लिए निर्णायक है, वे अवर न्यायालय के समक्ष नयी याचिका दाखिल कर सकते हैं जिस पर अवर न्यायालय पक्षों को सुनने के बाद विचार करेगा। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. A. Banerjee, For the Petitioner; None, For the Respondent.

आदेश

याचीगण ने अभिधान वाद सं॰ 43 वर्ष 2001 में विद्वान मुंसिफ, बेरमो, तेनूघाट द्वारा पारित दिनांक 26.7.2013 के आदेश को अपास्त करने के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा अभिलेख पर पहले से ही मौजूद दस्तावेजों को सिद्ध करने के लिए औपचारिक गवाहों का परीक्षण करने के लिए याचीगण की दिनांक 30.5.2013 की याचिका को अस्वीकार कर दिया गया है।

2. यह निवेदन किया गया है कि दस्तावेज, जिसके औपचारिक प्रमाण की आवश्यकता थी का उल्लेख विद्वान अवर न्यायालय के दिनांक 9.1.2013 के आदेश में किया गया है। अभिलेख जिसमें उक्त दस्तावेज पड़ा है भी दिनांक 10.1.2013 के आदेश द्वारा मंगाया गया है और इसे न्यायालय में प्राप्त किया गया है। याचीगण ने प्रतिवादियों के साक्ष्य का खंडन करने के लिए केवल दस्तावेज को औपचारिक रूप से सिद्ध करने के लिए गवाहों का परीक्षण करने की अनुमति देने के लिए प्रार्थना किया जिसे बाद के चरण पर अनुज्ञात किया गया था। दस्तावेज, जिसे सिद्ध करना इप्सित किया गया है, वादीगण के लिए अपना मामला स्थापित करने में अत्यन्त निर्णायक है। विद्वान अवर न्यायालय ने इस पर विचार नहीं किया था और याचीगण की प्रार्थना अस्वीकार कर दिया है।

3. मैंने याचीगण के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख का परिशीलन किया है।

4. विद्वान अवर न्यायालय ने इस आधार पर याचीगण की प्रार्थना अस्वीकार कर दिया है कि उन्हें प्रतिवादियों का साक्ष्य बंद करने के बाद साक्ष्य देने की अनुमति पहले दी गयी थी। उनकी ओर से दाखिल दस्तावेजों को प्रदर्शों के रूप में चिन्हित किया गया था। अत: साक्ष्य देने के लिए मामला नियत करना पुन: आवश्यक नहीं है।

5. विद्वान अवर न्यायालय के समक्ष दाखिल याचिका (परिशिष्ट 5) से मैं पाता हूँ कि याचीगण के लिए उक्त दस्तावेज की आवश्यकता दर्शाते हुए कोई विनिर्दिष्ट आधार नहीं दिया गया है जैसा इस न्यायालय के समक्ष लिया गया है और जिस पर जोर दिया गया है। चूँकि विलंबित चरण पर दस्तावेज सिद्ध करने के लिए याचिका में पर्याप्त कारण नहीं दर्शाया गया था, विद्वान अवर न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि वादीगण द्वारा अतिरिक्त साक्ष्य देने के लिए मामला नियत करना आवश्यक नहीं था। ऐसे विचार पर पारित आक्षेपित आदेश गलत प्रतीत नहीं होता है जिसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता है।

6. किंतु यदि, दस्तावेज साक्ष्य का महत्वपूर्ण टुकड़ा है और वादीगण के मामले के लिए निर्णायक है, वे अपना मामला सिद्ध करने के लिए उस साक्ष्य की आवश्यकता स्पष्ट करते हुए विद्वान अवर न्यायालय के समक्ष नयी याचिका दाखिल कर सकते हैं। यदि ऐसी याचिका दाखिल की जाती है, विद्वान अवर न्यायालय दिनांक 26.7.2013 के आक्षेपित आदेश को अनदेखा करते हुए पक्षों को सुनेगा और समुचित आदेश पारित करेगा।

7. यदि याचीगण का दस्तावेज निर्णायक पाया जाता है और यह पहले से ही अभिलेख पर मौजूद है, उस स्थिति में विद्वान अवर न्यायालय ऐसे निबंधनों पर, जैसे प्रतिवादियों की क्षतिपूर्ति के लिए व्यय के प्रति, उक्त साक्ष्य देने के लिए अवसर दे सकता है किंतु किसी भी सूरत में उस प्रयोजन से एक से अधिक तिथि की अनुमति नहीं देगा।

8. तद्नुसार, पूर्वोक्त संप्रेक्षण के साथ यह रिट याचिका निपटायी जाती है।

9. विलंब से बचने के लिए इस आदेश को फैक्स के माध्यम से संसूचित किया जाए यदि याचीगण द्वारा व्यय जमा किया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

तारा देवी एवं अन्य

cuke

शाखा प्रबंधक, नेशनल इंश्योरेंस कं॰ लि॰, बोकारो एवं अन्य

M.A. No. 142 of 2008. Decided on 11th November, 2013.

अपकृत्य–मुआवजा–मोटर वाहन दावा अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत मुआवजा की राशि बढ़ाने के लिए अपील–अधिकरण ने अधिनिर्णीत मुआवजा राशि पर ब्याज का भुगतान करने का निर्देश नहीं दिया है–प्रत्यर्थी बीमा कंपनी को पहले ही अधिनिर्णीत मुआवजा के अतिरिक्त दावेदार याची को दो लाख रुपयों की एकमुश्त राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया–अपील अंशतः अनुज्ञात। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Atanu Banerjee, For the Petitioner; Mr. D.C. Ghose, For the Opp. Party.

आदेश

यह अपील एम॰ भी॰ दावा केस सं॰ 69 वर्ष 2003 के संबंध में प्रथम अपर जिला–सह–मोटर वाहन दावा अधिकरण, बेरमो, तेनूघाट द्वारा अधिनिर्णीत मुआवजा की राशि बढ़ाने के लिए दावेदारों द्वारा दाखिल की गयी है।

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 मृतक की पत्नी है और अपीलार्थी सं॰ 2 से 4 अपीलार्थी सं॰ 1 के माध्यम से प्रतिनिधित्व किए गए अवयस्क संतान हैं। मृतक की माता को प्रत्यर्थी सं॰ 4 बनाया गया है जिसने उसको भुगतान की गयी दावा राशि बढ़ाने के लिए नहीं कहा है और न ही वह इस न्यायालय के समक्ष उपस्थित हुई है।

3. यह निवेदन किया गया है कि विद्वान अधिकरण ने राशि अधिनिर्णीत किया है, किंतु दावा आवेदन दाखिल करने की तिथि से ब्याज का भुगतान नहीं किया गया है; बल्कि 7½% की दर पर ब्याज का भुगतान दावेदारों को करने का निर्देश दिया गया है यदि आक्षेपित आदेश की तिथि से दो माह के भीतर अधिनिर्णीत राशि का भुगतान नहीं किया जाता है।

4. बीमा कंपनी के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क का विरोध किया है।

5. तर्क के क्रम में, वर्तमान अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता विद्वान अधिकरण द्वारा पारित अधिनिर्णय की दृष्टि में उनको पहले ही भुगतान किए जा चुके राशि के अतिरिक्त दो लाख रुपयों की राशि प्राप्त करने के लिए सहमत हुए हैं यदि अतिरिक्त राशि का भुगतान दिनांक 23.11.2013 को लोक अदालत लगायी जाएगी अथवा इसके पहले किया जाता है।

6. मैंने आक्षेपित निर्णय का परिशीलन किया है जिससे यह प्रतीत होता है कि अधिकरण ने अधिनिर्णीत राशि पर ब्याज का भुगतान करने का निर्देश नहीं दिया है।

7. मामले के इन समस्त पहलूओं पर विचार करते हुए और मामले के गुणागुण पर विचार किए बिना मैं प्रत्यर्थी बीमा कंपनी को पहले ही अधिनिर्णीत मुआवजा के अतिरिक्त दावेदार अपीलार्थी सं॰ 1 (चूँकि अपीलार्थी संख्या 2 से 4 का प्रतिनिधित्व अपने जैविक अभिभावक अपीलार्थी सं॰ 1 के माध्यम से प्रतिनिधित्व किया गया है) को दो लाख रुपयों की एकमुश्त राशि का भुगतान करने का निर्देश देता हूँ। अपीलार्थी के पक्ष में लिखे गए दो लाख रुपयों की उक्त राशि का चेक दिनांक 22.11.2013 को अथवा इसके पहले सचिव, उच्च न्यायालय विधिक सेवा कमिटी के पास जमा किया जाएगा ताकि दिनांक 23.11.2013 को लोक अदालत में दावेदार अपीलार्थी सं॰ 1 को मुआवजा की अतिरिक्त राशि के विरुद्ध चेक का भुगतान किया जाएगा।

8. निर्णय एवं अधिनिर्णय में उक्त उपांतरण के साथ यह अपील अंशतः अनुज्ञात की जाती है।

9. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता को इस आदेश को दावेदार/अपीलार्थी सं॰ 1 को संसूचित करने का निर्देश दिया जाता है ताकि वह चेक प्राप्त करने के लिए दिनांक 23.11.2013 को लोक अदालत में उपस्थित हो सके।

10. इस आदेश की प्रति बीमा कंपनी के अधिवक्ता को दी जाए ताकि आदेश का अनुपालन किया जा सके।

---

ekuuh; ,p॰ lh॰ feJk] U;k;efr

अशोक कुमार एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Revision No. 530 of 2011. Decided on 11th February, 2014.

परिवाद केस सं॰ 1019 वर्ष 2007 में श्री पीयूष श्रीवास्तव, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, राँची द्वारा पारित दिनांक 6.7.2011 के आदेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 404—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 245—संपत्ति का गैर ईमानदार दुर्विनियोग–उन्मोचन आवेदन का अस्वीकरण–अपराध केवल तब बनाया जा सकता है जब मृतक व्यक्ति की संपत्ति, जिस पर मृतक अपने मृत्यु के समय पर काबिज था, का गैरईमानदार दुर्विनियोग अथवा संपरिवर्तन हुआ है–पुनः अपराध केवल तब बनाया जा सकता है जब उक्त संपत्ति किसी व्यक्ति के कब्जा में नहीं थी जो मृतक की मृत्यु के समय ऐसे कब्जा का हकदार था–याचीगण मृतक का सगा भाई होने के नाते और चूँकि मृतक उनके साथ संयुक्त रूप से रह रहा था, यह नहीं कहा जा सकता है कि मृतक द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति याचीगण के कब्जा में नहीं थी अथवा कि याचीगण ऐसे कब्जा के विधितः हकदार नहीं थे–किसी व्यक्ति के पास संपत्ति के स्वामित्व के हक के अर्थ में संपत्ति का हक नहीं हो सकता है, किंतु फिर भी वह उसके कब्जा का विधितः हकदार हो सकता है–आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और याचीगण उन्मोचित किए गए। (पैराएँ 16 से 19)

निर्णयज विधि.–1956 Madhya Bharat 49; AIR 1962 SC 1821; AIR 1915 Mad 506(1); 2003 Cr.LJ 1073; (2004) 12 SCC 461—Referred; 1949 Cr.LJ 241—Assented.

अधिवक्तागण.–M/s Sujit Narayan Prasad, Birendra Burman, Abhishek, For the Petitioners; A.P.P., For the State; Mr. B.N. Prasad, For the O.P. No.2.

एच॰ सी॰ मिश्रा, न्यायमूर्ति.–याचीगण के विद्वान अधिवक्ता, राज्य के विद्वान अधिवक्ता और परिवादी विरोधी पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याचीगण परिवाद मामला सं॰ 1019 वर्ष 2007 में श्री पीयूष श्रीवास्तव, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, राँची द्वारा पारित दिनांक 6.7.2011 के आदेश से व्यथित हैं जिसके द्वारा उन्मोचन के लिए दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 245 के अधीन याचीगण द्वारा दाखिल आवेदन यह पाते हुए कि भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन याचीगण के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए पर्याप्त सामग्री है, अवर न्यायालय ने अस्वीकार कर दिया है।

3. इन याचीगण के भाई की विधवा द्वारा दाखिल परिवाद मामला सं॰ 1097 वर्ष 2007 में याचीगण को अभियुक्त बनाया गया है। इन याचीगण का भाई भारतीय सेना में कार्यरत था और उसका विवाह परिवादी–विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के साथ हुआ था। यह प्रतीत होता है कि पति–पत्नी के बीच वैवाहिक विवाद था जिस कारण वह पृथक रूप से रह रही थी और वर्ष 1989 में उसने अपने पति से भरण–पोषण का दावा करते हुए मामला दाखिल किया था जिसे सक्षम न्यायालय द्वारा अनुज्ञात किया गया था और वह भरण–पोषण पा रही थी। किंतु विधवा अर्थात् परिवादी–विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के दावा के अनुसार उनके बीच मतभेद समाप्त हो गया था और अपने पति की मृत्यु के समय वह अपने पति के साथ दांपत्य गृह में रह रही थी। किंतु, याचीगण द्वारा इस तथ्य पर विवाद किया गया है और याचीगण के मामले के अनुसार विधवा पूरे समय से पृथक रूप से रह रही थी और उसके पति द्वारा तलाक की डिक्री द्वारा विवाह के विघटन के लिए वैवाहिक मामला दाखिल किया गया था।

4. परिवादी के मामले के अनुसार, उसका पति भारतीय सेना में नियोजित था और वह अक्टूबर, 2006 में सेवा से सेवानिवृत्त हुआ। बाद में, वह बीमार हो गया और नामकुम सैन्य अस्पताल, राँची में उसका इलाज किया गया था किंतु उसकी दशा बिगड़ गयी और अंत में उसे नागरमल मोदी सेवा सदन, राँची में भरती किया गया था जहाँ दिनांक 8.11.2006 को उसका देहान्त हो गया। तत्पश्चात, उसके पति के भाइयों अर्थात् याचीगण ने उसके पति की चल–अचल संपत्ति को छुपाना और हड़पना शुरू किया। उसके पति की अंत्येष्टि के बाद परिवादी ने दिनांक 23.11.2006 को उसके सामानों जैसे मिलिट्री बॉक्स, पेंशन बुक एवं अन्य कागजातों का पता लगाने का प्रयास किया किंतु वह इन्हें नहीं पा सकी थी। उसके मामले के अनुसार, न केवल कागजात बल्कि उसके पति की सोने की अंगूठी, चेन आदि भी गायब थे और विरोध करने पर उस पर प्रहार किया गया था और उसके दांपत्य गृह से उसे निकाल दिया गया था। परिवादी ने पुलिस का मदद लिया और कुछ सामानों को उसे सौंपा गया था, किंतु घर जिसमें रह रहे थे और उसके पति द्वारा दिल्ली में खरीदी गयी भूमि, शेयर प्रमाण पत्र और अन्य महत्वपूर्ण दस्तावेजों सहित उसके पति के सामानों को उसे सौंपा नहीं गया था। इन अभिकथनों के साथ यह दावा करते हुए कि भारतीय दंड संहिता की धाराओं 379, 403, 404, 465, 448 के अधीन अभियुक्तगण ने अपराध किया था, परिवाद याचिका दाखिल की गयी थी।

5. सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान पर परिवादी का बयान दर्ज किया गया था और उसने जाँच के चरण पर चार गवाहों का परीक्षण भी किया था, जिसके आधार पर अवर न्यायालय ने दिनांक 27.3.2010 के आदेश द्वारा केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया अपराध पाया और याचीगण के विरुद्ध समन जारी करने का आदेश दिया। अवर न्यायालय में याचीगण की उपस्थिति के बाद आरोप के पहले दो गवाहों का परीक्षण किया गया था जो परिवादी और उसका पुत्र है। इन गवाहों के परीक्षण के बाद याचीगण ने दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 245 के अधीन यह कथन करते हुए आवेदन दाखिल किया कि इस मामले के तथ्यों में भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन अपराध नहीं बनाया गया है और इस प्रकार उन्हें उन्मोचित किया जाय, किंतु इसे आक्षेपित आदेश द्वारा अवर न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित करते हुए अस्वीकार कर दिया गया था कि भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन अपराध के लिए अभियुक्त याचीगण के विरुद्ध आरोप विरचित करने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त सामग्री मौजूद है। तद्द्वारा व्यथित होकर, याचीगण इस पुनरीक्षण आवेदन में इस न्यायालय के पास आए हैं।

6. याचीगण ने अभिलेख पर सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान पर दर्ज परिवादी के बयानों को और जाँच के चरण पर परीक्षण किए गए गवाहों के बयानों को और आरोप के पहले दर्ज किए गए गवाहों के अभिसाक्ष्य

को लाया है। सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान पर दर्ज परिवादी के बयान से यह प्रतीत होता है कि उसने न्यायालय के प्रश्न का उत्तर दिया था कि उसने वर्ष 1989 में अपने पति के विरुद्ध भरण–पोषण का मामला दाखिल किया था और वह धन पा रही थी। किंतु, उसने और उसके गवाहों ने कथन किया है कि उसकी मृत्यु के समय मतभेद समाप्त हो गया था और वह अपने पति के साथ रह रही थी। चाहे जो भी हो, पुनरीक्षण न्यायालय के रूप में, मैं तथ्य के इस विवादित प्रश्न पर विचार नहीं करुँगा।

7. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने संक्षिप्त बिंदु उठाया है और निवेदन किया है कि याचीगण परिवादी के मृतक पति के भाई हैं और अपनी मृत्यु के समय पर वह याचीगण के साथ रह रहा था। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि मामले के उस दृष्टिकोण में यह नहीं कहा जा सकता है कि याचीगण ने मृतक की किसी संपत्ति को गैरईमानदार रूप से दुर्विनियोजित किया था अथवा स्वयं अपने उपयोग के लिए इसे संपरिवर्तित किया था और वे उसके सामानों अथवा संपत्ति के कब्जा के विधित: हकदार नहीं थे। यह निवेदन किया गया है कि तद्नुसार भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन अपराध नहीं बनाया जा सकता है भले ही तर्क के लाभ के लिए परिवाद मामले में दिए गए बयानों को उनकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाता है। याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा आगे यह निवेदन किया गया है कि याचीगण द्वारा अभिकथित रूप से दुर्विनियोगित संपत्ति के वर्णन में अचल संपत्ति भी अर्थात् राँची का घर और दिल्ली की भूमि सम्मिलित की जाती है, भारतीय दंड संहिता की धारा 404 को अचल संपत्ति पर प्रयोज्य नहीं बनाया जा सकता है। इस संबंध में याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **धूलजी बनाम कंचन, AIR 1956 मध्य भारत 49** में मध्य भारत के तत्कालीन उच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *"9. .....Hkk0 n0 l0 dh èkkjk 404 d ihN mí'; ml lifÙk dk lj{k.k çnku djuk g ftl bld fofp= :i l LFkkfir gku d dkj.k l lj{k.k dh vko';drk g tgk 0;fDr tk bldh n[kHkky dj ldrk Fkk] dh eR; gk pdh g vkj 0;fDr] ftl l iokDr 0;fDr dh eR; d ckn bldk n[kHkky dju dh mEehn dh tkrh g vkj tk ,l dju dk gdnkj g] ekd ij mifLFkr ugh gvk gA*
>
> *vtufc;k d ikl bldk xjbekunkj :i l nfofu;kfxr dju vkj bl lifjofrr dju dk ekdk miyCèk gkrk gA bu ifjfLFkfr;k e] ;fn ,l vtufc;k dk ,l dju dh vuefr nh tkrh g] i'pkrorh Lokeh ml lifÙk dk ijh rjg xok ldrk gA vfèkdrj ekeyk e tgk lk{; ugh g fd lifÙk dku lh Fkh vkj lifÙk tk vud gkFkk e x;h g vFkok viuk Lo:i cny fy;k g fd ihN tku dh 'kk;n gh dkb lHkkouk gA bu leLr lHkkfor tkf[kek dk fu;f=r fd;k tkuk pkfg,A*
>
> *bl dkj.k l çkoèkku cuk;k x;k g ftld }kjk bu ifjfLFkfr;k d vèkhu xjbekunkj nfofu;kx vFkok lifjoru fo'k"kr mPprj nMkn'k d lkFk nMuh; cuk;k x;k gA ;g Li"V g fd vpy lifÙk d ekey e ,l dkb tkf[ke vrxLr ugh g flok, tgk vpy lifÙk igy Hkftr dh tkrh g vkj py lifÙk e lifjofrr dh tkrh g vkj rRi'pkr bldk xjbekunkj :i l nfofu;kftr vFkok lifjofrr fd;k tkrk gA*
>
> *tgk lifÙk v{k..k cuh g] dkb 0;fDr flok, fofèk d vu#i bldk gd vftr ugh dj ldrk gA vçkfèkÑr 0;fDr }kjk dCtk fn;k tkuk ek= vrfjrh ij dkb gd inku ugh djrk g vkj ml fdlh Hkh le; dCtk l ofpr fd;k tk ldrk gA***

8. मेरे सुविचारित दृष्टिकोण में याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय के पास इस बिंदु पर विचार करने का अवसर था और **आर॰ के॰ डालमिया एवं अन्य बनाम दिल्ली प्रशासन, AIR 1962 SC 1821,** में इसने भारतीय दंड संहिता की धारा 404 में प्रयुक्त शब्द ''संपत्ति'' को केवल चल संपत्ति तक निर्बंधित करने से इनकार कर दिया है। किंतु, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निम्नलिखित निबंधनों में प्रश्न को खुला छोड़ दिया गया था:–

"49. 6 Bom HCR Cr. 33 e ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd èkkjk vk 403 vkj 404 dk lkFk iBu dju ij èkkjk 404 doy py lifÙk ij ykx gkrh FkhA fu.k; e dkj.k ugh fn;k x;k FkkA

50. ;fn foèkkueMy u èkkjk 404 d çoru dk doy py lifÙk rd fucfèkr dju dk vk'k; j[kk Fkk] bldk dkb dkj.k ugh Fkk fd D;k fo'k"kd 'kCn ^py d fcuk lkekU; 'kCn dk mi;kx fd;k x;k FkkA vr% ge doy ^py lifÙk* rd 'kCn ^lifÙk* dk fucfèkr dju dk dkj.k ugh ikr gA ge dkb er vfHk0;Dr dju dh vko';drk ugh g fd D;k vpy lifÙk dk HkkO n0 l0 dh èkkjk 404 d vèkhu vijkèk d vè;ekhu fd;k tk ldrk FkkA***

9. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **हरेन्द्र नाथ मंडल बनाम विजय कृष्ण दास, 1949 Cr. LJ 241,** में कलकत्ता उच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

*"(2) ..... bl èkkjk d vèkhu nk"kh 0;fDr dk irk yxku d fy, vfHk;ktu dk u doy nfofu;kx cfYd xjbekunkj nfofu;kx vFkok vfHk;Dr }kjk lifÙk d Lo; viu mi;kx d fy, xjbekunkj lifjoru Hkh fl) dju gkxkA f}rh;r% vfHk;ktu dk fl) dju gkxk fd lifÙk ml 0;fDr dh eR; d le; ij lifÙk erd 0;fDr d dCtk e Fkh vkj fd ;g rc l ,l dCtk d fofèkr% gdnkj fdlh 0;fDr d dCtk e ugh gA bu nkuk vo;ok dk LFkkfir dju gh gkxk vFkok vkjki foQy gk tk,xkA***

xxx xxx xxx xxx

*(4) ---- 0;fDr d ikl lifÙk d LokfeRo d gd d vFk e lifÙk dk gd ugh gk ldrk g fdr fQj Hkh og bld dCtk dk fofèkr% gdnkj gk ldrk gA***

10. इस संबंध में, **कारी मंगादू एवं अन्य, AIR 1915 Mad 506 (1)** में मद्रास उच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया गया है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

^^tlk èkkjk 404 d mnkgj.k }kjk n'kk;k x;k g] ml èkkjk dk vk'k; lodk ,o vtufc;k dk nfMr dju Fkk ftudk lHkor% er 0;fDr d lifÙk;k e vfèkdkj vFkok fgr ugh gk ldrk Fkk vkj ftUgku ,lh lifÙk;k dk nfofu;kx fd;k Fkk vkj ***;g fudV lcfèk;k dk nfMr dju d fy, vk'kf;r ugh Fkk ftUgku Lor= LokfeRo d nkok d vèkhu vFkok erd d mÙkjkfèkdkjh d :i e mÙkjkfèkdkjh gku dk nkok d vèkhu erd dh lifÙk;k dk dCtk fy;k vkj C;kgkj fd;kA***** *(tkj fn;k x;k)*

इन निर्णयों पर विश्वास करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि स्वीकृत रूप से कहा जा सकता है कि याचीगण के परिवादी के मृतक पति का भाई होने के नाते भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन उनके विरुद्ध अपराध नहीं बनता है।

11. राज्य के विद्वान अधिवक्ता और परिवादी विरोधी पक्षकार सं० 2 के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि परिवाद याचिका, जाँच के चरण पर और आरोप पूर्व चरण पर भी दर्ज परिवादी और गवाहों के बयानों के आधार पर याचीगण के विरुद्ध स्पष्टत: अपराध बनता है क्योंकि परिवादी के मृतक पति के सामान एवं संपत्ति को गैरईमानदार रूप से रखा गया है और इन याचीगण द्वारा दुर्विनियोजित किया गया है।

12. परिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने **राजकुमार बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, 2003 Cr. LJ 1073,** में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है जिसमें पुत्र को अपनी माता की हत्या करने के लिए और उसके शरीर से गहना उतारने के लिए आरोपित किया गया था और भा० दं० सं० की धारा 404 के अधीन उसकी दोषसिद्धि मान्य ठहरायी गयी थी। **नेमीचंद जैन बनाम रोशन लाल एवं अन्य, (2004)13 SCC 461,** में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर भी विश्वास किया गया है जिसमें मामले के तथ्यों में उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण याचिका में भा० दं० सं० की धाराओं 304B तथा 498A से आरोपों को भा० दं० सं० की धारा 306 में परिवर्तित कर दिया था। यह अभिनिर्धारित किया गया था कि उच्च न्यायालय को इस निष्कर्ष पर आने के लिए संपूर्ण साक्ष्य पर विचार नहीं करना चाहिए था कि भा० दं० सं० की धारा 304B और 498A के अधीन आरोप विरचित करने के लिए सामग्री नहीं थी।

13. परिवादी विरोधी पक्षकार सं० 2 के विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया है कि न केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन अपराध बनता है बल्कि अन्य अपराध जिनके लिए परिवाद दाखिल किया गया था, भी याचीगण के विरुद्ध बनता है। विद्वान अधिवक्ता के इस निवेदन का उत्तर याचीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन करते हुए दिया गया है कि अवर न्यायालय द्वारा दिनांक 27.3.2010 के आदेश द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया अपराध पाया गया था जिसे परिवादी विरोधी पक्षकार सं० 2 द्वारा चुनौती कभी नहीं दी गयी है।

14. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं याचीगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदन में बल पाता हूँ। स्वीकृत रूप से, याचीगण परिवादी के मृतक पति के भाई हैं और स्वीकृत रूप से मृतक अपने मृत्यु के समय पर माता-पिता और भाईयों के साथ सैन्य सेवा से सेवा निवृत्त होने के बाद रह रहा था। परिवादी के मामले के अनुसार, वह भी मृतक के साथ रह रही थी, किंतु इस तथ्य को विवादित किया गया है और यह मामले में कोई भिन्नता नहीं करने जा रहा है और इसालिए, इस पर विचार करना अतात्विक है और मैं तथ्य के विवादित प्रश्न पर विचार किए बिना केवल विधि के प्रश्न तक इस आदेश को सीमित कर रहा हूँ। अवर न्यायालय ने अभिलेख पर मौजूद सामग्री के आधार पर केवल भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया अपराध पाया है। किसी अन्य अपराध के लिए याचीगण के विरुद्ध प्रथम दृष्टया मामला नहीं पाया गया है और परिवादी द्वारा उक्त आदेश को चुनौती नहीं दी गयी है।

15. भारतीय दंड संहिता की धारा 404 का पठन निम्नलिखित है:–

"404. ***,lh lEifÙk dk cbekuh l nfofu;kx tk er 0;fDr dh eR; d le; mld dCt e Fkh*** *&tk dkb fdlh lEifÙk dk] ;g tkur g, fd ,lh lEifÙk fdlh 0;fDr dh eR; d le; ml er 0;fDr d dCt e Fkh] vkj rc l*

fdlh 0;fDr d dCt e ugh jgh g] tk ,l dCt dk oèk :i l gdnkj g] cbekuh l nfofu;kftr djxk ;k viu mi;kx e lifjofrr dj yxk] og nkuk e l fdlh Hkkfr d dkjkokl l] ft ldh vofèk rhu o"k rd dh gk ldxh] nf.Mr fd;k tk,xk vkj teku l Hkh n.Muh; gkxk] vkj ;fn og vijkèkh] ,l 0;fDr dh eR; d le; fyfid ;k lod d :i e mld }kjk fu;kftr Fkk] rk dkjkokl lkr o"k rd dk gk ldxkA

n"Vkr

*Z dh eR; Quhpj rFkk #i; viu dCt e j[kr g, gk tkrh gA mldk lod A ,l dCt d gdnkj fdlh 0;fDr d dkfct gku d igy cbekuh l bl nfofu;kftr dj yrk gA Au bl èkkjk e ifjHkkf"kr vijkèk fd;k gA***

16. इस प्रकार, इस धारा के कोरे पठन पर यह प्रकट है कि अपराध केवल तब बनाया जा सकता है जब मृतक व्यक्ति की संपत्ति जिस पर मृतक व्यक्ति अपनी मृत्यु के समय पर काबिज था, का दुर्विनियोग अथवा संपरिवर्तन हुआ है। पुन: अपराध केवल तब बनाया जा सकता है जब उक्त संपत्ति मृतक की मृत्यु के समय पर ऐसे कब्जा के विधित: हकदार किसी व्यक्ति के कब्जा में नहीं थी।

17. वर्तमान मामले में, याचीगण के मृतक व्यक्ति का सगा भाई होने के नाते और चूँकि मृतक उनके साथ संयुक्त रूप से रह रहा था, यह नहीं कहा जा सकता है कि मृतक द्वारा छोड़ी गयी संपत्ति इन याचीगण के कब्जा में नहीं थी अथवा कि ये याचीगण ऐसे कब्जा के विधित: हकदार नहीं थे। मैं **हरेन्द्रनाथ मंडल मामले (ऊपर)** में कलकत्ता उच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि से सहमत हूँ कि संपत्ति के स्वामित्व के हक के अर्थ में व्यक्ति के पास संपत्ति का हक नहीं हो सकता है किंतु फिर भी वह इसके कब्जा का विधित: हकदार हो सकता है। यदि व्यक्ति मृतक की संपत्ति के कब्जा का हकदार है अथवा मृतक की मृत्यु के समय पर वह निकट संबंधी होने के नाते मृतक के साथ संपत्ति पर काबिज था, ऐसे व्यक्ति के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन अपराध बनता हुआ नहीं कहा जा सकता है।

18. मेरा सुविचारित दृष्टिकोण है कि यदि परिवादी के मामले को इसकी संपूर्णता में स्वीकार किया जाता है, मृतक के सगे भाई होने के नाते याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन अपराध बना हुआ नहीं कहा जा सकता है क्योंकि स्वीकृत रूप से मृतक अपनी मृत्यु के समय पर उनके साथ संयुक्त रूप से रह रहा था। इस प्रकार, याचीगण मृतक का सगा भाई होने के नाते मृतक के साथ संपत्ति पर विधित: काबिज भी थे और भारतीय दंड संहिता की धारा 404 के अधीन उनके विरुद्ध अपराध बनता नहीं कहा जा सकता है। इस प्रकार, याचीगण को विचारण का सामना करने के लिए मजबूर करना न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा और तद्नुसार, आक्षेपित आदेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

19. पूर्वोक्त कारणों से, परिवाद मामला सं॰ 1019 वर्ष 2007 में श्री पी॰ श्रीवास्तव, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, राँची द्वारा पारित दिनांक 27.3.2010 का आदेश और दिनांक 6.7.2011 का आक्षेपित आदेश भी एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और याचीगण को उन्मोचित किया जाता है। तद्नुसार, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

कुमारी रुपलता देवी उर्फ रूपलता देवी

cuke

अनिल कुमार दूबे

Tr. Pet. (Civil) No. 1 of 2012. Decided on 30th August, 2013.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—धारा 24—अंतरण याचिका–प्रमुख न्यायाधीश कुटुंब न्यायालय, बोकारो के न्यायालय से कुटुंब न्यायालय, राँची को हक वैवाहिक वाद के अंतरण के लिए प्रार्थना–पक्षगण आपसी सहमति से तलाक याचिका संशोधित करने के लिए सहमत हुए हैं–बोकारो न्यायालय से राँची न्यायालय को वाद अंतरित करने का निर्देश दिया गया–याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 5 एवं 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Suraj Verma, For the Appellant; Mr. Atanu Bannerjee, For the Opp. Party.

आदेश

इस अंतरण याचिका को प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बोकारो के न्यायालय से प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, राँची को हक (वैवाहिक) वाद सं॰ 37 वर्ष 2011 अंतरित करने की प्रार्थना के साथ सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 की धारा 24 के अधीन दाखिल किया गया है।

2. दिनांक 1.3.2013 के आदेश से प्रतीत होता है कि पक्षों को मध्यस्थता प्रक्रिया के लिए सुलहकार, झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकार, राँची के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया गया था किंतु कुछ कारणों से याची उपस्थित नहीं हो सका था।

3. यह निवेदन किया गया है कि विरोधी पक्षकार के साथ दांपत्य जीवन बिताना जारी रखना याची के लिए संभव नहीं है किंतु प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बोकारो के समक्ष उपस्थित होने में वह मजबूरी और कठिनाई का सामना करेगी, अत: मामला राँची अंतरित किया जाय। यह निष्पक्षत: निवेदन किया गया है कि प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, बोकारो के न्यायालय से प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, राँची के न्यायालय में अभिलेख की प्राप्ति के बाद याची आपसी सहमति से तलाक के लिए धारा 13B के अधीन उक्त वाद को संपरिवर्तित करने के लिए विरोधी पक्षकार के साथ सहयोग करेगी।

4. विरोधी पक्षकार के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने बोकारो से राँची को मामला अंतरित किए जाने में आपत्ति नहीं किया है यदि उसके द्वारा दाखिल याचिका को हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13B के अधीन संशोधित करने की अनुमति दी जाती है और उसके लिए यदि याची सहयोग करती है और आवश्यक याचिका एवं दस्तावेज पर हस्ताक्षर करती है।

5. चूँकि पक्षगण आपसी सहमति से तलाक याचिका संशोधित करने के लिए सहमत हुए हैं, हक (वैवाहिक) वाद सं॰ 37/2011 के केस अभिलेख को प्रमुख न्यायाधीश, कुटुंब न्यायालय, राँची को अंतरित करने का निर्देश दिया जाता है और अपनी उपस्थिति की तिथि से एक माह के भीतर वे हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 13B के अधीन याचिका के संशोधन के लिए कदम उठाएँगे।

6. पूर्वोक्त संप्रेक्षण के साथ यह याचिका अनुज्ञात की जाती है।

7. विरोधी पक्षकार के व्यय पर फैक्स के माध्यम से यह आदेश संसूचित किया जाए।

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

समरेन्द्र नाथ हाजरा उर्फ एस॰ एन॰ हाजरा

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1055 of 2013. Decided on 16th January, 2014.

खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954—धारा 16 (1)(i)(a)(ii)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—मिस ब्रैंडेड खाद्य वस्तु का विक्रय–संज्ञान–लिया गया नमूना विश्लेषण के लिए लोक विश्लेषक के पास भेजा गया था–लोक विश्लेषक की रिपोर्ट भी प्राप्त की गयी है–लोक विश्लेषक की रिपोर्ट पर पता उपलब्ध हैं किंतु पूरा नहीं है–जो भी पता दिया गया है, उसे नियमावली 1955 के नियम 32 का पर्याप्त अनुपालन अभिनिर्धारित किया जा सकता है–याची के विरुद्ध अभियोजन अनावश्यक है और अभिखंडित किया जाता है।

(पैराएँ 7 एवं 8)

निर्णयज विधि.–2013 (2) JBCJ 58 (HC); 2013 (2) JBCJ 159 (HC)—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. S.K. Dwivedi, For the Petitioner; APP., For the State; Mr. Deepak Kumar Prasad, For Respondent No. 2.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और वि॰ प॰ सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन परिवाद केस सं॰ C-IV-19 वर्ष 2009 में पारित दिनांक 22.9.2009 के आदेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची के विरुद्ध खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम, 1954 की धारा 16 (1) (a) (i) (ii) के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है।

3. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री द्विवेदी निवेदन करते हैं कि रिशभ की बड़ी (मसूर बड़ी) का नमूना रिलायंस फ्रेश के एक आउटलेट से लिया गया था। उसे इसके विश्लेषण के लिए लोक विश्लेषक राँची, झारखंड को भेजा गया था। विश्लेषण किए जाने पर उत्पाद को 'मिस ब्रैंडेड' पाया गया था क्योंकि पैकेट के लेबल के उपर निर्माता का पूरा पता नहीं था और ऐसे अभियोग पर याची के विरुद्ध अभियोजन आरंभ किया गया था जो रिलायंस फ्रेश के कर्मचारियों में से एक था किंतु यदि लोक विश्लेषक का रिपोर्ट देखा जाए, यह प्रतीत होगा कि पता तो हैं किंतु पुरा पता दिया गया प्रतीत नहीं होता है। किंतु, उसे पर्याप्त अनुपालन माना जा सकता है और, इसलिए, उस आधार पर याची का अभियोजन न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि लगभग समरुप स्थिति में, जब मिसब्रैंडिंग के कुछ मामलों में यह पाया गया था कि 'बेस्ट बीफोर यूज' जिसे पैकेट के उपर बड़े अक्षरों में मुद्रित किया जाना चाहिए था, बड़े अक्षरों में मुद्रित नहीं किया गया था बल्कि छोटे अक्षरों में मुद्रित किया गया था किंतु न्यायालय ने इसे पर्याप्त अनुपालन माना है और, इसलिए, इसी सादृश्यता पर इसे भी खाद्य अपमिश्रण निवारण नियमावली, 1955 के नियम 32 के अधीन पर्याप्त अनुपालन का मामला माना जाएगा।

5. विद्वान अधिवक्ता ने इस संबंध में दो निर्णयों **धरमपाल गुलाटी बनाम झारखंड राज्य एवं एक अन्य, 2013 (2) JBCJ 58 (HC)** और **श्री जलज कुमार चटर्जी बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, 2013 (2) JBCJ 159 (HC)** को निर्दिष्ट किया है।

6. इसके विरुद्ध, वि॰ प॰ सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि यह निश्चय ही प्रावधान का पूर्ण अनुपालन प्रतीत नहीं होता है जैसा खाद्य अपमिश्रण निवारण नियमावली, 1955 के नियम 32 में अंतर्विष्ट है।

7. लोक विश्लेषक द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि निर्माता का पता तो है किंतु अभियोजन के अनुसार यह पूरा पता नहीं है किंतु जो भी पता दिया गया है, उसे खाद्य अपमिश्रण निवारण नियमावली, 1955 के नियम 32 के पूर्ण अनुपालन के रूप में माना जा सकता है और मामला के उस दृष्टिकोण में याची के विरुद्ध अभियोजन अनावश्यक होगा।

8. तद्नुसार, जहाँ तक याची समरेन्द्र नाथ हजारा उर्फ एस॰ एन॰ हाजरा का संबंध है, दिनांक 22.9.2009 का संज्ञान लेने वाला आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

9. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efrx.k

शिव शंकर भगत

cuke

बिहार राज्य एवं अन्य

C.W.J.C. No. 2634 of 2000 (P). Decided on 5th December, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन के मामले में।

भारतीय वन अधिनियम, 1927— धारा 52—अधिहृत संपत्ति की निर्मुक्ति–आदेश जिसका प्रभाव विधि/संविधान द्वारा संरक्षित अधिकार का वंचन करने का है को विधिक प्रावधान और नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के अनुरुप होना होगा–यदि किसी व्यक्ति को किसी विधि का उल्लंघन करने के अभिकथन पर उसकी संपत्ति से वंचित करना इप्सित किया जाता है, विधिक साक्ष्य द्वारा ऐसे उल्लंघन को स्थापित करने का भार व्यक्ति पर है–याची ने अभिकथित वन उत्पाद के परिवहन में ट्रक का उपयोग करने की अपनी सहमति देने और कि उसका ट्रक किसी वन उत्पाद के साथ जब्त किया गया था और उसने कोई वन अपराध किया था के अभिकथन से विनिर्दिष्टतः इनकार किया था, अतः अभिकथन/आरोप सिद्ध करने का भार अभियोजक पर था–किंतु ऐसे किसी साक्ष्य पर कोई चर्चा नहीं है जिसके आधार पर याची के विरुद्ध अभिकथन को सिद्ध किया गया अभिनिर्धारित किया गया था–याचीगण के ट्रक को निर्मुक्त करने के निर्देश के साथ आक्षेपित आदेशों को अभिखंडित किया गया। (पैराएँ 14 से 23)

निर्णयज विधि.–2012 (3) JLJ 83 (JHC): 2012 (4) JCR 190 (Jhr); 2013 (1) JCR 445 (Jhr)—Relied on.

अधिवक्तागण.–Mr. Amar Kumar Sinha, For the Petitioner; J.C. to G.A., For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–इस रिट याचिका में याची ने अधिहरण मामला सं॰ 4 वर्ष 1993 में डिविजनल वन अधिकारी, दुमका द्वारा पारित दिनांक 23 अप्रिल, 1993 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा रजिस्ट्रेशन सं॰ BR 36-7065 वाला याची का ट्रक इस अभिकथन पर अधिहृत कर

लिया गया है कि वन अपराध करने में उक्त वाहन का प्रयोग किया गया था। याची ने आगे अधिहरण अपील सं० 1 वर्ष 1993 में उपायुक्त, गोड्डा द्वारा पारित दिनांक 13 अप्रिल, 1996 के आदेश और पुनरीक्षण मामला सं० 16 वर्ष 1996 में सचिव, वन एवं पर्यावरण विभाग, बिहार, पटना द्वारा पारित दिनांक 4 जनवरी, 2000 के आदेश के भी अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा याची की अपील और डिविजनल वन अधिकारी–सह–प्राधिकृत अधिकारी का आदेश मान्य ठहराया गया है।

2. संक्षेप में तथ्य ये हैं कि वन क्षेत्र में अवैध रूप से जलावन की लकड़ी लादने के अभिकथन पर याची के रजिस्ट्रेशन सं० BR 36-7065 वाले ट्रक के विरुद्ध मामला संस्थित किया गया था। वन रक्षक, पहरगामा की मदद से प्राधिकृत अधिकारी द्वारा ट्रक जब्त कर लिया गया था। तत्पश्चात्, डिविजन वन अधिकारी, दुमका द्वारा अधिहरण मामला सं० 4 वर्ष 1993 आरंभ किया गया था।

3. याची उक्त ट्रक का रजिस्टर्ड स्वामी है। अधिहरण मामले में उसके उपर नोटिस तामील किया गया था। वह उपस्थित हुआ था एवं उत्तर दाखिल किया था। अधिहरण मामले में याची का दृष्टिकोण यह था कि जलावन की लकड़ी उसकी सहमति के बिना ट्रक पर लादी गयी थी। ट्रक भी लादी गयी लकड़ी के साथ प्रस्तुत नहीं किया गया था। याची ने दावा किया कि ट्रक से जब्त किए गए लकड़ी का मूल्य ट्रक की कीमत की तुलना में अत्यन्त कम था और ट्रक की जब्ती अवैध थी।

4. विद्वान डिविजनल वन अधिकारी ने उक्त स्पष्टीकरण अस्वीकार किया और अभिनिर्धारित किया कि याची का ट्रक साल लकड़ी के 200 पोल, महुआ के 50 टुकड़े, असन के 42 टुकड़े और विभिन्न प्रकार के वृक्षों के 118 टुकड़े किसी संक्रमण परमिट के बिना ढो रहा था। दिनांक 4 फरवरी, 1993 को ट्रक का पीछा किया गया था और बीट अधिकारी, करनातालत, पाथरगामा द्वारा रतनपुर से जब्त किया गया था और ट्रक चालक एवं खलासी को गिरफ्तार किया गया था। उन्होंने बयान दिया कि वे ट्रक स्वामी की सहमति से वन उत्पाद का परिवहन कर रहे थे। जब्त की गयी लकड़ी वन उत्पाद थी और अधिसूचित वन क्षेत्र से लायी गयी थी।

5. इस प्रकार, विद्वान डिविजनल वन अधिकारी ने याची का ट्रक अधिहृत करते हुए दिनांक 23 अप्रिल, 1993 का आदेश पारित किया।

6. उक्त आदेश के विरुद्ध याची ने उपायुक्त, गोड्डा के समक्ष अपील दाखिल किया जिसे अधिहरण अपील सं० 1 वर्ष 1993-94 के रूप में दर्ज किया गया था। अपीलीय प्राधिकारी ने डिविजनल वन अधिकारी के आदेश को मान्य ठहराते हुए दिनांक 13 अप्रिल, 1996 के आदेश द्वारा अपील खारिज कर दिया।

7. तत्पश्चात, याची ने सचिव, वन एवं पर्यावरण विभाग, बिहार, पटना के समक्ष पुनरीक्षण दाखिल किया। विद्वान पुनरीक्षण प्राधिकारी ने अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्री को देखे बिना यह अभिनिर्धारित करते हुए कि वाहन वैध संक्रमण के बिना वन उत्पाद ढो रहा था और वन अपराध करने में ट्रक का उपयोग किया गया था, लापरवाह संप्रेक्षण किया। विद्वान पुनरीक्षण प्राधिकारी ने प्राधिकृत अधिकारी और अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को भी मान्य ठहराया और दिनांक 4 जनवरी, 2000 के आदेश द्वारा पुनरीक्षण खारिज कर दिया।

8. इस रिट याचिका में उक्त आदेशों को मुख्यत: इस आधार पर चुनौती दी गयी है कि इन्हें लापरवाही से और मनमाने रूप से पारित किया गया है और ये अभिलेख पर मौजूद तर्कपूर्ण सामग्री एवं साक्ष्य से समर्थित नहीं है। संबंधित प्राधिकारियों ने विधिक प्रावधानों को दरकिनार किया है और हठपूर्वक अपने निष्कर्षों को दर्ज किया है।

9. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्राधिकृत अधिकारी और अपीलीय प्राधिकारी तथा पुनरीक्षण प्राधिकारी यह विचार करने में विफल रहे कि याची ने विनिर्दिष्टत: बचाव किया था कि उसे जानकारी नहीं थी कि ट्रक में लकड़ी लादी गयी थी और लकड़ियों को वन क्षेत्र से हटाया गया था। ट्रक भी लकड़ियों के साथ प्रस्तुत नहीं किया गया था और वन क्षेत्र से जब्त नहीं किया गया था। यह भी स्पष्टत: उल्लिखित किया गया था कि ट्रक में लादी गयी लकड़ी का मूल्य ट्रक की कीमत की तुलना में अत्यन्त कम था। किंतु विद्वान प्राधिकृत अधिकारी ने और विद्वान अपीलीय प्राधिकारी तथा पुनरीक्षण प्राधिकारी ने भी इस पर विचार नहीं किया था और मूल्य पहलू को छुआ तक नहीं था। निष्कर्ष कि स्वामी की सहमति से ट्रक का उपयोग किया गया था, अभिलेख पर किसी साक्ष्य से समर्थित नहीं है।

10. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि भारत के संविधान का अनुच्छेद 300A परिकल्पित करता है कि किसी व्यक्ति को विधि के प्राधिकार के सिवाय, उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा। किंतु विधि द्वारा विहित प्रक्रिया का अनुसरण किए बिना और विधिक प्रावधानों को विचार में लिए बिना संबंधित प्राधिकारियों ने याची के प्रतिवाद को पूरी तरह अस्वीकार कर दिया है और अभिलेख पर किसी साक्ष्य के बिना अभिनिर्धारित किया है कि वन अपराध करने में उसकी सहमति से याची के ट्रक का उपयोग किया गया था। न तो प्राधिकृत अधिकारी ने, न ही अपीलीय प्राधिकारी ने और न ही पुनरीक्षण प्राधिकारी ने किसी साक्ष्य पर चर्चा किया है जिसके आधार पर वन अधिकारी के बयान पर विश्वास किया गया है और याची के प्रतिवाद पर अविश्वास किया गया है। अत:, प्राधिकृत अधिकारी का निष्कर्ष पूर्णत: विकृत और असंपोषणीय है।

11. प्रतिशपथ पत्र दाखिल करके प्रत्यर्थियों द्वारा रिट याचिका का विरोध किया गया है। अन्य बातों के साथ यह कथन किया गया है कि याची का ट्रक भारतीय वन अधिनियम, 1927 की धारा 2 (4) के अर्थ के अंतर्गत वन उत्पाद के साथ जब्त किया गया था क्योंकि किसी संक्रमण परमिट के बिना इसमें जलावन लकड़ी लादा गया था। ट्रक जब्त करने के बाद अधिहरण कार्यवाही आरंभ की गयी थी। याची को अपना प्रतिवाद करने के लिए नोटिस और अवसर दिया गया था। अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्री पर विचार करने के बाद और याची को सुनने के बाद यह पाया गया था कि भारतीय वन अधिनियम की धारा 52 के उल्लंघन में किसी संक्रमण परमिट के बिना परिवहन के प्रयोजन से ट्रक में वन उत्पाद लादा गया था। इस प्रकार, अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्री पर विचार करने के बाद प्राधिकृत अधिकारी द्वारा अधिहरण आदेश पारित किया गया था। याची ने अपीलीय प्राधिकारी के समक्ष उक्त आदेश का विरोध किया। उसकी अपील खारिज कर दी गयी थी। तत्पश्चात, याची ने पुनरीक्षण दाखिल किया। पुनरीक्षण प्राधिकारी ने प्राधिकृत अधिकारी के आदेश और अपीलीय प्राधिकारी के आदेश को मान्य ठहराया। उक्त आदेशों में दुर्बलता नहीं है और इनमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

12. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं सामग्री पर विचार किया है। इस मामले में स्वीकृत अवस्था यह है कि याची का ट्रक इस अभिकथन पर जब्त किया गया था कि यह किसी संक्रमण परमिट के बिना विभिन्न वृक्षों के तुरन्त काटे गए रोटा और जलावन की लकड़ी ढो रहा था। ट्रक चालक एवं खलासी को अभिकथित रूप से पीछा करके गिरफ्तार किया गया था और ट्रक जब्त किया गया था। लिखित रिपोर्ट के आधार पर भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33 (1), 41, 42 और 52 के अधीन मामला ट्रक चालक, खलासी और याची (ट्रक स्वामी) के विरुद्ध दर्ज किया गया था। इसी समय पर, ट्रक के अधिहरण के लिए कार्यवाही आरंभ की गयी थी। याची ने टी॰ आर॰ सं॰ 118 वर्ष 1998/जी॰ आर॰ सी॰ सं॰ 5 वर्ष 1993 में पारित दिनांक 2 अप्रिल, 1998 का निर्णय

प्रस्तुत किया है जो दर्शाता है कि भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33 (1), 41, 42 और 52 के अधीन याची एवं अन्य के विरुद्ध आरंभ किया गया अभियोजन याची सहित अभियुक्तगण की दोषमुक्ति में समाप्त हुआ। उक्त मामले का विचारण कर रहे विद्वान न्यायालय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया गया है कि याची को अभिकथित अपराधों का दोषी नहीं पाया गया था। किंतु, याची के विरुद्ध अधिहरण मामला सं॰ 4 वर्ष 1993 यह अभिनिर्धारित करके निष्कर्षित किया गया था कि याची का ट्रक वन अपराध में अंतर्ग्रस्त था। डिविजनल वन अधिकारी, दुमका–सह–प्राधिकृत अधिकारी का उक्त निष्कर्ष टी॰ आर॰ सं॰ 118 वर्ष 1998/जी॰ आर॰ सी॰ सं॰ 5 वर्ष 1993 में दर्ज विचारण न्यायालय के निष्कर्ष के विपरीत है।

13. डिविजनल वन अधिकारी–सह–प्राधिकृत अधिकारी के आदेश का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि उन्होंने केवल मामले के तथ्यों, याची के प्रतिवाद और वन अधिकारी के बयान का कथन किया है। साक्ष्य पर कोई चर्चा नहीं है जिसके आधार पर वन अधिकारियों के अभिकथन को सिद्ध पाया गया है। इस प्रकार, डिविजनल वन अधिकारी–सह–प्राधिकृत अधिकारी का निष्कर्ष पूर्णत: विकृत है। यह सिद्ध करने के लिए साक्ष्य नहीं है कि याची का ट्रक उसकी सहमति से वन उत्पाद के साथ लादा गया था और कि ट्रक किसी वन उत्पाद के साथ जब्त किया गया था।

14. यद्यपि, यह सत्य है कि संपत्ति का अधिकार अब मूल अधिकार नहीं है, अनुच्छेद 300A में संविधान की स्पष्ट आज्ञा है कि विधि के प्राधिकार के सिवाए किसी व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित नहीं किया जा सकता है। विधि की आवश्यकता पूरी किए बिना लापरवाही से व्यक्ति की संपत्ति अधिहृत नहीं की जा सकती है।

15. आदेश जिसका प्रभाव संविधान/विधि द्वारा संरक्षित अधिकार का वंचन करने में है को विधिक प्रावधानों एवं नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के साथ संगत होना होगा। यदि किसी विधि के उल्लंघन के अभिकथन पर व्यक्ति को उसकी संपत्ति से वंचित करना इप्सित किया जाता है, विधिक साक्ष्य द्वारा ऐसे उल्लंघन को स्थापित करने का भार व्यक्ति पर है।

16. वर्तमान मामले में याची ने अभिकथित वन उत्पाद के परिवहन में ट्रक के उपयोग के लिए अपनी सहमति के अभिकथन और इस अभिकथन कि उसका ट्रक किसी वन उत्पाद के साथ जब्त किया गया था और उसने वन अपराध किया था, से विनिर्दिष्टत: इनकार किया है, अत: अभिकथन/आरोप स्थापित करने का भार अभियोजक पर था। किंतु साक्ष्य पर चर्चा नहीं है जिसके आधार पर याची के विरुद्ध अभिकथन को सिद्ध किया गया अभिनिर्धारित किया गया है।

17. राम अवध पांडे बनाम झारखंड राज्य, 2012 (4) JCR 190 (Jhr.) [:2012(3) JLJ 83 (JHC)] में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि वन अपराध की कारिता के संबंध में ट्रक स्वामी की जानकारी स्थापित करने के लिए अभिलेख पर किसी तर्कपूर्ण सामग्री के बिना अधिनियम की धारा 52 के अधीन संपत्ति अधिहृत नहीं की जा सकती है।

18. इस न्यायालय ने **संदीप सलूजा बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, 2013 (1) JCR 445 (Jhr)** के लगभग समरुप मामले में आदेश दिया है कि नागरिक की संपत्ति हठपूर्वक एवं लापरवाही से अधिहृत नहीं की जा सकती है जब तक विधि के किसी प्रावधान के उल्लंघन का अभिकथन सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर तर्कपूर्ण साक्ष्य नहीं है।

19. विपरीत रूप से, भारतीय वन अधिनियम की धाराओं 33 (1), 41, 42 और 45 के अधीन इसी अभिकथन पर याची के विरुद्ध विरचित आरोप विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, गोड्डा द्वारा पूर्णरुपेण विचार में सिद्ध नहीं किया गया अभिनिर्धारित किया गया है।

20. मैं डिविजनल वन अधिकारी–सह–प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्ष का विधिक आधार नहीं पाता हूँ। अपीलीय प्राधिकारी तथा पुनरीक्षण प्राधिकारी के आदेश भी मात्र अपने निष्कर्षों के समर्थन में साक्ष्य पर चर्चा के बिना प्राधिकृत अधिकारी के आदेश का भावानुवाद है।

21. उक्त चर्चा की दृष्टि में, अधिहरण केस सं० 4 वर्ष 1993 में डिविजनल वन अधिकारी–सह–प्राधिकृत प्राधिकारी द्वारा पारित दिनांक 23 अप्रिल, 1993 का आदेश, अधिहरण अपील सं० 1 वर्ष 1993-94 में उपायुक्त (अपीलीय प्राधिकारी) द्वारा पारित दिनांक 3 अप्रिल, 1996 का आदेश और अधिहरण पुनरीक्षण सं० 16 वर्ष 1996 में सचिव, वन एवं पर्यावरण विभाग, बिहार, पटना (पुनरीक्षण प्राधिकारी) का आदेश विधि में असंपोषणीय है और एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

22. यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

23. प्रत्यर्थी को याची का रजिस्ट्रेशन सं० BR 36-7065 वाला ट्रक तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

डब्ल्यू० एफ० एलबर्ट उर्फ वेंडेल फ्रेडरिक एलबर्ट एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1920 of 2012. Decided on 5th February, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 408 एवं 120B—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग एवं छल–संज्ञान–जब एक ही और समरुप अभिकथन पर दो प्राथमिकी दर्ज की जाती है, समय के बाद के बिंदु पर दर्ज प्राथमिकी पोषित नहीं की जा सकती है–वर्तमान में, प्रथम प्राथमिकी वर्ष 2005 तक की अवधि से संबंधित राशि के दुर्विनियोग के अपराध की कारिता के संबंध में दर्ज की गयी थी जबकि द्वितीय प्राथमिकी, जिसे दर्ज किया गया है, वर्ष 2006-2007 की राशि के दुर्विनियोग से संबंधित है–पश्चातवर्ती प्राथमिकी को इस आधार पर प्रतिषिद्ध नहीं किया जा सकता है कि याची के विरुद्ध दाखिल अन्य अभिकथन के संबंध में याचिका के विरुद्ध कोई अन्य प्राथमिकी दाखिल की गयी है–संज्ञान लेने वाला आदेश एवं आरोप विरचित करने वाला आदेश के अभिखंडन की आवश्यकता नहीं है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 5 से 7)

निर्णयज विधि.–(1999) 3 SCC 247; (2005) 1 SCC 732; (2010) 12 SCC 254—Referred; (2001) 6 SCC 181—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Das, For the Petitioner; Mr. APP, For the State; Mr. S.K. Pandey, For the O.P. No.2.

आदेश

टेलको (गोविन्दपुर) पी० एस० केस सं० 89 वर्ष 2006 (जी० आर० सं० 927 वर्ष 2006) में न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा पारित दिनांक 15.6.2010 के आदेश को जिसके द्वारा और जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 408, 120B के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान याचीगण के विरुद्ध लिया

गया है, और दिनांक 25.7.2012 के आदेश का भी, जिसके अधीन पूर्वोक्त अपराधों के अधीन आरोप विरचित किया गया है, अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि उक्त अभिकथन के लिए पहले भी प्राथमिकी दर्ज की गयी थी जिसमें आरोप-पत्र दाखिल किए जाने पर अपराध का संज्ञान लिया गया है और याचीगण का विचारण किया जा रहा है।

2. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता श्री दास निवेदन करते हैं कि पहले किसी सत्यवती विग जिसने स्वयं का सोसाइटी अर्थात विग शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक सोसाइटी, जमशेदपुर का अध्यक्ष होने का दावा किया, ने एक मामला उसमें यह अभिकथित करते हुए दर्ज किया कि याची सं० 1, सोसाइटी का सचिव और उसकी पत्नी याची सं० 2, विग इंग्लिश स्कूल की प्राचार्या ने विपुल राशि का दुर्विनियोग किया है। ऐसे अभिकथन पर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 420, 409, 467, 468/34 के अधीन टेलको (गोविन्दपुर) पी० एस० केस सं० 254 वर्ष 2005 के रूप में मामला दर्ज किया गया था। आरोप-पत्र दाखिल किए जाने पर संज्ञान लिया गया था और याचीगण का विचारण किया गया था। बाद में, सोसाइटी का सचिव होने का दावा करते सूचक हरेराम सिंह ने परिवाद मामला सी 1 केस सं० 474 वर्ष 2006 उसमें यह अभिकथन करते हुए दर्ज किया कि याची सं० 1, सोसाइटी का पूर्व सचिव और उसकी पत्नी याची सं० 2, विग इंग्लिश स्कूल की प्राचार्य ने अन्य अभियुक्तगण अर्थात् पूर्व सहायक सचिव, विद्यालय की कार्यकारी प्राचार्या, लेखाकार और विद्यालय के प्रभारी शिक्षक के साथ दुरभिसंधि में वर्ष 2006-07 के दौरान 73,48,435/- रुपयों की राशि का दुर्विनियोग किया। इसके अतिरिक्त, 6,73,48,435/- की राशि भी दुर्विनियोगित की गयी थी। उक्त परिवाद इसके संस्थापन एवं अन्वेषण के लिए संबंधित पुलिस थाना के समक्ष भेजा गया था। इस पर, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 408, 120B/34 के अधीन टेलको (गोविंदपुर) पी० एस० केस सं० 89 वर्ष 2006 के रूप में मामला दर्ज किया गया था। अन्वेषण पर पुलिस ने आरोप-पत्र दाखिल किया जिसके अधीन पूर्वोक्तानुसार अपराधों का संज्ञान लिया गया था और याचीगण के विरुद्ध आरोपों को भी विरचित किया गया था और, तद्द्वारा, अभिकथनों के लिए याचीगण का विचारण भी किया गया था जो पूर्व मामले अर्थात् टेलको (गोविन्दपुर) पी० एस० केस सं० 254 वर्ष 2005 का भी विषय वस्तु था और, तद्द्वारा, याचीगण को एक ही अभिकथन के लिए दो बार तंग किया जा रहा है जो संविधान की आज्ञा और **टी० टी० एंटनी बनाम केरल राज्य एवं अन्य, (2001)6 SCC 181; बाबू भाई बनाम गुजरात राज्य एवं अन्य, (2010)12 SCC 254** मामलों में दिए गए निर्णयों के विरुद्ध है। ऐसी स्थिति के अधीन टेलको (गोविंदपुर) पी० एस० केस सं० 89 वर्ष 2006 (जी० आर० सं० 927/2006) में अपराध का संज्ञान लेने वाला आदेश और आरोपों को विरचित करने वाला आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

3. इसके विरुद्ध, वि० प० सं० 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एस० के० पांडे निवेदन करते हैं कि पहले तत्कालीन अध्यक्ष विग शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक सोसाइटी, छोटागोविन्दपुर, जमशेदपुर ने मामला दर्ज किया है जिसे सोसाइटी की राशि के विनियोग के लिए टेलको (गोविन्दपुर) पी० एस० केस सं० 254 वर्ष 2005 के रूप में दर्ज किया गया था। उस मामले में राशि के दुर्विनियोग की प्रासंगिक अवधि वर्ष 2005 तक थी जबकि वर्तमान मामला सब-डिविजनल अधिकारी, दालभूम, जमशेदपुर के निर्देश के अनुपालन में दर्ज किया गया है जिन्होंने न केवल इन दो याचीगण के विरुद्ध बल्कि अन्य 8 अभियुक्तगण के विरुद्ध भी रिपोर्ट दिया था जिन्होंने एक-दूसरे के साथ दुरभिसंधि में एकेडमिक सत्र 2006-2007 के दौरान 78,98,435/- की कुल राशि में से 73,48,435/- रुपयों के रूप में प्राथमिकी में उल्लिखित किया गया था। कुल राशि जो दुर्विनियोजित पायी गयी थी, प्राथमिकी में 6,73,48,435/- रु० के तौर पर

उल्लिखित थी। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया है कि जब गबन की राशि और गबन की अवधि भी और साथ-साथ उन व्यक्तियों जिन्हें पहले अभियुक्त नहीं बनाया गया था, की वर्तमान मामले में अभियुक्त बनाया गया है, यह नहीं कहा जा सकता है कि दोनों मामले एक ही और समरुप अभिकथनों पर दर्ज किए गए हैं और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाले आदेश और आरोप विरचित करने वाले आदेश के अभिखंडन के लिए याचीगण की ओर से किए गए निवेदन मान्य कभी नहीं प्रतीत होते हैं।

इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने **एम॰ कृष्णा बनाम कर्नाटक राज्य, 1999 (2) Supreme 222: (1999)3 SCC 247,** और **रमेश चंद्र नंदलाल पारिख बनाम गुजरात राज्य एवं एक अन्य, (2006)1 SCC 732,** मामलों में दिए गए निर्णयों को निर्दिष्ट किया है। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि जहाँ विभिन्न व्यक्तियों द्वारा दो भिन्न और सुभिन्न अपराध किए गए हैं, दोनों के बीच संव्यवहार की समानता कभी नहीं हुआ करती है, अत: संज्ञान लेने वाले आदेश और पश्चातवर्ती मामले में आरोप विरचित करने वाले आदेश के अभिखंडन का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है क्योंकि मामलों में याचीगण की ओर से निर्दिष्ट अधिकथित निर्णयाधार वर्तमान मामले पर प्रयोज्य कभी नहीं है।

4. इन निवेदनों के संदर्भ में, **टी॰ टी॰ एंटनी (ऊपर)** के मामले में दिए गए निर्णय को ध्यान में लेने की आवश्यकता है जिसमें माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *"19. nO çO lO dh ;kstuk ;g g fd ifyl Fkkuk d çHkkjh vfèkdkjh dk lK; vijkèk dh dkfjrk dh tkudkjh feyu ij çkFkfedh dh çfof"V d vkèkkj ij vUo"k.k vkjHk djuk g tlk nO çO lO dh èkkjk 156 vFkok 157 e çkoèkkfur fd;k x;k gA vUo"k.k ijk dju ij vkj lxfgr lk{; d vkèkkj ij ml nO çO lO dh èkkjk 169 vFkok 170, ;FkkfLFkfr] d vèkhu er fufer djuk gkxk vkj nO çO lO dh èkkjk 173 (2) d vèkhu lcfèkr nMkfèkdkjh dk viuk fjikV vxlkfjr djuk gkxkA fdr] ,lk fjikV nkf[ky fd, tku d ckn Hkh ;fn mld dCtk e vfrfjDr lpuk vFkok lkexh vkrh g] ml u;h çkFkfedh nt dju dh vko';drk ugh g(og lkekU;r% U;k;ky; dh vuefr l vkx vUo"k.k dju d fy, l'kDr g vkj tgk vkx vUo"k.k d nkjku og vfrfjDr ekf[kd vFkok nLrkoth lk{; lxfgr djrk g] og ,d ;k vfèkd fjikV d lkFk bl vxlj dju d fy, ckè; g(;gh nO çO lO dh èkkjk 173 dh mièkkjk (8) dk egRo gA*
>
> *20. mDr ppk l ;g vulfjr gkrk g fd nO çO lO dh èkkjkvk 154, 155, 156, 157, 162, 169, 170 vkj 173 d çkoèkkuk dh ;kstuk d vèkhu doy lK; vijkèk dh dkfjrk d lcèk e çFkere vFkok çFke lpuk nO çO lO dh èkkjk 154 dh vko';drkvk dk ijk djrh gA bl çdkj] f}rh; çkFkfedh ugh gk ldrh g vkj ifj.kkeLo#i mlh lK; vijkèk vFkok ,d ;k vfèkd lK; vijkèkk dk mnHkr dju okyh mlh ?kVuk vFkok ?kVuk d lcèk e çR;d i'pkrorh lpuk dh çfflr ij u;k vUo"k.k ugh fd;k tk ldrk gA lK; vijkèk vFkok lK; vijkèk ;k vijkèkk d mnHkr dju okyh ?kVuk d ckj e lpuk dh çfflr ij vkj Fkkuk Mk;jh e çkFkfedh dh çfof"V ij ifyl Fkkuk d çHkkjh vfèkdkjh dk u doy çkFkfedh e fjikV fd, x, lK; vijkèk dk cfYd mlh l0;ogkj vFkok mlh ?kVuk d Øe e fd, x, ik, x, vU; lcfèkr vijkèkk dk Hkh vUo"k.k djuk gkxk vkj ,d ;k vfèkd fjikV nkf[ky djuk gkxk tlk nO çO lO dh èkkjk 173 e çkoèkkfur fd;k x;k gA*

*27. lfoèkku d vuPNnk 19 vkj 21 d vèkhu ukxfjdk d ey vfèkdkjk vkj lK; vijkèk dk vUo"k.k dju dh ifyl dh 0;kid 'kfDr d chp U;k;ky; dk U;k;kfpr lryu LFkkfir djuk gkxkA blij dkb fookn ugh gk ldrk g fd n0 ç0 l0 dh èkkjk 173 dh mièkkjk (8) vkx vUo"k.k dju d fy,] vfrfjDr lk{; (ekf[kd ,o nLrkoth nkuk) çkIr dju d fy, vkj nMkfèkdkjh dk vfrfjDr fjikV ;k fjikVk dk vxlkfjr dju d fy, ifyl dk l'kDr cukrh gA fdr] ukjx ekey e ;g lçf{kr fd;k x;k Fkk fd U;k;ky; dh vuefr l vkx vUo"k.k djuk lefpr gkxkA fdr] mÙkjorh çkFkfefd;k] pkg bUg n0 ç0 l0 dh èkkjk 173 (2) d vèkhu vfre fjikV nkf[ky dju d igy vFkok ckn e nkf[ky fd;k x;k g] d ifj.kkeLo#i ,d ;k vfèkd lK; vijkèkk dk mnHkr dju okyh mlh ?kVuk d lcèk e ifyl }kjk u;k vUo"k.k fd, tku d fy, ukxfjd dk çR;d ckj vUo"k.k dh 0;kid 'kfDr d vè;ènhu djuk vko';d ugh gA fdlh fn, x, ekey e ;g Li"Vr% n0 ç0 l0 dh èkkjkvk 154 vkj 156 d dk; {k= d ij gkxk cfYd vUo"k.k dh lkfofèkd 'kfDr dk n#i;kx gkxkA gekj nf"Vdk.k e] mlh ekey vFkok mlh l0;ogkj d Øe e vfHkdfFkr :i l fd, x, lcfèkr lK; vijkèk] ftld lcèk e çFke çkFkfedh d vulj.k e vUo"k.k fd;k tk jgk g vFkok n0 ç0 l0 dh èkkjk 173 (2) d vèkhu vfre fjikV nMkfèkdkjh dk vxlkfjr fd;k x;k g] d lcèk e nkf[ky f}rh; vFkok mÙkjorh çkFkfefd;k ij vkèkkfjr u, vUo"k.k dk ekeyk çfr ekeyk ugh gku d ukr n0 ç0 l0 dh èkkjk 482 d vèkhu vFkok lfoèkku d vuPNnk 226/227 d vèkhu 'kfDr d ç;kx d fy, l;kX; ekeyk gk ldrk gA***

5. बाबूभाई बनाम गुजरात राज्य (ऊपर) में यही सिद्धांत अधिकथित किया गया है। इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि जब एक ही और समरुप अभिकथन पर दो प्राथमिकियाँ दर्ज की जाती हैं, समय के बाद के बिंदु पर दर्ज प्राथमिकी पोषित नहीं की जा सकती है। किंतु, यहाँ वर्तमान मामले में जैसा वि० प० सं० 2 की ओर से प्रदर्शित किया गया है, यह प्रतीत होता है कि प्रथम प्राथमिकी वर्ष 2005 तक की अवधि से संबंधित राशि के दुर्विनियोग के अपराध की कारिता के संबंध में दर्ज की गयी थी जबकि द्वितीय प्राथमिकी जिसे दर्ज किया गया है, वर्ष 2006-2007 के लिए राशि के दुर्विनियोग से संबंधित है। इसके अतिरिक्त, यह भी अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तगण ने एक करोड़ से अधिक की राशि का दुर्विनियोग किया। आगे, मैं पाता हूँ कि प्रथम मामले में केवल इन दोनों याचीगण को अभियुक्त बनाया गया है जबकि दूसरे मामले में इन दोनों याचीगण सहित 10 व्यक्तियों को अभियुक्त बनाया गया है और पहले मामले की तुलना में षडयंत्र की विशालता व्यापक प्रतीत होती है। अतः, दोनों के बीच संव्यवहार की समानता प्रतीत नहीं होती है। ऐसी स्थिति में, याचीगण द्वारा निर्दिष्ट **''टी० टी० एंटनी''** और अन्य मामलों में अधिकथित निर्णयाधार वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं है।

6. इस चरण पर, मैं **रमेश चंद्र नंदलाल पारिख (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि पश्चातवर्ती प्राथमिकी इस आधार पर प्रतिषिद्ध नहीं की जा सकती है कि याची के विरुद्ध दाखिल अन्य अभिकथनों के संबंध में याची के विरुद्ध कोई अन्य प्राथमिकी दाखिल की गयी है। आगे मैं **एम० कृष्णा (ऊपर)** मामले को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दृष्टिकोण अपनाया कि जहाँ आरोप समरुप था किंतु भिन्न अवधि के लिए था, वहाँ भी द्वितीय प्राथमिकी दर्ज करने को अपवर्जित करने के लिए संहिता में कुछ नहीं है। माननीय न्यायाधीशों ने मत दिया था कि प्राथमिकी की दिनांक 1.8.1978 से दिनांक 1.4.1989 तक की अवधि से संबंधित अपराध के लिए भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धाराओं 13 (1) (e) और 13 (2)

के अधीन दर्ज की गयी थी और अन्वेषण रिपोर्ट दाखिल करने में समाप्त हुआ जिसे न्यायालय द्वारा स्वीकार किया गया था। द्वितीय प्राथमिकी ओर पश्चातवर्ती कार्यवाही समरुप आरोपों के अधीन बाद की अवधि से संबंधित थी जो दिनांक 1 अगस्त, 1978 से दिनांक 25 जुलाई, 1978 तक थी। तब भी यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ऐसा कोई प्रावधान नहीं है जो पश्चातवर्ती प्राथमिकी दाखिल किया जाना वर्जित करता है।

7. इन परिस्थितियों के अधीन, संज्ञान लेने वाले आदेश और आरोप विरचित करने वाले आदेश के अभिखंडन की आवश्यकता कभी नहीं है। तद्नुसार, मैं इस आवेदन में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इसलिए, इसे खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

रामेश्वर दूबे

cuke

बिहार राज्य एवं अन्य

C.W.J.C. No. 1123 of 1999 (R). Decided on 12th December, 2013.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908—धाराएँ 46 एवं 71-A—बाकस्त मालिक भूमि का पुनर्स्थापना–छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के प्रावधानों का अवलंब नहीं लिया जा सकता है यदि यह स्थापित किया गया है कि भूमि रैयत की है जो अनुसूचित जनजाति का सदस्य है और कि इसे उक्त अधिनियम की धारा 46 के प्रावधान अथवा किसी अन्य प्रावधान के उल्लंघन में अथवा कपटपूर्ण साधनों द्वारा अंतरित किया गया है–प्रत्यर्थी के दावा का समर्थन करने के लिए और/अथवा यह स्थापित करने के लिए कि भूमि को सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 के प्रावधान अथवा किसी अन्य प्रावधान के उल्लंघन में अथवा कपटपूर्ण साधनों द्वारा अंतरित किया है, अभिलेख पर कोई सामग्री अथवा साक्ष्य नहीं है–सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71 का अवलंब लेने के लिए विधि की अनिवार्य आवश्यकता इस मामले में स्पष्ट रूप से अनुपस्थित है–आयुक्त द्वारा पारित आदेश अभिखंडित किया गया–याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 11 से 15)

अधिवक्तागण.–Mr. Amar Kumar Sinha, For the Petitioner; Mr. Abjieet Kumar Singh, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–इस रिट याचिका में याची ने एस॰ ए॰ आर॰ पुनरीक्षण सं॰ 5 वर्ष 1998 में विद्वान आयुक्त, साउथ छोटानागपुर डिविजन, राँची द्वारा पारित दिनांक 15 फरवरी, 1999 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा एस॰ ए॰ आर॰ (अपील) सं॰ 11 वर्ष 1997-98 में दिनांक 26 दिसंबर, 1997 के आदेश के विरुद्ध दाखिल पुनरीक्षण को अनुज्ञात किया गया है।

2. मामला प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम (संक्षेप में 'सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम') की धारा 71A के अधीन सब-डिविजनल अधिकारी गुमला के समक्ष दाखिल आवेदन पर उद्भूत हुआ जिसे एस॰ ए॰ आर॰ केस सं॰ 27 वर्ष 1995-96 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त आवेदन में, प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने याची को बेदखल करके ग्राम गम्हरिया, पी॰ एस॰ घाघरा; जिला गुमला के 0.71 एकड़ कुल क्षेत्र में से 0.35 एकड़ भूमि के पुनर्स्थापन के लिए दावा किया था। प्रत्यर्थी सं॰ 5 का दावा यह था कि उक्त भूमि को पुनरीक्षण सर्वे अधिकार अभिलेख में बाकस्त मालिक के रूप में दर्ज किया गया था और उसने भूतपूर्व जमीन्दार के संततियों में से एक केश्वर राम मिश्रा की पत्नी सोहन कुंअर से बंदोबस्त करवाया

था तथा उक्त भूमि याची द्वारा कपटपूर्वक अर्जित की गयी थी। याची ने प्रश्नगतगत भूमि के उपर अपने अधिकार, हक और कब्जा का दावा करते हुए आवेदन का प्रतिवाद किया था। यद्यपि प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने कोई दस्तावेज दाखिल नहीं किया था अथवा कोई साक्ष्य नहीं दिया था, यह अभिनिर्धारित करके कि सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 का उल्लंघन किया गया था और भूमि को सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A के प्रावधान के अधीन पुनर्स्थापित किए जाने की आवश्यकता है, प्रत्यर्थी सं॰ 5 का आवेदन अनुज्ञात किया गया था।

3. उक्त आदेश के विरुद्ध याची ने अपर समाहर्ता, गुमला के न्यायालय में अपील एस॰ ए॰ आर॰ (अपील) सं॰ 11 वर्ष 1997-98 दाखिल किया। विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने दोनों पक्षों को सुना और अभिलेख पर मौजूद तथ्यों एवं परिस्थितियों पर विचार किया और दिनांक 26 दिसंबर, 1997 के आदेश द्वारा अपीलीय न्यायालय ने उक्त आदेश अपास्त कर दिया। यहाँ यह उल्लेख करना उपयुक्त है कि विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय के समक्ष भी प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा दावा के समर्थन में कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया था। किंतु, विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 के प्रावधान का उल्लंघन हुआ था किंतु चूँकि याची द्वारा वर्ष 1965-66 में सारवान संरचना का निर्माण किया गया था जिसका मूल्य 70,000/- रुपयों से अधिक था, उन्होंने सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A के प्रावधान के अधीन मुआवजा विनिश्चित किया और पुनर्स्थापन के बदले मुआवजा की राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया। यह निवेदन किया गया है कि याची ने आगे मुकदमा से बचने के लिए मुआवजा की राशि जमा किया।

4. तत्पश्चात भी, प्रत्यर्थी सं॰ 5 ने आयुक्त दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची के समक्ष पूर्वोक्त आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण दाखिल किया जिसे एस॰ ए॰ आर॰ पुनरीक्षण सं॰ 5 वर्ष 1998 के रूप में दर्ज किया गया था। विद्वान आयुक्त ने दिनांक 15 फरवरी, 1999 के आदेश द्वारा पुनरीक्षण अनुज्ञात किया और विद्वान अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश अपास्त कर दिया।

5. इस रिट याचिका में विद्वान आयुक्त के आदेश को अन्य बातों के साथ इस आधार पर चुनौती दिया गया है कि यह पूर्णत: विकृत, मनमाना और अवैध है। आदेश प्रत्यर्थी सं॰ 5 के दावा के समर्थन में किसी दस्तावेज अथवा साक्ष्य के प्रति कोई निर्देश अंतर्विष्ट नहीं करता है, किंतु विद्वान आयुक्त ने अभिनिर्धारित किया है कि भूमि प्रत्यर्थी सं॰ 5 के पक्ष में बंदोबस्त की गयी थी और उसका नाम भी नामांतरित किया गया था।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि डिविजनल आयुक्त का निष्कर्ष बिल्कुल आधारहीन है। विद्वान अपीलीय न्यायालय ने विद्वान एस॰ ए॰ आर॰ अधिकारी का आदेश इस आधार पर अपास्त कर दिया था कि प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा अपने दावा के समर्थन में कोई दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया था। यह स्वीकृत मामला है कि भूमि पूर्व जमीन्दार दामोदर राम मिश्रा के नाम में बाकस्त मालिक के रूप में दर्ज की गयी थी। निहित किए जाने के बाद भी, भूमि भूतपूर्व जमीन्दार के खास कब्जा में धारण की गयी थी और भूमि के संबंध में दामोदर राम मिश्रा की विधवा मोस्मात दीवान कुंअर के नाम में 'एम॰' पंजी तैयार किया गया था।

7. विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उक्त स्वीकृत अवस्था की दृष्टि में उक्त भूमि अनुसूचित जनजाति के सदस्य के रूप में रैयत की रैयती भूमि के रूप में दर्ज नहीं की गयी थी और इस प्रकार सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A के अधीन कार्यवाही पोषणीय नहीं है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि चूँकि एस॰ ए॰ आर॰ न्यायालय अथवा अपीलीय न्यायालय अथवा पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष यह दर्शाने के लिए कोई मौखिक साक्ष्य अथवा दस्तावेज प्रस्तुत नहीं किया गया था कि बाद में भी भूमि प्रत्यर्थी सं॰

5 की अथवा अनुसूचित जनजाति के किसी अन्य सदस्य की है। उन्होंने आगे निवेदन किया कि आयुक्त ने केवल अनुमानों और अटकलों पर प्रत्यर्थी सं॰ 5 के पक्ष में अपना निष्कर्ष दर्ज करते हुए याची को कोई नोटिस अथवा सुनवाई का अवसर दिए बिना उसके पीठ पीछे पुनरीक्षण को निपटाया। अपने निष्कर्ष के समर्थन में विद्वान आयुक्त के आदेश में लेशमात्र साक्ष्य अथवा ऐसे किसी दस्तावेज पर चर्चा नहीं है कि भूमि अनुसूचित जनजाति के सदस्य की है। इस प्रकार, विद्वान आयुक्त का निष्कर्ष और आदेश साक्ष्य पर आधारित नहीं है और पूर्णत: असंपोषणीय है।

8. राज्य प्रत्यर्थीगण द्वारा रिट याचिका का विरोध किया गया है। उक्त प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र में अन्य बातों के साथ यह कथन किया गया है कि विद्वान आयुक्त का निष्कर्ष चर्चा पर और पक्षों के दावों-प्रतिदावों के विचार पर आधारित है और विद्वान आयुक्त के आदेश में कोई दुर्बलता अथवा अवैधता नहीं है और इसमें इस न्यायालय के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

9. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और विद्वान आयुक्त द्वारा पारित आक्षेपित आदेश का परिशीलन किया है।

10. आदेश संक्षेप में प्रत्यर्थी सं॰ 5 का दावा और प्रतिवाद में याची द्वारा दिया गया बयान अंतर्विष्ट करता है। यह संरचना के संबंध में रिपोर्ट के बारे में भी उल्लेख करता है। अंचलाधिकारी ने वर्ष 1972-73 से भूखंड पर खड़े सारवान संरचना के बारे में रिपोर्ट दिया है। विद्वान आयुक्त ने उस आधार पर अभिनिर्धारित किया है कि भूमि प्राईवेट प्रत्यर्थीगण की है जो अनुसूचित जनजाति के सदस्य हैं। अभिलेख पर लाये गये दस्तावेज विशेषकर प्रदर्श 1 एवं 2 से प्रकट है कि खाता सं॰ 222 से संबंधित 0.71 एकड़ क्षेत्रफल वाली भूमि भूतपूर्व जमीन्दार के नाम में दर्ज की गयी थी और दामोदर राम मिश्रा की पत्नी दीवान कुंअर के नाम में लगान निर्धारित किया गया था। प्रत्यर्थीगण द्वारा उक्त अवस्था को विवादित नहीं किया गया है। प्राईवेट प्रत्यर्थियों का दावा यह है कि भूमि बाद में वर्ष 1951 में पुना भगत (जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है) के नाम में बंदोबस्त की गयी थी और भूमि के संबंध में उसका नाम नामांतरित किया गया था। किंतु, किसी पूर्व चरण पर न्यायालयों के समक्ष बंदोबस्ती अथवा नामांतरण का कोई दस्तावेज कभी नहीं लाया गया था। दावा के समर्थन में पुनरीक्षण न्यायालय के समक्ष किसी दस्तावेज अथवा साक्ष्य को प्रस्तुत नहीं किया गया था। पहली बार, अभिकथित बंदोबस्ती कागजात एवं कुछ लगान रसीदों की छाया प्रतिलिपियों को प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र के साथ संलग्न किया गया है। अभिकथित बंदोबस्ती के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि निष्पादक का नाम केश्वरराम मिश्रा की पत्नी सोहन कुँअर है। परिवचन में यह उल्लेख किया गया है कि विद्वान उप-न्यायाधीश, राँची के न्यायालय में डिक्री किए गए किसी सिविल वाद में सोहन कुँअर द्वारा भूमि प्राप्त की गयी थी। उक्त दावा सिद्ध करने के लिए ऐसा कोई दस्तावेज नहीं लाया गया है। रैयत द्वारा भूमि का अंतरण दर्शाते हुए कोई भी दस्तावेज नहीं है जिसके नाम में 'एम॰' पंजी तैयार की गयी थी।

11. इस प्रकार, दावा के समर्थन में अभिलेख पर मौजूद कोई आधार नहीं है कि भूमि, जिसे भूतपूर्व जमीन्दार के नाम में बाकस्त मालिक के रूप में दर्ज किया गया था, को बाद में प्रत्यर्थी सं॰ 5 द्वारा अर्जित किया गया है।

12. छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के प्रावधानों का अवलंब लिया जा सकता है यदि यह स्थापित किया गया है कि भूमि उस रैयत की है जो अनुसूचित जनजाति का सदस्य है और कि इसे उक्त अधिनियम की धारा 46 के प्रावधान अथवा किसी अन्य प्रावधान के उल्लंघन में अथवा कपटपूर्ण साधनों द्वारा अंतरित किया गया है।

13. जैसी चर्चा उपर की गयी है, प्रत्यर्थी सं॰ 5 के दावा का समर्थन करने के लिए और/अथवा यह स्थापित करने के लिए भूमि सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46 के प्रावधान अथवा किसी अन्य प्रावधान के उल्लंघन में अथवा कपटपूर्ण साधनों द्वारा अंतरित की गयी थी, कोई सामग्री अथवा साक्ष्य नहीं है।

14. इस प्रकार, सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A का अवलंब लेने के लिए विधि की अनिवार्य आवश्यकता इस मामले में स्पष्ट रूप से अनुपस्थित है। इस प्रकार, किसी साक्ष्य पर अनाधारित होने के नाते विद्वान डिविजनल आयुक्त का निष्कर्ष पूर्णत: विकृत और असंपोषणीय है।

15. एस॰ ए॰ आर॰ पुनरीक्षण सं॰ 5 वर्ष 1998 में आयुक्त, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची द्वारा पारित दिनांक 15 फरवरी, 1999 का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाता है। यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

दिलीप कुमार सिंह चौधरी

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Contempt (C) Case No. 411 of 2012. Decided on 25th February, 2014.

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971—धारा 12—न्यायालय द्वारा पारित आदेश की जानबूझकर अवज्ञा करने के लिए अवमान कार्यवाही आरंभ किया जाना–पहले, वेतन के बकाया के भुगतान के लिए और वेतन के निरंतर भुगतान के लिए जिला परिषद् कर्मचारी संघ द्वारा रिट याचिका दाखिल की गयी थी–जिला परिषद् के कर्मचारियों के वेतन, आदि का भुगतान सुसुरक्षित है और याची जो तृतीय पक्ष है कोई शिकायत नहीं कर सकता है और जानबूझकर की गयी अवज्ञा नहीं पायी गयी है–अवमान कार्यवाही आरंभ करने के लिए कोई आधार नहीं पाया गया है–याचिका खारिज की गयी। (पैराएँ 15 से 17)

अधिवक्तागण.–Mr. Arurva Lal, For the Appellant; Mr. Ajit Kumar, For the Respondent; Mr. Niranjan Singh, For the Respondent-Zila Parishad.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश.–यह अवमान याचिका एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298 वर्ष 1996 (आर॰) में पारित दिनांक 20.4.1999 के आदेश की जानबूझकर अवज्ञा करने के लिए और एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 372 वर्ष 1999 (आर॰) के साथ एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 632 वर्ष 1996 (आर॰) में दाखिल दिनांक 7.9.1999 के विरोधी पक्षकार सं॰ 4 (उप विकास आयुक्त-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, जिला परिषद् धनबाद) के शपथपत्र के उल्लंघन के लिए अवमान कार्यवाही आरंभ करने की प्रार्थना के साथ याची दिलीप कुमार सिंह चौधरी द्वारा दाखिल आवेदन के परिणामस्वरुप उद्भूत होती है।

2. पहले रिट आवेदन सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1969 वर्ष 1995 (आर॰) जिला परिषद् कर्मचारी संघ, धनबाद (रजिस्टर्ड सोसाइटी) द्वारा धनबाद, जिला परिषद् के कर्मचारियों के वेतन के निरंतर भुगतान के साथ 1994 से वेतन के बकाया का भुगतान करने और जी॰ पी॰ एफ॰ जमा करने की प्रार्थना के साथ दाखिल किया गया था। उक्त रिट आवेदन में जिला परिषद् धनबाद ने अभिवचन किया था कि चूँकि राज्य सरकार द्वारा अनुदान एवं कर्ज की राशि का भुगतान नहीं किया गया है और आगे राज्य सरकार द्वारा जिला परिषद् को सेस/रॉयल्टी के बकाया का भुगतान नहीं किया गया है और यदि ऐसी राशि का भुगतान राज्य सरकार द्वारा नियमित रूप से किया जाता है, जिला परिषद्, धनबाद के कर्मचारियों को उनके बकाया का

भुगतान कर दिया जाएगा और उन्हें प्रत्येक माह, जब और जैसे ये बकाया होती है, वेतन का निरंतर भुगतान भी किया जाएगा।

3. विद्वान एकल न्यायाधीश ने उक्त रिट आवेदन अर्थात् सी० डब्ल्यू० जे० सी० सं० 1996 वर्ष 1995 (आर०) को दिनांक 19.7.1996 के निर्णय के तहत निम्नलिखित निर्देशों के साथ निपटाया:–

^^i{kk dk luu ij ;g U;k;ky; ikrk g fd ftyk ifj"kn LohÑr :i l çR;Fkh fcgkj jkT; l de l de fuEufyf[kr jkf'k dk gdnkj g--------bl U;k;ky; u fuEufyf[kr vkn'k ikfjr fd;kk&

(1) jkT; ljdkj d lcfèkr çR;Fkhx.k dk bl vkn'k dh çfr dh çkflr@çLrfr dh frfFk l ,d ekg d Hkhrj de l de o"k 1995-96 d lcèk e ftyk ifj"kn] èkucn d i{k e LohÑr vunku d 30% dk fueDr dju dk fun'k fn;k tkrk gA

(2) jkT; ljdkj d lcfèkr çR;Fkhx.k dk ll@jk;YVh] ftldk ftyk ifj"kn] èkucn o"k 1991 rd gdnkj g] d 'kh"k d fo#) dy cdk;k] tlk fnukd 23.1.1991 d ifjf'k"V A e n'kk;k x;k g] d de l de 5% dk fueDr dju dk fun'k fn;k tkrk gA ,lh jkf'k bl vkn'k dh çfr dh çkflr@çLrfr dh frfFk l nk ekg dh vofèk d Hkhrj fueDr dh tkuh gA

tgk rd ll@jk;YVh ftldk ftyk ifj"kn gdnkj g d 'kh"k d fo#) 'k"k jkf'k dk lcèk g] ;g vk'kk dh tkrh g fd çR;Fkh jkT; fudV Hkfo"; e bl fueDr dju d fy, dne mBk,xkA

(3) çR;Fkh ftyk ifj"kn vkj bld çkfèkdkjh dk viu depkfj;k d oru d cdk;k dk fueDr dju vkj depkfj;k dh Hkfo"; fufèk ,o v'knk;h Hkkx dk tek dju dk fun'k fn;k tkrk gA ,d vFkok vU; iokDr jkf'k dh çkflr dh frfFk l ,d ekg dh vofèk d Hkhrj viu depkfj;k d cdk;k lfgr ,l oru dk fueDr fd;k tkuk g vkj Hkfo"; fufèk ,o vfHknk;h Hkkx tek fd;k tkuk gA

*;g Li"V fd;k tkrk g fd bl vkn'k d QyLo#i çR;Fkh ftyk ifj"kn }kjk tk Hkh jkf'k çklr dh tk,xh] bldk mi;kx çFker% bl vkn'k d vuikyu d ç;ktu l fd;k tk,xk vkj doy rRi'pkr fdlh vU; ç;ktu l bldk mi;kx dju dh NV i{kk dk gkxhA***

4. विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्णय से व्यथित होकर, बिहार राज्य ने निर्णय के केवल एक भाग को चुनौती देते हुए एल० पी० ए० सं० 298 वर्ष 1996 (आर०) दाखिल किया था जिसके द्वारा और जिसके अधीन उन्हें निर्णय की प्रति की प्राप्ति की तिथि से दो माह की अवधि के भीतर वर्ष 1991 तक सेस/रॉयल्टी के शीर्ष के विरुद्ध कुल बकाया के कम से कम 5% को निर्मुक्त करने का निर्देश दिया गया था। इस प्रकार, दिनांक 19.7.1996 के निर्णय में अंतर्विष्ट निर्देश सं० 2 को एल० पी० ए० सं० 298 वर्ष 1996 (आर०) के तहत चुनौती दी गयी थी।

5. एल० पी० ए० में, इस न्यायालय ने पक्षों के अभिवचनों को विचार में लेने के बाद अपीलार्थियों की प्रार्थना अस्वीकार कर दिया और तद्नुसार, दिनांक 20.4.1999 के आदेश के तहत निम्नलिखित निर्देशों के साथ एल० पी० ए० खारिज कर दिया गया था:–

^^rnulkj] ;g vihy [kkfjt dh tkrh gA

vihykFkhx.k dk viu le{k bl fu.k; dh çfr dh çLrfr dh frfFk l ,d ekg d Hkhrj ftyk ifj"kn dk ll@jk;YVh] tlk fun'kd] ipk;rh jkt] fcgkj

ljdkj d fnukd 23.1.1990 d i= e n'kk;k x;k g] d 'kh"k d fo#) dy cdk;k n;k d 25% dk Hkxrku dju dk fun'k fn;k tkrk gA 'k"k ll jkf'k] tl Øe'k fun'kd] ipk;rh jkt] fcgkj ljdkj vkj fodkl mik;Dr] èkuckn }kjk fyf[kr fnukd 23.1.1990 vkj fnukd 30.8.1993 d i=k e n'kk;k x;k g] dk Hkxrku rRi'pkr nk ekg dh vofèk d Hkhrj vihykFkhx.k }kjk ftyk ifj"kn dk fd;k tk,xkA vkx vihykFkhx.k nk ekg dh mlh vofèk d Hkhrj fnukd 1.4.1991 d ckn lxfgr ll e ftyk ifj"kn d lE;d fgLl dk Hkxrku djxA ;fn vHkh rd vk{kfir fu.k; d fucèkukulkj vihykFkhx.k }kjk o"k 1995-96 l pky o"k dh vofèk rd vunku d 30% dk Hkxrku ugh fd;k x;k g] bldk Hkxrku Hkh mud }kjk ftyk ifj"kn dk fu.k; dh çfr dh çLrfr dh frFk l ,d ekg dh vofèk d Hkhrj fd;k tk,xkA

ftyk ifj"kn dk ljdkj l fufèk dh çkfIr d rjUr ckn viu depkfj;k d oru d cdk;k dk Hkxrku dju dk fun'k fn;k tkrk gA ;g Hkfo"; e fu;fer :i l çR;d ekg viu depkfj;k d oru dk Hkxrku djuk tkjh j[kxk tc vkj tl ; n; gk tkrh gA ;g ;Fkk lHko 'kh?k viu depkfj;k d Hkfo"; fufèk [kkrk e vè;if{kr jkf'k tek djxkA

*vihykFkhx.k dk viu le{k bl fu.k; dh çfr dh çLrfr l ,d ekg dh vofèk d Hkhrj lfoèkku d vuPNn 243-I lg&ifBr vfèkfu;e dh èkkjk 135 d fucèkukulkj foÙk vk;kx xfBr dju dk fun'k vkx fn;k tkrk gA vk;kx o"k 1994 l vkt dh frFk rd dh vofèk d fy, lfoèkku d vuPNn 243-I lg&ifBr vfèkfu;e dh èkkjk 135 d fucèkukulkj fl)kr vfèkdfFkr djxk vkj viu xBu dh frFk l ;Fkk lHko rhu ekg dh vofèk d Hkhrj fofèk d vu#i dkjokb d fy, bl jkT; ljdkj d le{k çLrr djxkA bl ç;ktu l vk;kx jkT; ljdkj l dkb dkxtkr] nLrkot vkj vfHky[k leu dju d fy, Lor= gkxk vkj jkT; ljdkj ,lk ryc iku d rjUr ckn budh vkifr djxhA bl lcèk e] ftyk ifj"kn dk vkj ;kph&çR;Fkh l0 1 dk Hkh foÙk vk;kx d le{k vH;konu nu dh Lor=rk gkxh vkj ;fn ,lk vH;konu fn;k tkrk g] lfoèkku d vuPNn 243-I lgifBr vfèkfu;e dh èkkjk 135 d fucèkukulkj fl)kr vfèkdfFkr djr g, bl ij fopkj fd;k tk,xkA***

6. यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक है कि सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1969 वर्ष 1995 (आर॰) में पारित विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश के अननुपालन के लिए और एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 632 वर्ष 1996 (आर॰) के साथ एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 372 वर्ष 1999(R) के माध्यम से एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298 वर्ष 1996(R) में पारित आदेश के अननुपालन के लिए दो अवमान याचिकाओं को पहले ही दाखिल किया गया था। अभिलेख से यह भी प्रतीत होता है कि विरोधी पक्षकार, विकास उपायुक्त-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, धनबाद की ओर से दाखिल कारण बताओ की दृष्टि में इन दोनों अवमान याचिकाओं को सामूहिक रूप से निपटाया गया है जिनमें अन्य बातों के साथ निम्नलिखित कथन किया गया है:-

*^^,y0 ih0 ,0 298/1996 (vkj0) e ikfjr fnukd 20.4.1999 d vkn'k d QyLo:i çR;Fkh ftyk ifj"kn }kjk tk Hkh jkf'k çkIr dh tk,x] bldk mi;kx doy vfr vko';d LFkkiu 0;; tl U;k;ky;@fofèkd 0;;] vkfn d lkFk depkfj;k d oru vkj bld cdk;k d Hkxrku d fy, vkj mud oru vkfn d Hkkoh fujrj@fu;fer Hkxrku d fy, fd;k tk,xkA***

7. पुन: 14 वर्ष बीतने के बाद यह अवमान याचिका एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) में पारित दिनांक 20.4.1999 के आदेश के पैराग्राफ 32 के उप-पैराग्राफ (2) में अंतर्विष्ट निर्देश की जानबूझकर अवज्ञा करने के लिए और एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 632/1996 में दाखिल प्रत्यर्थी सं॰ 4 के दिनांक 7.9.1999 के शपथ पत्र के अभिकथित उल्लंघन के लिए भी प्रत्यर्थीगण/विरोधी पक्षकारों के विरुद्ध अवमान कार्यवाही आरंभ करने के लिए याची दिलीप कुमार सिंह चौधरी जो धनबाद जिला परिषद् का वर्ग-II कर्मचारी है द्वारा अपनी निजी हैसियत में दाखिल की गयी है।

8. याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) में पारित आदेश के निबंधनानुसार प्राप्त निधि केवल धनबाद जिला परिषद् के कर्मचारियों के वेतन के नियमित भुगतान के लिए थी किंतु न्यायालय के आदेश के उल्लंघन में और न्यायालय में दिए गए वचन के विपरीत भी धनबाद जिला परिषद् के प्राधिकारीगण दिनांक 20.4.1999 के निर्णय एवं आदेश के घोर उपेक्षा में धनबाद जिला परिषद् के विकास कार्यों को निष्पादित करने के लिए निधि को अपयोजित कर रहे थे। याची के अनुसार, धनबाद जिला परिषद् के प्राधिकारीगण विकास कार्यों को निष्पादित करने के लिए राज्य सरकार से निधि मांग सकते थे जैसा झारखंड पंचायती राज अधिनियम, 2001 में परिकल्पित किया गया है किंतु दिनांक 12.6.2006 के पत्र के सिवाए धनबाद जिला परिषद् राज्य सरकार के पास नहीं गयी है बल्कि धनबाद जिला परिषद के प्राधिकारीगण एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) और एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 372/1999 (आर॰) के साथ एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 632/1996 (आर॰) में पारित आदेश के फलस्वरुप प्राप्त निधि का अयुक्तियुक्त रूप से दुरुपयोग कर रहे हैं और इसलिए, विपक्षी पक्षकारगण न्यायालय के अवमान के लिए अभियोजित किए जाने के दायी हैं।

9. याची के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि धनबाद जिला परिषद् के कर्मचारियों को छठे वेतन पुनरीक्षण के आधार पर उनके मासिक वेतन का भुगतान किया जा रहा है और वेतन के भुगतान एवं भविष्य निधि जमा के निबंधनानुसार मासिक व्यय लगभग 30 लाख रुपया प्रतिमाह होता है और वेतन के भुगतान एवं भविष्य निधि जमा के निबंधनानुसार वार्षिक व्यय लगभग 3.6 करोड़ रुपया होता है और छठे वेतन पुनरीक्षण के बकाया का भुगतान नहीं किया गया है। आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि धनबाद जिला परिषद् कर्मचारी संघ के कर्मचारियों के वेतन के भुगतान के लिए आशयित निधि से धनबाद जिला परिषद् ने विकास कार्यों के प्रयोजन से धनबाद जिला परिषद् के प्रत्येक निर्वाचित सदस्य को 25 लाख रुपया देने का संकल्प पारित किया है और निधि का ऐसा अपयोजन न्यायालय का पूर्ण अवमान है क्योंकि यह एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 372/1999 (आर॰) के साथ एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 632/1996 (आर॰) में न्यायालय के समक्ष विकास उपायुक्त-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, धनबाद जिला परिषद् द्वारा दिए गए वचन के उल्लंघन में है। याची ने श्री राम रतन कुमार गुप्ता, विकास उपायुक्त-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, जिला परिषद्, धनबाद के विरुद्ध कार्रवाई करने के लिए और उनको एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1999 (आर॰) में पारित दिनांक 20.4.1999 के आदेश के निबंधनानुसार धनबाद जिला परिषद् द्वारा प्राप्त किए गए निधि का दुरुपयोग करने से उनको अवरुद्ध करने के लिए अंतर्वर्ती आवेदन आई॰ ए॰ सं॰ 32/2013 भी दाखिल किया है।

10. हमने विरोधी पक्षकार धनबाद जिला परिषद् के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री निरंजन सिंह को सुना है। विरोधी पक्षकार के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1999 (आर॰) में पारित आदेश से यह स्पष्ट है कि न्यायालय ने केवल कर्मचारियों के वेतन, आदि के भुगतान के लिए संपूर्ण राशि आरक्षित करने वाला कोई आदेश पारित नहीं किया है बल्कि इसने निर्देश दिया है कि वेतन का भुगतान नियमित रूप से किया जाना चाहिए। विरोधी पक्षकार धनबाद जिला परिषद् के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि धनबाद जिला परिषद् के कर्मचारियों के वेतन के भुगतान और भावी वेतन के प्रयोजन से 50 करोड़ रुपया अनन्य रूप से सावधि जमा में रखा गया है और याची एवं अन्य

कर्मचारियों के वेतन का भुगतान पर्याप्त रूप से सुरक्षित किया गया है। यह निवेदन किया गया था कि माननीय न्यायालय ने धनबाद जिला परिषद् को किसी विकास कार्य के लिए निधि का उपयोग करने से अवरुद्ध नहीं किया है। यह निवेदन किया गया था कि धनबाद जिला परिषद् ने विकास कार्यों को निष्पादित करने के लिए धनबाद जिला परिषद् के 26 निर्वाचित सदस्यों के क्षेत्रों में से प्रत्येक के लिए 25 लाख रुपयों की निश्चित राशि आवंटित करने के लिए संकल्प पारित किया है और ऐसे विकास कार्यों के लिए राशि खर्च करना न्यायालय के आदेश के उल्लंघन के तुल्य नहीं होगा।

11. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है, एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 372/1999 (आर॰) के साथ एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 632/1996 (आर॰) और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) में पारित निर्णयों का परिशीलन किया है और अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों का भी परिशीलन किया है।

12. आरंभ में ही, यह इंगित करना होगा कि वर्तमान याची ने अपनी निजी हैसियत से आदेश के 14 वर्ष बीतने के बाद अवमान याचिका दाखिल किया है। यह कथन किया गया है कि याची न तो धनबाद जिला परिषद् कर्मचारी संघ का सदस्य है और न ही संघ का पदाधिकारी है। विरोधी पक्षकारों की ओर से, यह निवेदन किया गया था कि वर्तमान अवमान याचिका धनबाद जिला परिषद् के विकास कार्यों को रोकने के अंतरस्थ हेतु के साथ 14 वर्ष बीतने के बाद दाखिल की गयी है। चाहे जो भी हो, सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1969/1995 (आर॰) और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) मुख्यत: जिला परिषद् कर्मचारी संघ, धनबाद द्वारा इस आधार पर दाखिल किए गए थे कि इसके निरंतर भुगतान के साथ वेतन के बकाया और सामान्य भविष्य निधि का भुगतान जिला परिषद् कर्मचारी संघ, धनबाद के कर्मचारियों को नहीं किया गया था। एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) में और एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 372/1999 (आर॰) के साथ एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 632/1996 (आर॰) में भी पारित आदेशों के बाद राज्य सरकार द्वारा क्रमश: वर्ष 2001 और वर्ष 2010 में 46 करोड़ रुपयों और 138 करोड़ रुपयों की राशि का भुगतान किया गया था, जिसमें से 37 करोड़ रुपया बोकारो जिला परिषद् को उसके हिस्से के रूप में दिया गया था और शेष 147 करोड़ रुपया धनबाद जिला परिषद् के पास छोड़ दिया गया था।

13. छत्तीस वर्षों के अंतराल के बाद जिला परिषद, धनबाद सहित समस्त जिला परिषदों का चुनाव किया गया था। धनबाद जिला परिषद् के 26 निर्वाचित सदस्य है। झारखंड पंचायती राज अधिनियम के मुताबिक जिला परिषद् बोर्ड विधि के मुताबिक विकास एवं अन्य कार्य के लिए निर्णय लेने के लिए सशक्त है। जिला धनबाद में प्रचुर खनिज है और शहर में न्यूनतम सुविधाओं की आवश्यकता है, जिसके लिए निधि की आवश्यकता है। सुविधाओं को प्रदान करने के लिए और विकास गतिविधियों को निष्पादित करने के लिए धनबाद जिला परिषद् ने धनबाद जिला परिषद् के 26 निर्वाचित सदस्यों में से प्रत्येक के क्षेत्र के लिए 25 लाख रुपया आवंटित करने के लिए दिनांक 16.7.2012 का संकल्प पारित किया। धनबाद जिला परिषद् के अंतर्गत आने वाले समस्त 26 क्षेत्रों में आवश्यक न्यूनतम विकास कार्यों को दृष्टि में रखते हुए धनबाद जिला परिषद् बोर्ड ने धनबाद जिला परिषद् के निर्वाचित सदस्यों में से प्रत्येक के क्षेत्र के लिए 25 लाख रुपयों की सीमा तक का विकास कार्य करने के लिए दिनांक 26.7.2012 की अपनी बैठक में निर्णय लिया है।

14. यह कथन किया गया है कि धनबाद जिला परिषद् के 26 निर्वाचित सदस्यों के क्षेत्रों में से प्रत्येक के लिए 16 लाख रुपयों का कार्य धनबाद जिला परिषद की उसी निधि से निष्पादित किया गया था। बोर्ड का दिनांक 16.7.2012 का निर्णय/संकल्प बिल्कुल अपनी अधिकारिता के अंतर्गत है और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) और सी॰ डब्ल्यू॰ जे॰ सी॰ सं॰ 1969/1995 (आर॰) में पारित दिनांक 20.4.1999

के आदेश/निर्णय का उल्लंघन नहीं किया गया है। यह गौर करना उपयुक्त है कि आदेश विकास कार्यों के लिए उपयोग किए जाने से राशि प्रतिषिद्ध नहीं करता है।

15. निश्चय ही, एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 632/1996 (आर॰) में विकास उपायुक्त-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, धनबाद जिला परिषद् ने यह कथन करते हुए कारण बताओ दाखिल किया था कि ''केवल कर्मचारियों के वेतन और इसके बकाया के भुगतान के लिए और वेतन के भावी निरंतर/नियमित भुगतान, आदि के लिए राशि का उपयोग किया जाएगा।'' धनबाद जिला परिषद् द्वारा दाखिल अंतर्वर्ती आवेदन आई॰ ए॰ सं॰ 2729/2013 में स्पष्टत: कथन किया गया है:-

> *"15. èkuckn ftyk ifj"kn d depkfj;k d fy, oru ,o Hkkoh oru] vkfn d Hkxrku d ç;ktu l vuU; : i l lkofèk tek d : i e 50 djkM #i;k fu;r fd;k x;k g ftle l èkuckn ftyk ifj"kn }kjk C;kt d : i e yxHkx 4 djkM #i;k vftr fd;k tk jgk g tcfd èkuckn ftyk ifj"kn d depkfj;k d oru] vkfn d fy, yxHkx 3 djkM #i;k [kp fd;k tkuk g tk fodkl mik;Dr&lg&e[; dk; ikyd vfèkdkjh] èkuckn ftyk ifj"kn }kjk tkjh fnukd 4.5.2012 d i= l0 615/Zi.Pa l Li"V gA***

उक्त से यह स्पष्ट है कि धनबाद जिला परिषद के कर्मचारियों के भुगतेय वेतन का भावी भुगतान एवं अन्य भुगतान सुसरक्षित है। जब धनबाद जिला परिषद् कर्मचारी संघ के कर्मचारियों के वेतन, आदि का भुगतान सुसुरक्षित है, याची जो एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) में तृतीय पक्ष है इसके लिए कोई शिकायत नहीं कर सकता है और हम एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) में पारित दिनांक 20.4.1999 के आदेश का और एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 372 वर्ष 1999 (आर॰) के साथ एम॰ जे॰ सी॰ सं॰ 632 वर्ष 1996 (आर॰) में न्यायालय के समक्ष विकास उपायुक्त-सह-मुख्य कार्यपालक अधिकारी, धनबाद जिला परिषद् द्वारा दिए गए वचन का भी कोई जानबूझकर की गयी अवज्ञा नहीं पाते हैं। हम विरोधी पक्षकारों के विरुद्ध अवमान कार्यवाही आरंभ करने के लिए कोई आधार नहीं पाते हैं।

16. धनबाद जिला परिषद् ने दिनांक 14.2.2012 की अपनी बैठक में यह विचार करने का निर्णय किया कि क्या जिला परिषद् के जमा धन का 30% जिला परिषद् के कर्मचारियों के वेतन एवं सेवा निवृत्ति पश्चात लाभ का भुगतान करने के लिए पर्याप्त होगा। बैठक में आगे निर्णय किया गया था कि ग्रामीण क्षेत्रों में विकास कार्य के लिए जमा धन के 70% की मंजूरी दी जाएगी। धनबाद जिला परिषद निर्वाचित निकाय होने के नाते धनबाद जिला जो खनिज धनी है के विकास के लिए अध्यपेक्षित सिविक सुविधा प्रदान करने के लिए निर्णय लेने के लिए सशक्त है। इस संबंध में, यह कथन किया गया है कि धनबाद जिला परिषद् कर्मचारी संघ ने पहले ही डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1445 वर्ष 2012 दाखिल किया था जो न्यायालय के समक्ष लंबित है और विकास कार्यों/योजनाओं में जिला परिषद् की निधि का उपयोग करने से धनबाद जिला परिषद् बोर्ड को अवरुद्ध करने वाला न्यायालय द्वारा आदेश पारित नहीं किया गया है। जिला परिषद् बोर्ड विधि के मुताबिक विकास एवं अन्य कार्यों के लिए निधि का उपयोग करने के लिए निर्णय लेने के लिए सशक्त है। विकास कार्यों/योजनाओं के लिए जिला परिषद् निधि का उपयोग करने में विधिक अवरोध नहीं है। किंतु, वह राशि क्या है जिसका उपयोग विकास कार्यों के लिए किया जा सकता था, इस बारे में जिला परिषद् को समुचित निर्णय लेना है। धनबाद जिला परिषद् के निर्वाचित सदस्यों के 26 क्षेत्रों में से प्रत्येक के लिए 25 लाख रुपयों की सीमा तक विकास कार्यों/योजनाओं को क्रियान्वित करने के लिए जिला परिषद् के समक्ष प्राधिकारी को अनुमति देने के लिए धनबाद जिला परिषद् द्वारा आई॰ ए॰ सं॰ 2729/2013 दाखिल किया गया है। जैसा पहले इंगित किया गया है, धनबाद जिला परिषद् विकास

कार्यों/योजनाओं के लिए जिला परिषद् निधि से धनबाद, जिला परिषद् के प्रत्येक निर्वाचित सदस्य को निधि आवंटित करने का निर्णय लेने के लिए सशक्त है। चूँकि धनबाद जिला परिषद् कर्मचारी संघ के कर्मचारियों के वेतन का भुगतान पर्याप्त रूप से सुरक्षित किया गया है, विकास कार्यों के लिए राशि खर्च करने में धनबाद जिला परिषद् के लिए कोई रुकावट नहीं है। तद्नुसार, आई॰ ए॰ सं॰ 2729/2013 आदेशित किया जाता है।

17. झारखंड पंचायत राज अधिनियम के मुताबिक, धनबाद जिला परिषद् बोर्ड विधि के मुताबिक विकास एवं अन्य प्रयोजन से निर्णय लेने के लिए सशक्त है। अत:, हमारा दृष्टिकोण है कि बोर्ड का दिनांक 16.7.2012 का निर्णय/संकल्प बिल्कुल अपनी अधिकारिता के अंतर्गत है और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 298/1996 (आर॰) में पारित दिनांक 20.4.1999 के आदेश का उल्लंघन नहीं हुआ है। अत:, यह रिट याचिका खारिज की जाती है। परिणामस्वरुप, आई॰ ए॰ सं॰ 32/2013 खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

नुनुलाल प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

WP (S) No. 1697 of 2013. Decided on 21st January, 2014.

सेवा विधि–पेंशन–उसकी सेवानिवृत्ति के बाद याची को मंजूर की गयी पेंशन एवं उपदान राशि से कतिपय राशि की कटौती के आदेश के विरुद्ध रिट याचिका–याची को 97,702/- रुपयों की राशि से अधिक का भुगतान किया गया बताया गया है–सेवा कैडर के दौरान समय के प्रासंगिक बिंदु पर वेतनवृद्धि की मंजूरी में याची की ओर से कपट का कृत्य अथवा दुर्व्यपदेशन नहीं है–उपदान राशि से कटौती का आदेश मनमाना अभिनिर्धारित किया गया और अभिखंडित किया गया–रिट याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 5 से 8)

निर्णयज विधि.–2009 (1) SCC (L & S) 744; 2010 (2) JCR 203—Relied upon.

अधिवक्तागण.–Mr. Krishna Nand Sahay, For the Petitioner; Mr. Ratnakar Bhengra, For the Respondent.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची दिनांक 2.3.2013 के आदेश के भाग से व्यथित है जिसमें जिला शिक्षा अधिकारी, राँची ने राष्ट्रीयकृत उच्च विद्यालय, पिसका नगरी, राँची के सहायक शिक्षक के रूप में दिनांक 28.2.2013 को उसकी सेवा निवृत्ति पर याची के संबंध में पेंशन एवं उपदान की मंजूरी का आदेश पारित करते हुए उसको भुगतेय 8,35,930/- रुपया की कुल उपदान राशि से 97,702/- रुपयों की राशि की कटौती करना–चुना था जिसे मूल नियम 22C (संक्षेप में 'नियम 22C') के अधीन अधिक भुगतान किया गया बताया जाता है। इसे रिट याची द्वारा अन्य बातों के साथ इस आधार पर चुनौती दी जा रही है कि (i) इसे जिला शिक्षा अधिकारी, राँची द्वारा पारित दिनांक 2.3.2013 के आक्षेपित आदेश द्वारा याची की सेवा निवृत्ति के बाद किसी कारण बताओ अथवा नोटिस के बिना किया गया है; (ii) कि नियम 22C के निबंधनानुसार वेतन वृद्धि प्रदान करके नियत किए गए वेतन के भुगतान के मामले में याची की ओर से

कपट अथवा दुर्व्यपदेशन नहीं है; (iii) कि सदृश विवाद्यकों पर माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **सैयद अब्दुल कादिर एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (2009)1 SCC (L&S)744** मामले में दिए गए निर्णय के बाद उसी संदर्भ में इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश ने डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 626 वर्ष 2005 में **अनिल चंद्र पंडित बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, (2010)2 JCR 203,** मामले में दिनांक 29.1.2010 के निर्णय के तहत वसूली के ऐसे आदेश को अभिखंडित किया है और इसे लौटाने का निर्देश दिया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि नियम 22C के अधीन भुगतान किया गया अतिरिक्त वेतनवृद्धि स्वयं प्रत्यर्थीगण द्वारा विवेक के चैतन्य इस्तेमाल द्वारा किया गया था, यद्यपि यह कहा जाता है कि उक्त नियम 22C संकल्प की तिथि के पहले एफ॰ आर॰ 22(1) (a) (1) और एफ॰ आर॰ (1) (a) (2) द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था। किंतु, विद्वान एकल न्यायाधीश ने सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का अनुसरण करते हुए पाया कि उक्त याची ने अपनी ओर से कोई दुर्व्यपदेशन अथवा कपट नहीं किया बल्कि संबंधित प्रत्यर्थीगण द्वारा नियम की गलत व्याख्या एवं प्रयोज्यता पर उसकी सेवावधि के दौरान उसको भुगतान किया गया था जिसकी वसूली इप्सित की गयी थी। याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि ऐसी परिस्थितियों में, दिनांक 2.3.2013 के उक्त आदेश का भाग अभिखंडित किए जाने योग्य है और उसके उपदान से वसूल की गयी राशि को वापस लौटाने का आदेश दिया जाए।

4. प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची का वेतन एफ॰ आर॰ 22 (1) (a) (2) के निबंधनानुसार नियत किया जाना था और न कि एफ॰ आर॰ 22C के प्रावधानों के अधीन। संशोधित नियम दिनांक 20.2.1993 से प्रभावी हुआ और इसलिए दिनांक 20.2.1993 से याची जैसे शिक्षकों द्वारा पाए गए वेतन आधिक्य वसूल किया जाना होगा। किंतु, प्रत्यर्थीगण राज्य के विद्वान अधिवक्ता याची के प्रतिवाद पर विवाद नहीं करते हैं कि आक्षेपित आदेश याची को किसी नोटिस अथवा अवसर के बिना पारित किया गया था। वह याची के प्रतिवाद को विवादित करने में भी सक्षम नहीं हुए हैं कि याची की ओर से दुर्व्यपदेशन या कपट नहीं हुआ है।

5. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और प्रश्नगत आदेश सहित अभिलेख पर मौजूद प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। याची को किसी टूट के बिना दिनांक 28.2.2013 को अपनी अधिवर्षिता तक उच्च विद्यालय, पिसका नगरी, राँची में, जहाँ उसे दिनांक 1.4.1978 को नियुक्त किया गया था, सहायक शिक्षक के रूप में सेवा देता बताया जाता है। उसकी सेवा निवृत्ति के बाद जिला शिक्षा अधिकारी, राँची ने याची को भुगतेय पेंशन एवं उपदान के संबंध में मंजूरी आदेश पारित करते हुए नियम 22C के अधीन याची को आधिक्य में भुगतान किए गए 97,702/- रुपयों की राशि की संगणना करना चुना था और इसे उसको भुगतेय 8,35,930/- रुपयों की उसकी संपूर्ण उपदान राशि से काट लिया गया था। किंतु, यह स्पष्ट है कि उक्त नियम 22C का समय के सम्यक क्रम में वर्ष 1993 से एफ॰ आर॰ 22 (1) (a) (2) द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था। किंतु, यह विवादित नहीं है कि उसकी सेवावधि के दौरान समय के प्रासंगिक बिंदु पर नियम 22C के अधीन वेतनवृद्धियों की मंजूरी में याची की ओर से कपट का कृत्य अथवा दुर्व्यपदेशन नहीं है। यह भी प्रतीत होता है कि 97,702/- रुपयों की राशि वसूल करने वाला आक्षेपित आदेश याची को किसी नोटिस अथवा सुनवाई के अवसर के बिना पारित किया गया है।

6. अनिल चंद्र पंडित (ऊपर) के मामले में इसी विवाद्यक ने इस न्यायालय का ध्यान खींचा है जहाँ भी संबंधित शिक्षक से प्रत्यर्थीगण द्वारा नियम एफ॰ आर॰ 22 (1) (c) के अधीन अतिरिक्त वेतनवृद्धि के रूप में भुगतान की गयी राशि आधिक्य की वसूली इप्सित की गयी थी। ऐसी परिस्थितियों में, **सैयद**

अब्दुल कादिर (ऊपर) के मामले में दिए गए निर्णय के बाद विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा वसूली का आदेश अभिखंडित कर दिया गया था और वसूल की गयी राशि को समयावधि के भीतर वापस लौटाने का निर्देश दिया गया था।

7. ऐसी परिस्थितियों में और निर्णय की दृष्टि में, समस्थित व्यक्तियों के मामले में समरुप तथ्यों पर याची का प्रतिवाद स्वीकार किए जाने योग्य है। अत:, याची को भुगतेय उपदान राशि से 97,702/- रुपयों की राशि वसूल करने वाला दिनांक 2.3.2013 के आदेश का भाग मनमाना है और विधि में संपोषित नहीं किया जा सकता है, तद्नुसार इसे अभिखंडित किया जाता है।

8. तथापि, प्रत्यर्थीगण को इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से 10 सप्ताह की अवधि के भीतर याची की उपदान राशि से वसूल की गयी राशि को वापस लौटाने का निर्देश दिया जाता है जिसमें विफल होने पर इसका वास्तविक रूप से भुगतान किए जाने तक राशि पर 10% वार्षिक की दर से ब्याज देना होगा।

9. तद्नुसार, पूर्वोक्त तरीके से रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ,pñ lhñ feJk] U;k;efr

गोपाल मांझी

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Rev. No. 249 of 2013. Decided on 19th February, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 148, 323, 427 एवं 435—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 397 एवं 401—घोर उपहति–भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 148, 323, 427 एवं 435 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध याची द्वारा दाखिल अपील खारिज करने वाले अपीलीय आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण–यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर तर्कपूर्ण साक्ष्य मौजूद है कि याची घटनास्थल पर आया था और ट्रक के चालक एवं खलासी पर प्रहार किया था और जलाया था–याची के विरुद्ध प्रहार करने और ट्रक जलाने का प्रत्यक्ष साक्ष्य है–आवेदन में गुणागुण नहीं है और इसे खारिज किया जाता है। (पैराएँ 8 से 9)

अधिवक्तागण.–M/s Vineet Kumar Vashistha, Fudan Soren, For the Petitioner; Mr. Sudhanshu Shekhar Chy, For the State.

आदेश

एच॰ सी॰ मिश्रा, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता और राज्य के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. याची दांडिक अपील सं॰ 93 वर्ष 1994 में विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश, एफ॰ टी॰ सी॰ II, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 29.7.2006 के निर्णय से व्यथित है, जिसके द्वारा जी॰ आर॰ सं॰ 139 वर्ष 1988/टी॰ आर॰ सं॰ 421 वर्ष 1994 में श्री एस॰ बी॰ प्रसाद, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, जमशेदपुर द्वारा पारित दिनांक 7 जून, 1994 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश के विरुद्ध दाखिल अपील उपांतरण के साथ विद्वान अपीलीय न्यायालय द्वारा खारिज कर दी गयी है। यह कथन किया जा सकता

है कि अवर विचारण न्यायालय ने याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148, 323, 427 और 435 के अधीन अपराध का दोषी पाया था और इसके लिए उसे दोषसिद्ध किया था, जबकि अन्य अभियुक्तगण को भी भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन अपराध के लिए दोषी पाया गया था और दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया गया था। दंडादेश के बिंदु पर सुनवाई पर याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148 और 323 के अधीन अपराध के लिए प्रत्येक के लिए चार माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था और इन दंडादेशों को साथ चलने का निर्देश दिया गया था जबकि उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 427 के अधीन अपराध के लिए छह माह के कठोर कारावास का दंडादेश दिया गया था और भारतीय दंड संहिता की धारा 435 के अधीन अपराध के लिए तीन वर्ष कठोर कारावास का दंडादेश दिया गया था और इन दोनों दंडादेशों को साथ चलने का निर्देश दिया गया था।

3. अपीलीय न्यायालय के निर्णय से प्रतीत होता है कि केवल याची द्वारा उक्त अपील दाखिल की गयी थी जिसमें अवर न्यायालय ने यह पाते हुए कि भारतीय दंड संहिता की धारा 427 के अधीन याची को दोषसिद्ध करने के लिए अवसर नहीं था, भारतीय दंड संहिता की धारा 427 के अधीन याची की दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त कर दिया है क्योंकि उसे पहले ही भारतीय दंड संहिता की धारा 435 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धाराओं 148, 323 एवं 435 के अधीन याची की दोषसिद्धि एवं दंडादेश को अवर अपीलीय न्यायालय द्वारा मान्य ठहराया गया था।

4. विचारण न्यायालय द्वारा पारित निर्णय दर्शाता है कि यह सूचित करते कि रजिस्ट्रेशन सं॰ BRX 9475 वाला उसका ट्रक अपनी पुत्री के विवाह के अवसर पर लकड़ी का परिवहन करने के लिए किसी विजय सिंह द्वारा लिया गया था, सूचक मथुरा सिंह द्वारा दिए गए लिखित रिपोर्ट के आधार पर पटमदा पी॰ एस॰ केस सं॰ 9 वर्ष 1988 संस्थित किया गया था। बाद में, चालक आया और उसको सूचित किया कि प्राथमिकी में नामित अभियुक्तगण ने चालक और खलासी पर प्रहार किया था और यह अभिकथित किया गया था कि याची ने ट्रक में आग लगा दिया था जिस कारण ट्रक पूरी तरह जल गया था। सूचक द्वारा दिए गए सूचना के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 148, 149, 341, 342, 323, 436, 427 के अधीन अपराध के लिए पुलिस मामला संस्थित किया गया था और अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण के बाद पुलिस ने याची एवं अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया और अंतत: उनका विचारण किया गया था।

5. विचारण के क्रम में अभियोजन द्वारा आठ गवाहों का परीक्षण किया गया था। अ॰ सा॰ 7 अब्दुल गफ्फार है जो ट्रक चालक है जिस पर घटना में प्रहार किया गया था और जिसने उपहतियाँ प्राप्त किया। इस गवाह ने यह कथन करते हुए मामले का पूरा समर्थन किया है कि सूचक मथुरा सिंह का ट्रक विजय सिंह द्वारा भाड़े पर लिया गया था और उसे ट्रक स्वामी द्वारा ट्रक पर लकड़ी का परिवहन करने के लिए कहा गया था। जब जला हुआ लकड़ी ट्रक पर लादा जा रहा था, याची और अन्य अभियुक्तगण, कुल 14-15 व्यक्ति आए और उस पर प्रहार करने लगे। यह अभिकथित किया गया है कि याची गोपाल मांझी ने उसके मस्तक पर उपहति कारित करते हुए टांगी से उस पर प्रहार किया और तत्पश्चात, इस याची ने ट्रक का डीजल टैंक फोड़ दिया और ट्रक में आग लगा दिया जिस कारण पूरा ट्रक जल गया था। इस गवाह ने याची को न्यायालय में पहचाना है। अ॰ सा॰ 6 मथुरा सिंह है जो इस मामले का सूचक है और उसने भी अभियोजन मामले का समर्थन किया है किंतु वह घटना का चश्मदीद गवाह नहीं है और उसे अ॰ सा॰ 7 अब्दुल गफ्फार द्वारा घटना के बारे में सूचित किया गया था। उसने पुलिस के समक्ष दी गयी लिखित सूचना को सिद्ध किया है जिसे प्रदर्श 2 के रूप में चिन्हित किया गया था। अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ संत प्रसाद वर्मा है जिन्होंने घायल अब्दुल गफ्फार का परीक्षण किया। उन्होंने कथन किया है कि उन्होंने अब्दुल

गफ्फार के सिर की खाल के पृष्ठ पर 2" x 1/2" x 1/4" माप वाला विदीर्ण जख्म पाया था जो साधारण प्रकृति का था और कड़े एवं भोथरे वस्तु द्वारा कारित किया गया था। उन्होंने उपहति रिपोर्ट भी सिद्ध किया है जिसे प्रदर्श 3 के रूप में चिन्हित किया गया था। अ॰ सा॰ 5 गगन राय है जो सेवानिवृत्त एम॰ भी॰ आई॰ है जिसने जले ट्रक का निरीक्षण किया था और अपना रिपोर्ट दिया था। इस गवाह ने भी अपना रिपोर्ट सिद्ध किया है और इसे प्रदर्श 1 के रूप में चिन्हित किया गया था। अ॰ सा॰ 2 शिव चरण सिंह है जो मजदूर है जो ट्रक पर लकड़ी लाद रहा था और यह गवाह भी घटना का चश्मदीद गवाह है। उसने कथन किया है कि याची ने चालक अब्दुल गफ्फार पर प्रहार किया और उपहति कारित किया और ट्रक में आग लगाया जिससे ट्रक पूरी तरह जल गया। उसने यह कथन भी किया है कि कुल 14 व्यक्तियों ने घटना को अंजाम दिया था। अ॰ सा॰ 1 विजय सिंह है जिसने यह कथन करते हुए अभियोजन मामले का समर्थन किया है कि कुल 15 व्यक्ति आए और उन्होंने चालक एवं खलासी पर प्रहार किया, चालक को खून बहने की उपहति आयी और अभियुक्तगण ने ट्रक को आग लगा दिया। उसने अभियुक्त को न्यायालय में पहचाना है। अ॰ सा॰ 3 रंगा सिंह और अ॰ सा॰ 4 साधुमनी सिंह अ॰ सा॰ 1 विजय सिंह के पिता और माता है जिन्होंने भी अभियोजन मामले का समर्थन किया है। यद्यपि वे प्रहार के चश्मदीद गवाह नहीं हैं उन्होंने चालक पर उपहति देखा था और उन्होंने जला हुआ ट्रक भी देखा था। अभिलेख पर मौजूद इन साक्ष्यों के आधार पर अवर विचारण न्यायालय ने पूर्वोक्तानुसार याची को दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया और उक्त निर्णय के विरुद्ध दाखिल अपील भी उपांतरण के साथ खारिज कर दी गयी थी।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि दोनों अवर न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णय पूर्णत: अवैध हैं और इन्हें विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं किया जा सकता है। यह निवेदन किया गया है कि गवाहों के साक्ष्य में तात्विक विरोधाभास है क्योंकि गवाहों ने कथन किया है कि पुत्री के विवाह के लिए जला हुआ लकड़ी संग्रहित किया जा रहा था। यद्यपि कुछ गवाहों ने कथन किया है कि विवाह घटना के अगले दिन होना था, किंतु अ॰ सा॰ 4 साधुमनी सिंह ने अपने प्रति परीक्षण में कथन किया है कि विवाह दो माह बाद हुआ था। यह निवेदन भी किया गया है कि इस मामले में ट्रक के खलासी और आई॰ ओ॰ का परीक्षण नहीं किया गया है जिसने बचाव पर प्रतिकूल प्रभाव डाला है। यह निवेदन करते हुए कि अभियोजन ने सर्वोत्तम साक्ष्य नहीं दिया है और **जानकी नारायण भोंर बनाम नारायण नामदेव कदम, (2003)2 SCC 91,** में भारत के सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास करते हुए, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि दी गयी परिस्थितियों में, न्यायालय के समक्ष विचारार्थ सर्वोत्तम संभव साक्ष्य दिया जाना भारतीय साक्ष्य अधिनियम के मुख्य सिद्धांतों में से एक है, यह निवेदन किया गया है कि अभियोजन द्वारा महत्वपूर्ण गवाहों को रोक लिया गया था और तद्नुसार, याची की दोषसिद्धि एवं दंडादेश विधि की दृष्टि में संपोषित नहीं की जा सकती है।

7. दूसरी ओर, राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि गवाहों ने पूरी तरह से अभियोजन मामले का समर्थन किया है और आक्षेपित आदेश में पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है।

8. दोनों पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने के बाद और अभिलेख का परिशीलन करने पर मैं पाता हूँ कि अभियोजन द्वारा परीक्षण किए गए गवाहों ने पूरी तरह से अभियोजन मामले का समर्थन किया है। घायल गवाह अ॰ सा॰ 7 अब्दुल गफ्फार ने स्पष्टत: कथन किया है कि उस पर याची द्वारा प्रहार किया

गया था और खून बहने की उपहति कारित की गयी थी और इस याची ने ट्रक में आग लगाया था। अ॰ सा॰ 7 अब्दुल गफ्फार की उपहति को अ॰ सा॰ 8 डॉ॰ संत प्रसाद वर्मा द्वारा सिद्ध किया गया है जिन्होंने अपने द्वारा जारी उपहति रिपोर्ट को भी सिद्ध किया है। जले ट्रक के बारे में रिपोर्ट एम॰ भी॰ आई॰ अ॰ सा॰ 5 गगन राय द्वारा सिद्ध किया गया है। अ॰ सा॰ 2 शिव चरण सिंह मजदूर है और घटना का चश्मदीद गवाह है जिसने भी अभियोजन मामले का पूरा समर्थन किया है कि याची ने चालक पर प्रहार किया था और ट्रक में आग लगाया था। अ॰ सा॰ 1 विजय सिंह, अ॰ सा॰ 3 रंगा सिंह और अ॰ सा॰ 4 साधुमनी सिंह ने भी पूरी तरह से अभियोजन मामले का समर्थन किया है और उन्होंने ट्रक चालक को घायल देखा था और जले ट्रक को भी देखा था। अ॰ सा॰ 6 मथुरा सिंह है जो ट्रक स्वामी है जिसे चालक द्वारा घटना के बारे में सूचित किया गया था और उसने चालक पर उपहति और जला ट्रक देखा था। इस प्रकार, अभियोजन द्वारा परीक्षण किए गए गवाहों ने पूरी तरह अभियोजन मामले का समर्थन किया है और यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर तर्कपूर्ण साक्ष्य मौजूद है कि याची ने 14-15 व्यक्तियों के साथ विधि विरुद्ध जमाव निर्मित करके घटना स्थल पर आया था और ट्रक चालक एवं खलासी पर प्रहार किया था और ट्रक जलाया था। इस याची के विरुद्ध प्रहार करने और ट्रक जलाने का प्रत्यक्ष अभिकथन है। अन्य अभियुक्तगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 147 के अधीन दोषसिद्ध किया गया है। यद्यपि यहाँ–वहाँ कुछ अंतर हो सकते है किंतु वे स्वाभाविक हैं और ऐसे नहीं हैं जो अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य को झुठला सके।

9. अभिलेख का परिशीलन करने पर, मैं पाता हूँ कि अवर न्यायालय ने सही प्रकार से याची को दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया है और पुनरीक्षण अधिकारिता में हस्तक्षेप करने लायक दोनों अवर न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित निर्णयों में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है। इस आवेदन में गुणागुण नहीं है और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है। अवर न्यायालय अभिलेखों को तुरन्त संबंधित न्यायालय को वापस भेजा जाए।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

अभिषेक प्रकाश

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

L.P.A. No. 5 of 2013. Decided on 24th February, 2014.

सेवा विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए याची के दावा को अस्वीकार करने वाले एकल न्यायाधीश के आदेश के विरुद्ध दाखिल अपील–अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए मुख्य मापदंड मृतक कर्मचारी की वित्तीय दशा होनी चाहिए–वर्तमान में, याची की वित्तीय दशा अच्छी पायी गयी जिसे याची ने दबाने का प्रयास किया–अपील खारिज। (पैराएँ 8 एवं 16)

निर्णयज विधि.–(2006)7 SCC 350; (2012)11 SCC 307; (1994)1 SCC 192—Relied upon.

अधिवक्तागण.–Mr. Ram Kishore Prasad, For the Appellant; Mr. Ratnakar Bhengra, For the State; Mr. Sudarshan Srivastava, For the Respondent no. 7.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश एवं श्री चंद्रशेखर, न्यायमूर्ति.–डब्ल्यू पी॰ (एस॰) सं॰ 3167 वर्ष 2011 में पारित दिनांक 21.11.2012 के आदेश, जिसके द्वारा अनुकंपा पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी है, से व्यथित होकर अपीलार्थी वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया है।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी के पिता अर्थात् स्वर्गीय चंद्र प्रकाश सिंह ने वर्ष 1976 में जिला डेयरी विकास कार्यालय, राँची में लेखाकार के रूप में पदग्रहण किया और सेवारत रहते हुए दिनांक 11.6.2008 को उसकी मृत्यु हो गयी और वह अपने पीछे अपनी पत्नी और दो पुत्रों को छोड़ गया। अपीलार्थी स्व॰ चंद्र प्रकाश सिंह का कनिष्ठ पुत्र है। अपीलार्थी ने अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करते हुए दिनांक 15.9.2008 को आवेदन दिया, जिसे दिनांक 18.5.2011 के आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। दिनांक 18.5.2011 के अस्वीकरण आदेश को चुनौती देते हुए अपीलार्थी ने रिट याचिका दाखिल किया था, जिसे दिनांक 21.11.2012 के आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया है।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 2 की ओर से यह कथन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है कि अपीलार्थी के आवेदन को जिला स्तरीय अनुकंपा कमिटी के समक्ष रखा गया था जिसने अपने दिनांक 4.2.2010 की बैठक में निर्णय किया कि अपीलार्थी के आवेदन पर निर्णय लेने के पहले मृतक सरकारी कर्मचारी के परिवार की वित्तीय दशा अभिनिश्चित की जानी चाहिए। तद्नुसार, अंचलाधिकारी, बरौनी ने दिनांक 28.4.2010 और दिनांक 28.4.2011 के पत्रों के तहत यह कथन करते हुए रिपोर्ट दिया कि स्व॰ चंद्रप्रकाश सिंह के आश्रित गाँव में निवास नहीं करते है और इस प्रकार मृतक कर्मचारी के परिवार की वित्तीय दशा अभिनिश्चित नहीं की जा सकती थी। अतः, अपीलार्थी को दिनांक 29.4.2011 के पत्र के तहत अपने ज्येष्ठ भ्राता अर्थात् अमित कुमार के नियोजन के संबंध में सूचना देने का निर्देश दिया गया था। किंतु, अपीलार्थी ने दिनांक 11.5.2011 के पत्र के तहत सूचित किया कि उसे अपने ज्येष्ठ भ्राता अर्थात् अमित कुमार के नियोजन के बारे में जानकारी नहीं है। अपीलार्थी के मामला को दिनांक 18.5.2011 को जिला स्तरीय अनुकंपा कमिटी के समक्ष रखा गया था और कमिटी ने अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाले आवेदन को अस्वीकार करने का निर्णय लिया।

4. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

5. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि अपीलार्थी का दावा कार्मिक, प्रशासनिक सुधार विभाग, बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 12.7.1977 के पत्र, जिसे पहले ही दिनांक 5.10.1991 के परिपत्र द्वारा अधिक्रांत कर दिया गया है, में अंतर्विष्ट अनुदेश के आलोक में अस्वीकार कर दिया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि यद्यपि अंचलाधिकारी ने दिनांक 8.10.2009 के पत्र के तहत प्रमाण पत्र जारी किया कि अपीलार्थी के परिवार के पास केवल 0.12 एकड़ भूमि और ईंट एवं मिट्टी से बना मकान है, अपीलार्थी का दावा गलत रूप से दिनांक 12.7.1977 के पत्र के आलोक में अस्वीकार किया गया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने **''बलबीर कौर एवं एक अन्य बनाम स्टील अथॉरिटी ऑफ इंडिया लि॰ एवं अन्य'', AIR 2000 SC 1596,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय पर विश्वास किया है और प्रतिवाद किया है कि सेवानिवृत्ति लाभों के प्रदान को अनुकंपा नियुक्ति के लाभ से इनकार करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है।

6. समानांतर स्तंभ में, श्री रत्नाकर भेंगरा, प्रत्यर्थी झारखंड राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद कि दिनांक 12.7.1977 का अनुदेश अधिक्रांत

किया गया है, ताथ्यिक रूप से गलत है क्योंकि **''भारत के महालेखा परीक्षक एवं अन्य बनाम जी॰ अनंत राजेश्वर राव'', (1994)1 SCC 192,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के आलोक में प्रत्यर्थी झारखंड राज्य दिनांक 12.7.1977 के पत्र में अंतर्विष्ट अनुदेश का अनुसरण कर रहा है। विद्वान अधिवक्ता ने न्यायालय का ध्यान कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, झारखंड सरकार के उप सचिव द्वारा लिये गए दिनांक 7.8.2007 के पत्र की ओर खींचा है। यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 5.10.1991 के परिपत्र में पैराग्राफ 9 (च) में कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा को आवश्यक स्पष्टीकरण जारी करने की शक्ति दी गयी है जहाँ तक अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति का संबंध है।

7. स्वयं आवेदक द्वारा दाखिल फॉर्म को निर्दिष्ट करते हुए प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अपीलार्थी ने गलत सूचना दिया क्योंकि उसने कथन किया है कि उसके परिवार में कोई भी कार्यरत नहीं है जबकि उसके ज्येष्ठ भ्राता को कार्यरत पाया गया है।

8. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के तर्कों पर विचार करने पर हम पाते हैं कि अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाला अपीलार्थी का आवेदन न केवल इसलिए अस्वीकार कर दिया गया है कि अपीलार्थी का बड़ा भाई सेवा में है बल्कि इसलिए भी कि अपीलार्थी ने अपने परिवार की वित्तीय दशा को दबाया है। विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दर्ज किया गया है कि मृतक कर्मचारी की सेवा निवृत्ति लाभों के आधार पर अपीलार्थी के परिवार को लगभग छह लाख रुपयों की राशि का भुगतान किया गया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता का प्रतिवाद कि दिनांक 12.7.1977 के पत्र में अंतर्विष्ट अनुदेश को दिनांक 5.10.1991 के परिपत्र द्वारा अधिक्रांत किया गया है, गलत है। प्रत्यर्थीगण ने अभिलेख पर सामग्री प्रस्तुत किया है जो उपदर्शित करेगा कि अनुकंपा आधार पर नियुक्ति प्रदान करने के लिए परिवार की वित्तीय दशा को प्रासंगिक विचारों में से एक के रूप में लिया जाता है। इसके अतिरिक्त, यह सुस्वीकार्य है कि अनुकंपा नियुक्ति नियुक्ति का ढंग नहीं है बल्कि यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 और 16 का अपवाद है। अनुकंपा आधार पर नियुक्ति का दावा अधिकार बतौर नहीं किया जा सकता है और अनुकंपा नियुक्ति प्रदान करने का उद्देश्य परिवार को अचानक आए संकट से उबरने में सक्षम बनाना है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा यह भी अभिनिर्धारित किया गया है कि अनुकंपा नियुक्ति देने का एक मुख्य मापदंड मृतक व्यक्ति के परिवार की वित्तीय दशा होनी चाहिए।

9. ''यूनियन बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम एम॰ टी॰ लथीश'', (2006)7 SCC 350, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि ''यह सुनिश्चित विधि है कि अनुकंपा नियुक्ति से संबंधित सिद्धांत कि अनुकंपा नियुक्ति सामान्य नियम का अपवाद है, नियुक्ति प्रदान करने में केवल अपेक्षित स्थिति एवं परिस्थिति में नियुक्ति दी जानी होगी और मार्गदर्शक कारक परिवार की वित्तीय दशा होगी।''

10. ''स्टेट बैंक ऑफ इंडिया एवं अन्य बनाम जसपाल कौर'', (2007)9 SCC 571, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *"23. vr% vudik d vkèkkj ij 0;fDr dk fu;Dr djr g, e[; ekinM erd 0;fDr }kjk viu ihN NkM x, ifjokj dh foÙkh; n'kk gkuh pkfg,A tc rd foÙkh; n'kk ijh rjg n;uh; ugh g] ,Ih fu;fDr ugh dh tk Idrh g-------A***

11. ''भारत संघ एवं एक अन्य बनाम शशांक गोस्वामी एवं एक अन्य'', (2012)11 SCC 307, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*"10. ....vudqdEik d vk/kkj ij fu;qfDr erd d ifjokj dh foÙkh; n'kk dk fopkj e yr g, fu;ek] fofu;ek vFkok ç'kklfud vun'kk dk vfèkØkr djd fd;k tkuk gkrk gA**

12. ekuuh; lokPp U;k;ky; }kjk vfèkdfFkr fofèk dh nf"V e vxj ;g mièkkfjr fd;k tkrk g fd fnukd 12.7.1977 d i= e vrfo"V fun'k vfèkØkr dj fn;k x;k gA rc Hkh ;g çfrokn ugh fd;k tk ldrk g fd erd depkjh d ifjokj dh foÙkh; n'kk ij vudqdEik vk/kkj ij fu;qfDr bfllr dju oky vkonu ij fu.k;; yu d igy fopkj ugh fd;k tk ldrk gA

13. ''बलबीर कौर एवं एक अन्य बनाम भारत इस्पात प्राधिकरण लि॰ एवं अन्य (ऊपर) में मामला जिस पर अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने विश्वास किया है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:–

*^^13. ....fdr gekj nf"Vdk.k e ikfjokfjd ykHk ;ktuk dk vudqdEik fu;qfDr ykHk d lerqY; ugh cuk;k tk ldrk gA thfodk vftr dju oky d eR; d dkj.k l ifjokj dk yxk vpkud >Vdk ifjokj dk dN ,de'r jkf'k miyCèk djk dj lgk tk ldrk g&;g nHkkX;i.k g fdr okLrfodrk gA thfodk vftr dju okyh dh eR; ij ifjokj dh lj{kk dh vuHkfr 'kU; gk tkrh g vkj vlj{kk 0;klr gk tkrh g vkj bl ekM ij ;fn vudqdEik fu;qfDr d lkFk ,de'r jkf'k miyCèk djk;h tkrh g] n%[k l ihfMr ifjokj ekufld onuk l dN NVdkjk ik ldrk g vkj ?kVukvk d lkekU; Øe e viuk dk;dyki dj ldrk gA ,lk ugh g fd èkuh; ykHk thfodk vftr dju oky dk çfrLFkkfir djxk fdr ;g fu%lng fLFkfr dk dN gn rd lèkkjxkA***

14. ''भारत के महालेखा परीक्षक एवं अन्य बनाम जी॰ अनंत राजेश्वर राव'', (1994)1 SCC 192, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि ''सुयोग्य मामले में, वहाँ भी जहाँ परिवार में अर्जन करने वाला सदस्य है, सरकारी सेवक जिसकी अपने परिवार को दरिद्र परिस्थिति में छोड़कर सेवारत रहते मृत्यु हो जाती है, उसके पुत्र/पुत्री/निकट संबंधी पद पर नियुक्ति के लिए विचार किया जा सकता है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया है कि ''किंतु ऐसी समस्त नियुक्तियों को संबंधित मंत्रालय/विभाग के सचिव के पूर्व अनुमोदन से किया जाना है जो नियुक्ति अनुमोदित करने के पहले स्वयं को संतुष्ट करेगा कि रियायत का प्रदान न्यायोचित है और मृतक सरकारी सेवक द्वारा छोड़े गए आश्रितों की संख्या, उसके द्वारा छोड़ी गयी आस्तियाँ एवं दायित्व, अर्जन करने वाले व्यक्ति की आय और उसका दायित्व, क्या अर्जन कर रहा व्यक्ति मृतक सरकारी सेवक के परिवार के साथ निवास कर रहा है और क्या उसे परिवार के अन्य सदस्यों के प्रति सहारे का स्रोत नहीं होना चाहिए को ध्यान में रखेगा।''

15. कार्मिक एवं प्रशासनिक सुधार विभाग, झारखंड सरकार द्वारा उपायुक्त को मृत सरकारी सेवक के परिवार की वित्तीय दशा का निर्धारण करने के लिए और ''**भारत के महालेखा परीक्षक एवं अन्य बनाम जी॰ अनंत राजेश्वर राव (ऊपर)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के आलोक में और दिनांक 12.7.1977, के मेमो सं॰ 12754 में अंतर्विष्ट सरकारी परिपत्र के मुताबिक निर्णय लेने के लिए दिनांक 7.8.2007 का पत्र सं॰ 4041 जारी किया गया था। जिला स्थापन कमिटी द्वारा दिनांक

8.5.2011 को अनुकंपा नियुक्ति के लिए आवेदन पर विचार किया गया था। अपीलार्थी ने यह कथन करते हुए कि परिवार उसके ज्येष्ठ भ्राता के संपर्क में नहीं है, अपने ज्येष्ठ भ्राता के नियोजन के बारे में सूचना देने से इनकार किया। दूसरी ओर, अपीलार्थी की माता ने दस्तावेज (परिशिष्ट–B) प्रस्तुत किया था जिससे यह देखा जाता है कि अपीलार्थी का बड़ा भाई उसी घर में निवास कर रहा है। इस प्रकार, अपीलार्थी के ज्येष्ठ भ्राता के नियोजन के संबंध में विरोधाभासी दस्तावेज है। अपीलार्थी ने इससे इनकार नहीं किया है कि अपीलार्थी और उसके परिवार ने मृत्यु–सह–सेवानिवृत्ति लाभों के आधार पर छह लाख रुपया प्राप्त किया। इससे भी इनकार नहीं किया गया है कि ज्येष्ठ भ्राता उसी घर में निवास कर रहा है यद्यपि अपीलार्थी ने अभिवचन किया है कि वह अलग रह रहा है और परिवार को सहारा नहीं दे रहा है, **भारत के महालेखा परीक्षक एवं अन्य बनाम जी॰ अनंत राजेश्वर राव'' (ऊपर)** में दिए गए निर्णय और दिनांक 12.7.1977 के मेमो सं॰ 12754 में अंतर्विष्ट सरकारी परिपत्र के आधार पर अनुकंपा नियुक्ति के लिए अपीलार्थी का दावा अस्वीकार किया जाता है।

16. वर्तमान मामले के तथ्य **''बलबीर कौर एवं एक अन्य बनाम भारत इस्पात प्राधिकरण लि॰ एवं अन्य'' (ऊपर)** मामले के तथ्यों से पूर्णतः भिन्न है। अपीलार्थी द्वारा किए गए अभिवचन पर अविश्वास किया जाता है क्योंकि अपीलार्थी ने झूठी सूचना दी है और अपने परिवार की वित्तीय दशा को दबाने का प्रयास किया है। हम हस्तक्षेप करने लायक दिनांक 21.11.2012 के आक्षेपित आदेश में कोई दुर्बलता नहीं पाते हैं और इसलिए, इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

विनोद सिंह

cuke

रघुनाथ तिवारी एवं अन्य

Civil Review Nos. 50 of 2010 In W.P. (PIL) No. 3621 of 2007. Decided on 23rd January, 2014.

(क) भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—पी॰ आई॰ एल॰–केवल सद्भावपूर्ण रूप से कृत्य करने वाले और पी॰ आई॰ एल॰ कार्यवाही में पर्याप्त हित रखने वाले को न्यायालय के पास जाने का अधिकार होगा। (पैरा 8)

(ख) पुनर्विलोकन–पी॰ आई॰ एल॰–पी॰ आई॰ एल॰ में प्रत्यर्थी सही तथ्यों के साथ सामने नहीं आ सका था और ऐसे तथ्यों के आधार पर पी॰ आई॰ एल॰ निपटाया गया था–चूँकि न्यायालय के समक्ष आवश्यक तथ्य नहीं रखे गए थे, पी॰ आई॰ एल॰ में न्यायालय द्वारा पारित आदेश वापस लिया गया–सिविल पुनर्विलोकन याचिका अनुज्ञात की गयी। (पैराएँ 10 एवं 13)

निर्णयज विधि.–(2006)12 SCC 360; (2010)3 SCC 402; (2009)7 SCC 314; (1836)1 Moo PC 117; 1993 Supp. (4) SCC 595; (2000)6 SCC 224—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s V. Shivnath, R.K. Rashidi, For the Appellants; Mr. Vikash Kishore, For the Resp. No.1; M/s Rajesh Kumar, Deepak Roshan, For the Respondents.

आदेश

यह पुनर्विलोकन याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 3621 वर्ष 2007 में पारित दिनांक 18.7.2007 के आदेश के पुनर्विलोकन के लिए दाखिल की गयी है।

2. ''लोकहित याचिका'' डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 3621 वर्ष 2007 में रिट याची द्वारा बनाया गया मामला निम्नलिखित है:–

खाता सं॰ 334 भूखंड सं॰ 1445 और 1446 से संबंधित भूमि केंद्र सरकार की संपत्ति है क्योंकि इसे वर्ष 1910 के पहले पूरा किए गए अंतिम कैडेस्ट्रल सर्वे में ''केसर-ए-हिंद'' के रूप में दर्ज किया गया है। रिट याची/प्रथम प्रत्यर्थी को पता चला कि तत्कालीन अंचलाधिकारी ने किसी शिव नारायण जायसवाल और जगत नारायण जायसवाल के पक्ष में उनके नामों में इसे बंदोबस्त करके अवैध रूप से लगान रसीद जारी किया और उक्त शिव नारायण जायसवाल और जगत नारायण जायसवाल के पास बागोदर अंचल के अंतर्गत भूमि का कोई टुकड़ा नहीं है और समय के किसी बिंदु पर वे बागोदर पुलिस थाना के निवासी नहीं थे। आगे यह निवेदन किया गया है कि ''केसर-ए-हिंद'' भूमि की बंदोबस्ती ऐसे किसी व्यक्ति को नहीं की जा सकती है जो क्षेत्र का निवासी नहीं हो, ऐसा होते हुए, शिव नारायण जायसवाल एवं अन्य ने सचिव, उपायुक्त, हजारीबाग के पास आवेदन दाखिल किया और कार्यालय ज्ञापांक सं॰ 10-1/2004-1786/राजस्व पाया और इस तथ्य के बावजूद कि हलका कर्मचारी ने रिपोर्ट दाखिल किया कि भूमि कैसर-ए-हिंद है, सी॰ ओ॰ बागोदर के नामांतरण आदेश पारित किया। कोई हेमलाल प्रसाद, खीरु महतो, राजेश कुमार राय और महेन्द्र महतो भूखंड सं॰ 1445 और 1446 के अधीन आने वाली संपत्ति को खरीदने का दावा कर रहे है और भवन का निर्माण भी शुरु किया है। किसी विनोद सिंह (पुनर्विलोकन आवेदक) बागोदर निर्वाचन क्षेत्र का विधायक और उसके कार्यकर्ताओं अर्थात् तैयाब अंसारी और महेश मिश्रा ने भी जायसवाल के परिवार के सदस्यों से नाममात्र की कीमत पर भूखंड सं॰ 1445 और 1446 के अधीन आने वाला ''कैसर-ए-हिंद'' भूमि खरीदा था और उक्त भूमि पर चारदीवारी खड़ा किया था। आगे यह प्रकथन किया गया है कि सी॰ ओ॰, बागोदर ने उक्त हेमलाल प्रसाद, खीरु महतो, राजेश कुमार राय और महेन्द्र महतो को यह कारण बताने के लिए नोटिस जारी किया कि क्यों नहीं अतिक्रमण हटा दिया जाए। यह अभिकथित करते हुए कि ''कैसर-ए-हिंद'' भूमि से उक्त अतिक्रमण नहीं हटाया गया है, प्रथम प्रत्यर्थी-रिट याची ने अतिक्रमण हटाने के लिए ''लोकहित याचिका'' दाखिल किया। उक्त रिट याचिका दिनांक 18.7.2007 के संक्षिप्त आदेश द्वारा निपटायी गयी थी जिसे यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:-

^^fjV ;kfpdk d ijk 19e vrfo"V rF; ij fookn ugh g fd igy gh ;kph d ifjokn ij vpykfèkdkjh] ckxknj u vfrØe.k gVku d fy, dne mBk;k g vkj çR;Fkh l0 6 l 11 dk dkj.k crku d fy, ukfVl tkjh fd;k fd vfrØe.k D;k ugh gVk;k tk,xkA

;|fi fnukd 10.1.2007 dk ukfVl tkjh fd, x, Fk] ;kph u ekey e vuorh dkjokb fd, fcuk bl U;k;ky; d le{k ih0 vkb0 ,y0 nkf[ky djuk puk gA fdr bl pj.k ij ;g Kkr ugh g fd rFkkdfFkr fuek.k jkdu d fy, vkj vfrØe.k gVku d fy, vpykfèkdkjh }kjk fdu dnek dk mBk;k x;k gA

mu ifjfLFkfr;k d vèkhu ge egl l djr g fd ;kph dk fuek.k@vfrØe.k gVku d fy, vH;konu nkf[ky djd vpykfèkdkjh ,o ,l0 Mh0 vk0] ckxknj d ikl tku dk fun'k nuk lefpr gkxk tk ekey ij fopkj djx] fdlh foyc d fcuk fuek.k jkdx vkj fofèk d vu#i rkfdd vkn'k ikfjr djxA

bu fun'kk d lkFk ;g ;kfpdk fuiVk;h tkrh gA

*bl vkn'k dh çfr;k i{kk d vfèkoDrk dk nh tk,A***

3. यह पुनर्विलोकन याचिका निम्नलिखित आधारों पर लोकहित याचिका में पारित आदेश के पुनर्विलोकन के लिए पुनर्विलोकन आवेदक द्वारा यह कथन करते हुए कि आदेश अभिलेख को देखते ही प्रकट गलती से पीड़ित है और आगे इसने अनेक ताथ्यिक पहलूओं को विचार में नहीं लिया है, दाखिल की गयी है:-

(i) f'ko ukjk;.k tk; loky vkj vU; vfHkèkku okn l0 34 o"k 1937 e voj U;k;kèkh'k III d le{k U;k;ky; }kjk fu"ikfnr jftLVM foØ; foy[k d QyLo#i vkj ftyk lc&jftLVh] x;k e fnukd 31.8.1954 d foØ; foy[k l0 8162 }kjk Hk[kM l0 1445 ,o 1446 l lcfèkr lifÙk d Lokeh gA

(ii) iufoykdu vkond Hkkjr dh lkE;oknh ikVh (ekD lokn&yfuuokn) (l{ki e lh0 ih0 vkb0&,e0 ,y0) dk lnL; g vkj ckxknj fuokpu {k= dk çfrfufèkRo dj jgk gA mDr lh0 ih0 vkb0 (,e0 ,y0) Hkkjr d puko vk;kx d lkFk jftLVM jktuhfrd ny g vkj bldk fxjhMhg e Lo; viuk Hkou g vkj ;g [kkrk l0 334 d 15.25 fMlfey {k= e Hk[kM l0 1445 ,o 1446 d v'k d mij viuk dk;ky; pyk jgk gA lh0 ih0 vkb0 (,e0 ,y0) dk f'ko ukjk;.k tk; loky ,o vU;] tk lifÙk d Lokeh g] l foØ; lfonk d vulj.k e vkj çfrQy d Hkxrku ij vkj fnukd 17.2.2005 d djkj lfonk d vkf'kd ikyu ij bldk dCt fn;k x;k gA lh0 ih0 vkb0 (,e0 ,y0) u ekp] 2006 e vFkok bld vkl&ikl ikp dejk dk fuek.k Hkh fd;k FkkA

(iii) dfVgkj d pkèkjh ifjokj d :i e Kkr 0;fDr;k d leg u mRikn 'kYd vk;Dr d vkn'k d vulj.k e xko tjeu] ifyl Fkkuk ckxknj] ftyk fxjhMhg d [kkrk l0 108 d Hk[kM l0 1445 ,o 1446 d v'kk d mij ekuij fMLVyjh d uke ,o 'kyh e n'kh 'kjkc fuek.k d LFkkiu d Lokeh gA

(iv) o"k 1973 e] fcgkj jkT; e o;j gkml lfgr ekuij fMLVhyjh ,o vud lifÙk;k dk yu d fy, pkèkjh ifjokj d lnL;k d chp fookn lftr gvk tk mi&U;k;kèkh'k&III, x;k d U;k;ky; e vfHkèkku okn l0 34 o"k 1937 nkf[ky dju dh vkj y x;kA

(v) mDr vfHkèkku okn l0 34 o"k 1937 e U;k;ky; }kjk Jh ';ke cgknj dk fjlhoj d :i e fu;Dr fd;k x;k Fkk ftlu ckxknj] rRdkyhu gtkjhckx ftyk vkj oreku e fxjhMhg ftyk e n'kh 'kjkc o;j gkml d :i e Kkr Bdnkj d o;j gkml d ckj e iNrkN fd;kA Bdnkj o;j gkml Hk[kM l0 1445 ,o 1446 d v'k ij [kMk Fkk tk ljdkjh lifÙk ugh FkhA U;k;ky; d vkn'k d vulj.k e] vfHkèkku okn l0 34 o"k 1937 e fjlhoj fu;Dr fd;k x;k Fkk ftlu vke uhykeh fd;k vkj vke uhykeh e jk; lkgc y{eh ukjk;.k tk; loky lcl Åph ckyh yxku okyk FkkA U;k;ky; }kjk vueknu çnku fd, tku d ckn U;k;ky; u y{eh ukjk;.k tk; loky tk lcl Åph ckyh yxku okyk Fkk d i{k e ftyk lc&jftLVkj] x;k d dk;ky; e fnukd 31 ekp] 1954 dk jftLVM foØ; foy[k fu"ikfnr fd;kA mDr foØ; foy[k d erkfcd] Øekd l0 16 ij ckxknj o;j gkml vkj Øekd l0 19 ij èkuckn] rRdkyhu ekuHke ftyk] e o;j gkml dk Lo0 y{eh ukjk;.k tk; loky }kjk [kjhnk x;k FkkA

(vi) fcgkj lkotfud Hkfe vfrØe.k vfèkfu;e d vèkhu] rRdkyhu ftyk ekuHke vkj vc èkuckn ftyk e èkuckn o;j gkml Øekd l0 13 d fo#) dk;okgh vkjHk dh x;h FkhA Hkfe lèkkj mi&lekgÙkk] èkuckn d U;k;ky; d ch0 ih0 ,y0 b0 l0 2 o"k 2001 e ikfjr vkn'k d fo#) vk;Dr] mÙkjh NkVkukxij fMfotu d le{k vihy ch0 ih0 ,y0 b0 l0 77 o"k 2000 nkf[ky dh x;h FkhA vk;Dr u gd d fookfnr ç'u ij fopkj dju d ckn fuEufyf[kr vfHkfuèkkfjr fd;k&

^^U;k;ky; }kjk lpkfyr uhykeh e [kjhnnkj gku d ukr ifjoknh dk fcgkj lkotfud Hkfe vfrØe.k vfèkfu;e d vèkhu dk;okgh dk lgkjk ydj cn[ky ugh fd;k tk ldrk gA rnulkj] ch0 ih0 ,y0 b0 ekeyk l0 3 o"k 2001 e ikfjr vkn'k vikLr fd;k x;k FkkA 0;fFkr i{k d ,d lnL; u mik;Dr] èkuckn d ekè;e l flfoy U;k;ky; d le{k ekeyk vfèkfu.khr djok;kA**

(vii) Lo0 y{eh ukjk;.k tk; loky d mÙkjkfèkdkfj;k d fo#) bl ?kk"k.kk d fy, okn ugh nkf[ky fd;k x;k Fkk fd foØ; foy[k dk vkbVe l0 16 vFkok 19 Lo0 y{eh ukjk;.k tk; loky d i{k e fd, x, foØ; foy[k dk fo"k; oLr ugh gk ldrk FkkA ckxknj] fxjhMhg e o;j gkml d foØ; foy[k d vkbVe l0 16 d lcèk e y{eh ukjk;.k tk; loky d mÙkjkfèkdkjh vk;Dr] mÙkjh NkVkukxij fMfotu] gtkjhckx d ikl x,A

(viii) ch0 ih0 ,y0 b0 vihy l0 77 o"k 2000 e vk;Dr] mÙkjh NkVkukxij fMfotu] gtkjhckx }kjk ikfjr vkn'k d fucèkukulkj] nkonkjx.k ukek dk ukekrfjr djoku d gdnkj FkA fnukd 29.7.2004 d vkn'k d rgr mik;Dr] fxjhMhg dk f'ko ukjk;.k t;loky ,o vU;] tk fnukd 31.8.1954 d jftLVM foØ; foy[k d vkèkkj ij gd dk nkok dj jg Fk] d nkok ij fopkj dju dk fun'k fn;k x;k FkkA rnulkj] mik;Dr u jktLo vfHky[k e f'ko ukjk;.k tk; loky vkj mld lg&v'kèkkjh d uke dk ukekrfjr dju dh vu'klk d lkFk vpykfèkdkjh dk f'ko ukjk;.k ,o vU; dk vH;konu vxlkfjr fd;kA rnulkj] vpykfèkdkjh u tjeu d [kkrk l0 344 d vèkhu Hk[kM l0 1445 vkj 1446 dk f'ko ukjk;.k tk; loky ,o vU; d uke dk ukekrj.k vuKkr djr g, fnukd 28.3.2005 dk vkn'k ikfjr fd;k FkkA rnulkj] f'ko ukjk;.k tk; loky ,o mld lg&v'kèkkfj;k dk uke ukekrfjr fd;k x;k Fkk vkj yxku jlhnk dk tkjh fd;k x;k FkkA

(ix) Hk&lèkkj mi lekgrk u jkT; dh vkj l nkf[ky ukekrj.k vihy l0 137/2007-08 jftLVM fd;k g vkj fnukd 25.6.2007 d vkn'k }kjk jkT; dk vihy vuKkr fd;k gA fnukd 25.6.2007 d mDr vkn'k dk pukrh nr g, y{eh ukjk;.k tk; loky u MCY;0 ih0 (lh0) l0 4473 o"k 2007 nkf[ky fd;kA vpykfèkdkjh u fnukd 23.7.2007 dk >kj[kM lkotfud Hkfe vfrØe.k vfèkfu;e dh èkkjk 6 (2) d vèkhu ukfVl tkjh fd;k vkj xke tjeu] ih0 ,l0 ckxknj] ftyk fxjhMhg d Hk[kM l0 1445 ,o 1446 dk dCtk nu d fy, mldk ing fnu dk le; nr g, f'ko ukjk;.k tk; loky dk fun'k fn;kA

(x) vfrØe.k ekeyk l0 6 o"k 2006-07 e ikfjr vkn'k vkj ukekrj.k vihy l0 130 o"k 2007-08 e ikfjr vkn'k d vkèkkj ij ;g dFku djr g, vk{kfir ukfVl tkjh fd;k x;k Fkk fd f'ko ukjk;.k tk; loky ,o vU; d i{k e fd;k x;k ukekrj.k jí fd;k tkrk g vkj] blfy,] f'ko ukjk;.k tk; loky ,o vU; dk vfrØe.k gVku dk fun'k fn;k x;k FkkA

(xi) ch0 ih0 ,y0 b0 vihy l0 77 o"k 2000 e vk;Dr] mÙkjh NkVkukxij fMfotu }kjk ikfjr vkn'k dh nf"V e f'ko ukjk;.k tk; loky d dCtk e gLr{ki ugh dju d fy, jkT; çkfèkdkfj;k dh dkjokb dk pukrh nr g, mDr f'ko ukjk;.k tk; loky u MCY;0 ih0 (lh0) l0 941 o"k 2005 nkf[ky fd;k ftl ;g vfHkfuèkkfjr djr g, fd l{ke çkfèkdkjh }kjk vk;Dr }kjk ikfjr vkn'k dk vikLr@mikrfjr fd, tku rd jkT; ç'uxr Hkfe l ;kph d dCtk dk

vLr&0;Lr ugh djxk] fnukd 30.6.2005 d vkn'k d fucèkuku lkj fuiVk;k x;k FkkA

*(xii) fnukd 30.6.2005 dk vkn'k ikfjr fd, tku d ckn fnukd 23.7.2007 dk f'ko ukjk;.k tk; loky ij ,d vU; ukfVl rkehy fd;k x;k FkkA rc mDr f'ko ukjk;.k tk; loky MCY;0 ih0 (lh0) lo 4573 o"k 2007 nkf[ky djd bl U;k;ky; d ikl vk;k ftle ekuuh; U;k;ky; u ;g vfHkfuèkkfjr djr g, fd ^^bl chp] ifjf'k"V&5 e vrfo"V ukfVl d vulj.k e xke tjeu] Fkkuk lo 108, ih0 ,l0 ckxknj] fxjhMhg d Hk[kM lo 1446 {k= e [kMh ljpuk dk Hkfttr ugh fd;k tk,xk** fnukd 23.7.2007 d ukfVl dk LFkkfir djr g, vrfje vkn'k ikfjr fd;k gA*

(xiii) tc fjV ;kph@çR;Fkh lo 1 dk MCY;0 ih0 (lh0) lo 4573 o"k 2007 e ikfjr LFkxu vkn'k d ckj e irk pyk] og Lo; dk i{k d :i e i{kdkj cuk, tku d fy, vrorh vkb0 ,0 lo 328 o"k 2007 nkf[ky djd bl U;k;ky; d ikl vk;k ftl fnukd 23.1.2008 d vkn'k d rgr vLohdkj dj fn;k x;kA

(xiv) rRi'pkr] fjV ;kph@çR;Fkh lo 1 viu vrorh vkonu d vLohdj.k d rF; dk nckr g, voeku ;kfpdk nkf[ky djd bl U;k;ky; d ikl vk;kA mDr voeku ;kfpdk e ukfVl d rkehy ij lc&fMfotuy vfèkdkjh] fxjhMhg u vpykfèkdkjh] ckxknj dk vfrØe.k gVku d fy, rjUr dne mBku dk fun'k nr g, eek lo 349 fnukd 20.4.2010 d rgr dk; ikyd vkn'k ikfjr fd;k gA

(xv) eek lo 349 fnukd 20.4.2010 e vrfo"V ukfVl dh çkfIr ij vpykfèkdkjh u bl vfrØe.k ekeyk lo 05/07-08 vkj 6/2006-07 e tkjh fd, x, :i e ekur g, rkRif;r :i l fnukd 21.4.2010 dk vk{kfir ukfVl tkjh fd;k gA

(xvi) lh0 ih0 vkb0 (,e0 ,y0) igy gh lc&fMfotuy vfèkdkjh }kjk fnukd 20.4.2010 dk tkjh dk; ikfydk vkn'k dk pukrh nr g, MCY;0 ih0 (lh0) lo 2502 o"k 2010 nkf[ky djd bl U;k;ky; d ikl vk;k g] tk vHkh Hkh yfcr gA

(xvii) tkp dju ij] vkond dk irk pyk fd MCY;0 ih0 (ih0 vkb0 ,y0) lo 3621 o"k 2007 e bl ekuuh; U;k;ky; d fnukd 18.7.2007 d fun'k dh nf"V e lcfèkr vfèkdkjh@vpykfèkdkjh@lc&fMfotuy vfèkdkjh] ckxknj u foyc d fcuk fuek.k jkd fn;k gA

4. विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री वी॰ शिवनाथ द्वारा पुनर्विलोकन याची का प्रतिनिधित्व किया गया है, श्री विकास किशोर द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 का प्रतिनिधित्व किया गया है और विद्वान जी॰ पी॰ V श्री राजेश कुमार द्वारा प्रत्यर्थी झारखंड राज्य का प्रतिनिधित्व किया गया है।

5. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है।

6. पुनर्विलोकन याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान परिशिष्ट सं॰ 13 और 14 (पृष्ठ सं॰ 124 और 125) की ओर आकृष्ट किया है और निवेदन किया कि परिशिष्ट 13 के तहत सब-डिविजनल अधिकारी, गिरीडीह ने अंचलाधिकारी, बागोदर को दंडाधिकारी के रूप में नियुक्त किया और उसको दिनांक 27.4.2010 के पहले अतिक्रमण हटाने का निर्देश दिया ताकि अवमान मामले में माननीय न्यायालय को अनुपालन रिपोर्ट प्रस्तुत किया जा सके और तद्नुसार परिशिष्ट-14 के तहत अंचलाधिकारी, बागोदर ने पुनर्विलोकन याची (नोटिस में याची के पिता को महेन्द्र सिंह के रूप में नामित किया गया था) को अतिक्रमण हटाने का निर्देश दिया और निवेदन किया कि अंचलाधिकारी का दिनांक 21.4.2010 का उक्त आदेश (परिशिष्ट-14) डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2502 वर्ष 2010 में पूर्वाधिकारी याची शिव नारायण जायसवाल द्वारा दी गयी चुनौती के अधीन है।

7. संपत्ति अभिधान वाद सं॰ 34 वर्ष 1937 में उप-न्यायाधीश III के न्यायालय द्वारा नियुक्त रिसीवर द्वारा संचालित न्यायालय नीलामी में शिव नारायण जायसवाल एवं अन्य द्वारा दिनांक 31.8.1954 के विक्रय विलेख (दस्तावेज विलेख सं॰ 8162) द्वारा खरीदी गयी थी। तत्पश्चात, विक्रय विलेख के अनुसरण में नामांतरण कार्यवाही भी शिव नारायण जायसवाल एवं अन्य के नाम में प्रभावकारी बनायी गयी थी। शिव नारायण जायसवाल एवं अन्य ने काफी पहले वर्ष 1954 में खाता सं॰ 334 में भूखंड सं॰ 1445 एवं 1446 से संबंधित 15.25 डिसमिल क्षेत्र की संपत्ति खरीदा है और मामला अनेक कार्यवाहियों में विषय वस्तु रहा है। इन समस्त कार्यवाहियों और शिव नारायण जायसवाल एवं अन्य के पक्ष में विक्रय विलेख को दबाते हुए प्रथम प्रत्यर्थी लोकहित याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 3621 वर्ष 2007 दाखिल करते प्रतीत होते हैं। रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 3621 वर्ष 2007 के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि प्रथम प्रत्यर्थी ने केवल यह अभिकथित किया है कि भूखंड सं॰ 1445 एवं 1446 की भूमि ''कैसर-ए-हिंद'' के रूप में वर्ष 1910 के पहले पूरे किए गए अंतिम कैडेस्ट्रल सर्वे में दर्ज की गयी है और कि उसमें नामित व्यक्ति अतिक्रमण द्वारा संपत्ति हड़पने का प्रयास कर रहे हैं।

8. निर्णयों की श्रृंखला में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि केवल सद्भावपूर्ण रूप से कृत्य करने वाले और पी॰ आई॰ एल॰ की कार्यवाही में पर्याप्त हित रखने वाले व्यक्ति को न्यायालय के पास जाने का अधिकार होगा। **''कनसिंग कालूसिंग ठकोरे एवं अन्य बनाम राबरी मागनभाई वश्राम भाई एवं अन्य, (2006)12 SCC 360,** में जब भूमि का अवैध अधिभोग रखने वाला व्यक्ति कार्यवाही में आवश्यक पक्ष जोड़े बिना न्यायालय के पास आया, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि रिट याचिका न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग थी। **''उत्तरांचल राज्य बनाम बलवंत सिंह चोफल एवं अन्य, (2010)3 SCC 402,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित निर्देशों को जारी किया है:-

> *"(1) U;k;ky;k dk okLrfod ,o lnHkkoi.k ih0 vkb0 ,y0 dk çkR lkfgr djuk gkxk vkj ckg; vufpruk ij nkf[ky ih0 vkb0 ,y0 dk çHkkodkjh :i l fu#R lkfgr ,o jkduk gkxkA*
>
> *(2) ykdfgr ;kfpdk ij fopkj dju d fy, çR;d U;k;kèkh'k }kjk viuh çfØ;k r; dju d ctk, okLrfod ih0 vkb0 ,y0 dk çkR lkfgr dju d fy, vkj çPNUu gr l nkf[ky ih0 vkb0 ,y0 dk fu#R lkfgr dju d fy, çR;d U;k;ky; d fy, lefpr :i l fu;e fu#fir djuk lefpr gkxkA ifj.kkeLo#i] ge mPp U;k;ky;k] ftUgku vHkh rd fu;ek dk fojfpr ugh fd;k g] l rhu ekg d Hkhrj fu;e fojfpr dju dk vujkèk djr gA çR;d mPp U;k;ky; d jftLVkj dk ;g lfuf'pr dju dk fun'k fn;k tkrk g fd mPp U;k;ky; }kjk r;kj fd, x, fu;ek dh çfr dk rRi'pkr rjUr bl U;k;ky; d egkLfpo dk Hkktk tk;A*
>
> *(3) U;k;ky;k dk ih0 vkb0 ,y0 xg.k dju d igy ;kph dh fo'oluh; rk dk çFke n"V;k lR;kfir djuk pkfg,A*
>
> *(4) U;k;ky;k dk ih0 vkb0 ,y0 xg.k dju d igy ;kfpdk d fo"k; oLr dh 'k) rk d lcèk e çFke n"V;k lr"V gkuk pkfg,A*
>
> *(5) ;kfpdk xg.k dju d igy U;k;ky;k dk i.kr% lr"V gkuk pkfg, fd lkjoku ykdfgr vrxLr gA*
>
> *(6) U;k;ky;k dk lfuf'pr djuk pkfg, fd ;kfpdk] tk0;kid ykdfgr] xHkhjrk ,o vR;ko';drk vrxLr djrh g] dk vU; ;kfpdkvk d mij çkFkfedrk nh tk;A*

(7) ihO vkbO ,y0 xg.k dju d igy U;k;ky;k dk lfuf'pr djuk pkfg, fd ihO vkbO ,y0 okLrfod ykd gkfu vFkok ykd migfr nj dju d fy, yf{;r gA U;k;ky;k dk lfuf'pr djuk pkfg, fd ykdfgr ;kfpdk nkf[ky dju d ihN dkb futh ykHk] çkboV gr vFkok çPNUu gr ugh gA

(8) U;k;ky;k dk ;g Hkh lfuf'pr djuk pkfg, fd ckg; ,o vrjLFk gr d fy, n[kynktk }kjk nkf[ky ;kfpdk, mnkgj.kh; 0;; vfèkjkfir djd vFkok rPN ;kfpdkvk ij yxke yxku d fy, le#i vuBh i)fr;k dk viuk djd fu#Rlkfgr dh tkrh gA

9. ''संतोष सूद बनाम गजेन्द्र सिंह एवं अन्य,'' (2009)7 SCC 314, में किसी मामले में जिसमें सिविल वाद लंबित था किंतु पी॰ आई॰ एल॰ में जब उच्च न्यायालय ने याची की बेदखली का आदेश पारित किया, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि तर्कपूर्ण कारणों के सिवाए पी॰ आई॰ एल॰ में उच्च न्यायालय विधि की सम्यक प्रक्रिया में हस्तक्षेप नहीं करेगा।

10. याची/प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने 'जनहित याचिका' में दिनांक 31.8.1954 का पूर्व विक्रय विलेख सं॰ 8162 और अनेक संव्यवहारों को प्रकट नहीं किया था। प्रथम प्रत्यर्थी ने केवल यह अभिकथित करते हुए जनहित याचिका दाखिल किया कि भूखंड सं॰ 1446 एवं 1445 कैसर-ए-हिंद के रूप में दर्ज की गयी है और कि कुछ अन्य व्यक्ति दुकान चला रहे हैं और इन व्यक्तियों को हटाया जाए ताकि 'कैसर-ए-हिंद' भूमि खुली रखी जा सके और कैसर-ए-हिंद भूमि किसी को बंदोबस्त नहीं की जा सकती है। हमारे ध्यान में यह लाया गया है कि अभिधान वाद दाखिल किया गया था जिसमें विचारण न्यायालय द्वारा आदेश पारित किया गया था। पी॰ आई॰ एल॰ में प्रश्नगत भूमि से संबंधित इस न्यायालय में रिट याचिकाएँ लंबित हैं। किंतु, इन समस्त तथ्यों को न्यायालय के ध्यान में नहीं लाया गया था। 'जनहित याचिका' में प्रत्यर्थी शुद्ध तथ्यों के साथ सामने नहीं आ सका था और ऐसे तथ्यों के आधार पर प्रथम प्रत्यर्थी को निर्माण/अतिक्रमण हटाने के लिए अभ्यावेदन दाखिल करके अंचलाधिकारी, बागोदरा के पास जाने की स्वतंत्रता के साथ पी॰ आई॰ एल॰ निपटाया गया था और प्राधिकारियों, सी॰ ओ॰, एस॰ डी॰ ओ॰ को मामले पर विचार करने और किसी विलंब के बिना निर्माण रोकने के लिए और विधि के अनुरुप तार्किक आदेश पारित करने के लिए आगे निर्देश दिया गया था।

11. ''राजेन्द्र नारायण राय बनाम विजय गोविन्द सिंह'', (1836)1 MooPC 117, में प्रिवी काउन्सिल ने अभिनिर्धारित किया है कि न्यायालय समस्त गलतियों को सुधारने के लिए अभिलेख न्यायालयों एवं संविधियों के समान शक्ति रखते हैं।

^^10. ,l0 ukxjkt cuke dukVd jkT;] 1993 Supp (4) SCC 595, e ekuuh; lokPp U;k;ky; u lçf{kr fd;k g fd iufoykdu 'kfDr e vrfufgr ey n'ku ekuoh; nk"k{kerk dk lkoHkkke Lohdj.k gA

12. ''लिली थॉमस बनाम भारत संघ,'' (2000)6 SCC 224, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने प्रिवी काउन्सिल के पूर्व निर्णयों पर गौर करते हुए संप्रेक्षित किया है:-

"52. .....bl budkj ugh fd;k tk ldrk g fd U;k; ,l lnx.k g tk leLr vojkèkk d ij tkrk g vkj fofèk d fu;e] çfØ;k, vFkok rduhfd;k U;k; d ç'kklu e jkMk ugh vVdk ldr gA fofèk dk U;k; d le{k >duk gkxkA ;fn U;k;ky; ikrk g fd iufoykdu ;kfpdk e bfxr dh x;h xyrh fdlh Hky dh otg

*l Fkh vkj io fu.k; xyr èkkj.kkvk tk oLrr% fo|eku ugh Fkh d flok, ikfjr ugh fd;k tkrk vkj bldk LFkk;h cuk, tku dk ifj.kke ?kkj vU;k; e gkxk] U;k;ky; dk xyrh lèkkju l dN Hkh vioftr ugh djxkA---------***

13. पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों की दृष्टि में, चूँकि न्यायालय के समक्ष आवश्यक तथ्य प्रस्तुत नहीं किए गए थे, हम समुचित समझते हैं कि डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 3621 वर्ष 2007 में पारित आदेश वापस लिया जाए। यह सिविल पुनर्विलोकन याचिका अनुज्ञात की जाती है और परिणामस्वरुप, डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 2502 वर्ष 2010 खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

राम बिलास साहू

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 196 of 2013. Decided on 27th January, 2014.

झारखंड सेवा संहिता, 2000—नियम 96(1) (a) (i)—निर्वाह भत्ता–वृद्धि–प्राधिकारीगण संबंधित कर्मचारी के निर्वाह भत्ता की वृद्धि अथवा वृद्धि से इनकार का मामला सुनने के लिए बाध्यता के अधीन हैं यदि वह 12 माह से अधिक की अवधि के लिए निलंबन के अधीन रहा है–सक्षम प्राधिकारी को निर्वाह भत्ता की वृद्धि के लिए याची के दावा पर निर्णय लेने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 6 से 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Krishna Murari, For the Petitioner; Mr. JC to GA, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह रिट याचिका दिनांक 10.1.2013 को दाखिल की गयी थी उस अवधि के दौरान जब याची निलंबन के अधीन था अर्थात् दिनांक 4.11.2010 से दिनांक 22.11.2013 को निलंबन प्रतिसंहृत किए जाने तक। याची की शिकायत यह है कि प्रत्यर्थीगण को झारखंड सेवा संहिता के नियम 96(1) (a) (i) में अंतर्विष्ट सांविधिक प्रावधानों के निबंधनानुसार निलंबन के 12 माह की अवधि पूरा करने पर निर्वाह भत्ता में वृद्धि पर विचार करना चाहिए था। झारखंड सेवा संहिता के नियम 96 को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*"96 (1) **fuycu d vèkhu ljdkjh lod fuEufyf[kr Hkxrkuk dk gdnkj gkxk vFkkr-**&(a) vkèk vkl r oru ij] vFkok vkèk oru ij vodk'k oru ftl ljdkjh lod u ik;k gkrk ;fn og vodk'k ij gkrk] d rY; jkf'k ij fuokg HkUkk çnku vkj bld vfrfjDr ,l vodk'k oru ij vkèkkfjr thou ;kiu 0;; HkUkk%*

ijUr ;g fd tgk fuycu dh vofèk ckjg ekg d ij g] çkfèkdkjh ftlu fuycu vkn'k ikfjr fd;k vFkok ftl fuycu ikfjr djrk gvk le>k tkrk g] igy 12 ekg dh vofèk d ckn dh fdlh vofèk d fy, fuokg jkf'k vunku fuEufyf[kr :i l ifjofrr dju d fy, l{ke gkxk%

(i) fuokg vunku jkf'k mi;Dr jkf'k }kjk c<k;h tk ldrh g tk çFke ckjg ekg dh vofèk d nkjku xkg; fuokg vunku d 50 çfr'kr d ij ugh gkxk ;fn

mDr çkfèkdkjh d er e fyf[kr e nt fd, tku oky dkj.kk d fuycu vofèk nh?kdkfyd g vkj ljdkjh lod d çfr çR;{kr% vkjkiuh; ugh gA

(ii) fuokg vunku jkf'k mi;Dr jkf'k }kjk ?kVk;h tk ldrh g tk çFke ckjg ekg dh vofèk d nkjku xkg; fuokg vunku d 50 çfr'kr d ij ugh gkxk ;fn mDr çkfèkdkjh d er e fyf[kr e nt fd, tku oky dkj.kk l fuycu vofèk nh?kdkfyd g vkj ljdkjh lod d çfr çR;{kr% vkjki.kh; gA

(iii) thou ;kiu 0;; HkÙkk dh nj mDr mi[kM (i) vkj (ii) d vèkhu xkg; fuokg vunku dh c<k;h vFkok ?kVk;h x;h jkf'k] ;FkkfLFkfr] ij vkèkkfjr gkxkA

(b) [dkb vU; {kfrifr HkÙkk ljdkjh lod le;≤ ij ml oru tk mlu fuycu dh frfFk ij çkIr fd;k Fkk d vkèkkj ij gdnkj gk ldrk g%

ijUr ;g fd ljdkjh lod ml {kfrifr HkÙkk dk gdnkj ugh gkxk tc rd mDr çkfèkdkjh lr"V ugh g fd ljdkjh lod ml 0;; ftld fy, mUg çnku fd;k x;k g] dk ijk djrk jgrk gA

(2) mifu;e (1) d vèkhu dkb Hkxrku ugh fd;k tk,xk tc rd ljdkjh lod ;g çek.k i= çLrr ugh djrk g fd og fdlh vU; fu;ktu] 0;olk;] i'kk vFkok dke e ugh yxk gA

*(3) fuokg vunku 10/- #i;k çfrekg dh egÙke lhek d vè;èkhu gkxkA***

3. याची का प्रतिवाद यह है कि उसे बिटुमिन के अवैध उपापन और उपयोग से संबंधित दांडिक मामलें आर॰ सी॰ सं॰ 20 (A)/2009 (R) में आलिप्त किए जाने के कारण निलंबन के अधीन किए जाने के बाद आरोप-पत्रित किया गया था। उसे दिनांक 14.2.2012 को अभिरक्षा में लिया गया था। दिनांक 8.10.2012 को उसे अभिरक्षा से निर्मुक्त किया गया था। उसकी ओर से यह निवेदन किया गया है कि वह दिनांक 14.2.2012 को अभिरक्षा में लिए जाने के पहले अपने निलंबन की अवधि के दौरान जाँच अधिकारी द्वारा नियत 17 तिथियों में से 16 तिथियों पर तत्परतापूर्वक उपस्थित हुआ था। यह निवेदन किया गया है कि विभागीय जाँच की कार्यवाही का अभिलेख, जो जाँच अधिकारी द्वारा जारी संसूचना भी अंतर्विष्ट करता है जिनमें से कुछ जैसे दिनांक 11.8.2011, दिनांक 22.6.2012 के पत्र, को रिट याचिका में संलग्न किया गया है जिसका परिशिष्ट 4 प्रकट करता है कि अभियोजन अधिकारी की ओर से सहयोग का लगभग अभाव था और अपचारी द्वारा इप्सित दस्तावेजों को जाँच अधिकारी द्वारा जारी निर्देश के बावजूद काफी समय तक आपूर्ति नहीं किया गया था। वस्तुतः जाँच अधिकारी ने दिनांक 22.6.2012 के पत्र के तहत जाँच को आगे जारी रखने के लिए विभाग को फाइल प्रेषित भी किया था। अतः, यह निवेदन किया गया है कि प्रत्यर्थीगण को झारखंड सेवा संहिता के नियम 96 (1) (a) (i) के निबंधनानुसार निर्वाह भत्ता की वृद्धि पर विचार करना चाहिए था जिसे नहीं किया गया है।

4. यह प्रतिवाद किया गया है कि रिट याचिका के लंबित रहने के दौरान याची का निलंबन दिनांक 23.11.2013 को प्रतिसंहृत कर दिया गया है किंतु, वह सांविधिक नियम के निबंधनानुसार निलंबन की अवधि के दौरान निर्वाह भत्ता की वृद्धि से इनकार करने का आधार नहीं है।

5. प्रत्यर्थीगण ने अभिवचन किया है कि याची लंबे समय के लिए अभिरक्षा में था जिसके लिए, याची को ऐसी न्यायिक अभिरक्षा की दृष्टि में, राज्य सरकार के सिर दोष नहीं मढ़ा जा सकता है। इसके अतिरिक्त, इन्हीं कारणों से उसके लिए नियमित रूप से विभागीय कार्यवाही में उपस्थित होना असंभव था। विभागीय कार्यवाही अभी लंबित है और निलंबन भी प्रतिसंहृत कर दिया गया है। अंतिम आदेश पारित करते हुए अनुशासनिक प्राधिकारी द्वारा निलंबन की अवधि के लिए उसके वेतन पर विचार किया जाएगा।

6. झारखंड सेवा संहिता के नियम 96 (1) (a) (i) के प्रासंगिक प्रावधानों को यहाँ उपर उद्धृत किया गया है। यहाँ उपर वर्णित तथ्य दर्शाते हैं कि याची ने दिनांक 4.11.2011 तक निलंबन के अधीन बारह माह पूरा किया और दिनांक 14.2.2012 को उसे अभिरक्षा में लिया गया था। दिनांक 8.10.2012 को अभिरक्षा से निर्मुक्त किए जाने के बाद भी वह दिनांक 22.11.2013 तक जब उसका निलंबन प्रतिसंद्धृत किया गया था, निलंबन के अधीन बना रहा। निलंबन के अधीन 12 माह पूरा करने पर निर्वाह भत्ता की वृद्धि के मामले में निर्णय लेने के लिए सक्षम प्राधिकारी में स्वविवेक निहित किया गया है जिसे लिखित में कारण दर्ज करके और साथ ही ऐसा मत अभिव्यक्त करके कि क्या निलंबन एक ऐसे कृत्य के कारण दीर्घकालिक रहा है जिसके लिए सरकारी कर्मचारी सीधे तौर पर जिम्मेदार है। अत:, यह प्रतीत होता है कि संविधि द्वारा प्रशासनिक प्राधिकारी पर स्वविवेक प्रदत्त किया गया है और इसके प्रयोग के लिए कारणों को दर्ज किया जाना है। प्रत्यर्थीगण संबंधित कर्मचारी को निर्वाह भत्ता की वृद्धि अथवा वृद्धि से इनकार के मामले में ऐसा कार्य करने के लिए बाध्यता के अधीन है यदि वह 12 माह से अधिक की अवधि के लिए निलंबन के अधीन बना हुआ है।

7. विरोधी पक्षों ने तर्क दिया है कि क्या विभागीय जाँच का दीर्घकालीन बनाया जाना याची के कृत्य के कारण था अथवा उसके नियंत्रण के परे कारणों से था अथवा अभियोजन अधिकारी के असहयोग के कारण था। किंतु, यह न्यायालय विभागीय जाँच को दीर्घकालिक बनाए जाने के कारणों के गुणागुणों पर टिप्पणी करने से परहेज करता है। चाहे जो भी हो, सरकार के अधीन सक्षम प्राधिकारी निलंबन के 12 माह के बाद निर्वाह भत्ता के वृद्धि पर याची के दावा पर लिखित में अपना मत अभिव्यक्त करके एक या दूसरे तरीके से निर्णय लेने के लिए बाध्य है। प्रत्यर्थी राज्य द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र भी सक्षम प्राधिकारी पर प्रदत्त सांविधिक शक्ति का निर्वहन दर्शाने वाला ऐसा कोई तार्किक आदेश अंतर्विष्ट नहीं करता है। मामले के उस दृष्टिकोण में, प्रत्यर्थीगण का प्रतिवाद कि चूँकि दिनांक 22.11.2013 को निलंबन प्रतिसंहृत कर दिया गया है, अत: विभागीय कार्यवाही में अंतिम आदेश पारित करने के समय पूर्ण वेतन से संबंधित विवाद्यक पर विचार किया जाएगा, आधारहीन है क्योंकि याची का दावा निलंबन के अधीन 12 माह के बाद निर्वाह भत्ता की वृद्धि के लिए पूर्वोक्तानुसार उठाया गया था।

8. इन परिस्थितियों में पथ निर्माण विभाग, झारखंड सरकार, राँची के अधीन सक्षम प्राधिकारी को याची द्वारा प्रस्तुत विस्तृत अभ्यावेदन के साथ झारखंड सेवा संहिता के नियम 96 (1) (a) (i) के निबंधनानुसार निर्वाह भत्ता की वृद्धि के लिए याची के दावा पर इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से छह सप्ताह की अवधि के भीतर तार्किक आदेश पारित करके निर्णय लेने का निर्देश दिया जाता है।

9. यह कहना अनावश्यक है कि निर्वाह भत्ता की वृद्धि के लिए याची के दावा, यदि इसे ऐसे बढ़ाए गए निर्वाह भत्ता का ग्राह्य बकाया पाया जाता है, पर ऐसे निर्णय पर निर्भर करते हुए तत्पश्चात चार सप्ताह के आगे की अवधि के भीतर भुगतान किया जाएगा।

10. तद्नुसार, पूर्वोक्त तरीके से रिट याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

बिंदेश्वरी दास एवं एक अन्य

cuke

झारखंड राज्य, सी॰ बी॰ आई॰ के माध्यम से एवं एक अन्य

WP (Cr.) No. 287 of 2009, Cr. Rev. No. 500 of 2009. Decided on 31st January, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 147, 149, 323, 304 एवं 120B—भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—आपराधिक मानव वध–संज्ञान–सी॰ बी॰ आई॰ अन्वेषण–दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन शक्ति का प्रयोग करने के लिए याची का मामला मापदंड संतुष्ट नहीं करता है–याचिका अस्वीकृत। (पैराएँ 9 से 12)

निर्णयज विधि.–1992 Supp. (1) SCC 335—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Indrajit Sinha, Bibhash Sinha, Kumar Vimal, For the Petitioners; M/s. B.M. Tripathy, For the Resp. No. 2; Mr. M.A. Dhan, ASG UOI, For the C.B.I.

आदेश

याचीगण ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन वर्तमान दांडिक रिट याचिका दाखिल करके आर॰ सी॰ केस सं॰ 4 (S)/06 और आर॰ सी॰ केस सं॰ 5 (S)/06 (बाद में दिनांक 9.2.2009 के आदेश के तहत आर॰ सी॰ केस सं॰ 4 (S)/06 के रूप में मिलाया गया) में विद्वान सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी-सह-विशेष न्यायिक दंडाधिकारी, सी॰ बी॰ आई॰, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 9.2.2009 के आदेश के अभिखंडन के लिए प्रार्थना किया है, जिसके द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 149, 323, 304 और 120B के अधीन संज्ञान लिया था।

2. आर॰ सी॰ केस सं॰ 4 (S)/06 और आर॰ सी॰ केस सं॰ 5 (S)/06 (बाद में दिनांक 9.2.2009 के आदेश के तहत आर॰ सी॰ केस सं॰ 4 (S)/06 के रूप में मिलाया गया) में विद्वान सब-डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी-सह-विशेष न्यायिक दंडाधिकारी, सी॰ बी॰ आई॰, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 9.2.2009 के आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर सूचक/परिवादी द्वारा दांडिक पुनरीक्षण याचिका दाखिल की गयी है, जिसके द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन संज्ञान नहीं लिया था यद्यपि, प्रथम दृष्टया, उक्त धारा के अवयव अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों से उपलब्ध थे और भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 147, 149, 323, 304 और 120B के अधीन संज्ञान लिया।

3. दोनों कार्यवाहियों में पक्षों के विद्वान अधिवक्ता ने संयुक्त रूप से अनुरोध किया है कि चूँकि दोनों कार्यवाहियाँ विद्वान सब डिविजनल न्यायिक दंडाधिकारी-सह-विशेष न्यायिक दंडाधिकारी, सी॰ बी॰ आई॰, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 9.2.2009 के एक ही आदेश से उद्भूत होती हैं, अत: दोनों मामलों को साथ सुना और निपटाया जा सकता है।

4. उक्त निर्दिष्ट दोनों कार्यवाहियों में पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए उक्त अनुरोध पर विचार करते हुए रिट याचिका एवं दांडिक पुनरीक्षण याचिका साथ सुनी जा रही है।

5. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद सामग्री का परिशीलन किया गया।

6. याची के विद्वान अधिवक्ता ने आक्षेपित आदेश को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय ने इस मामले में अंतर्ग्रस्त तथ्यों एवं परिस्थितियों पर समुचित रूप से विचार नहीं किया है और अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का समुचित अधिमूल्यन किए बिना याचीगण के विरुद्ध संज्ञान लिया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याचीगण पुलिस अधिकारी हैं और इस मामले के कारण उन्हें अनुचित परेशानी झेलनी होगी और, इसलिए, इस न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाय क्योंकि इस मामले में याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 149, 323, 304 और 120B के अधीन दंडनीय अपराधों के अवयवों को प्रथम दृष्टया आकृष्ट करने के लिए सामग्री नहीं है।

7. सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आवश्यक अन्वेषण के बाद विद्वान अवर न्यायालय के समक्ष रिपोर्ट प्रस्तुत किया गया था। सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता ने सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया।

8. सूचक के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में किए गए संप्रेक्षण को निर्दिष्ट करके निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री का सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 149, 323, 304 और 120B के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया। सूचक के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि उक्त आदेश के विरुद्ध पुनरीक्षण आवेदन दाखिल किया गया है क्योंकि विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी यह अधिमूल्यन करने में विफल रहे हैं कि यद्यपि अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री में भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अवयव प्रथम दृष्टया मौजूद थे पर विद्वान न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन संज्ञान नहीं लिया था। आगे यह निवेदन किया गया है कि विद्वान अवर न्यायालय को याचीगण के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लेना चाहिए था।

9. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए परस्पर विरोधी पूर्वोक्त निवेदनों पर विचार करते हुए और आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय ने मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियों का सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद याचीगण के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 147, 149, 323, 304, 120B के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया। यह भी प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय द्वारा किया गया संप्रेक्षण अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर आधारित है और, इसलिए, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 को विचार में लेते हुए वर्तमान याचिका में सार नहीं है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **हरियाणा राज्य बनाम भजन लाल, 1992 Supp (1) SCC 335,** मामले में अपने निर्णय के पैराग्राफ 102 में मोटे तौर पर मार्गदर्शक सिद्धांत दिया है जो निम्नलिखित हैं:–

> *"102. vè;k; XIV d vèkhu lfgrk d vud çklfxd çkoèkkuk dh 0;k[;k vkj vuPNn 226 d vèkhu v lkèkkj.k 'kfDr vFkok lfgrk dh èkkjk 482 d vèkhu vrfufgr 'kfDr d ç;kx l lcfèkr fu.k;k dh J[kyk e bl U;k;ky; }kjk çfrikfnr fl)krk dh i"BHkfe e] ft l geu mij fudkyk ,o m) r fd;k g] ge mnkgj.kLo#i ekeyk dh fuEufyf[kr dkfV;k nr g ftue fdlh U;k;ky; dh çfØ;k d n#i;kx dk jkdu d fy, vFkok vU; U;k; dk mí'; ikIr dju d fy, ,lh 'kfDr dk ç;kx fd;k tk ldrk Fkk ;|fi fdlh lVhd] Li"V :i l ifjHkkf"kr ,o i;kIr :i l puyÑr ,o dBkj ekinM vFkok dBkj Qkeyk dk*

vfèkdfFkr djuk vkj vud çdkj d ekeyk dh lokxh.k lph nuk lHko ugh gk ldrk g ftue ,lh 'kfDr dk ç;kx fd;k tkuk pkfg,%

1. tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, vfHkdFku] Hky gh mUg mud T;k&dk&R;k fy;k tkrk g vkj mudh li.krk e Lohdkj fd;k tkrk g] çFke n"V;k fdlh vijkèk dk xfBr ugh djr g vFkok vfHk;Dr d fo#) ekeyk ugh cukr gA

2. tgk çkFkfedh rFkk çkFkfedh e lyXu vU; lkexh] ;fn gk] e vfHkdFku] flok, lfgrk dh èkkjk 155(2) d dk;{k= d vrxr nMkfèkdkjh d vkn'k d vèkhu] èkkjk 156(1) d vèkhu ifyl vfèkdkfj;k }kjk vUo"k.k dk U;k;kfpr Bgjkr g, lK; vijkèk çdV ugh djr gA

3. tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, v[kfMr vfHkdFku vkj bld leFku e lxfgr lk{; fdlh vijkèk dh dkfjrk çdV ugh djr g vkj vfHk;Dr d fo#) ekeyk ugh cukr gA

4. tgk çkFkfedh e fd, x, vfHkdFku lK; vijkèk xfBr ugh djr g fdr doy vlK; vijkèk xfBr djr g] nMkfèkdkjh d vkn'k d fcuk ifyl vfèkdkjh }kjk vUo"k.k dh vuefr ugh nr g tlk lfgrk dh èkkjk 155(2) d vèkhu vuè;kr fd;k x;k gA

5. tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, vfHkdFku bru crd vkj vrfufgr :i l vufèklHkk0; g ftud vkèkkj ij dkb food'kh; 0;fDr bl fu"d"k ij dHkh ugh igp ldrk g fd vfHk;Dr d fo#) vxlj gku d fy, i;kIr vkèkkj gA

6. tgk ekey d lLFkkiu vkj dk;okgh tkjh j[ku d çfr lcfèkr vfèkfu;e (ftld vèkhu nkfMd dk;okgh lfLFkr dh x;h g) vFkok lfgrk d çkoèkkuk e l fdlh e mRdh.k dkb vfHk0;Dr fofèkd otuk ugh g vkj@vFkok tgk 0;fFkr i{k dh f'kdk;r d fy, çHkkodkjh çfrrk"k çkoèkkfur djrk g lfgrk vFkok lcfèkr vfèkfu;e e fofufn"V çkoèkku gA

7. tgk nkfMd dk;okgh Li"V :i l vlnHkkoi.k g vkj@vFkok tgk dk;okgh vfHk;Dr l çfr'kkèk yu d vrjLFk gr d lkFk vkj çkboV ,o futh n'euh d dkj.k mldk viekfur dju dh nf"V l }"kiod lfLFkr dh x;h gA**

10. माननीय सर्वोच्च न्यायालय के उक्त निर्दिष्ट निर्णय की दृष्टि में, याची का मामला संहिता की धारा 482 के अधीन शक्तियों के प्रयोग के लिए सर्वोच्च न्यायालय द्वारा व्यापक रूप से वर्णित मापदंड को संतुष्ट नहीं करता है। अत: याचीगण द्वारा दाखिल रिट याचिका अस्वीकार किए जाने योग्य है।

11. इसी प्रकार, जहाँ तक परिवादी द्वारा दाखिल पुनरीक्षण आवेदन का संबंध है, यह प्रतीत होता है कि परिवादी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिए गए तर्क में सार नहीं है क्योंकि विद्वान अवर न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध सामग्री पर सावधानीपूर्वक विचार करने के बाद और विधि के अनुरुप सही प्रकार से और समुचित रूप से भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 147, 149, 323, 304 और 120B के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया। अत:, परिवादी द्वारा दाखिल पुनरीक्षण आवेदन भी अस्वीकार किए जाने योग्य है।

12. डब्ल्यू॰ पी॰ (दांडिक) सं॰ 287 वर्ष 2009 में याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि उन्मोचन याचिका जिसे याचीगण द्वारा दाखिल किया जा सकता है की सुनवाई के समय

पर समस्त बिंदुओं जिन्हें इस न्यायालय के समक्ष उठाया गया है और उनको उपलब्ध अन्य बिंदुओं को उठाने की स्वतंत्रता याचीगण को दी जा सकती है।

जैसी प्रार्थना की गयी है, स्वतंत्रता प्रदान की जाती है।

13. पूर्वोक्त संप्रेक्षणों एवं निर्देशों के साथ दांडिक पुनरीक्षण सं॰ 500 वर्ष 2009 के साथ रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (दांडिक) सं॰ 287 वर्ष 2009 खारिज की जाती है।

परिणामस्वरुप, दिनांक 1.9.2009 का अंतिम आदेश रिक्त किया जाता है।

---

ekuuh; vkjs ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

नवल किशोर

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cont. (Civil) No. 609 of 2013. Decided on 7th January, 2014.

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971—धारा 12—एल॰ पी॰ ए॰ में पारित आदेश की जानबूझकर अवज्ञा–याची को सेवा में पुनर्बहाल किया गया है और याची के बकाया का भुगतान भी किया गया है–एल॰ पी॰ ए॰ में पारित आदेश का सारवान रूप सें अनुपालन किया गया है–अवमान कार्यवाही आरंभ करने के लिए न्यायालय के आदेश की जानबूझ कर अवज्ञा नहीं की गयी है–अवमान कार्यवाही रोकी गयी। (पैराएँ 4 से 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Pandey Neeraj Rai, For the Appellant; Mr. Abdul Allam, For the Opp. Parties.

आदेश

यह अवमान याचिका एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 235 वर्ष 2012 के साथ एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 208 वर्ष 2010 में पारित इस न्यायालय के आदेश की जानबूझकर अवज्ञा करने के लिए याची द्वारा दाखिल की गयी है।

2. हमने याची के विद्वान अधिवक्ता और झारखंड राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना है। एल॰ पी॰ ए॰ संख्या 235 वर्ष 2012 में न्यायालय ने दिनांक 1.11.2012 को निम्नलिखित आदेश पारित किया है:–

> *^^gekjk lfopkfjr er g fd ;kph u doy iucgkyh dk cfYd oruof) ;k ft l og ml frfFk d ckn vftr dj ldrk Fkk dk fopkj e fy, fcuk ml d }kjk çkIr fd, x, vfre oru d vkèkkj ij i.k fiNy oru dk Hkh gdnkj g fdr ;fn oru iujh{k.k gvk g rc ml oru iujh{k.k dk vuKkr fd;k tk,xkA ;kph vU; leLr ikfj.kkfed ykHkk dk gdnkj Hkh gkxkA çR;Fkhx.k dk fdl h foyc d fcuk ;kph dk iucgky dju dk fun'k fn;k tkrk gA Hkxrku d cdk;k dk lx.ku fd;k tk ldrk g vkj bl vkn'k dh çfr dh çkfIr dh frfFk l rhu ekg dh vofèk d Hkhrj ;kph dk Hkxrku fd;k tk,A***

3. विरोधी पक्षकारों द्वारा दाखिल कारण बताओ में कथन किया गया है कि न्यायालय के आदेश के अनुपालन में याची को सेवा ग्रहण करने की अनुमति दी गयी थी और उसने 9300-34800 + 4200 (ग्रेड वेतन) के वेतनमान में सेवा ग्रहण किया। कारण बताओ के पैरा (6) में कथन किया गया है कि याची

को बिल सं॰ 150/2012-13 के माध्यम से बकाया का भुगतान किया गया था और इसके लिए विरोधी पक्षकारों द्वारा जिला आदेश सं॰ 2316 वर्ष 2012 और 160/13 जारी किया गया है। यह कथन किया गया है कि याची के खाता में 25,95,559.00/- रुपयों की कुल राशि अंतरित की गयी थी।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि दोनों एल॰ पी॰ ए॰ में पारित आदेश में यह कथन किया गया है कि ''याची अन्य समस्त पारिणामिक लाभों का भी हकदार होगा'' जो रिट याची के लिए प्रोन्नति/ए॰ सी॰ पी॰/एम॰ ए॰ सी॰ पी॰ की मंजूरी को भी सम्मिलित करता है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने यह भी निवेदन किया है कि प्रोन्नति/ए॰ सी॰ पी॰/एम॰ ए॰ सी॰ पी॰ का प्रदान सेवाशर्त है और उन्होंने हमारा ध्यान कारण बताओ के पैरा 9 की ओर खींचा है और निवेदन किया है कि याची के नाम की अनुशंसा प्रोन्नति के लिए की गयी है किंतु इसे इस आधार पर विचार नहीं किया गया है कि याची का नाम वरीयता सूची में सम्मिलित नहीं किया गया था। अत:, यह प्रतिवाद किया गया है कि एल॰ पी॰ ए॰ में पारित आदेश ''कि याची अन्य समस्त पारिणामिक लाभों का भी हकदार होगा'' का अनुपालन नहीं किया गया है। अत:, अवमान कार्यवाही आरंभ की गयी है।

5. विरोधी पक्षकार झारखंड राज्य के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि राज्य ने पहले ही माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष एस॰ एल॰ पी॰ दाखिल किया है। किंतु एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 235 वर्ष 2012 और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 208 वर्ष 2013 में पारित आदेश का अनुपालन करने के लिए विरोधी पक्षकार झारखंड राज्य ने याची को पुनर्बहाल करने का आदेश पारित किया है और याची को बकाया का भुगतान भी किया है।

6. हम प्रोन्नति के संबंध में याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए निवेदनों के गुणागुणों पर किसी मत को अभिव्यक्त करने का प्रस्ताव नहीं देते हैं। कारण बताओ के पैरा 6 में किए गए प्रकथनों को ध्यान में रखकर कि याची को पुनर्बहाल किया गया है और याची को बकाया का भुगतान भी किया गया है, हमारा दृष्टिकोण है कि एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 235 वर्ष 2012 और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 208 वर्ष 2010 में दिनांक 1.11.2012 को पारित किए गए आदेश का सारवान रूप से अनुपालन किया गया है। हम यह भी पाते हैं कि अवमान कार्यवाही आरंभ करने के लिए न्यायालय के आदेश की जानबूझकर अवज्ञा नहीं की गयी है। अत:, अवमान याचिका निपटायी जाती है और अवमान कार्यवाही छोड़ी जाती है।

7. किंतु, प्रोन्नति/ए॰ सी॰ पी॰/एम॰ ए॰ सी॰ पी॰ के प्रदान के लिए अभ्यावेदन देने की छूट याची को दी जाती है और प्रत्यर्थी विरोधी पक्षकार विधि के अनुरुप इस पर विचार करेंगे।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

सीमा इंजीनियरिंग एण्ड कंस्ट्रक्शन वर्क्स, बोकारो

cuke

मेसर्स एच॰ ई॰ सी॰ एवं अन्य

W.P. (C) No. 4953 of 2012. Decided on 2nd December, 2013.

माध्यस्थम् एवं सुलह अधिनियम, 1996—धारा 8—मध्यस्थ को निर्देश–संविदा की सामान्य शर्तें माध्यस्थम खंड अंतर्विष्ट करती हैं–याची द्वारा यह कथन नहीं किया गया है कि सामान्य निबंधन एवं शर्त उनको ज्ञात नहीं थे–आपत्ति कि संविदा की सामान्य शर्तों की प्रति याची

को नहीं दी गयी थी, अत्यन्त विलंबित चरण पर की गयी है–अवर न्यायालय ने सुतार्किक आदेश पारित किया है–रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 7 से 10)

अधिवक्तागण.–Mr. Md. S. Akhtar, For the Petitioner; Mr. S. Gautam, For the Respondents.

आदेश

इस याचिका में, याची ने विद्वान उप–न्यायाधीश–IV, सीनियर डिविजन, बोकारो द्वारा पारित दिनांक 18.4.2012 के आदेश को अपास्त करने की प्राथना की है जिसके द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने मामले को संविदा की सामान्य शर्त के खंड 78 (i) के अधीन मध्यस्थ को निर्दिष्ट करने के लिए प्रतिवादी की याचिका अनुज्ञात किया है।

2. याची विद्वान उप–न्यायाधीश–IV, सीनियर डिविजन, बोकारो के समक्ष लंबित धन वाद सं॰ 5 वर्ष 2006 में वादी था। लगभग छह वर्ष बाद, वाद के अंतिम चरण पर प्रतिवादी ने संविदा के सामान्य शर्त के खंड 78(i) के निबंधनानुसार मामला मध्यस्थ को निर्दिष्ट करने की प्रार्थना करते हुए माध्यस्थम् एवं सुलह अधिनियम की धारा 8 (I) (II) के अधीन याचिका दाखिल किया।

3. वादी ने अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए याचिका का विरोध किया कि संविदा के सामान्य शर्त के खंड 78 (i) का अवलंब लेने के लिए प्रार्थना करते हुए याचिका विलंबित रूप से दाखिल की गयी है यद्यपि याची को सामान्य शर्त की प्रति नहीं दी गयी थी।

4. विद्वान अवर न्यायालय ने तथ्यों एवं प्रतिवादों तथा अभिलेख पर मौजूद सामग्री को सुनने एवं अधिमूल्यित करने पर प्रतिवादी की याचिका अनुज्ञात किया और वादी को खंड 78 (i), जो मध्यस्थता प्रावधानित करती है, के निबंधनानुसार मामला मध्यस्थ के समक्ष मामला रखने का निर्देश दिया।

5. आक्षेपित आदेश को इस आधार पर चुनौती दी गयी है कि वादी को संविदा की सामान्य शर्तों की प्रति नहीं दी गयी थी और, इस प्रकार, इस चरण पर उक्त शर्त अधिरोपित नहीं किया जा सकता है।

6. याची की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री मो॰ एस॰ अख्तर ने निवेदन किया कि चूँकि याची को सामान्य शर्त की प्रति नहीं दी गयी थी, वर्तमान मामले में उक्त खंड को प्रवर्तित नहीं किया जा सकता है और मामला मध्यस्थ को निर्दिष्ट नहीं किया जा सकता है। अत:, आक्षेपित आदेश पूर्णत: अवैध और असंपोषणीय है।

7. प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची ने दिनांक 13.2.1996 का करार विलेख निष्पादित एवं हस्ताक्षरित करके करार किया था। उक्त करार के निबंधनानुसार, यह विनिर्दिष्टत: उल्लिखित किया गया था कि संविदा सामान्य शर्तों, और संविदा के सामान्य शर्तों के प्रासंगिक प्रावधान के अनुरुप जारी अथवा दिए गए संविदा विनिर्दिष्टों, ड्रॉइंग्स, मात्राओं की अनुसूची और दर एवं कीमत की अनुसूची की विशेष शर्तों एवं अनुदेशों के अध्यधीन होगी जैसा नियोक्ता समय–समय पर अथवा किसी समय पर प्रत्यक्षत: अथवा अपने प्राधिकृत प्रतिनिधि के माध्यम से जारी करेगा और पूर्वोक्त तरीके से उक्त काम पूरा करने के लिए संविदाकार/ठेकेदार को देगा।

8. यह विवादित नहीं है कि संविदा की सामान्य शर्तें माध्यस्थम खंड अंतर्विष्ट करती है। याची का एकमात्र आधार यह है कि संविदा की सामान्य शर्तों की प्रति याची को नहीं दी गयी थी। याची द्वारा यह कथन नहीं किया गया है कि सामान्य निबंधन एवं शर्त उनको ज्ञात नहीं थे। आपत्ति कि संविदा की सामान्य शर्तों एवं निबंधनों की प्रति याची को नहीं दी गयी थी, अत्यन्त विलंबित चरण पर किया गया है। न तो करार निष्पादित एवं हस्ताक्षरित करने के समय पर और न ही पहले किसी पश्चातवर्ती चरण पर याची

को ऐसी कोई आपत्ति थी। विद्वान अवर न्यायालय ने प्रासंगिक तथ्यों एवं पहलुओं पर आद्योपांत विचार किया है और सुतार्किक आदेश पारित किया है।

9. मैं आक्षेपित आदेश में अवैधता अथवा गलती नहीं पाता हूँ।

10. यह रिट याचिका खारिज की जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

द्वारिका नाथ मिश्रा

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1319 of 2013. Decided on 24th January, 2014.

विद्यालय विधि–वेतनमान–वेतनमान के नियतिकरण के लिए प्रस्ताव का अस्वीकरण–याची को सरकारी मान्यता प्राप्त सहायित अल्पसंख्यक प्राथमिक विद्यालय में सहायक शिक्षक के तौर पर नियुक्त किया गया था–स्वयं वर्ष 1995 में डी॰ एस॰ ई॰ द्वारा उसकी सेवा अनुमोदित की गयी थी और वेतन नियतिकरण किया गया है–याची विद्यालय को प्रदान की गयी अनुदान राशि द्वारा वेतन प्राप्त करता रहा–याची के वेतन नियतिकरण का प्रस्ताव अस्वीकार करने का निर्णय मनमाना और अयुक्तियुक्त है–आक्षेपित आदेश अभिखंडित। (पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Kripa Shankar Nanda, For the Petitioner; J.C. to G.P. III, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. निदेशक, प्राथमिक शिक्षा, झारखंड द्वारा जारी मेमो सं॰ 47 (परिशिष्ट 6) में अंतर्विष्ट दिनांक 15.1.2013 का पत्र, जिसके द्वारा वेतनमान के नियतिकरण के लिए उसका प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया गया है और जिला शिक्षा अधीक्षक, खूँटी को संसूचित किया गया है, जारी किए जाने पर वर्तमान रिट आवेदन दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया है।

3. याची को ऐसी नियुक्ति की प्रक्रिया का अनुसरण करने के बाद दिनांक 5.3.1983 को प्रशिक्षित शिक्षक के रूप में सरकारी मान्यता प्राप्त सहायित अल्पसंख्यक प्राथमिक विद्यालय अर्थात् लूथेरन मध्य विद्यालय, मर्चा टोर्पा, खूँटी में सहायक शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया बताया जाता है। याची और एक अन्य व्यक्ति अर्थात् दिगंबर सिंह जिसे भी सहायक शिक्षक के रूप में जी॰ ई॰ एल॰ मध्य विद्यालय, दियाकल में नियुक्त किया गया था की सेवाओं को याची के मामले में अवर सचिव, प्राथमिक, माध्यमिक एवं वयस्क शिक्षा, बिहार सरकार द्वारा जारी दिनांक 6.3.1995 के मेमो सं॰ 140 पटना में अंतर्विष्ट आदेश द्वारा उनकी नियुक्ति की तिथि अर्थात् दिनांक 16.3.1983 से अनुमोदित किया गया था। पूर्वोक्त पत्र की दृष्टि में जिला शिक्षा अधीक्षक ने दिनांक 5.4.1995 के मेमो सं॰ 863 के तहत कार्यालय आदेश जारी किया जिसके अधीन याची और अन्य व्यक्ति अर्थात् दिगम्बर सिंह का वेतनमान नियत किया गया था। याची का वेतन 680-890-965/- रुपया पर नियत किया गया था। तत्पश्चात, याची को सितंबर, 2011 तक क्रमश: बिहार सरकार और झारखंड सरकार द्वारा अनुदान राशि निर्मुक्त किए जाने पर लगातार वेतन का भुगतान किया जाता रहा जब याची को बाद में पता चला कि जिला शिक्षा अधीक्षक, राँची द्वारा भेजे

गए याची के संबंध में वेतन नियतिकरण का प्रस्ताव निदेशक, प्राथमिक शिक्षा द्वारा दिनांक 15.1.2013 के आक्षेपित पत्र के माध्यम से अस्वीकार कर दिया गया है।

4. अत:, याची ने आक्षेपित आदेश की आलोचना की है यह कहते हुए कि काफी पहले वर्ष 1995 में याची की सेवा अनुमोदित कर दी गयी है तथा वह 16 वर्षों से अधिक समय से प्रश्नगत विद्यालय में सहायता अनुदान की निर्मुक्ति पर वेतन पा रहे थे अत: प्रत्यर्थीगण अब याची के वेतनमान के नियतिकरण से इनकार करने में न्यायोचित नहीं थे। अविद्यमान आधार के आधार पर यह बिल्कुल मनमाना है। आक्षेपित आदेश के परिशीलन से यह प्रतीत होता है कि याची के वेतनमान के नियतिकरण से इनकार करने का एकमात्र आधार यह है कि उसकी नियुक्ति के समय पर वह प्रशिक्षित शिक्षक नहीं था जो दिनांक 15.11.1978 के परिपत्र सं॰ 3915 के निबंधनानुसार आवश्यक था जिसके अधीन दिनांक 1.1.1971 के बाद सरकारी मान्यता प्राप्त सहायित अल्पसंख्यक विद्यालय में सहायक शिक्षक की कोटि में नियुक्ति नहीं की जा सकती थी।

5. प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता विशेष सचिव, शिक्षा विभाग, बिहार, पटना द्वारा जारी दिनांक 15.11.1978 के पत्र सं॰ 3915 (परिशिष्ट A) पर भी विश्वास करते हैं जो अनुबंधित करता है कि दिनांक 1.1.1971 के बाद अप्रशिक्षित शिक्षक की किसी नियुक्ति के किसी सूरत में मान्यता नहीं दी जाएगी। यह निवेदन किया गया है कि याची को दिनांक 1.1.1971 के बाद नियुक्त किया गया था। शिक्षा आयुक्त, बिहार सरकार द्वारा दिनांक 20.8.1992 को जारी पत्र में उक्त पत्र दोहराया गया है। प्रतिशपथ पत्र में आगे कथन किया गया है कि याची को गलत रूप से दिनांक 16.3.1983 को अल्पसंख्यक विद्यालय के सचिव द्वारा नियुक्त किया गया था और जिला शिक्षा अधीक्षक द्वारा दिनांक 5.4.1995 को बारह वर्ष बाद उसकी सेवा अनुमोदित की गयी थी। आगे यह निवेदन किया गया है कि आई॰ एस॰ सी॰/बी॰ एस॰ सी॰ अर्हता वाले अप्रशिक्षित उम्मीदवारों और उर्दू/संस्कृत के जानकार उम्मीदवारों को यूनिसेफ योजना के अधीन नियुक्त किया गया था। निदेशक (शोध एवं प्रशिक्षण) द्वारा जारी दिनांक 12.9.1989 के पत्र की दृष्टि में सरकारी विद्यालयों के उन अप्रशिक्षित शिक्षकों को जिन्हें जिला शिक्षा अधीक्षक, राँची द्वारा नियुक्त किया गया था, अध्यापक प्रशिक्षण के लिए भेजा गया था। किंतु याची सरकारी सहायित अल्पसंख्यक विद्यालय का अप्रशिक्षित शिक्षक होने के नाते तत्कालीन क्षेत्रीय उप निदेशक, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची की मौनानुकुलता से अपना नाम उन शिक्षकों, जिनके नाम प्राथमिक शिक्षक शिक्षा महाविद्यालय बुंडु में दो वर्ष के शिक्षक प्रशिक्षण के लिए भेजे गए थे, की सूची के क्रमांक 48 पर अंत:स्थापित करवाया। अत: उसने अवैध तरीके से अपना अध्यापक प्रशिक्षण प्राप्त किया है। गैर सरकारी सहायित अल्पसंख्यक विद्यालय के शिक्षकों के अनुमोदन प्रस्ताव कथन के मामले में जिला शिक्षा अधीक्षक द्वारा नियुक्ति के अनुमोदन के लिए समस्त प्रासंगिक दस्तावेज भेजे गए हैं। केवल ऐसे अनुमोदन के बाद वेतन के भुगतान के लिए अनुदान राशि निर्मुक्त की जाती है। याची को शिक्षा विभाग के अवर सचिव, जो ऐसा करने के लिए सक्षम नहीं थे, द्वारा दिनांक 6.3.1995 के मेमो सं॰ 140 के तहत अपनी सेवा अनुमोदित करवाता हुआ अभिकथित किया गया है। किंतु, जब चौथे और पाँचवें पुनरीक्षित वेतनमान के नियतिकरण के समय पर पूर्वोक्त तथ्य निदेशक, प्राथमिक शिक्षा के ध्यान में आया, दिनांक 4.5.2011 को प्रस्तावना कथन निदेशालय को भेजा गया था किंतु इसे दिनांक 15.11.1978 के परिपत्र में अंतर्विष्ट मार्गदर्शक सिद्धांतों के विपरीत होने के नाते अस्वीकार कर दिया गया है। यह कथन किया गया है कि अन्य व्यक्ति दिगम्बर सिंह प्रशिक्षित शिक्षक है और उसका प्रस्तावना कथन पहले ही निदेशालय द्वारा अनुमोदित किया गया है।

6. याची ने यह निवेदन करते हुए प्रत्यर्थीगण के दावा का प्रतिवाद किया है कि अन्य व्यक्ति अर्थात्

दिगम्बर सिंह अपने प्रस्तावना कथन के अनुमोदन पर वेतन पाता रहा है, यद्यपि उसे भी समरुप परिस्थितियों में एक अन्य अल्पसंख्यक विद्यालय अर्थात् जेल मध्य विद्यालय, दियाकल, राँची में वर्ष 1983 में नियुक्त किया गया था। अत: प्रत्यर्थीगण ने चुनो और छाँटों की नीति अपनाया है।

7. मैंने पक्षों के अधिवक्ता को सुना है और दिनांक 15.1.2013 के आक्षेपित पत्र सहित अभिलेख पर मौजूद प्रासंगिक सामग्री का परिशीलन किया है। याची को दिनांक 5.3.1983 को सरकारी सहायित अल्पसंख्यक विद्यालय अर्थात् लूथरन मध्य विद्यालय, मार्चा, टोर्पा, खूंटी में सहायक शिक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था। यह प्रतीत होता है कि अवर सचिव, प्राथमिक, माध्यमिक एवं वयस्क शिक्षा विभाग, बिहार सरकार के हस्ताक्षर के अधीन जारी दिनांक 6.3.1995 के मेमो सं॰ 140 में अंतर्विष्ट पत्र के माध्यम से बिहार सरकार के शिक्षा विभाग द्वारा याची की नियुक्ति को बाद में अनुमोदित किया गया था। इसके परिणामस्वरुप जिला शिक्षा अधीक्षक ने इस तथ्य को विचार में लेते हुए कि दिनांक 16.3.1983 को उसकी नियुक्ति की तिथि से उसकी सेवा अनुमोदित की गयी है, याची का वेतनमान 680-890-965/- रुपयों पर नियत करते हुए पत्र जारी किया। पूर्वोक्त पृष्ठ भूमि में अन्य तथ्य जो विचार किए जाने के लिए प्रासंगिक है यह है कि याची भी वर्ष 1989 में सक्षम प्राधिकारी अर्थात् तत्कालीन क्षेत्रीय उपनिदेशक, दक्षिण छोटानागपुर डिविजन, राँची के चैतन्य निर्णय द्वारा शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त किया। दिनांक 15.11.1978 के पत्र के मार्गदर्शक सिद्धांतों के विरोध में अप्रशिक्षित शिक्षक के रूप में नियुक्त किए जाने की कमी पर भी विजय प्राप्त की गयी थी क्योंकि याची ने आर॰ डी॰ डी॰ ई॰, दक्षिण छोटानागपुर, राँची द्वारा लिए गए चैतन्य निर्णय द्वारा दो वर्ष का शिक्षक प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए भेजे जाने के बाद परिशिष्ट 3 के मुताबिक वर्ष 1993 में इसे पूरा किया।

8. याची प्रश्नगत अल्पसंख्यक विद्यालय को प्रदान की गयी अनुदान राशि से वेतन प्राप्त करता रहा। उसकी सेवा अनुमोदित की गयी थी और स्वयं वर्ष 1995 में जिला शिक्षा अधीक्षक, राँची द्वारा वेतन नियतिकरण किया गया है जब तक दिनांक 15.3.2013 के आक्षेपित आदेश के लेखक निदेशक, प्राथमिक शिक्षा द्वारा यह महसूस करते हुए कि वर्ष 1983 में अप्रशिक्षित शिक्षक के रूप में उसकी नियुक्ति वर्ष 1978 के मार्गदर्शक सिद्धांतों के विरोध में है, वर्ष 2011 में इसे रोक दिया गया था। अत: यह प्रतीत होता है कि वर्ष 1983 में याची की नियुक्ति और वर्ष 1995 में उसकी सेवा के अनुमोदन के बाद और वर्ष 2011 तक अनुदान राशि के माध्यम से उसको वेतन के भुगतान के बाद जनवरी, 2013 में निदेशक, प्राथमिक शिक्षा द्वारा जारी आक्षेपित पत्र में आधार उठाया जा रहा है कि याची वर्ष 1983 में अपनी नियुक्ति के समय पर अप्रशिक्षित था।

9. जैसा यहाँ उपर कथन किया गया है, वर्ष 1995 में याची की सेवा अनुमोदित किए जाने के पहले यह कमी भी दूर कर दी गयी थी। यहाँ उपर चर्चा किए गए पूर्वोक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों में यह प्रतीत होता है कि दिनांक 15.1.2013 के आक्षेपित पत्र द्वारा याची के वेतन नियतिकरण के प्रस्ताव से इनकार करने का निर्णय मनमाना और अयुक्तियुक्त है। तद्नुसार, दिनांक 15.1.2013 का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किया जाता है। परिणामस्वरुप, प्रत्यर्थीगण इस आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से आठ सप्ताह की अवधि के भीतर विधि के अनुरुप याची के वेतन नियतिकरण के मामले में नया निर्णय लेंगे।

10. पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका निपटायी जाती है।

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

चंद्रमौलेश्वर चौरसिया (610 में)

शांति चौरसिया उर्फ शांति देवी (645 में)

द्वारिका प्रसाद चौरसिया (646 में)

मीरा देवी चौरसिया (647 में)

तरुण दत्त द्वोर (292 में)

cuke

विशेष अधिकारी, देवघर नगरपालिका, देवघर (सभी में)

L.P.A. Nos. 610, 645, 646, 647 of 2004 with 292 of 2008. Decided on 14th February, 2014.

बिहार एवं उड़ीसा नगरपालिका अधिनियम, 1922—धारा 115—धृति कर का पुनरीक्षित मूल्यांकन—मांग नोटिस—मूल्यांकन का निर्धारण प्राधिकारी द्वारा किया गया था जिसे सम्यक रूप से राज्य सरकार द्वारा नियुक्त किया गया था—अधिनियम के अधीन विहित सीमा के अंतर्गत कर उद्ग्रहित किया गया है—जब पर्याप्त आम नोटिस था, अपीलार्थीगण यह प्रतिवाद नहीं कर सकते हैं कि उन पर व्यक्तिगत नोटिस तामील नहीं गया था, विशेषत: इसलिए क्योंकि वे स्वयं को कारित प्रतिकूलता सिद्ध करने में विफल हुए हैं—अपीलार्थीगण को ब्याज के साथ संपूर्ण धृतिकर का बकाया जमा करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 20, 23 से 30)

निर्णयज विधि.—(1999)7 SCC 645; (2001) 6 SCC 392; (1977) 2 SCC 256—Relied.

अधिवक्तागण.—M/s Rupesh Singh, Gouri Shankar Prasad, For the Appellants; Mr. Anil Kumar Jha, For the Respondent.

आदेश

रिट याचिकाओं का समूह दाखिल किया गया था जिन्हें दिनांक 25.6.2004 के एक ही आक्षेपित आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया है। वर्तमान पाँच अपीलों में से चार दिनांक 25.6.2004 के एक ही आदेश से उद्भूत होता है जबकि एल० पी० ए० सं० 292 वर्ष 2008 दिनांक 25.6.2004 के पूर्वोक्त सम्मिलित आदेश के निबंधनानुसार डब्ल्यू० पी० (सी०) सं० 6963 वर्ष 2002 में पारित दिनांक 2.7.2008 के आक्षेपित आदेश के विरुद्ध उद्भूत होती है। चूँकि इन समस्त अपीलों में विधि के एक ही प्रश्न अंतर्ग्रस्त हैं, पक्षों की सहमति से इन अपीलों को साथ सुना जा रहा है और एक ही आदेश द्वारा निपटाया जा रहा है।

तथ्य:

2. (i) एल० पी० ए० सं० 610 वर्ष 2004

अपीलार्थी संयुक्त रूप से अपने दो भाइयों के साथ देवघर नगरपालिका के वार्ड सं० 13 में धृति सं० 19 के लगभग 12 x 80 फीट के क्षेत्र के उपर स्थित परिसर पर काबिज था। अपीलार्थी द्वारा कथन किया गया था कि वह बहुत पहले से बिहार एवं उड़ीसा नगरपालिका अधिनियम, 1922 (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 115 के अधीन नोटिस के तहत त्रैमासिक आधार पर 968.25/- रुपया पर नियत धृति कर के पुनरीक्षित मूल्यांकन का भुगतान करने के लिए कहे जाने के पहले वर्ष 1993-94 में किए गए धृति कर के अंतिम त्रैमासिक निर्धारण के आधार पर 46.61/- रुपया प्रति त्रैमासिक का भुगतान कर रहा था। यह कथन भी किया गया था कि अपीलार्थी ने बढ़ाए गए धृति कर 968.25/- रुपया के भुगतान के लिए अधिनियम की धारा 115 के अधीन मांग नोटिस की प्राप्ति के एक माह के भीतर अधिनियम

की धारा 116 के अधीन आवेदन दाखिल किया और उसमें अपनी धृति के धृति कर की अयुक्तियुक्त वृद्धि की परिशुद्धि के लिए प्रार्थना किया। यह अभिकथित किया गया है कि जब प्रत्यर्थी प्राधिकारी मामले में कोई निर्णय लेने में विफल रहे, रिट आवेदन (डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1772/2003) दाखिल किया गया था जिसे विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 25.6.2004 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया था।

(ii) एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 645 वर्ष 2004

अपीलार्थी शांति चौरसिया उर्फ शांति देवी ने कथन किया कि वह देवघर नगरपालिका के वार्ड सं॰ 6 में धृति सं॰ 61 (पहले 44) के लगभग 51 x 48 फीट के क्षेत्र के उपर स्थित भूतल एवं दो मंजिल वाले परिसर पर काबिज थी। आगे यह कथन किया गया था कि वह त्रैमासिक आधार पर 600/- रुपया पर नियत धृति कर के पुनरीक्षित मूल्यांकन का भुगतान करने के लिए कहते हुए अधिनियम की धारा 115 के अधीन नोटिस प्राप्त करने के पहले वर्ष 1993-94 में किए गए धृति कर के अंतिम त्रैमासिक निर्धारण के आधार पर 76.50/- रुपयों के अपने धृति कर का भुगतान काफी पहले से कर रही थी। आगे यह कथन किया गया था कि अपीलार्थी ने 600/- रुपयों की बढ़ायी गयी धृति कर के भुगतान के लिए अधिनियम की धारा 115 के अधीन मांग नोटिस की प्राप्ति के एक माह के भीतर दिनांक 25.5.1998 को प्रत्यर्थी के कार्यालय में आवेदन दाखिल किया। यह अभिकथित किया गया है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारियों ने अपीलार्थी द्वारा दाखिल आवेदन पर कोई निर्णय नहीं लिया था अथवा केवल उनको ज्ञात कारणों से पुनर्विलोकन के लिए आवेदन पर प्राधिकारियों के ऐसे किसी निर्णय की प्रमाणित प्रति की आपूर्ति करना जानबूझकर नहीं चुना था। अत:, अपीलार्थी ने रिट याचिका (डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1762 वर्ष 2003) दाखिल किया जिसे खारिज कर दिया गया था।

(iii) एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 646 वर्ष 2004

अपीलार्थी द्वारिका प्रसाद चौरसिया देवघर नगरपालिका के वार्ड सं॰ 13 में धृति सं॰ 71 के 12 x 30 फीट अर्थात् जोड़े गए भूतल एवं प्रथम तल पर हॉल सहित लगभग 11 x 90 फीट क्षेत्र वाले परिसर और देवघर नगरपालिका के वार्ड सं॰ 13 के धृति सं॰ 72 के 18 x 36 फीट अर्थात् भूतल एवं प्रथम तल पर हॉल सहित लगभग 11 x 90 फीट के क्षेत्र वाले एक अन्य परिसर अर्थात् दो भिन्न परिसरों पर काबिज था। आगे यह कथन किया गया था कि अपीलार्थी दोनों परिसरों के लिए त्रैमासिक आधार पर प्रत्येक के लिए 1162.50/- रुपया पर नियत धृतिकर के पुनरीक्षित मूल्यांकन का भुगतान करने के लिए अधिनियम की धारा 115 के अधीन दी गयी आक्षेपित मांग नोटिस तक वर्ष 1993-94 में किए गए धृति कर के अंतिम त्रैमासिक निर्धारण के आधार पर, जो क्रमश: 38.25/- रुपया और 52.90/- रुपया थी, काफी पहले से धृति कर का भुगतान कर रहा था। अपीलार्थी द्वारा आगे यह कथन किया गया था कि उसने 1162.50/- रुपयों की बढ़ायी गयी धृति कर के भुगतान के लिए धारा 115 के अधीन मांग नोटिस की प्राप्ति के एक माह के भीतर अधिनियम की धारा 116 के अधीन दिनांक 5.4.1999 को आवेदन दाखिल किया था। आगे यह अभिकथित किया गया है कि प्रत्यर्थीगण आज की तिथि तक मामले में कोई निर्णय लेने में विफल रहे और उन्होंने पूर्णत: मनमाने रूप से निर्धारित/नियत धृति कर के गैर–भुगतान से उद्भूत होने वाली शास्ति का सामना करने के लिए याची को अध्यधीन करके अपने सांविधिक बाध्यताओं का अनादर किया है। यह कथन भी किया गया है कि अपीलार्थी पर दो परिसरों के लिए क्रमश: 23,250/- रुपयों और 22,282/- रुपयों की राशि के लिए वर्ष 1998-99, 2000-01, 2001-02 और 2002-03 से धृति कर के बकाया के भुगतान के लिए नोटिस तामील किया गया था। अत:, अपीलार्थी ने रिट याचिका (डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1774 वर्ष 2003) दाखिल किया जिसे विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

(iv) एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 647 वर्ष 2004

अपीलार्थी मीरा देवी चौरसिया ने दावा किया कि वह देवघर नगरपालिका के वार्ड सं॰ 13 के धृति सं॰ 70 में लगभग 24 x 30 फीट के क्षेत्र वाले परिसर पर काबिज थी। यह कथन किया गया था कि वह त्रैमासिक आधार पर 775/- रुपया पर नियत धृति कर के पुनरीक्षित मूल्यांकन की मांग के पहले 47.85/- रुपयों के त्रैमासिक मूल्यांकन पर नियत धृति कर का भुगतान कर रही थी। आगे यह अभिकथित किया गया है कि अधिनियम की धारा 115 के अधीन 775/- रुपयों के पुनरीक्षित धृति कर की मांग की प्राप्ति के एक माह के भीतर प्रत्यर्थी सं॰ 2 के समक्ष अधिनियम की धारा 116 के अधीन आवेदन दाखिल किया था और धृति कर की अयुक्तियुक्त वृद्धि की परिशुद्धि के लिए प्रार्थना किया था और यह अभिकथित किया गया है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारी आज की तिथि तक मामले में कोई निर्णय लेने में विफल रहे और उन्होंने पूर्णत: मनमाने रूप से निर्धारित/नियत धृति कर के गैर–भुगतान से उद्‌भूत होने वाली मुश्किलों का सामना करने के लिए अपीलार्थी को अध्यधीन करके अपनी सांविधिक बाध्यताओं का उल्लंघन किया है। अत:, अपीलार्थी ने रिट याचिका (डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1775 वर्ष 2003) दाखिल किया जिसे विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

(v) एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 292 वर्ष 2008

अपीलार्थी तरुण दत्ता द्वारी ने कथन किया कि वह देवघर नगरपालिका का वार्ड सं॰ 4 में धृति सं॰ 95 के उपर स्थित परिसर पर काबिज थी। आगे यह कथन किया गया था कि वर्ष 1994-95 के लिए प्रश्नगत धृति पुनर्निर्धारित की गयी थी और धृति कर बढ़ाया गया था और 13.30/- रुपया त्रैमासिक के रूप में विनिश्चित किया गया था और पुन: प्रत्यर्थी ने दिनांक 1.4.1998 का नोटिस जारी किया जिसके द्वारा पूर्वोक्त धृति का धृति कर पुनर्निर्धारित किया गया था और 176.25/- रुपया तक बढ़ाया गया था जो अंतिम निर्धारण की तुलना में 15 गुना बताया जाता है जो किसी तर्कपूर्ण आधार के बिना पूर्णत: अयुक्तियुक्त एवं मनमाना है। आगे यह कथन किया गया था कि अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी सं॰ 2 के समक्ष त्रैमासिक आधार पर 176.25/- रुपयों के बढ़ाए गए धृति कर के भुगतान के लिए दिनांक 1.4.1998 की मांग नोटिस के विरुद्ध दिनांक 23.5.1998 को आपत्ति आवेदन दाखिल किया और इस आपत्ति के आधार पर यह अभिकथित किया गया है कि अपील कमिटी ने अपीलार्थी को दिनांक 20.11.2000 को उपस्थित होने के लिए अनेक तिथियों को जारी किया किंतु उस दिन पर अपील कमिटी का कोरम पूरा नहीं किया गया था और इसलिए मामला अपील कमिटी द्वारा लिया गया था किंतु प्रत्यर्थी ने कहा कि सामान्य आदेश पारित किया जा सकता है किंतु कोई आदेश पारित नहीं किया गया था अथवा इसे अपीलार्थी को संसूचित नहीं किया गया था। अत:, अपीलार्थी ने रिट याचिका [डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 6963 वर्ष 2002] दाखिल किया। जिसे विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 2.7.2008 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था।

3. उक्त तथ्यों से यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थीगण की आम शिकायत यह है कि संबंधित देवघर नगरपालिका प्राधिकारियों ने धृति कर के पुनर्निर्धारण के संबंध में मनमाना निर्णय किया है और आगे न तो व्यथित अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल आपत्ति याचिका पर कोई निर्णय लिया गया था और न ही, यदि निर्णय लिया गया था, इसकी प्रमाणित प्रति की आपूर्ति अपीलार्थीगण को की गयी थी। संक्षेप में, आक्षेपित आदेश को चुनौती के आधार लगभग समरुप हैं क्योंकि वे उसी नगरपालिका द्वारा धृति कर के पुनर्निर्धारण एवं बढ़ाए जाने के सदृश विवाद्यकों से संबंधित हैं। अपीलार्थीगण द्वारा उठाए गए आधारों का मूल यह है:–

● *no?kj uxjikfydk u eueku : i l uxjikfydk dj c<k;k g ftl dN ekeyk e vihyh; dfeVh }kjk l i"V fd;k x;k crk;k tkrk gA*

● *uxjikfydk dj@èkfr dj dk fuèkkj.k vR;fèkd] v;fDr;Dr ,o vU;k;kfpr gA*

● *uxjikfydk çkfèkdkfj;k@çR;Fkh x.k u dj c<kr g, fcgkj ,o mMhlk uxjikfydk vfèkfu;e] 1922 e vfèkdfFkr çfØ;k dk mYy?ku fd;k gA*

● *uxjikfydk çkfèkdkfj;k@çR;Fkh x.k u èkfr dj d fu;rdj.k e NkVu ,o puu dh uhfr viuk dj vlnHkkoi.k :i l HknHkkoi.k <x l Ñ R; fd;kA*

4. सुविधा के लाभ के लिए अपीलार्थीगण के निजी मामलों का विवरण तालिका रूप में नीचे दिया गया है:–

TABLE-A

एल॰ पी॰ ए॰ सं॰	**डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰**	**संपत्ति का विवरण**	**पहले का कर**	**बढ़ाया गया कर**	**चुनौती के अधीन नोटिस**
			(त्रैमासिक)		
एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 610 वर्ष 2004	डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1772 वर्ष 2003	देवघर नगरपालिका के अंतर्गत वार्ड सं॰ 13 की धृति सं॰ 19	46.61/- रुपया	968.25/- रुपया	वर्ष 1998-99, 2001-02 और 2002-03 के लिए 17,442/- रुपयों॰ के लिए दिनां॰क 16.1.2003 का मांग नोटिस
एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 645 वर्ष 2004	डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1762 वर्ष 2003	देवघर नगरपालिका के अंतर्गत वार्ड सं॰ 6 की धृति सं॰ 44 (पुरानी) और धृति सं॰ 61 (नई)	76.50/- रुपया	600/- रुपया	दिनांक 20.4.1998 का नोटिस
एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 646 वर्ष 2004	डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1774 वर्ष 2003	देवघर नगरपालिका के अंतर्गत वार्ड सं॰ 13 की धृति सं॰ 71 और 72	38.25/- रुपया धृति सं॰ 71 के लिए और 52.90/- रुपया धृति सं॰ 72 के लिए	धृति सं॰ 71 और 72 दोनों के लिए 1162.50/- रुपया	वर्ष 1998-99, 2001-02 और 2002-03 के लिए क्रमशः 23,250/- रुपयों और 22,282/- रुपयों॰ के लिए दिनां॰क 16.1.2003 का मांग नोटिस और दिनांक 28.1.1999 का आदेश जिसके द्वारा किराया बढ़ाया गया।
एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 647 वर्ष 2004	डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1775 वर्ष 2003	देवघर नगरपालिका के अंतर्गत वार्ड सं॰ 13 की धृति सं॰ 70	47.85/-	775/- रुपया	वर्ष 1998-1999, 2001-02 और 2002-03 के लिए 13,565/- रुपयों के लिए दिनां॰क 16.1.2003 का मांग नोटिस और दिनांक 25.1.1999 का आदेश जिसके द्वारा लगान बढ़ाया गया था।
एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 292 वर्ष 2008	डब्ल्यू॰ पी॰ सी॰ सं॰ 6963 वर्ष 2002	देवघर नगरपालिका के अंतर्गत वार्ड सं॰ 4 की धृति सं॰ 95	13.30/- रुपया	176.25/- रुपया	दिनांक 1.4.1998 की मांग नोटिस

<u>**निवेदन:**</u>

5. अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री रूपेश सिंह ने एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 610 वर्ष 2004, 645 वर्ष 2004, 646 वर्ष 2004 और 647 वर्ष 2004 में तर्क किया और एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 292 वर्ष 2008 में अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री गौरी शंकर प्रसाद ने श्री रुपेश सिंह के तर्कों को अपनाया।

6. अपीलार्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश का विरोध निम्नलिखित आधारों पर किया है अर्थात् (i) धृति कर के निर्धारण के संबंध में बिहार एवं उड़ीसा नगरपालिका अधिनियम, 1922 (संक्षेप में 'अधिनियम') में अधिकथित प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया गया है; (ii) कोई मापदंड प्रकट नहीं किया गया है जिसके आधार पर निर्धारण किया गया था; (iii) नगरपालिका कर/धृति कर का निर्धारण अत्यधिक, अयुक्तियुक्त और मनमाना है तथा भेदभावपूर्ण है और (iv) कोई निजी नोटिस, जैसा अधिनियम की धारा 115 के अधीन आवश्यक है, अपीलार्थीगण पर तामील नहीं की गयी थी।

7. समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थी देवघर नगरपालिका के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अनिल कुमार झा ने निवेदन किया है कोई प्रक्रियात्मक अनियमितता नहीं है और प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा सारवान रूप से अधिनियम के प्रावधानों का अनुपालन किया गया है और इसलिए, मामले में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि चूँकि अपीलार्थीगण किसी दस्तावेज को प्रस्तुत करने अथवा नगरपालिका प्राधिकारी अथवा पुनरीक्षण प्राधिकारी के समक्ष कोई आपत्ति करने में विफल रहे और चूँकि वे प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित नहीं हुए थे, अधिनियम की धारा 115 के अधीन प्रावधानों का अनुपालन अभिकथित करते हुए अपीलार्थीगण द्वारा किया गया अभिवचन, जहाँ तक अपीलार्थीगण को निजी नोटिस जारी नहीं किए जाने का संबंध है, मान्य नहीं है।

8. आगे, अपील के मेमो के आधारों में सामान्यत: यह निवेदन किया गया है:–

(i) ln'k ekeyk d :i e lkFk lu x, 28 fjV ;kfpdkvk e ikfjr vk{kfir fu.k; ,d gh fu.k; gku d ukr Lor= :i l vihykFkhx.k d futh ekey d x.kkx.k d çfr food d xj bLreky l ihfMr çrhr gkrk gA

(ii) vk{kfir fu.k; no?kj uxjikfydk@çR;Fkh çkfèkdkfj;k }kjk HknHkko ,o vuPNn 14 d mYy?ku d Li"V mnkgj.kk dk vfèkeY;u dju e foQy jgkA

<u>**चर्चा:**</u>

9. समस्त पाँचों अपीलों में देवघर नगरपालिका प्राधिकारी द्वारा धृति कर के पुनर्निर्धारण का विवाद्यक विधि के प्रावधान से संबंधित है जैसा बिहार एवं उड़ीसा नगरपालिका अधिनियम, 1922 (संक्षेप में अधिनियम) के अध्याय IV में समाविष्ट किया गया है जो नगरपालिका कराधन अर्थात कर के अधिरोपण पर विचार करता है। धारा 82 धृति कर, शौचालय कर, जल कर, शिक्षा सेस, मेडिकल सेस, आदि सहित कर अधिरोपित करने के लिए नगरपालिका की शक्ति पर विचार करती है।

10. अधिनियम के अधीन अधिरोपित कतिपय निर्बंधन हैं जैसे धृति कर के अधिरोपण पर निर्बंधन जैसा धारा 84 के अधीन प्रावधानित किया गया है। उक्त प्रावधान के अधीन धृति के वार्षिक मूल्य पर 12½ प्रतिशत से अधिक के दर पर धृति का कर अधिरोपित नहीं किया जाएगा। धारा 85 जल एवं प्रकाश प्रभारों के अधिरोपण पर कतिपय निर्बंधन लगाती है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*85. **ty ,o çdk'k djk d vfèkjki.k ij fucèku-**&(1) ty dj vFkok çdk'k dj dk vfèkjki.k fuEufyf[kr fucèkuk d vè;èkhu gkxk] vFkkr*

(a) fd dj ml {k=] ft ld tykifr d fy, vFkok çdk'k d fy,] ;FkkfLFkfr] jkT; ljdkj }kjk ;ktuk etj dh x;h g] d vrxr èkfr ij dj vfèkjkfir fd;k tk,xk(

(b) fd doy tyk'k;k l xfBr fdlh èkfr ij] Ñf"k d ç;ktu l vuU; :i l mi;kfxr Hkfe ij(vFkok] ty dj d ekey e fdlh èkfr ij] ft ldk dkb Hkkx fudVre fLFkj ikbi vFkok vkeykx dk miyC/k vU; tykifr l vk;Drk }kjk fu;r fd, tku oky ifjfèk d vrxr ugh g] dj vfèkjkfir ugh fd;k tk,xk(

(c) fd èkfr d okf"kd eY; dh nj] ft l ij dj vfèkjkfir fd;k tk ldrk g] ty dj d ekey e 12.5% vFkok çdkj dj d ekey e rhu çfr'kr l vfèkd ugh gkxk(

(d) fd nj ft l ij dj vfèkjkfir fd;k tkuk g fu;r dju e bl fl)kr dk è;ku e j[kk tk,xk fd fo'k"k lfonk vFkok vU;Fkk d vèkhu ldek l vkir ty vFkok çdk'k] ;FkkfLFkfr d Hkxrkuk l eY;kfdr vk; d lkFk dj dk dy 'k) vkxe ,lh fdlh vkifr vFkok ç.kkyh d lcèk e mixr fdlh dt d iuHkxrku vFkok bl ij C;kt d Hkxrku vkj] tlk èkkjk 69 d vèkhu fu;r fd;k x;k g] i;o{k.k ,o lxg.k d 0;; d vkuikfrd fgLlk dk ijk dju d fy, i;kIr jkf'k d lkFk tykifr vFkok çdk'k 0;oLFkk] ;FkkfLFkfr] dju] c<ku vFkok cuk, j[ku d fy, vko';d jkf'k l vfèkd ugh gkxk(

(e) fd dj mnxg.kh; ugh gkxk rc rd vè;k; IX d vèkhu viuk;h x;h ;ktuk d fu"iknu d vkir fd, tku oky {k= e tykifr ugh dh tkrh g vFkok çdkf'kr fd, tku oky {k= dk çdk'keku ugh fd;k tkrk g] ;FkkfLFkfr] vkj u gh ,lh tykifr vFkok çdk'k 0;oLFkk çnku dju d io d fdlh =ekfld vFkok =ekfld d v'k d fy, dj mnxg.kh; ugh gkxkA

(2) cBd e vk;Drk }kjk fu;r dh x;h ifjfèk d ij fuokl dju oky 0;fDr;k dk ty vFkok fo|r djV vFkok xl dh vkifr d fy, bl èkkjk e dkb pht bl vfèkfu;e d lkFk lxr dkb fo'k"k 0;oLFkk dju l vk;Drk dk ugh jkdxhA

*(3) jkT; ljdkj dh etjh d lkFk ty dj dh jkf'k fudVre fLFkr ikbi vFkok tykifr d vU; lkr l èkfr dh njh ij fHkUu&fHkUu gk ldrh g vkj vU; ifjljk d ekeyk dh ryuk e ikbi l tM ifjljk d ekeyk e jkf'k mPprj gk ldrh gA***

11. इसी प्रकार से, अधिनियम की धाराओं 86 और 86A के अधीन शौचालय कर एवं ड्रेनेज कर के अधिरोपण पर कतिपय निर्बंधन हैं जिन्हें यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*"86. **'kkpky; dj d vfèkjki.k ij fucèku-**&'kkpky; dj dk vfèkjki.k fuEufyf[kr fucèkuk d vè;èkhu gkxk] vFkkr%&*

(a) fd dj doy vkokslh; xg] 'kkpky;] e=ky; vFkok lliy (eydM) vrfo"V dju oky èkfr;k ij] vkj ndkuk vFkok 0;olk; LFkkuk dk vrfo"V dju

oky èkfr;k] ftlesa cBd esa vk;Drk ds er esa 'kkpky;] e=ky; vFkok eydM dh vko';drk g] ij vfèkjkfir fd;k tk,xkA

(b) fd vk;Drx.k cBd esa fdlh dkjk] lèkkj xg vFkok ikxy[kkuk] ftlesa 'kkpky;k] e=ky;k vkj eydMk dh lQkbZ ds fy, LFkkiu cuk;k x;k g] dk dj ds Hkxrku ls NwV ns ldrs gA

(c) fd nj ftl ij dj mnxfgr fd;k tkuk g fu;r djus esa bl fl)kr dk è;ku esa j[kk tk,xk fd dj dk dqy 'k) vkxe bl ç;ktu ds lcèk esa mixr fdlh dk;ZdZ ds iuHkxrku vkj bl ij C;kt ds Hkxrku vkj i;o{k.k ,o lxg.k ds fy, 0;;] tSls èkkjk 69 ds vèkhu fu;r fd;k x;k g] ds vuikfrd fgLls dks ijk djus ds fy, vko';d jkf'k ds lkFk lkoZtfud 'kkpky;k vkj e=ky;k dh lok çnku djus] c<kus, tkus vFkok j[k&j[kko ds fy, vkj futh rFkk lkoZtfud 'kkpky;k] e=ky;k ,o eydMk dh lQkbZ ds fy, vko';d jkf'k ls vfèkd ugh gkxkA

(d) fd fdlh {k= esa dj mnxg.kh; ugh gkxk tc rd vk;Drk us ,sls {k= ds Hkhrj futh 'kkpky;k] e=ky;k ,o eydMk dh lQkbZ ds fy, çkoèkku ugh cuk;k g vkj u gh ,sls çkoèkku cuk, tkus ds io fdlh =ekfld vFkok ekfld ds v'k ds fy, dj mnxg.kh; gkxkA

(e) fd fdlh èkfr ftldk eY;kdu iPphl #i;k ls vfèkd ugh g ij dj rhu #i;k okf"kd ls vfèkd ugh gkxk] vkj fd fdlh vU; èkfr ij dj èkfr ds okf"kd eY; ij lk<s lkr çfr'kr okf"kd ls vfèkd dh nj ij vfèkjkfir ugh fd;k tk,xk flok, iVuk 'kgj uxjikfydk esa ftlesa ;g ,sls okf"kd eY; ij nl çfr'kr ls vfèkd ugh gkxkA

(f) fd vk;Dr cBd esa lfoLrkj 'kkpky; vFkkr 'kkpky;] tks tyçokg 'kkpky; ugh g] vrfo"V djus okys èkfr;k ds lcèk esa ,sls njk ij] ftls jkT; ljdkj }kjk fofgr fd;k tk ldrk g] lljpkt vfèkjkfir dj ldrk gA**

86A. **ty fudkl dj ds vfèkjki.k ij fucèku-**&(1) ty fudklh dj dk vfèkjki.k fuEufyf[kr fucèkuk ds vè;èkhu gkxk vFkkr

(a) fd dj doy mu {k= ds vrxr èkfr;k ftlds fy, tyfudklh vFkok eyogu çoru esa g ij vfèkjkfir fd;k tk,xk(vkj

(b) fd dj vuU; :i ls Ñf"k ds ç;ktu ls mi;kfxr Hkfe ij vFkok doy tyk'k;k ls xfBr fdlh èkfr ij vfèkjkfir ugh fd;k tk,xk(

(c) fd èkfr;k ds okf"kd eY; ij dj ftl ij dj vfèkjkfir fd;k tk ldrk g] jkT; ljdkj dh io etjh ds fcuk lk<s lkr çfr'kr ls vfèkd ugh gkxk(

(d) fd nj ftl ij dj vfèkjkfir fd;k tkuk g fu;r djus esa bl fl)kr dk è;ku esa j[kk tk,xk fd dj dk dqy 'k) vkxe fdlh ,sls tyfudklh vFkok ey okgu ç.kkyh ds lcèk esa mixr fdlh dk;ZdZ ds iuHkxrku vFkok bl ij C;kt ds Hkxrku vkj i;o{k.k ,o lxg.k ds 0;;] tSls èkkjk 69 ds vèkhu fu;r fd;k x;k g] ds vkuikfrd fgLls dks ijk djus ds fy, i;kIr jkf'k ds lkFk tyfudklh vFkok eyogu ç.kkyh cukus] c<kus, tkus vFkok j[k&j[kko ds fy, vkj fdlh {k= e] ftlesa vè;k; IX ds vèkhu etj ;kstuk ds fu"iknu esa eyogu ç.kkyh LFkkfir dh x;h g] ty fudklh] eyogu ç.kkyh cukus] c<kus, tkus vFkok j[k&j[kko ds

fy, vko';d jkf'k vFkok fu th ,o lkotfud 'kkpky;k] e=ky;k ,o eydMk rFkk lkotfud ty DykstV dh lQkb d fy, vkj lkotfud 'kkpky;k] e=ky;k ,o ty DykstV d çkoèkku ,o j[k j[kko d fy, vko';d jkf'k l vfèkd ugh gksxk(vkj

(e) fd fdlh {k= e dj mnxg.kh; ugh gksxk tc rd vè;k; IX d vèkhu etj ;ktuk d fu"iknu e ,l {k= d vrxr ty fudklh vFkok eyogu ç.kkyh LFkkfir ugh dh tkrh g] vkj u gh ,lh ç.kkyh d LFkkiu d io fdlh =ekfld vFkok =ekfld d v'k d fy, dj mnxg.kh; gksxkA

(2) fd bl èkkjk e dkb pht cBd e vk;Drk }kjk fu;r ifjfèk d ij fLFkr èkfr;k rd ty fudklh vFkok eyogu ç.kkyh c<kuk d fy, bl vfèkfu;e d lkFk lxr fdlh fo'k"k 0;oLFkk dk dju l vk;Drk dk ugh jkdxhA

*(3) fd vk;Drx.k jkT; ljdkj dh etjh l èkfr d oxk dh vkj fdlh {k= fo'k"k e èkfr;k dk tyfudklh dj d nkf;Ro l NV n ldr g vkj fofgr rjhd l ifjofrr gku oky njk ij ,lh èkfr;k ij mDr dj dk fuèkkj.k dj ldr gA***

12. धारा 98 धृतियों के वार्षिक मूल्य पर करों का निर्धारण प्रावधानित करती है जिसे यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

"98. ***èkfr;k dk okf"kd eY;*** *-&(1) èkfr dk okf"kd eY; ldy okf"kd fdjk;k] ftl ij èkfr dk ;fDr ;Dr :i l fdjk;k ij nu dh mEehn dh tkrh g] le>k tk,xkA*

(2) ;fn èkfr ij Hkou vFkok Hkou g] ftld fuek.k dk okLrfod 0;; vfHkfuf'pr vFkok eY;kfdr fd;k tk ldrk g vkj tk fdjk;k ij nu d fy, vFkok Lo; Lokeh d fuokl d fy, èkfr l xfBr Hkfe d fy, ;fDr;Dr xkm.M jUV d vfrfjDr ,l 0;; d lk< lkr çfr'kr d rY; gk ldrh g fdr blls vfèkd ugh gk ldrh g(

ijUr ;g fd tgk bl çdkj vfHkfuf'pr vFkok eY;kfdr okLrfod dher ,d yk[k #i;k l vfèkd g] ,d yk[k #i;k l vfèkd dher d lcèk e mnxfgr fd, tku oky okf"kd eY; ij çfr'kr èkkjk 104 d vèkhu vk;Drk }kjk fofuf'pr çfr'kr d ,d pkFkkb l vfèkd ugh gksxkA

*(3) bl èkkjk d vèkhu ,lh èkfr d okf"kd eY; dk eY;kdu dju e fdlh e'khujh ;k Quhpj tk èkfr ij gk ldrh g d eY; dk fopkj e ugh fy;k tk,xkA***

13. धारा 101 प्रावधानित करती है कि ''जब धृतियों के वार्षिक मूल्य पर निर्धारित किए जाने वाले किसी कर को अधिरोपित करने का निश्चय किया गया है, आयुक्तगण ऐसी जाँच जैसा आवश्यक हो सकता है करने के बाद नगरपालिका के अंतर्गत समस्त धृतियों का वार्षिक मूल्य विनिश्चित करेंगे जैसा यहाँ बाद में प्रावधानित किया गया है और मूल्यांकन सूची में ऐसा मूल्य प्रविष्ट करेंगे।''

14. धारा 102 मूल्यांकन सूची तैयार करने की प्रक्रिया के बारे में कहती है। अन्य बातों के साथ यह प्रावधानित करती है कि आयुक्तगण नोटिस द्वारा समस्त धृतियों के स्वामियों अथवा अधिभोगियों को उसके वार्षिक मूल्य के किराया के रिटर्न को प्रस्तुत करने के लिए कह सकते हैं।

15. धारा 104 धृतियों पर कर के दर के विनिश्चयकरण पर विचार करती है। धारा के तात्विक भाग का पठन निम्नलिखित है:–

^^èkkjk 82 dh mièkkjk (1) d ijUrd d [kM (iii) d çkoèkkuk vkj lekfo"V :i l èkkjkvk 84 l 88 d çkoèkkuk d vè;èkhu vk;Drx.k ml o"k] ft ld çfr dkb dj ft l èkfr;k d okf"kd eY; ij fuèkkfjr fd;k x;k g ykx gkxk] d Bhd vxy o"k dh lekfIr d igy dh tku okyh cBd e èkfr;k d eY;kdu ij çfr'kr fofuf'pr djx ft l ij dj mnxfgr fd;k tk,xk vkj bl çdkj fu;r fd;k x;k çfr'kr rc rd çHkko e jgxk tc rd ,l çfr'kr dk fofuf'pr dju okyk vk;Drk dk vkn'k fo[kfMr ugh dj fn;k tk,xk vkj tc rd vk;Drx.k cBd e èkfr;k d eY;kdu ij dkb vU; çfr'kr fofuf'pr ugh djx ft l ij vxy o"k d vkjHk l dj mnxfgr fd;k tk,xkA

---

*ijUr ;g fd vk;Drx.k jkT; ljdkj dh io etjh d fcuk viu }kjk mnxfgr fdlh dj d nj dk ugh ?kVk,xA***

16. धारा 105 निर्धारण सूची तैयार किया जाना प्रावधानित करती है। यह अधिकथित करती है कि ''यथासंभव शीघ्र प्रतिशत, जिसे अगले साल उद्ग्रहित किया जाने वाला है, को अंतिम पूर्ववर्ती धारा के अधीन विनिश्चित करने के बाद आयुक्त उस धारा के खंड (a) से (b) में संगणित विशिष्टियों को अंतर्विष्ट करता निर्धारण सूची तैयार करवायेगा।''

17. धारा 106 सूची के पुनरीक्षण और समयकाल पर विचार करती है जिसे सामान्यत: पाँच वर्षों में एक बार उसी तरीके से तैयार किया जाना है। धारा 107 उपधारा (1) के खंडों (a) से (g) में संगणित तरीकों में से किसी में समय-समय पर निर्धारण सूची को परिवर्तित अथवा संशोधित करने की शक्ति आयुक्तों को देती है।

18. धारा 107 की उपधारा (ii) के अधीन किसी परिवर्तन, जिसे करने का प्रस्ताव वे उपधारा (1) के खंडों (a) से (d) और (dd) के अधीन देते हैं, का कम से कम एक माह का नोटिस किसी हितबद्ध व्यक्ति को देना आयुक्तों पर बाध्यकारी बनाती है।

19. देवघर नगरपालिका द्वारा सामान्य निर्धारण वर्ष 1988-89 में किया गया था और इसे पाँच वर्षों बाद वर्ष 1993-94 में पुनरीक्षित किया जाना था। किंतु, अंतिम निर्धारण के पाँच वर्षों के भीतर इसे नहीं किया जा सका था और अधिनियम की धाराओं 82 तथा 106 (1) के अधीन वर्ष 1998-99 में सामान्य निर्धारण पूरा किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वर्ष 1998-99 के लिए पुनरीक्षण निर्धारण शुरू किए जाने के पहले प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा लाउडस्पीकर के माध्यम से और नगाड़ा पीट कर आम उद्घोषणा की गयी थी। राज्य सरकार ने निर्धारण करने वाला प्राधिकारी नियुक्त किया जिसने पुनरीक्षण निर्धारण के क्रम में अपीलार्थियों को भवन के निर्माण में अपीलार्थियों द्वारा उपयोग किए गए सीमेन्ट, कंक्रीट, ईंट, लोहे की छड़, बालू, लकड़ी आदि की खरीद के प्रमाण और कैशमेमो, क्रेडिट मेमो, चालान सहित दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए कहा। किंतु अपीलार्थियों ने कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था और इसलिए निर्धारण प्राधिकारी धृति के मूल्यांकन का निर्धारण करने के लिए अग्रसर हुआ। अपीलार्थियों को धृति कर का भुगतान करने का निर्देश देते हुए विभिन्न तिथियों पर उनको नोटिस जारी किया गया था। नोटिस प्राप्त करने के बाद अपीलार्थियों ने अधिनियम की धारा 116 के अधीन फॉर्म C

के रूप में ज्ञात विहित फॉर्म में आपत्ति/पुनर्विलोकन आवेदन दाखिल किया। तत्पश्चात, प्रत्यर्थी के समक्ष उपस्थित होने के लिए और अपने मामले के समर्थन में साक्ष्य प्रस्तुत करने के लिए अपीलार्थियों को नोटिस जारी किया गया था किंतु, अपीलार्थीगण प्रत्यर्थी के समक्ष उपस्थित नहीं हुए थे और इसलिए, अभिलेख के परिशीलन के बाद धृति का मूल्यांकन घटाया गया था अथवा संपुष्ट किया गया था।

20. जैसा पहले इंगित किया गया है, प्राधिकारी जिसे राज्य सरकार द्वारा सम्यक रूप से नियुक्त किया गया है द्वारा मूल्यांकन का निर्धारण किया गया था। देवघर नगरपालिका का प्रतिवाद यह है कि धृति कर की वृद्धि विधि के अनुरुप वैध रूप से की गयी है। जैसा पहले गौर किया गया है, धारा 84 धृति पर कर के अधिरोपण पर निर्बंधन पर विचार करती है। धारा 84 (1) के मुताबिक, धृति पर कर धृति के वार्षिक मूल्य पर साढ़े बारह प्रतिशत से अधिक के दर पर अधिरोपित नहीं किया जाएगा। धारा 85 जल एवं प्रकाश कर के अधिरोपण पर निर्बंधन पर विचार करती है। धारा 85 (c) के मुताबिक धृति के वार्षिक मूल्य पर दर, जिस पर कर अधिरोपित किया जा सकता है, जल कर के मामले में साढ़े बारह प्रतिशत और प्रकाश कर के मामले में तीन प्रतिशत से अधिक नहीं होगा। धारा 86 (e) किसी धृति, जिसका मूल्यांकन पच्चीस रुपया वार्षिक से अधिक नहीं होता है, पर कर पर विचार करती है, और कि किसी अन्य धृति पर कर धृति के वार्षिक मूल्य पर साढ़े सात प्रतिशत से अधिक दर पर अधिरोपित नहीं किया जाएगा सिवाए पटना शहर नगरपालिका में जिसमें यह ऐसे वार्षिक मूल्य पर दस प्रतिशत से अधिक नहीं होगा। धारा 86A जल निकासी पर लगाये जाने के प्रतिबंध पर विचार करता है। धारा 86A (c) के मुताबिक, धृति के वार्षिक मूल्य पर दर जिस पर कर अधिरोपित किया जा सकता है, राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना साढ़े सात प्रतिशत से अधिक नहीं होगा। यह विवादित नहीं है कि मूल्यांकन का निर्धारण उस प्राधिकारी द्वारा किया गया था जिसे राज्य सरकार द्वारा सम्यक रूप से नियुक्त किया गया था। देवघर नगरपालिका में समस्त धृतियों का निर्धारण नगरपालिका प्राधिकारियों द्वारा जाँच करने के बाद और विधि के अनुरुप समस्त औपचारिकताओं को पूरा करने के बाद पुनरीक्षित किया गया था। यह भी विवादित नहीं है कि अधिनियम के अधीन विहित सीमा के भीतर कर उद्ग्रहित किया गया है।

21. अपीलार्थियों के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि मूल्यांकन के निर्धारण के पहले अपीलार्थियों पर कोई नोटिस तामील नहीं की गयी थी और नोटिस का जारी नहीं किया जाना वृद्धि को दूषित करता है। निर्णय के पैरा 11 में विद्वान एकल न्यायाधीश ने इस प्रतिवाद पर विस्तारपूर्वक विचार किया है और हम लाभदायी रूप से विद्वान एकल न्यायाधीश के निष्कर्षों को निर्दिष्ट कर सकते हैं जिसका पठन निम्नलिखित है:–

"11. oreku ekey e] no?kj uxjikfydk d fo}ku vfèkoDrk u U;k;ky; d è;ku e yk;k fd vfèkfu;e] 1922 dh èkkjk 385 d vèkhu uxjikfydk ckM fo?kfVr dj fn;k x;k Fkk vkj ,l fo?kVu d ckn jkT; ljdkj u èkkjk 381 d vèkhu fo'k"k vfèkdkjh fu;Dr fd;k g vkj mldk 'kfDr çR;k;kftr fd;k gA ;g fookn e ugh g fd fo'k"k vfèkdkjh vfèkfu;e] 1922 dh èkkjkvk 381 vkj 386 d vèkhu 'kfDr dk ç;kx dju d fy, l{ke gA fo?kVu d ckn] rRdkyhu fcgkj jkT; u fnukd 24 vxLr] 1991 dh vfèklpuk l0 2894/NBB iVuk tkjh fd;k ftld }kjk fo'k"k vfèkdkjh dk iujh{k.k fuèkkj.k d fy, dk;okgh vkjHk dju d fy, dgk x;k FkkA fuèkkjd fu;Dr fd;k x;k Fkk ftl le;≤ ij cnyk x;k FkkA fo'k"k vfèkdkjh u vke ykmMLihdj ?kk"k.kk }kjk vkj uxkMk ihV dj fgrc) 0;fDr;k dk ukfVl fn;k tl k vfèkfu;e d çkoèkkuk d vèkhu vko';d Fkk vkj no?kj uxjikfydk d ykxk dk lfpr fd;k fd iujh{k.k fuèkkj.k vkjHk fd;k tk,xkA

rRi'pkr] fuèkkjd u iujh{k.k fuèkkj.k d fy, dne mBk;k vkj tkp fd;kA lifÙk d Lokfe;k dk ekx ukfVl tkjh fd;k x;k Fkk] ft ldh çfr;k dN fjV ;kfpdkvk d lkFk lyXu dh x;h g] ft ld }kjk mUg lfpr fd;k x;k Fkk fd iujh{k.k fuèkkj.k d vkèkkj ij èkfr dj c<k;k tk ldrk gA vud ekeyk e] èkfr èkkjdk u ekx ukfVl çkIr dju d ckn fofgr Qke ^C e vfèkfu;e] 1922 dh èkkjkvk 116 vkj 118 d vèkhu vkifÙk fd;kA mu vkifÙk;k dk çkIr dju ij] fo'k"k vfèkdkjh u èkfr Lokfe;k dk iuh ukfVl tkjh fd;k] ft ld }kjk mUg luokb d fy, fu;r frfFk ij mifLFkr gku d fy, lfpr fd;k x;k FkkA vud ekeyk e] èkfr Lokeh jkT; ljdkj }kjk xfBr vihyh; dfeVh d le{k mifLFkr g, fdr vud èkfr Lokfe;k u vihyh; dfeVh d le{k mifLFkr gkuk ugh puk FkkA***

22. अब यह सुनिश्चित है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों को सर्वमान्य फॉर्मूला में रखा नहीं जा सकता है। इसकी प्रयोज्यता मामला विशेष के तथ्यों एवं परिस्थितियों में अनेक कारकों पर निर्भर करती है। **''ग्रेफाइट इंडिया लि॰ बनाम दुर्गापुर प्रोजेक्ट्स लि॰'', (1999)7 SCC 645,** में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अभित्यजन किया जा सकता है। **''उ॰ प्र॰ राज्य बनाम हरेन्द्र अरोड़ा'', (2001)6 SCC 392,** में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि मात्र इसलिए कि अपचारी कर्मचारी को जाँच रिपोर्ट नहीं दी गयी है, अनुशासनिक कार्यवाही में पारित आदेश को स्वमेव अभिखंडित नहीं किया जा सकता है। इस प्रकार, नैसर्गिक न्याय के भंग के अतिरिक्त कारित की गयी प्रतिकूलता को भी सिद्ध करना होगा। इसी प्रकार से, यदि अपनायी गयी प्रक्रिया निष्पक्ष थी अथवा व्यक्ति, जिसने नोटिस के तामीले के संबंध में सांविधिक प्रावधान के उल्लंघन का परिवाद किया है, को कार्यवाही के बारे में पर्याप्त जानकारी थी अथवा जो प्राधिकारी के समक्ष जाने में विफल रहा, को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के उल्लंघन का अभिवचन करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। **''चेयरमैन, बोर्ड ऑफ माइनिंग एक्जामिनेशन एन्ड चीफ इंस्पेक्टर ऑफ माइंस बनाम रामजी'', (1977)2 SCC 256,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि ''प्रशासनिक वास्तविकताओं और दिए गए मामले के अन्य कारकों के प्रति निर्देश के बिना नैसर्गिक न्याय का अस्वाभाविक विस्तारण उबा देने वाला हो सकता है।''

23. वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपीलों में अपीलार्थियों ने तर्कपूर्ण साक्ष्य प्रस्तुत करके अभिवचन और सिद्ध नहीं किया है कि अधिनियम की धारा 115 (2) के अधीन प्रावधान के अननुपालन के कारण उन पर गंभीर प्रतिकूलता कारित की गयी है। अपीलार्थियों द्वारा यह विवादित नहीं किया गया है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा लाउडस्पीकर के माध्यम से और नगाड़ा पीट कर आम उद्घोषणा की गयी थी। अपीलार्थियों को नोटिस जारी किया गया था किंतु, उन्होंने भवन के निर्माण मूल्य को उपदर्शित करते हुए कोई दस्तावेजी साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया था और इसलिए, नगरपालिका प्राधिकारी स्वयं अपनी ओर से धृति का मूल्यांकन निर्धारित करने के लिए अग्रसर हुए। जब देवघर नगरपालिका द्वारा सामान्य निर्धारण किया गया था और जब पर्याप्त आम नोटिस दिया गया था, अपीलार्थीगण यह प्रतिवाद नहीं कर सकते हैं कि उन पर निजी नोटिस तामील नहीं किया गया था, विशेषत: क्योंकि वे स्वयं पर कारित प्रतिकूलता सिद्ध करने में विफल रहे हैं। अपीलार्थीगण अधिनियम की धारा 116 के अधीन पुनर्विलोकन के लिए आवेदन दाखिल करने के बाद प्राधिकारी के समक्ष उपस्थित भी नहीं हुए थे।

24. धृति का वार्षिक मूल्य अधिनियम की धारा 98 के निबंधनानुसार निर्धारित किया गया है जो प्रावधानित करता है कि धृति का वार्षिक मूल्य सकल वार्षिक किराया, जिस पर धृति को युक्तयुक्त रूप से किराया पर देने की उम्मीद की जाती है, समझा जाएगा। सामान्य परिस्थितियों में, यदि निर्माण की

वास्तविक कीमत अभिनिश्चित अथवा मूल्यांकित की जा सकती है यदि भवन किराया पर दिए जाने के लिए आशयित नहीं है और इसका उपयोग स्वयं स्वामी द्वारा निवास के रूप में किया जाता है, निर्धारण धारा 98 (2) के निबंधनानुसार किया जाएगा। किंतु, अन्य मामलों में, यदि किराया मूल्य अभिनिश्चित किया जा सकता है, उस आधार पर धृति के वार्षिक मूल्य पर कर का निर्धारण वैध रूप से किया जा सकता है। वर्तमान मामले में, अपीलार्थियों ने भवन के निर्माण के संबंध में कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं किया था और इसलिए, उन्हें नगरपालिका प्राधिकारी द्वारा किए गए निर्धारण के संबंध में शिकायत करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है।

25. अपीलार्थियों ने अभिवचन किया है कि प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा कोई आधार उपदर्शित नहीं किया गया है और प्रतिशपथ पत्र में बयान दिया गया है कि नगरपालिका प्राधिकारी ने केवल भवन को देख कर धृति का मूल्य निर्धारित किया। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया है कि धृति का मूल्यांकन अधिनियम के अधीन विहित प्रक्रिया के अनुरुप नहीं किया गया है। समानांतर स्तंभ में, प्रत्यर्थीगण ने अभिवचन किया है कि मूल्यांकन अधिनियम में विहित प्रावधानों के अनुरुप किया गया है। प्रतिशपथ पत्र में प्रत्येक धृति के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा संगणना का विवरण दिया गया है। प्रतिशपथ पत्र में प्रत्येक धृति के संबंध में प्रत्यर्थियों द्वारा संगणना का विवरण दिया गया है। अपीलार्थियों ने नगरपालिका प्राधिकारी के समक्ष कोई सामग्री प्रस्तुत नहीं किया है और न ही नगरपालिका द्वारा किए गए मूल्यांकन का अधिनियम की धारा 116 के अधीन दाखिल अपने अपील में खंडन किया है। वर्तमान कार्यवाही में भी, अपीलार्थियों द्वारा अभिवचन के समर्थन में कोई साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया है कि धृति का मूल्यांकन मनमाना था। तथ्य यह है कि अनेक मामलों में प्राधिकारी द्वारा निर्धारण मूल्य घटाया गया है और इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि इस प्रकार किया गया निर्धारण मनमाना था। कर अधिरोपण के मामले में केवल यह सुनिश्चित किया जाना है कि कराधान युक्तियुक्त है और न कि मनमाना जो भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन करता हो।

26. अपीलार्थियों ने प्रतिवाद किया है कि नगरपालिका प्राधिकारी द्वारा उनके साथ भेदभाव किया गया था क्योंकि अन्य समरुप धृतियों को निम्नतर मूल्य पर निर्धारित किया गया है। हम पाते हैं कि अन्य धृतियों के संबंध में अपीलार्थियों द्वारा कोई विस्तृत विवरण नहीं दिया गया है। यह ज्ञात नहीं है कि क्या उन धृतियों का उपयोग शुद्धत: आवासीय प्रयोजन से अथवा अंशत: वाणिज्यिक और अंशत: आवासीय प्रयोजन से किया जा रहा है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

> *^^iokDr fuonuk d vfrfjDr] ;kfp;k u viuh ijLij èkfr;k dk fooj.k ugh fn;k g vFkkr (a) ifjlj dk dy {k=Qy D;k g] (b) D;k ;g mud futh mi;kx e g vFkok fdjk;k ij fn;k x;k g] (c) ;fn fdjk;k ij fn;k x;k g] o {k=okj fdruk fdjk;k ik jg g] (d) {k= tgk èkfr fLFkr g dk mfpr fdjk;k D;k g] (e) ?kj dk eY;kdu fdruk g] vkfnA*
>
> *,d ;k vU; ;kph d èkfr dj dk fofuf'pr dju d fy, fuèkkjd }kjk bu dkjdk dk fopkj e fy;k x;k gA***

27. प्रतिशपथ पत्र में प्रत्यर्थी ने कथन किया है कि देवघर नगरपालिका को राज्य सरकार द्वारा केवल 30% वित्त दिया जाता है और 40% राशि नगरपालिका को कर्ज के रूप में दिया जाता है और कुल बजट का शेष 30% का प्रबंध स्वयं नगरपालिका द्वारा अपने स्रोतों से किया जाता है। आगे यह कथन किया गया है कि देवघर नगरपालिका के वित्त का एकमात्र स्त्रोत धृति कर की वसूली है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अपने कर्मचारियों के मासिक वेतन के कारण 8 लाख रुपयों के अतिरिक्त नगरपालिका को पथ निर्माण, पथ प्रकाश, जल एवं अन्य सुविधाओं के लिए निधि की व्यवस्था करनी है। तीर्थ की अवधि

के दौरान नगरपालिका को भ्रमणकारियों जो धार्मिक प्रयोजन से विदेशों से आने वाले व्यक्ति को भी सम्मिलित करता है, को सुविधा प्रदान करने के लिए विपुल राशि खर्च करना पड़ता है।

28. वर्ष 1997-98 के बाद देवघर नगरपालिका द्वारा पुनरीक्षण सर्वे नहीं किया गया है। प्रत्यर्थी देवघर नगरपालिका के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि 28 रिट याचियों में से वर्तमान अपीलार्थियों के सिवाए अन्य ने अपील दाखिल नहीं किया था अथवा उनके द्वारा दाखिल अपील पहले ही खारिज कर दी गयी है। वह एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 557 वर्ष 2003 में इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश को निर्दिष्ट करते हैं जिसे दिनांक 6.12.2004 के आदेश के तहत खारिज कर दिया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि वर्तमान अपीलार्थीगण सहित लगभग समस्त रिट याचीगण बढ़ायी गयी दर पर नगरपालिका कर का भुगतान कर रहे हैं। जैसा यहाँ उपर गौर किया गया है, अपीलार्थियों ने देवघर नगरपालिका द्वारा नियत धृति कर का अत्यधिक, अयुक्तियुक्त अथवा मनमाना के रूप में विरोध करने के लिए आवश्यक विवरण प्रस्तुत नहीं किया है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह भी गौर किया कि ''उन सूचनाओं की अनुपस्थिति में और रिट याचिकाओं में अस्पष्ट अभिवचन किए जाने के कारण इस न्यायालय के लिए यह विनिश्चित करना संभव नहीं है कि क्या धृति कर का निर्धारण अत्यधिक, अयुक्तियुक्त और मनमाना है या नहीं।''

29. यद्यपि विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट याचिकाओं में से प्रत्येक पर विचार नहीं किया है, विद्वान एकल न्यायाधीश ने अन्य रिट याचिकाओं के साथ अपीलार्थियों द्वारा उठाए गए एक समान विवाद्यकों पर विचार किया है। हम विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश में हस्तक्षेप करने लायक कोई कारण नहीं पाते हैं और लेटर्स पेटेन्ट अपीलें खारिज किए जाने की दायी हैं।

30. परिणामस्वरुप, समस्त लेटर्स पेटेन्ट अपीलों को खारिज किया जाता है। अपीलार्थियों को आज के दिन से चार सप्ताह की अवधि के भीतर बिहार एवं उड़ीसा नगरपालिका अधिनियम, 1922 के प्रावधानों के मुताबिक ब्याज के साथ धृति कर के संपूर्ण बकाया, यदि इनका भुगतान पहले ही नहीं किया जा चुका है, जमा करने का निर्देश दिया जाता है। ब्याज के साथ संपूर्ण बकाया जमा करने में विफलता पर प्रत्यर्थी को विधि के अनुरुप अपीलार्थियों के विरुद्ध अग्रसर होने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

मुनकी देवी

cuke

सेंट्रल कोलफील्ड्स लिमिटेड एवं अन्य

LPA No. 444 of 2013. Decided on 5th February, 2014.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–अनुकंपा पर नियुक्ति–दावा का अस्वीकरण–आक्षेपित आदेश कहीं उपदर्शित नहीं करता है कि अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन विलंबित था और इस पर ऐसे किसी उपदर्शन अथवा निर्देश की अनुपस्थिति में विचार नहीं किया जा सकता है–प्रत्यर्थीगण अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए अपीलार्थी के पुत्र के मामले पर विचार करने के लिए बाध्य हैं–एल॰ पी॰ ए॰ अनुज्ञात। (पैराएँ 9 से 12)

निर्णयज विधि.–(2007)8 SCC 549—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Ashutosh Anand, For the Appellant; Mr. Amit Kumar Sinha, For the Respondents.

आदेश

यह लेटर्स पेटेन्ट अपील डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 7807 वर्ष 2006 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी को धनीय मुआवजा और चालू मुआवजा इप्सित करने के लिए प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ के पास जाने का निर्देश देते हुए रिट याचिका निपटाया और अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए अपीलार्थी के पुत्र का दावा अस्वीकार कर दिया गया है।

2. अपीलार्थी के पति अर्थात्, स्वर्गीय बिश्वनाथ महतो, जो प्रत्यर्थी सी॰ सी॰ एल॰ के अधीन केडला ओपेन कास्ट प्रोजेक्ट में कोटि–I मजदूर के रूप में कार्यरत था, की मृत्यु दिनांक 12.8.1996 को सेवारत रहते हो गयी। मृत्यु के समय पर अपीलार्थी के पुत्र अर्थात्, बिनोद महतो की आयु 13 वर्ष थी। अपने पति स्वर्गीय विश्वनाथ महतो की मृत्यु के बाद अपीलार्थी ने दिनांक 8.10.1996 को अपने पुत्र के लिए अनुकंपा पर नियुक्ति इप्सित करते हुए आवेदन दाखिल किया और तत्पश्चात, दिनांक 3.4.1997 को पूर्ण फॉरमेट में दूसरा आवेदन दाखिल किया गया था। उक्त आवेदन के आधार पर, अपीलार्थी का पुत्र एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ V के खंड 9.3.2 के अधीन अनुकंपा नियुक्ति के संबंध में दिनांक 24.4.1998 को साक्षात्कार के लिए उपस्थित हुआ। अपीलार्थी को अपने पुत्र बिनोद महतो को 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद आवेदन पुनः दाखिल करने का निर्देश देते हुए दिनांक 27.5.1998 के परिशिष्ट–2 के तहत अनुकंपा पर नियुक्ति के लिए आवेदन लौटा दिया गया था।

3. तत्पश्चात्, अपीलार्थी ने अनुकंपा नियुक्ति इप्सित करते हुए दिनांक 6.7.2000 को पुनः आवेदन दाखिल किया। अपीलार्थी के पुत्र की जन्म तिथि दिनांक 6.3.1982 है और उसने दिनांक 6.3.2000 को वयस्कता प्राप्त किया। छह वर्ष बाद, दिनांक 21.6.2006 को प्रत्यर्थीगण द्वारा यह कथन करते हुए उक्त आवेदन अस्वीकार कर दिया गया था कि स्वर्गीय विश्वनाथ महतो, मृतक कर्मचारी (मृत्यु की तिथि दिनांक 12.8.1996) की मृत्यु से छह माह के अवसान के बाद दिनांक 3.4.1997 को अपीलार्थी द्वारा नियोजन के लिए आवेदन दिया गया था। आवेदन के अस्वीकरण से व्यथित होकर अपीलार्थी ने रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 7807 वर्ष 2006 दाखिल किया। विद्वान एकल न्यायाधीश, ने यह पाते हुए कि अपीलार्थी ने एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के खंड 9.5.0 के निबंधनानुसार धनीय मुआवजा के प्रदान के लिए आवेदन भी दिया था, अपीलार्थी को एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ के प्रासंगिक प्रावधानों के निबंधनानुसार धनीय मुआवजा के प्रदान के लिए प्रत्यर्थी के पास जाने का निर्देश दिया और रिट याचिका निपटाया।

4. अनुकंपा नियुक्ति प्रदान करने की प्रार्थना के अस्वीकरण से व्यथित होकर अपीलार्थी ने इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को दाखिल किया है।

5. हमने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री आशुतोष आनंद और सेंट्रल कोल फील्ड्स लिमिटेड के विद्वान अधिवक्ता श्री अमित कुमार सिन्हा को सुना है।

6. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने अनुकंपा नियुक्ति के लिए आवेदन पर विचार नहीं करने में गलती किया जिसे समय पर अर्थात् दिनांक 8.10.1996 को दाखिल किया गया था जो स्वर्गीय विश्वनाथ महतो की मृत्यु की तिथि से छह माह के भीतर था। आगे यह निवेदन किया गया था कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने समुचित परिप्रेक्ष्य में विचार नहीं किया था कि दिनांक 3.4.1997 का आवेदन विहित फॉर्मेट में दाखिल आवेदन था और पहले दाखिल आवेदन की दृष्टि में अपीलार्थी के सिर विलंब का दोष नहीं मढ़ा जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान परिशिष्ट–2 के पृष्ठ 16 की ओर आकृष्ट किया है और निवेदन किया है कि जब दिनांक 27.5.1998 के परिशिष्ट–2

के तहत पूर्व आवेदन लौटाया गया था, प्रत्यर्थी ने उपदर्शित नहीं किया था कि आवेदन विलंबित था। दूसरी ओर, प्रत्यर्थी ने कथन किया कि अपीलार्थी के पुत्र को 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद फिर से आवेदन देना होगा। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिनांक 27.5.1998 के परिशिष्ट–2 के महत्व पर समुचित रूप से विचार नहीं किया गया था।

7. प्रत्यर्थी सी० सी० एल० के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अन्य बातों के साथ अनुकंपा नियुक्ति राष्ट्रीय कोयला मजदूरी करार (एन० सी० डब्ल्यू० ए०) के रूप में ज्ञात ''समझौते'' द्वारा शासित होती है और मृतक मजदूर के पुरुष आश्रित, जो आयु में 15 वर्ष का और इससे अधिक है किंतु 18 वर्ष की आयु के नीचे है, को नियोजन का प्रस्ताव नहीं दिया जा सकता है। ऐसे आश्रित को जीवित रोस्टर पर रखना होगा और उसके 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद उसकी दक्षता एवं अर्हता के अनुकूल नियोजन प्रदान करना होगा। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि दिनांक 12.12.1995 के परिपत्र के मुताबिक संबंधित कर्मचारी की मृत्यु की तिथि से छह माह की परिसीमा अवधि अनुकंपा आधार पर नियुक्ति के लिए आवेदन देने के लिए विहित की गयी है। वर्तमान अपीलार्थी के मामले में, पूर्ण फॉर्मेट में आवेदन केवल दिनांक 3.4.1997 को दाखिल किया गया था जो छह माह की परिसीमा अवधि के परे था और इस प्रकार आवेदन अनुकंपा नियुक्ति के लिए अपीलार्थी के पुत्र के मामले पर विचार किए जाने के लिए कोई निर्देश इप्सित नहीं कर सकता है।

8. हमने अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता और प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों पर विचार किया है। जैसा पहले इंगित किया गया है, दिनांक 12.8.1996 को स्वर्गीय विश्वनाथ महतो की मृत्यु के बाद अनुकंपा नियुक्ति इप्सित करते हुए प्रथम आवेदन दिनांक 8.10.1996 को दाखिल किया गया था। पूर्ण फॉर्मेट में द्वितीय आवेदन दिनांक 3.4.1997 को दाखिल किया गया था। यद्यपि, पूर्ण फॉर्मेट में द्वितीय आवेदन अनुकंपा नियुक्ति के लिए आवेदन दाखिल करने के लिए अनुबंधित छह माह की अवधि के परे था, तथ्य बना रहता है कि स्वर्गीय विश्वनाथ महतो की मृत्यु के बाद दो माह की अवधि के भीतर दिनांक 8.10.1996 को अनुकंपा नियुक्ति इप्सित करते हुए अपीलार्थी द्वारा प्रथम आवेदन दाखिल किया गया था। यह गौर करना उपयुक्त है कि दिनांक 3.4.1997 के उक्त आवेदन के आधार पर अपीलार्थी के पुत्र विनोद महतो के साक्षात्कार के लिए बुलाया भी गया था और एन० सी० डब्ल्यू० ए० V के खंड 9.3.2 के अधीन नियोजन को संबंध में प्रासंगिक कागजातों के साथ आवेदन फॉर्म (मूल एवं नकल) अपीलार्थी के पुत्र को 18 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद कार्यालय में पुन: दाखिल करने के लिए लौटा दिया गया था। दिनांक 27.5.1998 के उक्त पत्र परिशिष्ट–2 का पठन निम्नलिखित है:–

^^lVy dkyQhYMl fyfeVM]

lh0 th0 ,e0 (,p0) dk dk;ky;] pjgh]

gtkjhckx {k=

fun'k l0 (H)/PS-3B/9.3.2/98/5316 fnukd 27.5.1998

lok e]

ifj;ktuk vf{kdkjh

dMyk lh0 lh0 ih0

egkn;]

Jh fcukn egrk] i= Loxh; fo'oukFk egrk] vkidh ifj;ktuk d Hkrio VhO vkjO] dkfV ı, ,uO lhO MCY;O V d 9.3.2 d vèkhu fu;ktu d lcèk e fnukd 24.4.1998 dk {k= dfeVh d le{k lk{kkRdkj d fy, mifLFkr gvkA

dfeVh u ekey dk ijh{k.k fd;k vkj ml fu;ktu d fy, de vk; dk ik;k vkj bl çdkj mld ekey ij fopkj ugh fd;k tk ldk FkkA

vr%] 18 o"k dh vk; çkIr dju d ckn bl dk;ky; e iu% nkf[ky dju d fy, çkIfxd dkxtkrk d lkFk vkonu Qke] ey ,o udy] ykVk;k tkrk gA i.k lpuk d lkFk lE;d :i l vfèkçekf.kr vkfJr dk gky d QkVkxkQk vkj erd d o;Ld vkfJr dh lgefr Hkh çLrko d lkFk lyXu dh tkuh pkfg,A

rnulkj] vkfJr dk lfpr fd;k tk ldrk gA

vkidk fo'okIHkktu

fMIVh phQ iluy eutj (,p0)

*pjghA***

9. परिशिष्ट–2 के पठन से यह देखा जाता है कि प्रत्यर्थीगण ने कहीं इंगित नहीं किया है कि अनुकंपा नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन छह माह की अवधि के परे था और न ही यह कथन किया गया है कि अपीलार्थी का पुत्र 15 वर्ष से कम आयु का है और कि उसका नाम जीवित रोस्टर पर रखा जाएगा। दूसरी ओर, दिनांक 27.5.1998 के उक्त परिशिष्ट–2 द्वारा केवल यह कथन किया गया है कि बिनोद महतो के 18 वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने के बाद कार्यालय को फिर से आवेदन देने के लिए आवेदन फॉर्म लौटा दिया जाना है। परिशिष्ट–2 का स्वर कहीं नहीं उपदर्शित करता है कि अनुकंपा नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन विलंबित था और ऐसे किसी उपदर्शन अथवा निर्देश की अनुपस्थिति में इस पर विचार नहीं किया जा सकता है। हमारा दृष्टिकोण है कि प्रत्यर्थीगण अनुकंपा नियुक्ति के लिए अपीलार्थी के पुत्र के मामले पर विचार करने के लिए बाध्य हैं। जैसा परिशिष्ट–2 में पहले इंगित किया गया है, प्रत्यर्थीगण ने कहीं नहीं उपदर्शित किया कि विनोद महतो 15 वर्ष से कम आयु का है और कि उसका नाम जीवित रोस्टर पर नहीं रखा जा सकता है।

10. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने **मोहन महतो बनाम सेंट्रल कोलफील्ड लिमिटेड एवं अन्य, (2007)8 SCC 549,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय पर विश्वास किया और प्रतिवाद किया कि एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ V आई॰ डी॰ अधिनियम की धारा 18 (3) के अर्थ के अंतर्गत समझौता है और इसलिए दोनों पक्षों पर बाध्यकारी है और यह प्रभाव में बना रहेगा जब तक इसे किसी अन्य समझौते द्वारा परिवर्तित, उपांतरित अथवा प्रतिस्थापित नहीं कर दिया जाता है। इस प्रकार, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि अनुकंपा के आधार पर नियुक्ति इप्सित करने वाला आवेदन विहित अवधि के भीतर दाखिल करना होगा। प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने उक्त निर्णय के पैराग्राफ सं॰ 10 पर विश्वास किया है जिसे नीचे उद्धृत किया जाता है:–

*"10. vk|kfxd fookn vfèkfu;e dh èkkjk 18 dh mièkkjk (3) d vFk d vrxr le>krk nkuk i{kk ij ckè;dkjh g vkj çHkko e cuk jgrk g tc rd bl fdlh vU; le>kr }kjk ifjofrr] mikrfjr vFkok çfrLFkkfir ugh dj fn;k tkrk gA le>kr e ifjlhek vofèk fuèkkfjr ugh dh x;h FkhA ge ekux fd ç?;Fkh dk vudik d vkèkkjk ij fu;fDr çnku dju d fy, vkonu nkf[ky dju d fy, ifjlhek vofèk fofgr djr g, ,lk ifji= tkjh dju dh vfèkdkfjrk FkhA fdr ,l ifji= dk u doy dBkjrkiod vuikyu dju dh vko';drk Fkh cfYd i{kk }kjk vkj mud chp fd, x, le>kr dh nf"V e bldk iBu dju dh vko';drk Hkh FkhA dedkj dh foLrkfjr dh x;h ifjHkk"kk] tlk vk|kfxd fookn vfèkfu;e dh èkkjk 2 (S) e vrfo"V g] fu'p; gh mle vrfo"V ijkHkk0; 'krk d vuikyu d vè;èkhu fu;fDr çkIr dju d fy, vihykFkh ij vfèkdkj çnÙk djxhA***

11. मोहन महतो बनाम सेंट्रल कोल फील्ड लिमिटेड एवं अन्य (ऊपर) में यद्यपि यह अभिनिर्धारित किया गया है कि अनुकंपा के आधारों पर नियुक्ति का अधिकार समझौते से उद्भूत होता है, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि परिसीमा की अवधि विहित करते हुए प्रत्यर्थी को एन॰ सी॰ डब्ल्यू॰ ए॰ की आत्मा को ध्यान में रखना चाहिए था। आगे यह अभिनिर्धारित किया गया है कि परिपत्र में विहित छह माह की परिसीमा अवधि सांविधिक नहीं है और इस प्रकार, यह अनिवार्य चरित्र की नहीं है। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*"17. .....çR;Fkh x.k u mld vèkhu mu ij Mky x, dr0;k dk ikyu ugh fd;k FkkA blu ,di{kh; nf"Vdk.k viuk;k fd vkonu fofgr Qke e o"k 1999 e nkf[ky fd;k x;k FkkA le>krk tk i{kk ij ckè;dkjh g d çkoèkkuk dk vuikyu dju d fy, çR;Fkh d lnHkko vFkok vU;Fkk dk bl rF; l vkduk gkxk fd D;k blu mld vèkhu viu dr0;k dk fuogu fd;k Fkk vFkok ughA bl ekey e ;g u doy foQy jgk vkj@vFkok ,l k dju dh mi{kk dh] cfYd tl k ;gk mij minf'kr fd;k x;k g] blu vifo= nf"Vdk.k viuk;k fd vihykFkh dk cMk Hkkb fu;kftr gku d dkj.k vudik d vkèkkj ij fu;fDr d fy, gdnkj ugh FkkA bl çdkj] vihykFkh dk vudik fu;fDr dk ykHk nu l budkj dju e çR;Fkh dk ftl ckr u oLrr% çfjr fd;k og vueku yxku d fy, [kyk gA ge ykd {k= miØe] tk Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 12 d vFk d vrxr ^^jkT;** g] l u doy fu"i{kr% cfYd ;fDr;Dr :i l vkj lnHkko l Ñ%; dju dh mEehn djr gA bl ekey e ge lr"V g fd çR;Fkh dh dkjokb u rk fu"i{k g vkj u gh ;fDr;Dr vkj u gh lnHkkoi.kA***

12. मामले के उक्त तथ्यों एवं परिस्थितियों में और दिनांक 27.5.1998 के परिशिष्ट–2 को ध्यान में रखकर हमारा दृष्टिकोण है कि प्रत्यर्थीगण को अनुकंपा नियुक्ति के लिए अपीलार्थी के पुत्र के मामले पर विचार करना होगा। विद्वान एकल न्यायाधीश के आदेश को अपास्त किया जाता है और इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को अनुज्ञात किया जाता है। प्रत्यर्थीगण को तीन माह के भीतर योजना के मुताबिक अनुकंपा नियुक्ति के लिए बिनोद महतो, पुत्र स्वर्गीय बिश्वनाथ महतो, निवासी ग्राम एवं पी॰ ओ॰ केडला, पी॰ एस॰ मांडू, जिला हजारीबाग (अब रामगढ़) के मामले पर विचार करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; Mhu ,uu mikè;k;] U;k;efr

कृषि उत्पाद विपणन कमिटी, गढ़वा (सभी प्रथम अपीलों में)

cuke

सरयू प्रसाद गुप्ता एवं अन्य (237 में)

जहीरूद्दीन अंसारी एवं अन्य (238 में)

अलीमुद्दीन अंसारी एवं अन्य (239 में)

बिगन मियां एवं अन्य (240 में)

राजेन्द्र प्रसाद केशरी एवं अन्य (241 में)

श्रीमती डॉ॰ महाराज जायसवाल एवं एक अन्य (242 में)

डॉ॰ आर॰ एल॰ जायसवाल एवं एक अन्य (243 में)

First App. Nos. 237, 238, 239, 240, 241, 242, 243 of 2012. Decided on 28th January, 2014.

भूमि अर्जन अधिनियम, 1894—धाराएँ 12 एवं 18—भूमि का अर्जन–मुआवजा की वृद्धि–अर्जित भूमि का मूल्य विनिश्चित करने के लिए उसी क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले समरुप प्रकार की भूमि के विक्रय विलेखों को उप-न्यायाधीश द्वारा विचार में लिया गया था–आक्षेपित निर्णय में अंतर्ग्रस्त विवाद्यकों पर विस्तृत चर्चा की गयी है–अपीलें खारिज। (पैराएँ 9 से 13)

अधिवक्तागण.–M/s V.P. Singh, M.K. Roy, For the Appellant; M/s Namit Sinha, Preity Sinha, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–इन समस्त अपीलों को विद्वान सिविल न्यायाधीश, सीनियर डिविजन, गढ़वा द्वारा पारित दिनांक 29 सितंबर, 2012 के एक ही निर्णय के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा एल॰ ए॰ निर्देश मामलों में उनके प्रत्यर्थीगण के पक्ष में अधिनिर्णय तैयार किया गया है।

2. एफ॰ ए॰ सं॰ 237 वर्ष 2012 एल॰ ए॰ केस सं॰ 166/78 वर्ष 1979 से उद्‌भूत हुआ है; एफ॰ ए॰ सं॰ 238 वर्ष 2012 एल॰ ए॰ केस सं॰ 159/72 वर्ष 1979 से उद्‌भूत हुआ है; एफ॰ ए॰ केस सं॰ 239 वर्ष 2012 एल॰ ए॰ केस सं॰ 163/76 वर्ष 1979 से उद्‌भूत हुआ है; एफ॰ ए॰ सं॰ 240 वर्ष 2012 एल॰ ए॰ केस सं॰ 164/76 वर्ष 1979 से उद्‌भूत हुआ है; एफ॰ ए॰ सं॰ 241 वर्ष 2012 एल॰ ए॰ केस सं॰ 162/75 वर्ष 1979 से उद्‌भूत हुआ है; एफ॰ ए॰ सं॰ 242 वर्ष 2012 एल॰ ए॰ केस सं॰ 64/147 वर्ष 1979 से उद्‌भूत हुआ है और एफ॰ ए॰ सं॰ 243 वर्ष 2012 एल॰ ए॰ केस सं॰ 65/148 वर्ष 1979 से उद्‌भूत हुआ है।

3. संक्षेप में तथ्य ये हैं कि समस्त एल॰ ए॰ निर्देश मामलों को भूमि अर्जन अधिकारी, बिहार राज्य कृषि विपणन बोर्ड, पटना द्वारा निर्दिष्ट किया गया है। निर्देशों को दिनांक 16.6.1977 के जिला गजट के पृष्ठ 6667 भाग II पर प्रकाशित एकमात्र अधिसूचना सं॰ डी॰ एल॰ ए॰ 32/77, 1713 (R) दिनांक 1.6.1977 के संबंध में किया गया है, जिसके द्वारा बिहार (अब झारखंड) सरकार ने गढ़वा में कृषि बाजार यार्ड के निर्माण के प्रयोजन से जिला पलामू (अब गढ़वा) के ग्राम उन्चारी (मोहल्ला गढ़वा टाउन) में एक सघन ब्लॉक में 22.71 एकड़ भूमि अर्जित किया है और उस प्रयोजन से एल॰ ए॰ केस सं॰ 27/V वर्ष 1977 उद्‌भूत हुआ। पूर्वोल्लिखित समस्त मामले भूस्वामियों जिनकी भूमि बिहार (अब झारखंड) सरकार द्वारा अर्जित की गयी है द्वारा दाखिल आवेदनों के आधार पर उद्‌भूत हुए हैं। चूँकि समस्त पूर्वोल्लिखित मामलें एल॰ ए॰ केस सं॰ 27/V वर्ष 1977 के संबंध में विशेष भूमि अर्जन अधिकारी, बिहार विपणन बोर्ड द्वारा किए गए निर्देशों के आधार पर उद्‌भूत हुए हैं और अर्जित की गयी भूमि की प्रकृति भी एक समान है और अपर्याप्त मुआवजा के विरुद्ध लिए गए आधार भी समस्त मामलों में समरुप हैं, अतः, उपर निर्दिष्ट किए गए समस्त मामलों को एक साथ एक ही आदेश द्वारा निपटाना न्यायोचित समुचित और सुविधाजनक होगा।

एल॰ ए॰ केस सं॰ 166/78 वर्ष 1979, ग्राम उन्चारी, थाना सं॰ 241, जिला पलामू (अब गढ़वा) के खाता सं॰ 14 के भूखंड सं॰ 541 के अधीन आच्छादित 0.75 एकड़ मापवाली भूमि के अर्जन के संबंध में है और भूस्वामी को मुआवजा 12,675/- रुपया प्रति एकड़ की दर पर अधिनिर्णीत किया गया है और एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 12 के अधीन भूस्वामी को अधिनिर्णीत कुल मुआवजा राशि 11,656.45/- रुपया है जो निर्देश में उल्लेख पाता है।

एल॰ ए॰ केस सं॰ 159/72 वर्ष 1979 में शेख अली हसन, पुत्र शेख नटवर की ग्राम उन्चारी, थाना सं॰ 241, जिला पलामू (अब गढ़वा) की खाता सं॰ 62 और 2 के अधीन भूखंड सं॰ 543, 555 और 556

के अंतर्गत आच्छादित 2.70 एकड़ मापवाली भूमि अर्जित की गयी है और (भूस्वामी को 12,675/- रुपया प्रति एकड़ की दर पर मुआवजा अधिनिर्णीत किया गया है और निर्देश में उल्लिखित अधिनियम की धारा 12 के अधीन भूस्वामी को अधिनिर्णीत कुल मुआवजा राशि 40,436.45/- रुपया है।

एल॰ ए॰ केस सं॰ 163/76 वर्ष 1979 में अली हसन मियाँ उर्फ पहलवान मियाँ पुत्र जंगी मियाँ की खाता सं॰ 20 और 25 के अधीन भूखंड सं॰ 578, 579 और 580 के अंतर्गत आच्छादित 0.59 एकड़ माप वाली भूमि अर्जित की गयी है और 12,675/- रुपया प्रति एकड़ की दर पर एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 12 के अधीन अधिनिर्णीत कुल मुआवजा राशि 8,728.99/- रुपया है।

एल॰ ए॰ केस सं॰ 164/76 वर्ष 1979 में बिगन मियाँ और यार मोहम्मद पुत्र जाकिर अली की ग्राम उन्चारी, थाना गढ़वा सं॰ 241, जिला पलामू (अब गढ़वा) की खाता सं॰ 6 के अधीन भूखंड सं॰ 557 में आच्छादित 0.89 एकड़ माप वाली भूमि 12,675/- रुपया प्रति एकड़ की दर पर अर्जित की गयी है और अधिनियम की धारा 12 के अधीन भूस्वामियों को अधिनिर्णीत कुल मुआवजा राशि 13,167.45/- रुपया है जो निर्देश में उल्लेख पाता है।

एल॰ ए॰ केस सं॰ 162/75 में राजेन्द्र प्रसाद केसरी, सुरेन्द्र प्रसाद केसरी और देवेन्द्र कुमार, समस्त पुत्र गोपाल प्रसाद केसरी की ग्राम उन्चारी, थाना सं॰ 241, गढ़वा, जिला पलामू (अब गढ़वा) की खाता सं॰ 47 के अधीन भूखंड सं॰ 558, 559, 560 और 564 द्वारा आच्दाछित 1.27 एकड़ भूमि मापवाली भूमि अर्जित की गयी है और भूस्वामियों को 12,675/- रुपया प्रति एकड़ की दर पर मुआवजा अधिनिर्णीत किया गया है और एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 12 के अधीन भूस्वामियों को अधिनिर्णीत कुल मुआवजा राशि 18,789.52/- रुपया है जो निर्देश में उल्लेख पाता है।

एल॰ ए॰ केस सं॰ 64/147 वर्ष 1979 में डॉ॰ महाराजा जायसवाल की ग्राम उन्चारी, थाना गढ़वा सं॰ 241, जिला पलामू (अब गढ़वा) की खाता सं॰ 22 के अधीन भूखंड सं॰ 554 में आच्छादित 2.51 एकड़ मापवाली भूमि अर्जित की गयी है और भूस्वामी को 12,675/- रुपया प्रति एकड़ की दर पर मुआवजा अधिनिर्णीत किया गया है और एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 12 के अधीन भू–स्वामी को अधिनिर्णीत कुल मुआवजा राशि 32,275/- रुपया है जो निर्देश में उल्लेख पाता है।

एल॰ ए॰ केस सं॰ 65/148 वर्ष 1979 में डॉ॰ राजेन्द्र लाल जायसवाल, पुत्र मेवालाल जायसवाल की ग्राम उन्चारी, थाना गढ़वा सं॰ 241, जिला पलामू (अब गढ़वा) की खाता सं॰ 22 के अधीन भूखंड सं॰ 539, 656 और 663 में आच्छादित 2.645 एकड़ मापवाली भूमि अर्जित की गयी है और भूस्वामी को 16,900/- रुपया और 12,675/- रुपया प्रति एकड़ की दर पर मुआवजा अधिनिर्णीत किया गया है।

4. अधिनिर्णय और मुआवजा के आक्षेपित आदेश से व्यथित होकर भूस्वामियों/प्रत्यर्थीगण ने भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष विरोध के रूप में पृथक याचिकाओं को उसमें यह प्रतिवाद करते हुए दाखिल किया कि भूमि अर्जन के विरुद्ध अधिनिर्णीत मुआवजा राशि अपर्याप्त है और भूमि के लोकेशन, साइट, स्थिति और क्षमता पर विचार किए बिना अर्जित भूमि का बाजार मूल्य विनिश्चित किया गया है। भूस्वामियों ने अपने दावा के समर्थन में निकट के क्षेत्रों के अंतर्गत आने वाले समरुप प्रकार की भूमि के लिए निष्पादित विक्रय विलेखों जैसे दस्तावेजों को प्रस्तुत किया है। अर्जित भूमि की क्षमता को भी ध्यान में लाया गया था। भूस्वामियों ने अर्जित भूमि के बाजार मूल्य के 20% का भी दावा किया है क्योंकि वे भूमिहीन हो गए हैं और कृषि उनकी आय का स्रोत थी। चूँकि उन्हें उनकी जीविका से वंचित कर दिया गया है, उनको

हुई हानि का निर्धारण नहीं किया गया था। ब्याज एवं अन्य सांविधिक लाभों का दावा भी किया गया है।

5. एल॰ ए॰ निर्देश मामलों में से प्रत्येक में प्रत्यर्थी भूस्वामियों ने अपनी भूमि के लोकेशन एवं क्षमता के आधार पर अपनी भूमि के अर्जन के विरुद्ध मुआवजा के लिए दावा किया है। भूमि अर्जन अधिकारी ने भूस्वामियों से विरोध याचिकाओं को प्राप्त करने के बाद विवाद्यक विनिश्चित करने के लिए मामले को उप–न्यायाधीश, भूमि अर्जन को निर्दिष्ट किया है।

6. दूसरी ओर, राज्य ने यद्यपि भूस्वामियों द्वारा किए गए दावा का प्रतिवाद किया किंतु भूमि अर्जन के विरुद्ध भूस्वामियों को भुगतान किए जाने के लिए विनिश्चित भूमि के मूल्य को न्यायोचित ठहराने के लिए साक्ष्य और दस्तावेज देने में विफल रहा। यह प्रकट किया गया है कि भूमि गढ़वा में कृषि विपणन यार्ड के निर्माण के लिए अर्जित की गयी थी। विद्वान उपन्यायाधीश ने विवाद्यकों को विरचित किया और दोनों पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्यों को दर्ज किया। पक्षों द्वारा प्रस्तुत दस्तावेजों को आक्षेपित निर्णय के पैरा 6 के मुताबिक सिद्ध किया गया है और प्रदर्शों के रूप में चिन्हित किया गया है।

7. विचारण के समापन पर विद्वान उपन्यायाधीश ने अभिनिर्धारित किया है कि भूमि अर्जन अधिकारी द्वारा विनिश्चित भूमि का मूल्य अपर्याप्त था और भूस्वामी भूमि जो 200 फीट की दूरी के भीतर गढ़वा–मंझियावाँ पी॰ डब्ल्यू॰ डी॰ रोड के बगल में थी के लिए 1000/- रुपया प्रति डिसमिल तथा शेष भूमि के लिए 800 रु॰ प्रति डिसमिल प्राप्त करने के हकदार थे। विद्वान उपन्यायाधीश ने यह भी अभिनिर्धारित किया है कि प्रत्यर्थी भूस्वामी अन्य समस्त सांविधिक लाभों के भी हकदार है जैसा माननीय पटना उच्च न्यायालय, राँची पीठ के दिनांक 14.10.1999 के निर्णय प्रदर्श–2 में मान्य ठहराया गया है। अत: कृषि उत्पाद विपणन कमिटी, गढ़वा द्वारा यह अपील की गयी है।

8. तर्क के क्रम में अपीलार्थीगण ने निम्नलिखित बिंदुओं को उठाया है:–

(i) जैसा भूमि अर्जन अधिनियम की धारा 18 (2) के अधीन आवश्यक है, प्रत्यर्थीगण द्वारा कलेक्टर के समक्ष आपत्ति नहीं की गयी थी और शब्द ''कलक्टर'' को धारा 3 (c) के अधीन परिभाषित किया गया है जो उपदर्शित करता है कि धारा 18 (2) की आवश्यकता परिपूर्ण नहीं की गयी थी और विद्वान उपन्यायाधीश ने प्रत्यर्थी भूस्वामियों द्वारा की गयी आपत्तियों पर विश्वास करके गलती की है। केवल इस आधार पर विद्वान उपन्यायाधीश को किए गए निर्देशों को खारिज कर देना चाहिए था।

(ii) पूर्वोल्लिखित एल॰ ए॰ निर्देश मामले व्यतिक्रम के कारण मार्च, 1981 में खारिज कर दिए गए और दिनांक 23 सितंबर, 2004 के आदेश द्वारा मामलों को इनके मूल फाइल में पुनर्स्थापित किया गया था और तब आगे अग्रसर हुआ था। इन परिस्थितियों में, अपीलार्थी को उक्त अवधि के लिए ब्याज का भुगतान करने का दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जाना चाहिए।

(iii) राज्य ने विद्वान उपन्यायाधीश को किए गए निर्देशों का प्रतिवाद करने में दिलचस्पी नहीं लिया है और उन्होंने भूमि अर्जन अधिकारी द्वारा विनिश्चित भूमि के मूल्य के समर्थन में तर्कपूर्ण साक्ष्य नहीं दिया था। यह सत्य है कि भूमि गढ़वा में कृषि उत्पाद बाजार यार्ड के निर्माण के लिए अर्जित की गयी थी किंतु कृषि उत्पाद बाजार कमिटी को पक्ष के रूप में अभियोजित नहीं किया गया था। कृषि उत्पाद विपणण कमिटी केवल वर्ष 2012 में विवाद्यक का प्रतिवाद करने के लिए उपस्थित हुई है।

(iv) विद्वान उपन्यायाधीश ने प्रत्यर्थीगण के पक्ष में विवाद्यकों को विनिश्चित करते हुए मुख्यत: प्रदर्श 2 अर्थात् अपील सं॰ 146 वर्ष 1998 (आर॰), अनिल कुमार गुप्ता बनाम बिहार राज्य के संबंध में पारित

दिनांक 14.10.1999 की माननीय पटना उच्च न्यायालय, राँची पीठ के निर्णय की प्रमाणित प्रति; प्रदर्श 2/1 अर्थात् एल॰ ए॰ निर्देश केस सं॰ 62 वर्ष 1979 में पारित आदेश की प्रमाणित प्रति; प्रदर्श 2/2 अर्थात् विद्वान उपन्यायाधीश, पलामू, डालटेनगंज के न्यायालय द्वारा पारित आदेश की प्रमाणित प्रति और एल॰ ए॰ निर्देश केस सं॰ 161 वर्ष 1979 में पारित दिनांक 11.12.1987 के आदेश पर मुख्यत: विश्वास किया। यह स्पष्ट किया गया है कि अपीलार्थी को उस मामले में पक्ष के रूप में अभियोजित नहीं किया गया था और इसका प्रतिवाद करने का अवसर नहीं दिया गया था और इसलिए, इन एल॰ ए॰ निर्देश मामलों में अंतर्ग्रस्त विवाद्यकों को विनिश्चित करने के लिए उन दस्तावेजों पर विश्वास करना अनावश्यक है और मान्य नहीं है।

(v) अंत में, पूर्वोल्लिखित एल॰ ए॰ निर्देश मामलों में विद्वान उपन्यायाधीश के निष्कर्ष अत्यन्त गलत हैं, भूमि का मूल्य लोगों, जिनके लिए भूजि अर्जित की गयी थी, की जरूरत पर विचार किए बिना उच्चतर पक्ष पर विनिश्चित किया गया है। अत:, इन समस्त आधारों पर विचार करते हुए आक्षेपित निर्णय अपास्त किए जाने का दायी है।

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण/भूस्वामियों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने तर्कों का जोरदार विरोध किया है और निवेदन किया है कि प्रत्यर्थीगण गैर-अभियोजन के लिए पूर्वोल्लिखित मामलों की खारिजी के लिए दायी नहीं हैं। वस्तुत:, विद्वान उप-न्यायाधीश को भूमि अर्जन मामलों को विनिश्चित करने की शक्ति दी गयी थी किंतु यह प्रत्यर्थीगण/आवेदकों को ज्ञात नहीं था। उन पर उपस्थित होने के लिए और उन मामलों में अपना साक्ष्य देने के लिए नोटिस तामील नहीं की गयी थी। अचानक उन्हें गैर-अभियोजन के लिए मामले की खारिजी के बारे में पता चला था और उन्होंने तुरन्त माननीय पटना उच्च न्यायालय, राँची पीठ के समक्ष सिविल पुनरीक्षणों अर्थात् सिविल पुनरीक्षण सं॰ 392, 393, 394, 395, 396, 397 और 398 वर्ष 1983 (आर॰) दाखिल किया और स्वयं दिनांक 27.9.1983 को अनुकूल आदेश पाया। प्रत्यर्थीगण/आवेदकों द्वारा दाखिल सिविल पुनरीक्षण आवेदनों को अनुज्ञात किया गया था किंतु सिविल पुनरीक्षणों में माननीय न्यायालय द्वारा पारित आदेश समय पर मामला अभिलेख में सम्मिलित नहीं किया गया था और उसके लिए प्रत्यर्थीगण को पीड़ित नहीं किया जाना चाहिए। यह सत्य है कि विद्वान उपन्यायाधीश ने केवल दिनांक 23 सितंबर, 2004 को उन सिविल पुनरीक्षणों में पारित दिनांक 27.9.1983 के पूर्वोक्त आदेश को ध्यान में लिया था और उन मामलों के पुनर्स्थापन के लिए आदेश पारित किया और तब मामला आगे अग्रसर हुआ। प्रत्यर्थीगण को उन एल॰ ए॰ निर्देश मामलों के पुनर्स्थापन में हुए विलंब के कारण हानि नहीं पहुँचायी जा सकती है।

10. प्रत्यर्थी भूस्वामियों ने भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष उसमें आधारों का कथन करते हुए समय के भीतर अभ्यापत्ति किया है और उस आधार पर विवाद्यकों को विनिश्चित करने के लिए विशेष न्यायाधीश, एल॰ ए॰ को निर्देश किए गए थे। केवल इसलिए कि प्रत्यर्थीगण ने इसे कलक्टर के समक्ष करने के बजाय भूमि अर्जन अधिकारी के समक्ष अपनी शिकायत की है और अभ्यापत्ति किया है, उनके द्वारा किया गया अभ्यापत्ति धारा 18 (2) के अनुपालन की कमी के लिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। प्रत्यर्थीगण को भूमि के अर्जन के बाद उनकी जीविका से वंचित किया गया था और ऐसे गरीब गाँव वालों से उम्मीद नहीं की जाती हैं कि वे विधि का सही प्रयोग जानेंगे। आगे यह इंगित किया गया है कि अपीलार्थीगण अथवा राज्य अभिलेख पर इसे लाने में विफल रहे हैं कि धारा 12 (2) के अधीन आवश्यक नोटिस सम्यक रूप से प्रत्यर्थीगण पर तामील की गयी थी। धारा 18(2) के अधीन की गयी आपत्ति पर मोटे तौर पर विचार किया जा सकता है और विवाद्यक समाप्त हुआ ज्योंही प्रत्यर्थीगण द्वारा की गयी आपत्ति विवाद्यकों को विनिश्चित करने के लिए उपन्यायाधीश को निर्दिष्ट की गयी थी।

11. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि अनिल कुमार गुप्ता एल॰ ए॰ निर्देश केस सं॰ 161 वर्ष 1979 का पक्ष था और उक्त अनिल कुमार गुप्ता की भूमि भी

उसी अधिसूचना द्वारा अर्जित की गयी थी जिसके द्वारा वर्तमान प्रत्यर्थीगण की भूमि अर्जित की गयी थी। उक्त अनिल कुमार गुप्ता एल॰ ए॰ निर्देश केस सं॰ 161 वर्ष 1979 में अपने पक्ष में पारित अधिनिर्णय से संतुष्ट नहीं था और इसलिए उसने माननीय पटना उच्च न्यायालय, राँची पीठ के समक्ष अपील सं॰ 146 वर्ष 1988 (आर॰) के तहत अपील दाखिल किया था। उक्त अपील दिनांक 14.10.1999 को विनिश्चित की गयी थी और विद्वान उपन्यायाधीश द्वारा विनिश्चित भूमि का मूल्य मान्य ठहराया गया था किंतु उक्त अनिल कुमार गुप्ता को अन्य लाभ प्रदान किया गया था और अपील सं॰ 146 वर्ष 1988 (आर॰) में पारित निर्णय प्रदर्श 2 है जिसके आधार पर विद्वान उपन्यायाधीश ने भूमि का मूल्य विनिश्चित किया है। विवाद्यक कि अपीलार्थी को निर्देश मामलों का प्रतिवाद करने का अवसर नहीं दिया गया था और इसलिए, माननीय पटना उच्च न्यायालय, राँची पीठ का निर्णय, प्रदर्श 2 उस पर बाध्यकारी नहीं है, झारखंड उच्च न्यायालय, राँची के समक्ष सिविल पुनर्विलोकन सं॰ 32 वर्ष 2004 दाखिल करके उठाया गया था किंतु अपीलार्थी ने निर्णय के पैराग्राफ 9 की अंतिम पंक्ति के सिवाए अनुकूल आदेश नहीं पाया था जिसमें वादकालीन ब्याज का दो बार भुगतान करने का निर्देश दिया गया था, विलोपित कर दिया गया था। उक्त अनिल कुमार गुप्ता के पक्ष में पारित अधिनिर्णय संतुष्ट किया गया है और इसलिए अपीलार्थी वर्तमान अपील में वही विवाद्यक नहीं उठा सकता है। उक्त की दृष्टि में, इन अपीलों में गुणागुण नहीं है और ये खारिज किए जाने की दायी हैं।

12. पक्षों को सुनने पर और मामले के अभिलेखों तथा आक्षेपित निर्णय जो अंतर्ग्रस्त विवाद्यकों पर विस्तृत चर्चा से गठित है का परिशीलन करने के बाद यह प्रतीत होता है कि विद्वान उपन्यायाधीश ने निष्कर्ष पर आने के पहले काफी मशक्कत किया है। ऐसा नहीं है कि विद्वान उपन्यायाधीश ने भूमि का मूल्य विनिश्चित करने के लिए केवल प्रदर्श 2 पर विश्वास किया है बल्कि उन्होंने अपने समक्ष लाए गए अन्य दस्तावेजों पर भी विचार किया है। अर्जित की गयी भूमि का मूल्य विनिश्चित करने के लिए उसी क्षेत्र के अंतर्गत आने वाले समरुप प्रकार की भूमि के विक्रय विलेखों को विचार में लिया गया था। यह स्पष्ट किया गया है कि उक्त अनिल कुमार गुप्ता की भूमि भी इस अधिसूचना द्वारा अर्जित की गयी थी और उसके द्वारा की गयी आपत्ति के आधार पर एल॰ ए॰ निर्देश केस सं॰ 161 वर्ष 1979 न्याय निर्णयन के लिए दर्ज किया गया था। विद्वान उपन्यायाधीश ने सड़क के बगल की भूमि का मूल्य 1000/- रुपया प्रति डिसमिल की दर पर और भूमि जो सड़क से कुछ दूर थी का मूल्य 800/- रुपया प्रति डिसमिल की दर पर विनिश्चित किया है और अपील सं॰ 146 वर्ष 1988 (आर॰) में विद्वान उपन्यायाधीश का निष्कर्ष माननीय पटना उच्च न्यायालय, राँची पीठ द्वारा मान्य ठहराया गया है। अपीलार्थी ने इस न्यायालय के समक्ष सिविल पुनरीक्षण सं॰ 32 वर्ष 2004 दाखिल किया था और एकमात्र लाभ पाने में सफल हुआ कि अपील सं॰ 146 वर्ष 1988 (आर॰) में पारित दिनांक 14.10.1999 के निर्णय के पैरा 9 का अंतिम वाक्य विलोपित करने का निर्देश दिया गया था क्योंकि यह अपीलार्थी अनिल कुमार गुप्ता को भुगतान किए जाने वाले ब्याज के संबंध में पुनरावृत्ति था। सिविल पुनरीक्षण सं॰ 32 वर्ष 2004 में पारित आदेश और निर्णय प्रदर्श 2 अपनी अंतिमता प्राप्त कर चुका है क्योंकि अपीलार्थी उन निर्णयों के विपरीत कोई आदेश लाने में विफल हुआ है। प्रत्यर्थीगण का मामला मूल अपील सं॰ 146/88 (R) में पारित निर्णय द्वारा पूरी तरह आच्छादित है। अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर विचार करते हुए मैं इन अपीलों में गुणागुण नहीं पाता हूँ और इन्हें खारिज किया जाता है और पूर्वोल्लिखित एल॰ ए॰ निर्देश मामलों में पारित निर्णय और अधिनिर्णय एतद् द्वारा मान्य ठहराया जाता है।

13. परिणामस्वरुप, पूर्वोल्लिखित समस्त अपीलें एतद् द्वारा खारिज की जाती हैं। तद्नुसार, प्रत्येक मामले में पृथक अधिनिर्णय तैयार करने का निर्देश दिया जाता है।

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

भारत इस्पात प्राधिकरण लिमिटेड

cuke

भारत संघ एवं अन्य

LPA No. 39 of 2013. Decided on 30th January, 2014.

औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947—धारा 10—औद्योगिक विवाद–निर्देश–सेल के प्रबंधन द्वारा इससे इनकार कि कर्मकार इसके कर्मचारी थे–यह स्वयं एक विवाद है जिसे श्रम न्यायालय द्वारा न्यायनिर्णीत किया जाना होगा–निर्देश आदेश को मात्र तकनीकी आधार पर चुनौती नहीं दी जानी चाहिए–आक्षेपित आदेश में दुर्बलता नहीं है। (पैराएँ 5 से 9)

निर्णयज विधि.–(2013)11 SCALE 467; (1983)4 SCC 214; (1996)2 SCC 66—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s. Indrajit Sinha, Suchitra Pandey, For the Appellant; Mr. Y.N. Mishra, For the U.O.I.; Mr. Rohit Roy, For the Resp. No. 3; Mr. V.S.S. Srivastava, For the Resp. No. 4.

आदेश

चूँकि दिनांक 18.4.2012 को केंद्र सरकार औद्योगिक अधिकरण–सह–श्रम न्यायालय सं॰ 1, धनबाद को किए गए निर्देश के प्रति चुनौती रिट न्यायालय के समक्ष विफल रही है, भारत इस्पात प्राधिकरण ने इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को दाखिल किया है।

2. भारत इस्पात प्राधिकरण सरकारी कंपनी है और इस्पात निर्मित करती है। यह लौह एवं इस्पात क्षेत्र में शोध एवं विकास गतिविधियों में भी लगी हुई है। दिनांक 18.4.2012 के निर्देश आदेश को चुनौती देते हुए रिट याचिका इस सीमा तक दाखिल की गयी थी कि अपीलार्थी को विवाद का पक्ष बनाया गया था। दिनांक 18.4.2012 के निर्देश आदेश को अपोषणीय के रूप में इस आधार पर चुनौती दी गयी थी कि विवाद सेवा समाप्त किए गए कर्मचारी और उनके नियोक्ता के बीच था और न कि सेवा समाप्त किए गए कर्मचारियों और अपीलार्थी के बीच। रिट न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी द्वारा अभिवचनित मामला यह था कि गेस्ट हाउस और श्यामली टाउनशिप, राँची में सेल गेस्ट हाउस के परिसर और टी॰ डी॰ सी॰ प्रोग्राम कंप्लेक्स के रख–रखाव का काम आउटसोर्स करने के लिए निविदा प्रक्रिया के माध्यम से ठेकेदार का चयन किया गया था। प्रत्यर्थी सं॰ 3 अर्थात् मेसर्स माँ कंस्ट्रक्शन को कतिपय निबंधनों एवं शर्तों पर दिनांक 31.12.2008 के पत्र के तहत ठेकेदार के रूप में चुना गया था। आरंभ में, कार्य अवधि दिनांक 1.1.2009 से दिनांक 31.12.2009 तक के लिए थी जिसे बाद में दिनांक 31.3.2010 तक बढ़ाया गया था। मेसर्स माँ कंस्ट्रक्शन की संविदा अवधि समाप्त होने के बाद नयी प्रक्रिया आरंभ की गयी थी और दिनांक 31.3.2010 को किसी मेसर्स इंडियन सिक्यूरिटी एण्ड मैनेजमेंट सर्विसेज को काम पंचाट किया गया था किंतु उक्त ठेकेदार ने पूर्व कर्मकारों को अपने पास काम पर नहीं रखा था। किसी मेसर्स उमा कंस्ट्रक्शन वर्क्स को दिनांक 31.4.2010 के पत्र के तहत अपीलार्थी की इकाई को समर्थन सेवा प्रदान करने के लिए संविदा पंचाट की गयी थी। उक्त ठेकेदार ने तीन कर्मकारों, जिन्होंने पूर्व ठेकेदार के साथ काम किया था को काम पर लगाया था। दो अन्य कर्मकारों को किसी मेसर्स टी॰ के॰ मंडल एन्ड कं॰ द्वारा काम पर लगाया गया था जिसे घास/झाड़ी को काटने, साफ करने, पेड़ की शाखाओं, को छाँटने एवं अन्य संबंधित काम निष्पादित करने के लिए काम पंचाट किया गया था। ठेकेदार उनको पंचाट किए गए काम के संबंध में ई॰ पी॰ एफ॰, ई॰ पी॰ एस॰, ई॰ डी॰ एल॰ आई॰, प्रशासनिक प्रभारों एवं निरीक्षण प्रभारों का भुगतान कर रहे थे। प्रत्यर्थी सं॰ 3 ने 14 मजदूरों को नियोजित किया जिसमें पाँच कर्मकार शामिल

थे। जिन्होंने औद्योगिक विवाद उठाया है। प्रत्यर्थी सं॰ 4 अर्थात् कर्मकार यूनियन ने संबंधित कर्मकारों की ओर से औद्योगिक विवाद उठाया जिसे श्रम न्यायालय द्वारा न्याय निर्णयन के लिए राज्य सरकार द्वारा निर्देश सं॰ 18 वर्ष 2010 के तहत निर्दिष्ट किया गया था किंतु इसे अपोषणीय के रूप में दिनांक 6.9.2011 को खारिज कर दिया गया था। प्रत्यर्थी सं॰ 4 ने पुन: दिनांक 14.7.2011 के पत्र के तहत क्षेत्रीय श्रम आयुक्त, राँची के समक्ष औद्योगिक विवाद उठाया और अंतत: दिनांक 18.4.2012 के निर्देश के तहत विवाद के न्याय निर्णयन के लिए विवाद केंद्र सरकार औद्योगिक अधिकरण-सह-श्रम न्यायालय को निर्दिष्ट किया गया था जिसे रिट न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी द्वारा चुनौती दी गयी थी। अपीलार्थी ने प्रतिवाद किया कि संबंधित कर्मकारों को ठेकेदार द्वारा काम पर लगाया गया था और किसी कर्मकार को काम पर लगाने के लिए ठेकेदार को पूर्ण स्वविवेक था। ठेकेदारों द्वारा सीधे मजदूरों की मजदूरी का भुगतान किया गया था और अपीलार्थी उनके द्वारा प्रस्तुत बिलों के विरुद्ध संविदा के निबंधनों एवं शर्तों के अधीन ठेकेदारों को भुगतान कर रहा था। इन तथ्यों में, अपीलार्थी और संबंधित कर्मकारों के बीच नियोक्ता एवं कर्मचारी के संबंध से इनकार किया गया था।

3. शब्दों ''ठेकेदार के माध्यम से'' का अपवाद लेते हुए अपीलार्थी भारत इस्पात प्राधिकरण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि चूँकि कर्मकार भारत इस्पात प्राधिकरण लिमिटेड के कर्मचारी नहीं थे, ठेकेदार के माध्यम से सेल, आर॰ डी॰ सी॰ आई॰ एस॰ के प्रबंधन द्वारा उनकी सेवाओं की सेवा समाप्ति का प्रश्न नहीं है। **मेसर्स टाटा आयरन एन्ड स्टील कं॰ लि॰ बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, (2013)11 SCALE 467,** में निर्णय पर विश्वास करते हुए अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि दिनांक 18.4.2012 के आदेश द्वारा किया गया निर्देश दुर्बलता से पीड़ित है और इसलिए, अभिखंडित किए जाने का दायी है।

4. दिनांक 18.4.2012 के आदेश द्वारा श्रम मंत्रालय, भारत सरकार ने न्यायनिर्णयन के लिए विवाद को श्रम न्यायालय को निम्नलिखित निबंधनों में निर्दिष्ट किया:–

> *^^D;k Bdnkj d ek/;e l ly] vkj0 lh0 Mh0 vkb0 ,l0 d çcèku }kjk fnukd 31.3.2010 d çHkko l vQjkt vgen] egkohj xki] tEl Hkxjk] lgno ekfgy vkj ,e0 çdk'k tktk dh lok lekflr oèk vkj U;k;kfpr g\ dedkj fdl vurk"k d gdnkj g***

5. मेसर्स टाटा आयरन एन्ड स्टील कं॰ लि॰ (ऊपर) में वर्णित तथ्य वर्तमान मामले के तथ्यों से बिल्कुल भिन्न हैं। **मेसर्स टाटा आयरन एन्ड स्टील कं॰ लि॰ (ऊपर)** में निर्देश आदेश ने पूर्वधारित किया कि 'कर्मकार टाटा आयरन एण्ड स्टील कंपनी लिमिटेड के कर्मकार थे और इसलिए, ऐसी दुर्बलता को ध्यान में लेते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि निर्देश समुचित रूप से नहीं लिखा गया था जबकि वर्तमान मामले में हम दिनांक 18.4.2012 के निर्देश आदेश में ऐसी कोई दुर्बलता नहीं पाते हैं। वर्तमान मामले में, कर्मकारों और सेल के प्रबंधन के बीच विवाद है क्योंकि सेल के प्रबंधन ने इनकार किया है कि कर्मकार उसके कर्मचारी हैं। यह स्वयं एक विवाद है जिसे श्रम न्यायालय द्वारा न्यायनिर्णीत किया जाना होगा। औद्योगिक विवाद अधिनियम की धारा 2 (k) के अधीन नियोक्ता एवं नियोक्ता के बीच अथवा नियोक्ता एवं कर्मचारी के बीच विवाद अथवा मतभेद को ''औद्योगिक विवाद'' के रूप में परिभाषित किया गया है।

6. निर्णयों की श्रृंखला में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत किया गया है कि मात्र तकनीकी आधारों पर निर्देश आदेश को चुनौती नहीं दी जानी चाहिए। **एस॰ के॰ वर्मा बनाम महेश चंद्र एवं एक अन्य, (1983)4 SCC 214,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि जब

केंद्र सरकार समस्त निष्ठा के साथ औद्योगिक विवाद को न्याय निर्णयन के लिए निर्दिष्ट करती है, लोक क्षेत्र उपक्रम जो राज्य का अभिकरण है को तकनीकी आधारों पर आरंभिक आपत्ति करके इससे बचने का प्रयास नहीं करना चाहिए। सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया है:–

> *"2. rhu vkjfHkd vkifÙk;k çrhr gkrh g ftldk mBkuk leLr fu;kDrkvk fo'k"kr% ykd {k= fuxek dk Q'ku cu x;k g tc dHkh U;k; fu.k;u d fy, vk|kfxd fookn vfèkdj.k dk fufn"V fd;k tkrk gA ,d vkifÙk ;g g fd dkb m|kx ugh g] nlj h vkifÙk ;g g fd vk|kfxd fookn ugh g vkj rhlj h vkifÙk g fd dedkj dedkj ugh gA ;g n%[knk;h g fd tc dn ljdkj leLr fu"Bk d lkFk vk|kfxd fookn dk U;k; fu.k;u d fy, fufn"V djrh g] ykd {k= fuxe tk jkT; dk vfHkdj.k g] x.kkx.k ij vfèkdj.k d fu.k; dk Lokxr dju d ctk,] rkfd ;g Lo; dk cjk fu;kDrk gku vFkok mRihMu d fdlh vkjki l eDr dj ld] ,lh vkifÙk;k mBk dj x.kkx.k ij fu.k; l cpu dk ç;kl djrk g vkj rn}kjk dHkh ugh lr"V gkdj ykd le; ,o èku cckn djd ekey dk çk;% mPp U;k;ky; vkj lokPp U;k;ky; rd y tkrk g ------------**"*

7. सुलतान सिंह बनाम हरियाणा राज्य, (1996)2 SCC 66, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि निर्देश आदेश केवल अभिलेख पर मौजूद सामग्री के आधार पर व्यक्तिपरक संतुष्टि पर आधारित प्रशासनिक आदेश है और कोई विवाद अंतर्ग्रस्त नहीं है। समुचित सरकार अधिनियम की धारा 10 के अधीन निर्देश करने में न्यायोचित होगी यदि यह अपने ध्यान में लाए गए तथ्यों एवं परिस्थितियों पर संतुष्ट है कि औद्योगिक विवाद विद्यमान है अथवा इसकी आशंका है।

8. विद्वान एकल न्यायाधीश ने रिट याचिका इस आधार पर खारिज कर दिया कि यदि श्रम न्यायालय इस निष्कर्ष पर आता है कि रिट याची द्वारा ठेका मजदूरों की सेवा समाप्त नहीं की गयी थी, रिट याची के विरुद्ध अधिनिर्णय पारित नहीं किया जा सकता था। श्रम न्यायालय के समक्ष समस्त अभिवचन करने के लिए अपीलार्थी को स्वतंत्रता दी गयी थी।

9. हम पाते हैं कि अपीलार्थी द्वारा किया गया अभिवचन कि संबंधित कर्मकार इसके कर्मचारी नहीं थे, ऐसा मामला है जिसे श्रम न्यायालय के समक्ष न्याय निर्णीत किया जा सकता है और केवल उस आधार पर दिनांक 18.4.2012 के निर्देश आदेश को अपोषणीय अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है। विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी को समस्त अभिवचनों, जिन्हें रिट न्यायालय के समक्ष किया गया था, को करने की अनुमति दी है। हम दिनांक 2.1.2013 के आक्षेपित आदेश में दुर्बलता नहीं पाते हैं और तद्नुसार, लेटर्स पेटेन्ट अपील खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o vij'k dekj flg] U;k;efr

कैप्टन रविन्द्र नाथ सिंह

cuke

भारत संघ एवं अन्य

W.P. (PIL) No. 5608 of 2011. Decided on 23rd January, 2014.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—पी॰ आई॰ एल॰–अनेक भूतपूर्व सैनिकों की कंपनियों के बकाया से संबंधित मामला–जब सक्षम न्यायालय के समक्ष लंबित मामले विचाराधीन हैं, याची डी॰ जी॰ आर॰ के माध्यम से कंपनियों को राशि निर्मुक्त करने का निर्देश इप्सित नहीं कर सकता है–याची राशि निर्मुक्त करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित करते हुए पी॰ आई॰

एल॰ दाखिल करने में न्यायोचित नहीं है–दस हजार रुपए के व्यय के साथ रिट याचिका खारिज। (पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Abhijeet Kumar Singh, For the Petitioner; Mr. Amit Kumar Das, For the C.C.L.; Md. Mokhtar Khan, For the UOI; M/s Rohit Ranjan Sinha, Pandey Neeraj Rai, Soumya Snahil Pandey, For the Intervener.

आदेश

याची भूतपूर्व सैनिक है और कार्यकारी कैप्टेन EC 50073, REGT, CORPS मराठा (एम॰ एल॰ आई॰) मराठा लाइट इंफैन्ट्री था और उसने अभिकथित किया है कि उसने स्वयं को भूतपूर्व सैनिक के लाभ के लिए अर्पित कर चुका है। यह जनहित याचिका प्रत्यर्थी सं॰ 4, महानिदेशक, पुनर्वास, नयी दिल्ली (डी॰ जी॰ आर॰) को दस वर्षों की अवधि के लिए सी॰ सी॰ एल॰ कोल्फील्ड क्षेत्रों में उनके द्वारा किए गए कोयला परिवहन हेतु अनेक भूतपूर्व सैनिकों की कंपनियों के बकाया को निर्मुक्त करने के लिए और इनको भूतपूर्व सैनिकों की कंपनियों अर्थात् रणदेव एसोसिएट्स प्रा॰ लि॰, पैट्रियट ट्रांसपोर्ट प्रा॰ लि॰, राजधानी कैरियर प्रा॰ लि॰, अन्नपूर्णा कोल कैरियर प्रा॰ लि॰, पुशक ट्रांसपोर्ट कंपनी (इंडिया) प्रा॰ लि॰, विजयंत ट्रांसपोर्ट कंपनी (इंडिया) प्रा॰ लि॰, डॉल्फिन ट्रांसपोर्ट कंपनी प्रा॰ लि॰, आदर्श बल्क कैरियर प्रा॰ लि॰, जगुआर ट्रांसपोर्ट कंपनी प्रा॰ लि॰, मौर्या ट्रांसपोर्ट प्रा॰ लि॰, जवान ट्रांसपोर्ट कंपनी प्रा॰ लि॰, एस्सेम ट्रांस्पोर्टर एण्ड कान्ट्रैक्टर प्रा॰ लि॰ को भूतपूर्व सैनिकों, उनकी विधवाओं एवं संतानों के लाभ के लिए वितरित करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 3 (सेंट्रल कोलफील्ड लि॰) को और न कि प्रत्यर्थीगण सं॰ 5 से 16 को जिनका याची के अनुसार रक्षा विभाग के साथ कोई सरोकार नहीं है, निर्देश देने के लिए दाखिल की गयी है।

2. भूतपूर्व सैनिकों, उनकी विधवाओं एवं संतानों के पुनर्वास के लिए भूतपूर्व सैनिक कोयला परिवहन कंपनियों के निर्माण और चलाने की नीति के अधीन डी॰ जी॰ आर॰, रक्षा मंत्रालय, कोयला मंत्रालय, कोल इंडिया लि॰ एवं कोयला समनुषंगी के बीच समझौता ज्ञापन (एम॰ ओ॰ यू॰) था। कोयला समनुषंगियों में यूनियन मुक्त कैप्टिव परिवहन कंपनियों को स्थापित करने के लक्ष्य के साथ भूतपूर्व सैनिक (इ॰ एस॰ एम॰) कोयला परिवहन कंपनियों को बनाने और भूतपूर्व सैनिकों को पुनर्वास का अवसर प्रदान करने की योजना वर्ष 1979 में तत्कालीन ऊर्जा मंत्रालय और रक्षा मंत्रालय के बीच विरचित की गयी थी। उक्त योजना सफल और दोनों पक्षों के लिए परस्पर रूप से लाभदायी रही है। अपनायी गयी प्रक्रिया यह है कि सी॰ आई॰ एल॰ अथवा इसके समनुषंगी में से किसी से अनुरोध प्राप्त करने पर डी॰ जी॰ आर॰ प्राईवेट लिमिटेड कंपनी निर्मित करने के लिए उपयुक्त एवं पात्र ई॰ एस॰ एम॰ चुनेगा। प्रायोजित करने वाले निदेशकों द्वारा व्यवहारिकता के अध्ययन के बाद कंपनी निर्मित की जाएगी और प्राईवेट लिमिटेड कंपनी के रूप में कंपनी रजिस्ट्रार के साथ रजिस्टर्ड की जाएगी। संगम–अनुच्छेद ज्ञापन डी॰ जी॰ आर॰ द्वारा अनुमोदित किया जाएगा और यह सुनिश्चित करना डी॰ जी॰ आर॰ की जिम्मेदारी होगी कि प्राईवेट लिमिटेड कंपनी निर्मित करने वाले अथवा इसमें भाग लेने वाले समस्त व्यक्ति केवल ई॰ एस॰ एम॰/विधवाएँ आश्रित हैं और वे उपयुक्त और वित्तीय रूप से मजबूत हैं।

3. याची की शिकायत यह है कि योजना का उद्देश्य कोयला समनुषंगी कंपनियों में यूनियन मुक्त कैप्टिव परिवहन कंपनियों बनाने और भूतपूर्व सैनिकों को पुनर्वास का अवसर प्रदान करने के दोहरे प्रयोजन से भूतपूर्व सैनिक कोयला परिवहन कंपनियाँ बनाना था किंतु कुछ समय बाद सी॰ सी॰ एल॰ के कोयला क्षेत्रों में परिवहन के काम में कार्यरत प्राइवेट/सिविलियन परिवाहकों द्वारा योजना हाइजैक कर ली गयी

है और प्राइवेट लोग रक्षा मंत्रालय, कोयला मंत्रालय एवं अन्य के बीच हुए समझौता ज्ञापन के निबंधनों का उल्लंघन करते हुए भूतपूर्व सैनिकों की कंपनियों के निदेशक बन गए हैं। याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दस वर्ष बीतने के बाद कंपनियों के बीच विवाद उद्भूत हुआ जिसके परिणामस्वरुप संविदा के सामान्य निबंधन एवं शर्त के खंड (3) की दृष्टि में मध्यस्थों को नियुक्त किया गया था और मध्यस्थों ने अनेक मामलों में अपना अधिनिर्णय दिया और पारित किए गए अधिनिर्णय उपन्यायाधीश, राँची के समक्ष चुनौती के अधीन हैं। याची के अनुसार, भूतपूर्व सैनिकों की कंपनियों को प्राइवेट/सिविलियन परिवाहकों द्वारा हाइजैक कर लिया गया है और अभिकथित किया गया है कि प्रत्यर्थीगण सं॰ 5 से 16 रक्षा विभाग की सेवा में नहीं थे। अत: याची डी॰ जी॰ आर॰ के माध्यम से पूर्वोक्त भूतपूर्व सैनिकों की कंपनियों को निधि निर्मुक्त करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 3 को निर्देश इप्सित करता है।

4. सी॰ सी॰ एल॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रबंध ने पात्रता मापदंड के मुताबिक भूतपूर्व सैनिकों की कंपनियों के साथ एम॰ ओ॰ यू॰ किया और डी॰ जी॰ आर॰ के मार्गदर्शक सिद्धांतों के मुताबिक सैनिकों के लिए पात्रता मापदंड के मुताबिक काम पंचाट किया। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि बकाया के भुगतान के संबंध में भूतपूर्व सैनिकों की कंपनियों द्वारा उठाए गए विवाद की दृष्टि में मामला मध्यस्थ को निर्दिष्ट किया गया था और यह उपन्यायाधीश के समक्ष और उच्च न्यायालय के समक्ष भी चुनौती के अधीन है। यह निवेदन किया गया था कि चूँकि मामला सक्षम न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है, भुगतान के लिए निर्देश इप्सित करने वाली याची द्वारा दाखिल जनहित याचिका पोषणीय नहीं है।

5. हमने याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अभिजीत कुमार सिंह और सी॰ सी॰ एल॰ के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अमित दास और अंतर्वर्ती आवेदनों आई॰ ए॰ सं॰ 58 वर्ष 2014 और 344 वर्ष 2014 में मध्यक्षेपियों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुना है।

6. हमने सावधानीपूर्वक निवेदनों और अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर विचार किया है। यह विवादित नहीं है कि सी॰ सी॰ एल॰ ने उक्त ई॰ एस॰ एम॰ परिवहन कंपनियों के साथ एम॰ ओ॰ यू॰ किया था। सी॰ सी॰ एल॰ का प्रतिवाद यह है कि विवाद किया गया था और इसे मध्यस्थता के लिए मध्यस्थों को निर्दिष्ट किया गया था जिन्होंने अधिनिर्णय पारित किया और उक्त अधिनिर्णय उपन्यायाधीश, राँची के समक्ष चुनौती के अधीन हैं। रिट याचिका के साथ दाखिल परिशिष्ट 3 मध्यस्थता के विवरणों अर्थात् पक्षों के नामों, मध्यस्थ के नाम, अधिनिर्णीत राशि और पक्षों के बीच विवाद के विषय को अंतर्विष्ट करता है। मध्यस्थ द्वारा पारित अधिनिर्णय उपन्यायाधीश-I, राँची के समक्ष चुनौती के अधीन हैं। यह भी इंगित किया गया था कि माध्यस्थम एवं सुलह अधिनियम, 1996 की धारा 36 के अधीन उपन्यायाधीश I राँची द्वारा पारित आदेश के विरुद्ध कुछ मामलों में उच्च न्यायालय में माध्यस्थम अपीलों को दाखिल किया गया है जो लंबित हैं। जब मामला सक्षम न्यायालय के समक्ष विचाराधीन है, याची डी॰ जी॰ आर॰ के माध्यम से कंपनियों को राशि निर्मुक्त करने के लिए निर्देश इप्सित नहीं कर सकता है। अत:, याची राशि निर्मुक्ति के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित करते हुए जनहित याचिका दाखिल करने में न्यायोचित नहीं है। अत:, रिट याचिका व्यय के साथ खारिज किए जाने की दायी है। परिणामस्वरुप, समस्त अंतर्वर्ती आवेदनों आई॰ ए॰ सं॰ 58 वर्ष 2014 और 344 वर्ष 2014 को खारिज किया जाता है।

7. मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में, हमारा दृष्टिकोण है कि याची द्वारा दाखिल जनहित याचिका

में सद्भाव नहीं है। अत: 10,000/- रुपयों के व्यय के साथ रिट याचिका खारिज की जाती है। याची द्वारा राशि आज के दिन से छह सप्ताह की अवधि के भीतर झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण, ''न्याय सदन,'' डोरन्डा, राँची के समक्ष जमा की जाएगी। रजिस्ट्री को एतद् द्वारा इस आदेश की प्रति को सदस्य सचिव, झारखंड राज्य विधिक सेवा प्राधिकरण को भेजने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

कुमार गोवर्धन प्रसाद सिंह एवं एक अन्य

cuke

बिहार राज्य (अब झारखंड) एवं अन्य

C.W.J.C. No. 3029 of 2000(R). Decided on 23rd January, 2014.

बिहार भूमि सुधार (हदबंदी क्षेत्र नियतिकरण एवं अतिरेक भूमि का अर्जन) अधिनियम, 1961–धारा 9–याचीगण द्वारा इस्तेमाल किये गये विकल्प पर विचार किये बिना तथा पटना उच्च न्यायालय की रांची पीठ द्वारा पारित आदेश को भी ध्यान में लिये बिना याचीगण को जमीनें आवंटित करते हुए प्रत्यर्थी द्वारा पारित आदेश को अभिखंडित करने के लिए रिट याचिका–प्रत्यर्थीगण के दो परस्पर विरोधी पक्ष अभिलेख पर प्रकट हुए हैं–उक्त विरोधात्मकताएं याची के इस तर्क को प्रबलीकृत करती हैं कि CWJC संख्या 2685/1995 (आर॰) में रांची पीठ द्वारा निर्देश के बावजूद उनके द्वारा इस्तेमाल किये गये विकल्प पर सम्यक् रूप से विचार नहीं किया गया है–मामले को पुन: खोलने के लिए राज्य सरकार के समक्ष आग्रह करते हुए याचिका दाखिल करने की स्वतंत्रता याचीगण को प्रदान की गयी–याचिका दाखिल करने की दशा में राज्य सरकार इसपर विचार करेगी तथा एक युक्तिसंगत आदेश पारित करेगी। (पैराएँ 6 से 10)

अधिवक्तागण.–M/s Indrajit Sinha, Shashank Shekhar, For the Petitioners; Mr. Arvind Kumar, For the Respondents.

आदेश

इस रिट याचिका में, याचीगण ने एल॰ सी॰ केस संख्या 20/1973–74 में प्रत्यर्थी संख्या 3 द्वारा पारित दिनांक 28.3.2000 के आदेश (परिशिष्ट 4) को अभिखंडित करने के लिए आग्रह किया है जिसके द्वारा बिहार भूमि सुधार (हदबंदी क्षेत्र नियतिकरण एवं अतिरेक भूमि का अर्जन) अधिनियम, 1961 (इसमें इसके पश्चात् ''उक्त अधिनियम'' के तौर पर निर्दिष्ट) की धारा 9 के अनुसार याचीगण द्वारा इस्तेमाल किये गये विकल्प को ध्यान में लिये बिना तथा उक्त अधिनियम की धारा 10(3) के अधीन दाखिल प्रारूप कथन के विरूद्ध अभ्यापत्ति पर विचार किये बिना तथा CWJC संख्या 2865/1995 (आर॰) में पटना उच्च न्यायालय की तत्कालीन रांची पीठ द्वारा पारित दिनांक 16.2.1996 के आदेश को भी ध्यान में लिये बिना याचीगण को जमीनें आवंटित कर दी गयी हैं। याचीगण ने उक्त अधिनियम की धारा 11(1) के अधीन अंतिम प्रारूप विवरण प्रकाशित करने का निर्देश देने वाले दिनांक 19.5.2000 के पारिणामिक आदेश (परिशिष्ट 5) तथा 19.5.2000 को प्रकाशित अंतिम प्रारूप कथन (परिशिष्ट 6) को भी अभिखंडित करने का आग्रह किया है।

2. यह कथित किया गया है कि उक्त अधिनियम की धारा 10 के अधीन प्रारूप कथन प्रकाशित किये बिना, अपर समाहर्त्ता, गढ़वा ने पूर्व में उक्त अधिनियम की धारा 11(1) के अधीन प्रारूप कथन

के अंतिम प्रकाशन का निर्देश दिया था। याचीगण तद्द्वारा उक्त अधिनियम की धारा 10 की उप-धारा (3) के अधीन अभ्यापत्ति दाखिल करने के अपने अधिकार से वंचित हो गये थे। उक्त अधिनियम की धारा 11(1) के अधीन प्रारूप कथन के उक्त अंतिम प्रकाशन से व्यथित होकर, याचीगण ने पटना उच्च न्यायालय की तत्कालीन रांची शाखा के समक्ष CWJC संख्या 2865/1995 (आर॰) दाखिल किया था। पक्षकारों की सुनवाई करने के उपरान्त, याचीगण को विधि के अनुसार अपने विकल्प का इस्तेमाल करने का अवसर देकर उक्त अधिनियम की धारा 10 के अधीन प्रारूप कथन प्रकाशित करने का अपर समाहर्त्ता को निर्देश देते हुए दिनांक 16.2.1996 के आदेश द्वारा उक्त रिट याचिका का निस्तारण कर दिया गया था।

3. मामला अपर समाहर्त्ता को प्रतिप्रेषित कर दिये जाने के उपरान्त, याचीगण ने अपने विकल्प का इस्तेमाल किया था, परन्तु इसपर विचार नहीं किया गया था एवं उक्त अधिनियम की धारा 10 के अधीन प्रारूप कथन प्रकाशित किया गया था, जिसके उपरान्त उक्त अधिनियम की धारा 11(1) के अधीन अंतिम प्रारूप कथन भी प्रकाशित कर दिया गया था। यह निवेदन किया गया है कि यद्यपि विधि के अधीन समाहर्त्ता विहित प्राधिकारी है, अपर समाहर्त्ता, जिसने समाहर्त्ता की शक्ति का इस्तेमाल किया था, ने अपनी बुद्धि का इस्तेमाल नहीं किया था तथा सरकारी प्लीडर के परामर्श पर आक्षेपित आदेश पारित किये थे। अपर समाहर्त्ता के आक्षेपित आदेश पूर्णतः मनमाने, अवैधानिक, CWJC संख्या 2865/1995 (आर॰) में पारित इस न्यायालय के निर्देश के विरूद्ध हैं तथा अभिखंडित किये जाने के दायी हैं।

4. प्रत्यर्थीगण ने रिट याचिका का विरोध किया है। प्रतिशपथ पत्र में, अन्य के साथ यह कथित किया गया है कि मामला प्रतिप्रेषित कर दिये जाने के उपरान्त, याचीगण को दिनांक 7.12.1998 की निबंधित डाक के माध्यम से भेजे गये दिनांक 2.12.1998 के पत्र संख्या 636 द्वारा अपने विकल्प का इस्तेमाल करने के लिए कहा गया था, परन्तु याचीगण ने अपना विकल्प प्रस्तुत नहीं किया था, यद्यपि उन्हें पर्याप्त अवसर प्रदान किया गया था। इस परिस्थिति में, प्रत्यर्थीगण ने सरकारी प्लीडर से कानूनी सलाह की ईप्सा की थी तथा उनकी सलाह के अनुसार, उन्होंने आगे कार्यवाही किया था एवं उक्त अधिनियम की धारा 10(1) के अधीन दिनांक 8.6.1999 का आदेश पारित किया था। तत्पश्चात्, प्रारूप कथन प्रकाशित किया गया था एवं उक्त अधिनियम की धारा 11(1) के अधीन अंतिम प्रारूप कथन भी प्रकाशित किया गया था। यह निवेदन किया गया है कि आक्षेपित आदेशों में कोई अवैधानिकता या मनमानापन नहीं है तथा रिट याचिका पोषणीय नहीं है एवं खारिज किये जाने योग्य है।

5. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है तथा अभिलेख पर प्रतीत होने वाले तथ्यों एवं सामग्रियों पर विचार किया है। मैंने इस न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत सुसंगत आदेशों का भी परिशीलन किया है। प्रत्यर्थी संख्या 3 ने दिनांक 16.2.2000 के अपने आदेश में विनिर्दिष्टतः उल्लिखित किया है कि याचीगण को उक्त अधिनियम की धारा 9 के अधीन अपने विकल्प का इस्तेमाल करने के लिए कहा गया था तथा उन्होंने उक्त प्रावधान के अधीन अपना विकल्प प्रस्तुत किया था। परन्तु उन जमीनों, जो उक्त विकल्प में वर्णित हैं, को उक्त अधिनियम की धारा 10(1) के अधीन किये गये प्रारूप कथन में सम्मिलित नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त, दिनांक 28.3.2000 के अपने आदेश में, उन्होंने इसी बात को दोहराया था तथा उल्लिखित किया था कि उक्त अधिनियम की धारा 10(1) के अधीन प्रकाशित प्रारूप कथन में बानाजंग गांव का कोई उल्लेख नहीं था। उस परिस्थिति के अधीन, सरकारी प्लीडर से परामर्श की ईप्सा की गयी थी तथा मामले में आगे कार्यवाही करने के लिए उनका परामर्श प्राप्त होने पर, उक्त अधिनियम की धारा 10(1) के अधीन प्रारूप कथन प्रकाशित किया गया था तथा याचीगण द्वारा इस्तेमाल किये गये विकल्प की दृष्टि में, करसौन तथा खुराकलान गांव में सात अनुमान्य ईकाईयों के लिए कोटि 6 जमीन के 45 एकड़ की सीमा तक जमीनें आवंटित की गयी हैं जो कुल 45 x 7 = 315.00 एकड़ होती हैं।

6. इस प्रकार, प्रत्यर्थीगण के दो परस्पर विरोधी पक्ष अभिलेख पर आये हैं। एक यह है कि इस न्यायालय द्वारा दिनांक 16.2.2000 को मामले के प्रतिप्रेषित किये जाने के उपरान्त (एल॰ सी॰ केस संख्या 20/1973–74 के आदेश पत्रक के माध्यम से) उक्त अधिनियम की धारा 9 के अधीन याचीगण ने अपने विकल्प का इस्तेमाल किया था, जबकि प्रत्यर्थीगण द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र के पैरा 11 में, यह कथित किया गया है कि आग्रह किये जाने तथा अवसर उपलब्ध कराये जाने के बावजूद, याचीगण ने अपना विकल्प प्रस्तुत नहीं किया था।

7. आदेशों में उक्त विरोधात्मकताएं तथा प्रत्यर्थीगण द्वारा प्रतिशपथ पत्र में किये गये कथन याची के इस तर्क को प्रबलीकृत करते हैं कि CWJC संख्या 2865/1995 (आर॰) में पारित दिनांक 16.2.1996 के आदेश में इस न्यायालय के स्पष्ट निर्देश के बावजूद उनके द्वारा इस्तेमाल किये गये विकल्प पर सम्यक् रूप से विचार नहीं किया गया है। इस प्रकार, प्रत्यर्थीगण के उक्त परस्पर विरोधी बयानों की दृष्टि में, रिट याचिका में याचीगण द्वारा उठायी गयी व्यथा तथा समूचा मामला ही पुनर्विचार तथा नये निर्णय का हकदार है।

8. चूँकि समाहर्त्ता द्वारा पूर्व में दो बार कार्यवाही का निस्तारण किया गया है, यह एक ऐसा उपयुक्त मामला है जिसमें राज्य सरकार को उक्त अधिनियम की धारा 45(B) के अधीन अपनी अधिकारिता के इस्तेमाल में समूचे अभिलेख को मंगाना चाहिए तथा जांचना चाहिए एवं समुचित आदेश पारित करना चाहिए।

9. उपरोक्त की दृष्टि में, मामले को दोबारा खोलने तथा उक्त अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार इसका पुनः निस्तारण करने का आग्रह करते हुए राज्य सरकार के समक्ष याचिका दाखिल करने की याचीगण को स्वतंत्रता देते हुए रिट याचिका निस्तारित की जाती है।

10. अगर ऐसी याचिका दाखिल की जाती है, राज्य सरकार इसपर विचार करेगी तथा याचिका की प्राप्ति की तिथि से छह महीनों के भीतर विधि के अनुसार एक युक्तिसंगत आदेश पारित करेगी।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ i lkn] U;k;efr

नरेश कुमार केजरीवाल

cuke

सी॰ बी॰ आई॰, रांची के माध्यम से भारत संघ

Cr. M.P. No. 2651 of 2013. Decided on 12th March, 2014.

भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988–धारा 13(2) सह-पठित धारा 13(1)(e)–दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धारा 482–भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 109 के अधीन तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) सह-पठित धारा 13(1)(e) के अधीन दंडनीय अपराध के लिए संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन–आय से अधिक संपत्तियां होने का अभिकथन–सी॰ बी॰ आई॰, याची द्वारा अन्वेषण के अनुक्रम में, एक टैक्स कन्सल्टेन्ट को अभियुक्त बनाया गया था–याची की ओर से हुए किसी षडयंत्र को दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है–केवल परामर्श देने के लिए याची को अभियोजित किये जाने के लिए दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित–याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 7, 8 एवं 9)

निर्णयज विधि.–(2012)9 SCC 512—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Rajendra Krishna, Amit Sinha, For the Petitioners; Md. Mokhtar Khan, Niranjan Kumar, For the CBI.

आदेश

याची के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता तथा सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता को सुना।

2. आर॰ सी॰ केस संख्या 01(A) वर्ष 2011–आर॰ में पारित दिनांक 10.9.2013 के आदेश को अभिखंडित करने के लिए यह आवेदन दाखिल किया गया है, जिसके द्वारा एवं जिसके अधीन भारतीय दंड संहिता की धाराओं 109 के अधीन तथा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(2) सह–पठित धारा 13(1)(e) के अधीन भी दंडनीय अपराध के लिए याची के विरूद्ध संज्ञान लिया गया है।

3. यह प्रतीत होता है कि जब याची ने डॉक्टर प्रदीप कुमार, जो उस समय सचिव, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण विभाग, झारखंड राज्य थे, की संपत्तियों को उसकी आय के अननुपाती पाया था, डॉक्टर प्रदीप कुमार के विरूद्ध आर॰ सी॰ केस संख्या 01(A) वर्ष 2011–आर॰ के तौर पर एक मामला दर्ज किया गया था। अन्वेषण के अनुक्रम में, जब यह पाया गया था कि इस याची, जो एक कर परामर्शी है, ने दो फर्मों, अर्थात, हिन्दुस्तान साख निगम तथा पाठक टेलीकॉम प्राईवेट लिमिटेड को नन्द लाल हिन्दू अविभाजित परिवार के खातों में अपने–अपने कैश क्रेडिट खातों से 5.95 लाख रुपये तथा 20 लाख रुपये की एक राशि अंतरित करने का परामर्श दिया था, तब याची को अभियुक्त बना दिया गया था, परन्तु 25.95 लाख रुपये की राशि को कभी भी डॉक्टर प्रदीप कुमार की एक आय के तौर पर नहीं माना गया है जिसके विरूद्ध भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(e) सह–पठित धारा 13(2) के अधीन एक मामला दर्ज किया गया है। फिर भी याची के विरूद्ध अभियोग पत्र दाखिल किया गया था जिसपर यथा पूर्वोक्त अपराध का संज्ञान दिनांक 10.9.2013 के आदेश द्वारा लिया गया था। उस आदेश से व्यथित होकर, इस याची ने यह आवेदन दाखिल किया है।

4. याची की ओर से उपस्थित होनेवाले विद्वान अधिवक्ता श्री राजेन्द्र कृष्ण निवेदन करते हैं कि पाठक टेलीकॉम प्राईवेट लिमिटेड ने अपने कैश क्रेडिट खाते से नन्द लाल हिन्दू अविभाजित परिवार के खातों में 20 लाख की एक राशि अंतरित की थी तथा इसी प्रकार हिन्दुस्तान साख निगम के कैश क्रेडिट खाते से नन्द लाल हिन्दू अविभाजित परिवार को 5.95 लाख रुपये की एक राशि कथित रूप से अंतरित की गयी है, जो याची द्वारा दिये गये परामर्श पर किया गया था परन्तु 25.95 लाख रुपये की इन राशियों को कभी भी डॉक्टर प्रदीप कुमार की आय के तौर पर नहीं माना गया है जिसके विरूद्ध अपने आय से अधिक संपत्तियाँ रखने के लिए भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 13(1)(e) सह–पठित धारा 13(2) के अधीन एक मामला दर्ज किया गया है तथा, अतएव, अगर सी॰ बी॰ आई॰ के मामले को सत्य मान भी लिया जाता है कि इस याची ने डॉक्टर प्रदीप कुमार के टैक्स कन्सल्टेन्स होने के नाते इन दोनों कम्पनियों तथा नन्द लाल हिन्दू अविभाजित परिवार को भी ऋण लेने एवं देने का भी परामर्श दिया था, तो भी याची को किसी भी ढंग से **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, हैदराबाद बनाम के॰ नारायण राव (2012) 9 सुप्रीम कोर्ट केसेज 512** के एक मामले में दिये गये निर्णय की दृष्टि में डॉ॰ प्रदीप कुमार को दुष्प्रेरित करने वाला नहीं कहा जा सकता है तथा, अतएव, दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 109 की सहायता से भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13(1)(e) सह–पठित धारा 13(2) के अधीन याची का अभियोजन बिल्कुल दोषपूर्ण है।

5. इसके अतिरिक्त यह निवेदन किया गया था कि सिवाय उस अभिकथन के जो ऋण लेने एवं देने की सलाह देने के लिए याची के विरूद्ध लगया गया है, मुख्य अभियुक्त डॉ॰ प्रदीप कुमार को अपनी आय से अधिक संपत्तियां रखने में दुष्प्रेरित करने के मामले में इस याची द्वारा कोई अन्य भूमिका निभाई गयी प्रतीत नहीं होती है।

6. जब पूर्व में ऐसा निवेदन प्रस्तुत किया गया था, सी॰ बी॰ आई॰ को सम्पूरक शपथ पत्र दाखिल करने के लिए कहा गया था, जिसे दाखिल किया गया था जिसपर 5.3.2014 को एक आदेश पारित किया गया था। जो निम्नवत् पठित है:–

^^5.3.2014 ;g irhr gkrk g fd fnukd 21.2.2014 d vkn'k d fucèkuk e] lh0 ch0 vkb0 dk lEijd 'kiFk i= nkf[ky dju d fy, dgk x;k FkkA mDr vkn'k fuEuor ifBr g%&

^^t lk fd lh0 ch0 vkb0 dh vkj l vkxg fd;k x;k g] ekey dk 5.3.2014 dk lpic) fd;k tk; lEijd ifr'kiFk i= nkf[ky dju d fy, bl lcfèkr rd d lcèk e fd D;k 25.95 yk[k #i; dh jkf'k dHkh Hkh MkO inhi dekj dh ,d vk; d rkj ij ekuh x;h Fkh] ft ld fo:) vk; l vfèkd lifÙk dk ,d ekeyk nt fd;k x;k gA

rcrd] 20.9.2013 dk ikfjr vrfje vkn'k tkjh jgxkA**

ml vkn'k d vulj.k e lEijd ifr'kiFk i= nkf[ky fd;k x;k gA mDr ifr'kiFk i= dk ijk 5 fuEuor ifBr g%&

^^fd ;kph }kjk nkf[ky vkonu d ijk 3 e fd; x; idFku d lcèk e mÙkj nu okyk foi{kh dFku djrk g rFkk fuonu djrk g fd lE;d lkoèkkuh d lkFk x.kuk dh x;h g rFkk MkO inhi dekj] jkt Un dekj ,o uUnyky fgUn vfoHkkftr ifjokj }kjk vftr lifÙk;k] rFkk mudh vk; ,o [kp d ifjdyu d vkèkkj ij] lex :i l vk; l vfèkd lifÙk 1,16,61,219/- #i; dh lhek rd ikb x;h FkhA**

vU; dFku Hkh g] ijUr o ml mí'; d fy, ikIfxd ugh g ft l mtkxj fd;k tk jgk gA fnukd 21.2.2014 d vkn'k d ifj'khyu l] ;g idV g fd lh0 ch0 vkb0 dk ifr'kiFk i= nkf[ky dju d fy, dgk x;k Fkk bl rF; d lcèk e fd D;k dHkh Hkh 25-95 yk[k #i; dh jkf'k dk MkO inhi dekj d vk; d rkj ij ekuk x;k Fkk ft ld fo:) vk; l vfèkd lifÙk j[ku d fy, ,d ekeyk nt fd;k x;k gA lEijd ifr'kiFk i= d ijk 5 e tk dFku fd;k x;k g] og dHkh Hkh iokDr vkn'k d fucèkuk e ugh gA rFkkfi] tk dFku fd;k x;k g og ;g g fd MkO inhi dekj] jkt Un dekj ,o uUn yky fgUn vfoHkkftr ifjokj }kjk vftr lifÙk;k ,o mudh vk;] [kp d ifjdyu d vkèkkj ij] lex :i l vk; l vfèkd lifÙk 1,16,61,219/- #i; dh lhek rd ikb x;h FkhA

lh0 ch0 vkb0 dh vkj l mifLFkr fo}ku vfèkoDrk fuonu djr g fd 25.95 yk[k #i; dh mDr jkf'k e l 1,16,61,219/- #0 dh mDr jkf'k Hkh 'kkfey gA

tc eu lh0 ch0 vkb0 d fy, mifLFkr fo}ku vfèkoDrk l bl inf'kr dju dk dgk FkkA

fo}ku vfèkoDrk u fuonu fd;k fd ekey dk vxy cèkokj] vFkkr] 12.3.2014 rd d fy, LFkfxr dj fn;k tk; rkfd ml fnu] o bl lcèk e inf'kr djx fd vfHk;kx i= e tk [kkr ektn g] mue l fdle 25-95 yk[k #i; dh jkf'k lekfo"V dh x;h gA

rcrd] 20.9.2013 dk ikfjr vrfje vkn'k tkjh jgxkA

bl vkn'k dh ,d ifr vko';d dkjokb gr lh0 ch0 vkb0 d fy, mifLFkr gku oky fo}ku vfèkoDrk dk lfpr dh tk;A**

7. आज, सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से निष्पक्षतापूर्वक निवेदन किया गया कि 25.95 लाख रुपये की एक राशि कभी भी उन राशियों में से किसी में सम्मिलित नहीं की गयी है जिन्हें डॉ॰ प्रदीप कुमार की आय के ज्ञात स्रोत से अधिक माना गया है। अगर ऐसा है तब दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 109 के निबंधनों

में दुष्प्रेरणा का प्रश्न ही उद्भूत नहीं होता है। इसके अतिरिक्त, इस याची की ओर से किसी षडयंत्र को दर्शाने वाली किसी अन्य सामग्री की अनुपस्थिति में, याची परामर्श देने के कारण अभियोजित किये जाने का दायी नहीं होगा। मैं **केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो, हैदराबाद बनाम के॰ नारायण राव के मामले (ऊपर)** में दिये गये निर्णय को निर्दिष्ट करूँगा जिसमें माननीय उच्चतम न्यायालय ने पैरा 21 में निम्नवत् सम्परीक्षित किया है:–

*^^31. rFkkfi] ;g lng l ij g fd fdlh vfèkoDrk dh eofDdy d fgrk d ifr ,d vifjgk; fu"Bk gkrh g rFkk bl <x l dk; djuk Hkh vfèkoDrk dk nkf;Ro g tk eofDdy d fgr dk lokÙke :i l vxrj djA ek= bl dkj.k fd mldh jk; Lohdkj.kh; ugh gk ldrh g] ml nkfMd vfHk;ktu l vfèkjkfir ugh fd;k tk ldrk g] fo'k"k dj ,l eÙk lk{; dh vuifLFkfr e fd og vU; "kM;= dÙkkvk d lkFk tVk gvk FkkA vfèkd l vfèkd] og ?kkj mi{kk ;k i'koj dnkpkj dk nk;h gk ldrk g vxj bl Lohdkj.kh; lk{; }kjk fl) fd;k tkrk g rFkk vU; "kM;=dÙkkvk ,o mld chp mi;Dr rFkk Lohdkj.kh; xBtkM d fcuk mlij mud lkFk HkkO nO lO dh èkkjkvk 420 ,o 109 d vèkhu vijkèk dk vkjki ugh yxk;k tk ldrk gA ;g Hkh Li"V fd;k tkrk g fd vxj lLFkk dk gkfu dkfjr dju d fy, ml vU; "kM;=dkfj;k d lkFk lcfèkr dju d fy, dkb dMh ;k lk{; g] fuL lng] vfHk;ktu ikfèkdkjhx.k nkfMd vfHk;ktu d vrxr dk;okgh dju d gdnkj gA ble d iR;Fkh d ekey e ,l eÙk lkefx;k vuifLFkr gA^^*

8. स्वीकार्यत:, इसका कोई साक्ष्य नहीं है कि डॉ॰ प्रदीप कुमार को उसकी आय से अधिक संपत्तियां अर्जित करने में दुष्प्रेरित करने के लिए इस याची ने उसके साथ अपने को जोड़ा था।

9. तद्नुसार, दिनांक 10.9.2013 का संज्ञान लेने वाला आदेश एतद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है, जहां तक इस याची का सवाल है।

10. परिणामत:, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

हरि पद बन्दोपाध्याय

cuke

बिहार राज्य (अब झारखंड) एवं अन्य

C.W.J.C. No. 2657 of 2000R. Decided on 9th January, 2014.

छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम, 1908–धारा 71-A–प्रत्यास्थापन–भूमि प्रत्यास्थापन मामले में उपायुक्त द्वारा पारित आदेश को अभिखंडित करने के लिए रिट याचिका–प्रस्तुत रिट याचिका में याची ने आदेशों को चुनौती दिया है मुख्यत: इस आधार पर कि भूमि अनुसूचित क्षेत्र के भीतर नहीं आती है तथा इस प्रकार छोटानागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के प्रावधान प्रयोज्य नहीं हैं तथा समूची कार्यवाही अर्थहिन एवं अधिकारिता रहित है–अभिनिर्धारित, आवेदक-निजी प्रत्यर्थी द्वारा दावा की गयी भूमि काफी पहले 1940 में ही उसके कब्जे से बाहर चली गयी थी–अधिसूचित क्षेत्रों से इतर भूमि के कब्जे के प्रत्यास्थापन या भूमि के अंतरण के निरस्तीकरण की अवधि जोत के अंतरण की तिथि से बारह वर्ष है जैसा कि सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46(4A) के अधीन विहित है–इससे भी बढ़कर, उक्त प्रावधान विनिर्दिष्टत: विहित करता है कि जोत के अंतरण की तिथि से 12 वर्षों की अवधि के भीतर अंतरण के

निरस्तीकरण के लिए आवेदन दाखिल किया जा सकता है–आवेदन परिसीमा द्वारा भी वर्जित–आक्षेपित आदेश अभिखंडित–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 13 से 16)

अधिवक्तागण.–Mr. A.K. Sahani, For the Petitioner; J.C. to G.P.-V, For the State; Mr. Atanu Banerjee, For the Resp. No.5.

न्यायालय द्वारा.–इस रिट याचिका में, याची ने (i) आर॰ ए॰ केस संख्या 5/97 में उपायुक्त, बोकारो (प्रत्यर्थी संख्या 2) द्वारा पारित दिनांक 20.10.1999 के आदेश, (ii) दिनांक 14.12.1989 के आदेश तथा (iii) भूमि प्रत्यास्थापन केस संख्या 44/87-88 में अंचल अधिकारी, चंदन कियारी, जिला बोकारो (प्रत्यर्थी संख्या 4) द्वारा पारित दिनांक 15.3.2000 के आदेश को अभिखंडित करने का आग्रह किया है।

2. याची के अनुसार, मौजा सिमलकुड़ी, पुलिस थाना चंदन कियारी, जिला बोकारो की 4.46 एकड़ क्षेत्रफल वाली खाता संख्या 33 की जमीन खतियान में किसी नूना मांझी के नाम अभिलिखित थी। खेदन मांझी की मृत्यु अपने पिता नूना मांझी के पहले हो गयी थी। नूना मांझी की विधवा कल्ला मांझीयाईन उक्त जमीन की जुताई करने में असमर्थ थी, अतएव, उसने 16 मार्च, 1940 के अभ्यर्पण के निर्बंधित विलेख द्वारा भूतपूर्व भूस्वामी को जमीन समर्पित कर दी थी। भूतपूर्व भूस्वामी का भूमि पर कब्जा हो गया था। बाद में, उसने बन्दोवस्ती के निर्बंधित विलेख द्वारा ऋषिकेष बन्दोपाध्याय-याची के पिता के पक्ष में उक्त जमीन का बन्दोबस्त कर दिया था। याची के पिता का जमीन पर कब्जा हो गया था जो उसकी मृत्यु तक बना रहा था। याची के पिता की मृत्यु के उपरान्त, याची ने अन्य वंशजों के साथ विरासत में जमीन प्राप्त की थी। उनका उक्त जमीन पर शांतिपूर्ण कब्जा रहा है। वर्ष 1988 में, प्रत्यर्थी संख्या 4 ने अपनी ही पहल पर एक कार्यवाही प्रारंभ किया था जो भूमि प्रत्यास्थापन केस संख्या 44/87-88 के तौर पर दर्ज की गयी थी। कार्यवाही तात्पर्यित रूप से छोटा नागपुर अभिधृति अधिनियम की धारा 71A के अधीन प्रारंभ की गयी थी। उक्त कार्यवाही में, याची को नोटिस का तामिला नहीं कराया गया था, यद्यपि 1940 से ही याची तथा उसके परिवार का एक शांतिपूर्ण तथा सतत् कब्जा जमीन पर रहा था। अंचल अधिकारी, चंदन कियारी ने सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A के अधीन मामले में कार्यवाही किया था यद्यपि गांव बिहार अनुसूचित क्षेत्र विनियमन, 1969 के प्रावधान के अधीन अधिसूचित अनुसूचित क्षेत्र के भीतर नहीं आता था तथा याची के कब्जे को अवैधानिक अभिनिर्धारित करते हुए एवं आवेदक-निजी प्रत्यथी के पक्ष में जमीन के प्रत्यास्थापन का निर्देश देते हुए अंतिम आदेश पारित किया था। तत्पश्चात्, याची ने कई आधारों पर उपायुक्त, बोकारो के समक्ष अपील दाखिल किया था। विद्वान उपायुक्त ने अपील के आधारों पर विचार किये बिना दिनांक 20.10.1999 के आदेश द्वारा याची की अपील खारिज कर दिया था।

3. याची ने इस रिट याचिका में आदेशों को चुनौती दिया है मुख्यत: इस आधार पर कि भूमि अनुसूचित क्षेत्र के भीतर नहीं पड़ती है तथा सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A के प्रावधान लागू नहीं होते हैं। समूची कार्यवाही अर्थहीन तथा अधिकारिता रहित है।

4. यह प्रकथित किया गया है कि प्रत्यास्थापन के लिए आवेदन में किये गये अभिकथन अधिक-से-अधिक सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46(4A) के प्रावधान को आकर्षित करते हैं। परन्तु उस प्रावधान के अधीन, कब्जाविहीन होने के मामले में जमीन के प्रत्यास्थापन के लिए आवेदन दाखिल करने की विहित अवधि कब्जाविहीन होने की तिथि से 12 वर्ष है। चूँकि 1940 में जमीन के बन्दोवस्त के समय से ही इस पर याची तथा उसके हित पूर्वाधिकारी का कब्जा था, 1988 में प्रत्यास्थापन के लिए दाखिल आवेदन परिसीमा द्वारा वर्जित है।

यह भी कि 1940 में निर्बंधित दस्तावेजों के द्वारा समर्पण तथा बन्दोवस्त किये गये थे जब विधि के अधीन उपायुक्त की स्वीकृति आवश्यक नहीं थी। छोटानागपुर अभिधृति संशोधन अधिनियम, 1947 की धारा 14 द्वारा अनुमति का प्रावधान पुर:स्थापित किया गया था। पूर्वोक्त संव्यवहारों में सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम के प्रावधान का कोई उल्लंघन नहीं हुआ था तथा याची के पिता के पक्ष में बन्दोवस्त वैध तथा वैधानिक था।

5. यह निवेदन किया गया है कि उक्त स्वीकृत तथ्यपरक तथा वैधानिक पहलूओं पर विचार किये बिना, विद्वान भूमि प्रत्यास्थापन पदाधिकारी एवं अपीलीय प्राधिकारी ने भी निजी प्रत्यर्थी के पक्ष में जमीन का प्रत्यास्थापन करते हुए दोषपूर्ण रूप से आक्षेपित आदेश पारित किया था। उक्त आदेश पूर्णत: अवैधानिक तथा अधिकारिता रहित हैं।

6. प्रत्यर्थीगण द्वारा रिट याचिका का विरोध किया गया है।

7. राज्य-प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित होने वाले जी॰ पी॰ V के विद्वान जे॰ सी॰ तथा प्रत्यर्थी संख्या 5 की ओर से उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता श्री अतानू बनर्जी ने आक्षेपित आदेशों का समर्थन किया तथा निवेदन किया कि आदेश सुविचारित तथा वैधानिक हैं। आक्षेपित आदेशों में कोई दुर्बलता नहीं है। याची ने पहले कभी भी कार्यवाही की पोषणीयता का बिन्दु इस आधार पर नहीं उठाया था कि भूमि अनुसूचित क्षेत्रों के भीतर नहीं पड़ती है। मूल आवेदकों के दावों का रिट याची द्वारा प्रत्यास्थापन के लिए आवेदन के दाखिले में परिसीमा के आधार पर तथा इस आधार पर भी प्रतिवाद किया गया था कि आवेदन अभिलिखित अभिधारी के वंशजों एवं वैधानिक वारिसों में से किसी के द्वारा दाखिल नहीं किया गया था तथा अंचलाधिकारी ने हलका कर्मचारी के रिपोर्ट के आधार पर स्वप्रेरणा पर कार्यवाही प्रारंभ कर दिया था। चूँकि मामला अनुसूचित जनजाति के सदस्य की जमीन के प्रत्यास्थापन से संबंधित है, कब्जे के प्रत्यास्थापन के लिए आवेदन दाखिल करने की परिसीमा की कोई विहित अवधि नहीं है। याची के दावे पर विचार किया गया था, यह पाया गया है कि संव्यवहार संदिग्ध था। याची प्रत्यास्थापन पदाधिकारी के समक्ष या उपायुक्त के समक्ष कोई दस्तावेज पेश नहीं कर सका था। विद्वान न्यायालयों ने उक्त पहलुओं पर विचार करने के उपरान्त आक्षेपित आदेशों को पारित किया है। उक्त आदेश सुविचारित हैं। उक्त आदेशों में कोई त्रुटि या अवैधानिकता नहीं है।

8. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुना है तथा अभिलेख पर उपलब्ध तथ्यों एवं सामग्रियों पर विचार किया है। आक्षेपित आदेश इस उपधारणा पर पारित किये गये हैं कि सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A इस मामले में प्रयोज्य है।

9. सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A बिहार अनुसूचित क्षेत्र विनियम, 1969 (1969 का बिहार विनियम 1) द्वारा पुन:स्थापित की गयी थी। उक्त विनियम द्वारा, सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम, परिसीमा अधिनियम में तथा सिविल प्रक्रिया संहिता में कतिपय संशोधन किये गये थे। अनुसूचित क्षेत्र (भाग A राज्य) आदेश, 1950 के प्रावधानों के अधीन अनुसूचित क्षेत्रों को विनिर्दिष्ट तथा घोषित किया गया था। बोकारो जिला को उस प्रावधान के अधीन अनुसूचित क्षेत्र के तौर पर घोषित नहीं किया गया था।

10. 1969 के बिहार विनियम की प्रस्तावना ने ही विनिर्दिष्ट किया था कि वो विनियम तथा प्रावधान राज्य में अनुसूचित क्षेत्र के संबंध में कतिपय विधियों को संशोधित करने के लिए आशयित हैं। उक्त विनियम द्वारा सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A पुन:स्थापित की गयी थी, जो केवल अनुसूचित क्षेत्र (भाग A राज्य), 1950 की धारा 2 के अधीन अधिसूचित क्षेत्रों में लागू होती है। चूँकि बोकारो जिला तथा इसके पुनर्गठन के पहले धनबाद जिला को अनुसूचित क्षेत्र घोषित नहीं किया गया था, सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 71A का प्रावधान उस क्षेत्र में प्रयोज्य नहीं है। इस प्रकार, सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम

की धारा 71A के प्रावधान के अधीन विद्वान भूमि प्रत्यास्थापन पदाधिकारी द्वारा प्रारंभ की गयी कार्यवाही पूर्णतः अधिकारिता रहित है तथा अधिकारिता की अनुपस्थिति में समूची कार्यवाही दूषित है। कार्यवाही में तथा आक्षेपित आदेशों में उक्त अंतर्निहित वैधानिक दुर्बलता की दृष्टि में, ये टिक नहीं सकती हैं तथा इस प्रकार, अभिखंडित किये जाने योग्य हैं।

11. इसके अतिरिक्त, विद्वान भूमि प्रत्यास्थापन पदाधिकारी एवं अपीलीय प्राधिकारी का भी यह निष्कर्ष कि संव्यवहार संदिग्ध है, किसी वैध कारण पर आधारित नहीं है। स्वीकार्यतः, अभ्यर्पण तथा बंदोवस्त निबंधित दस्तावेज थे जो वर्ष 1940 में निष्पादित किये गये थे। दिनांक 16 मार्च, 1940 के अभ्यर्पण के निबंधित विलेख, परिशिष्ट 1 से यह स्पष्ट है कि अभिलिखित अभिधारी ने भूतपूर्व भू-स्वामी को उक्त जमीन अभ्यर्पित कर दी थी तथा भूमि पर भू-स्वामी का कब्जा हो गया था। बाद में, दिनांक 19 मार्च, 1940 के बंदोवस्त के निबंधित विलेख द्वारा याची के पिता के पक्ष में भूमि का बन्दोवस्त कर दिया गया था। उक्त बंदोवस्त विधिक तथा वैध है।

12. विद्वान भूमि प्रत्यास्थापन पदाधिकारी एवं अपीलीय न्यायालय ने भी उक्त दस्तावेजों को दोषपूर्ण तथा अवैधानिक अभिनिर्धारित किया है मुख्यतः इस आधार पर कि जमीन का अभ्यर्पण करने के लिए उपायुक्त की कोई अनुमति नहीं ली गयी थी जैसा कि सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 72 के अधीन आवश्यक था। उन्होंने इस तथ्य की अनदेखी कर दी थी कि उपायुक्त की अनुमति आवश्यक बनाने वाला प्रावधान संशोधन अधिनियम, 1947 द्वारा पुरःस्थापित किया गया था, जबकि अभ्यर्पण की तिथि 16 मार्च, 1940 थी तथा उस समय विधि के अधीन उपायुक्त की अनुमति आवश्यक नहीं थी।

13. यह भी उल्लिखित करना समीचीन है कि आवेदक-निजी प्रत्यर्थी द्वारा दावा की गयी भूमि काफी पहले 1940 में ही उनके कब्जे से निकल गयी थी। अनूसूचित क्षेत्रों से इतर भूमि के कब्जे के प्रत्यास्थापन या भूमि के अंतरण के निरस्तीकरण की अवधि जोत के अंतरण की तिथि से बारह वर्ष है जैसा कि सी॰ एन॰ टी॰ अधिनियम की धारा 46(4A) के अधीन विहित है। उक्त प्रावधान विनिर्दिष्टतः विहित करता है कि जोत के अंतरण की तिथि से 12 वर्षों की अवधि के भीतर अंतरण के निरस्तीकरण के लिए आवेदन दाखिल किया जा सकता है। इसकी दृष्टि में, आवेदक-निजी प्रत्यर्थी का आवेदन परिसीमा द्वारा वर्जित है।

14. उक्त वैधानिक पहलूओं को ध्यान में लिये बिना आक्षेपित आदेश पारित किये गये हैं तथा पूर्णतः दोषपूर्ण एवं विधि में असमर्थनीय है।

15. उपरोक्त परिचर्चा की दृष्टि में, अंचलाधिकारी, चंदन कियारी, जिला बोकारो द्वारा भूमि प्रत्यास्थापन केस संख्या 44/87-88 में पारित (1) दिनांक 14.12.1989 के आक्षेपित आदेश, तथा (2) दिनांक 15.3.2000 के आदेश, एवं आर॰ ए॰ केस संख्या 5/97 में पारित (3) दिनांक 20.10.1999 का आदेश भी पूर्णतः अवैधानिक एवं मनमाने हैं तथा अधिकारिता रहित हैं एवं इन्हें एतद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

16. यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

चंद्रिका राम एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 7098 of 2013. Decided on 6th February, 2014.

(क) झारखंड न्यायिक सेवा (भर्त्ती, नियुक्ति एवं सेवाशर्त) नियमावली, 2001—नियम 4 (b) एवं 5—उच्चतर न्यायिक सेवा में नियुक्ति के रूप में प्रोन्नति–साक्षात्कार परीक्षा–जब नियम 5 (iv) योग का न्यूनतम अर्हक अंक प्रावधानित नहीं करता है, चयन नियमावली के कठोर अनुपालन में किया जाना है–सामर्थ्यकारी उपबंध की अनुपस्थिति में, योग के न्यूनतम अंकों का नियतिकरण स्वयं नियमावली को संशोधित करने के तुल्य होगा–योग के न्यूनतम अर्हक अंकों को विहित करना चयन प्रक्रिया दूषित करता है। (पैरा 30)

(ख) सेवा विधि–नियुक्ति–साक्षात्कार पद विशेष के लिए उम्मीदवार की उपयुक्तता निर्धारित करने का सर्वोत्तम ढंग है क्योंकि सतर्कता, सूझ-बूझ, निर्णय लेने की क्षमता, नेतृत्व का गुण आदि जैसे उम्मीदवारों की समग्र बौद्धिकता एवं व्यक्तिगत गुणों को सामने लाता है–साक्षात्कार के लिए आवंटित अंक न्यून होना ही चाहिए ताकि मनमानेपान के आरोप से बचा जा सके। (पैराएँ 41 एवं 43)

(ग) झारखंड न्यायिक सेवा (भरती, नियुक्ति एवं सेवा शर्त) नियमावली, 2001—नियम 5 (v)—साक्षात्कार–जब सीमित प्रतियोगिता परीक्षा में साक्षात्कार के लिए केवल 20% अंक अनुबंधित किया जाता है, मेधा-सह-वरीयता के आधार पर प्रोन्नति के लिए साक्षात्कार के लिए 50% अंक नियत किया जाना अत्यधिक है–साक्षात्कार के लिए नियत ऐसे उच्च अंक न्यायिक अधिकारियों पर प्रतिकूलता कारित करते हुए प्रवर्तित होता है–सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) को जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीशों (65% कोटा) के रूप में प्रोन्नति के लिए साक्षात्कार के लिए 50% अंक का आवंटन सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए संगत दृष्टिकोण के अनुकूल नहीं है। (पैराएँ 51 एवं 68)

(घ) भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872—धारा 115—विबंध–चयन प्रक्रिया में याची की भागीदारी चयन प्रक्रिया को चुनौती देने के लिए विवंध के रूप में प्रवर्तित नहीं होगी–न्यूनतम अर्हक 40% अंक का नियतिकरण नियमावली द्वारा प्रावधानित नहीं किया गया है और अननुज्ञेय था–इस तथ्य के साथ कि उम्मीदवारों को सूचित किए बिना ऐसा मापदंड रिक्तियों को अधिसूचित करने के बाद अनुबंधित किया गया था, न्यूनतम अर्हक अंक प्राप्त करने की किसी सांविधिक आवश्यकता की अनुपस्थिति में उपमति का प्रश्न ही उद्‌भूत नहीं होता है।(पैरा 61)

निर्णयज विधि.–(2010)15 SCC 170; (2001)10 SCC 51; (2010)3 SCC 104; (1981)4 SCC 159; (1985)4 SCC 417; (1981)1 SCC 722; (1971)1 SCC 38; (2011)6 SCC 605; (1985)4 SCC 417; (1991)1 SCC 662; (2007)9 SCC 497; (2008)17 SCC 703; (2009)17 SCC 530—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. Anil Kumar Sinha, Mr. Indrajit Sinha, For the Petitioners; Mr. Rajesh Kumar, For the Resp. Nos. 1 & 2; Mr. Ajit Kumar, For the Resp. No. 3; M/s. Rajiv Ranjan, Vishal Kumar Trivedi,Shresth Gautam, For the Resp. Nos. 4, 6, 12, 13, 14, 17, 20, 21, 22 & 23; M/s. Rajendra Krishna and Amit Sinha, For the Resp. Nos. 7, 8, 10 & 19; M/s. Anil Kumar & A.K. Singh, For the Resp. Nos. 5, 9, 11, 15, 16, 25 and 26; M/s. Manoj Tandon, Shiv Shankar Kumar, Ms. Kumari Rashmi, For the Resp. Nos. 18 & 24.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश एवं आर॰ आर॰ प्रसाद, न्यायमूर्ति.–जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीशों (65% कोटा के विरुद्ध) के रूप में प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 के चयन एवं प्रोन्नति को चुनौती देते

हुए याचीगण जिनमें से अधिकतम प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 से वरिष्ठ हैं ने इस रिट याचिका को दाखिल किया है। याचीगण ने झारखंड न्यायिक सेवा (भरती, नियुक्ति एवं सेवाशर्त) नियमावली, 2001 के नियमों 4 (b) और (5) के अधिकार को भी असंवैधानिक के रूप में चुनौती दिया है और प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 को प्रोन्नत करने वाले दिनांक 8.10.2013 की अधिसूचना सं॰ 9853 से 9875 का अभिखंडन इप्सित करते हैं।

2. तथ्य जो इस रिट याचिका को दाखिल करने की ओर ले गया निम्नलिखित हैं:-

याचीगण और प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 झारखंड राज्य की न्यायिक सेवा में सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) हैं। झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा के संबंध में भरती, नियुक्ति एवं सेवा शर्त झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा (भरती, नियुक्ति एवं सेवा शर्त) नियमावली, 2001 जैसा वर्ष 2008 में संशोधित किया गया है द्वारा शासित होती है। उच्चतर न्यायिक सेवा के पद पर नियुक्ति के रूप में प्रोन्नति के लिए प्रयोज्य नियमावली अन्य बातों के साथ यह प्रावधानित करता था कि मेधा-सह-वरीयता के आधार पर और उपयुक्तता परीक्षा, जैसा समय-समय पर उच्च न्यायालय द्वारा विहित किया गया है में उत्तीर्णता के अध्यधीन सिविल न्यायाधीश सीनियर डिविजन (उप न्यायाधीश) के बीच में से प्रोन्नति द्वारा 65% भरा जाएगा। पाँच वर्षों से कम नहीं वाले और विगत काल में सेवा अभिलेख को सम्यक ध्यान में रखते हुए सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) की सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के माध्यम से मेधा के आधार पर कठोरतापूर्वक 10% भरा जाएगा। शेष 25% उच्च न्यायालय द्वारा संचालित लिखित परीक्षा और साक्षात्कार के आधार पर न्यायालय से प्रत्यक्ष भरती द्वारा भरा जाएगा।

3. झारखंड उच्च न्यायालय ने जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के पद में 64 रिक्तियों को अधिसूचित करते हुए दिनांक 22.3.2012 की अधिसूचना सं॰ 102/A (परिशिष्ट-3) जारी किया जिन्हें झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा (भरती, नियुक्ति एवं सेवा शर्त) नियमावली, 2001 (संक्षेप में 'नियमावली') के संशोधित नियमों 4 (b) और 5 (i) एवं (iv) के अधीन मेधा-सह-वरीयता (65% कोटा के विरुद्ध) के आधार पर सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) से प्रोन्नति के रूप में भरा जाना है। दिनांक 19.6.2012 के निर्देश सं॰ 8383/ नियुक्ति (परिशिष्ट-4) के तहत झारखंड उच्च न्यायालय ने जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के पद पर प्रोन्नति के लिए विचार किए जाने के लिए पात्र 93 सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) की सूची प्रकाशित किया। दिनांक 22, 23 और 24 जून, 2012 को संचालित साक्षात्कार में कुल 93 उम्मीदवार उपस्थित हुए। नियम 5 (iv) के मुताबिक उपयुक्तता परीक्षा, जैसा नियम 5 के खंड (i) में प्रावधानित किया गया है, 50 अंक से गठित साक्षात्कार और 50 अंक से गठित होने वाली विगत दस वर्ष के सेवा प्रोफाइल के आधार पर उपयुक्तता से गठित होगी। चयन कमिटी ने साक्षात्कार संचालित किया और 53 उम्मीदवारों जो अपनी उपयुक्तता परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं का नाम अनुशंसित किया। रिट याचीगण उपयुक्तता परीक्षा में उत्तीर्ण नहीं हुए थे। झारखंड उच्च न्यायालय ने अपने प्रशासनिक पक्ष पर 28 अधिकारियों को प्रोन्नति देने का निर्णय लिया और दिनांक 17.7.2012 के पत्र सं॰ 9593/ नियुक्ति (परिशिष्ट-5) के तहत उनके नामों को अनुशंसित किया और इसे राज्य सरकार को अग्रसारित किया गया था। झारखंड उच्च न्यायालय की अनुशंसा के आधार पर झारखंड राज्य ने 28 सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) को जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के पद पर प्रोन्नत किया और तद्नुसार, उन 28 अधिकारियों को अक्टूबर, 2012 से विभिन्न न्यायालयों में जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के रूप में पहले ही प्रोन्नत एवं पदस्थापित किया गया है। अन्य (अर्थात् प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26) के संबंध में, जो उपयुक्तता परीक्षा में उत्तीर्ण हुए हैं, उच्च न्यायालय ने संकल्प लिया कि उनपर सम्यक क्रम में विचार किया जाएगा।

4. तत्पश्चात, प्रशासनिक पक्ष पर झारखंड उच्च न्यायालय ने निर्णय लिया और दिनांक 6.9.2013 के आक्षेपित पत्र सं॰ 9353/नियुक्ति (परिशिष्ट–6) के तहत जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के पद पर प्रोन्नति के लिए 23 अधिकारियों (प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26) के नामों को अनुशंसित किया और इसे राज्य सरकार को अग्रसारित किया गया था। झारखंड उच्च न्यायालय की अनुशंसा पर प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 को अधिसूचना सं॰ 9853 से 9875, जैसा दिनांक 8.10.2013 के मेमो (परिशिष्ट–7) में अंतर्विष्ट है, के तहत जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के रूप में प्रोन्नत किया गया था।

5. उच्च न्यायालय द्वारा की गयी अनुशंसा से व्यथित होकर याची सं॰ 1 से 23 **मलिक मजहर सुलतान एवं एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग एवं अन्य मामले में सिविल अपील सं॰ 1867 वर्ष 2006** में आई॰ ए॰ सं॰ 123/2013 दाखिल करके माननीय सर्वोच्च न्यायालय के पास गए। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिनांक 18.11.2013 के अपने आदेश के तहत यह दृष्टिकोण अभिव्यक्त करते हुए कि याचीगण को समुचित आवेदन दाखिल करके झारखंड उच्च न्यायालय के समक्ष शिकायत करना होगा, आई॰ ए॰ सं॰ 123/2013 खारिज कर दिया। अतः, यह प्रतिवाद करते हुए कि नियमावली का नियम 4 (6) सह–पठित नियम 5 (i) और (iv) मनमाना है और **मलिक मजहर सुलतान एवं एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग एवं अन्य, (2009)17 SCC 530,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों के और इस सीमा जहाँ तक यह साक्षात्कार को 50% अधिमान देता है तक विपरीत है, इस रिट याचिका को दाखिल किया है। याचीगण ने प्राईवेट प्रत्यर्थी की प्रोन्नति को अन्य बातों के साथ इस आधार पर चुनौती दिया है कि अर्हक अंक के रूप में 40% अंक नियत किया जाना प्रावधान से असंबद्ध है जैसा नियमावली के नियम 5 (iv) में अंतर्विष्ट हैं और सर्वोच्च न्यायालय के निर्देशों की घोर अनादर में है।

6. नोटिस पर, झारखंड राज्य और झारखंड उच्च न्यायालय ने अपना प्रति शपथ पत्र दाखिल किया है। प्राईवेट प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 ने भी अपने प्रतिशपथ पत्रों को दाखिल किया है।

7. हमने याचीगण के लिए उपस्थित वरीय अधिवक्ता श्री अनिल कुमार सिन्हा, प्रत्यर्थी झारखंड राज्य के लिए उपस्थित श्री राकेश कुमार, जी॰ ए॰, प्रत्यर्थी झारखंड उच्च न्यायालय के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अजित कुमार और प्राइवेट प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजीव रंजन, श्री राजेन्द्र कृष्णा, श्री मनोज टंडन और श्री अनिल कुमार को सुना है।

8. याचीगण के विद्वान वरीय अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली, 2001 (जैसा वर्ष 2008 और वर्ष 2011 में संशोधित किया गया है) का नियम 5 (iv), जो साक्षात्कार के लिए 100 अंकों में से 50 अंक अर्थात् 50% प्रावधानित करता है, न्यायोचित नहीं ठहराया जा सकता है क्योंकि यह अत्यधिक है। आगे यह निवेदन किया गया था कि चयन कमिटी ने केवल रिक्तियाँ अधिसूचित किए जाने के बाद 40% अर्हक अंक अधिरोपित करने का निर्णय किया था और आक्षेपित नियम 5 (iv) अर्हक अंक नियत किया जाना प्रावधानित नहीं करता है। याचीगण का प्रतिवाद यह है कि रिक्तियाँ अधिसूचित किए जाने और चयन प्रक्रिया आरंभ होने के बाद न्यूनतम अर्हक अंक का नियतिकरण सामर्थ्यकारी उपबंध की अनुपस्थिति में स्वयं नियमावली को संशोधित करने के तुल्य होगा। यह निवेदन भी किया गया था कि 40% न्यूनतम अर्हक अंक नियत किया जाना अननुज्ञेय था। विद्वान वरीय अधिवक्ता ने आग्रह किया कि चूँकि उम्मीदवारों को 40% न्यूनतम अर्हक अंक के नियतकरण की सूचना नहीं दी गयी थी, परीक्षा में याचीगण की भागीदारी मात्र से उपमति का प्रश्न उद्भूत नहीं होगा।

9. तृतीय प्रत्यर्थी झारखंड उच्च न्यायालय के लिए उपस्थित विद्वान अपर महाधिवक्ता श्री अजित कुमार ने निवेदन किया कि झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली के नियम 4 (b) और 5 (i) और

5 (iv) माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश के विरुद्ध नहीं है। यह निवेदन किया गया था कि साक्षात्कार को अंक 50, सेवा प्रोफाइल को 40 अंक और सेवा अवधि को 10 अंक आवंटित किया गया था और स्पष्ट रूप से निजी साक्षात्कार में उनके द्वारा प्राप्त किए गए अंकों के आधार पर और उनकी सेवा प्रोफाइल एवं सेवावधि के आधार पर उनको आवंटित अंकों के आधार पर आँकी गयी उपयुक्तता परीक्षा के आधार पर उपन्यायाधीश कैडर में पद और प्रोन्नति के लिए अनुशंसा करने में उनके सेवा प्रोफाइल सहित उम्मीदवारों के सेवा पहलू पर सम्यक विचार किया गया था। विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि याचीगण, जिन्होंने उपयुक्तता परीक्षा में भाग लिया था जिसे नियमावली और चयन कमिटी के निर्णय के मुताबिक संचालित किया गया था, उपयुक्तता परीक्षा में न्यूनतम अंक सुरक्षित करने में विफल होने पर प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 की प्रोन्नति को चुनौती देने के हकदार नहीं थे। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याचीगण ने सीमित प्रतियोगिता परीक्षा जो शुद्धतः मेधा पर आधारित है और 65% प्रोन्नति जो मेधा-सह-वरीयता पर आधारित है की दो प्रक्रियाओं के तुलना करने में गलत आधार पर दृष्टिकोण अपनाया है।

10. विद्वान अधिवक्ता ने हमें **अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2002)4 SCC 247,** में निर्णय से अवगत कराया है और **सैयद टी॰ ए॰ नक्शबंदी एवं अन्य बनाम जम्मू-कश्मीर राज्य एवं अन्य, (2003)9 SCC 592; राजस्थान न्यायिक सेवा अधिकारी संघ बनाम राजस्थान राज्य एवं एक अन्य, (2009)14 SCC 656; मनीष कुमार शाही बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (2010)12 SCC 576; के॰ ए॰ नागमणि बनाम इंडियन एयरलाइंस एवं अन्य, (2009)5 SCC 515** और **अशोक तनवर एवं एक अन्य बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य एवं अन्य, (2005)2 SCC 104** और अनेक अन्य निर्णयों पर विश्वास किया है।

11. प्रत्यर्थी सं॰ 4, 6, 12, 13, 14, 17, 20, 21, 22 और 23 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चयन कमिटी की अनुशंसा को असद्भाव और नियमावली के गंभीर उल्लंघन के आधार के सिवाए चुनौती नहीं दी जा सकती है और न्यायालय चयन कमिटी की प्रक्रिया का परीक्षण करने के लिए अपीलीय प्राधिकारी के रूप में विचार नहीं कर सकता है। **के॰ नागमणि बनाम इंडियन एयरलाइंस एवं अन्य, (2009)5 SCC 515,** पर विश्वास करते हुए विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि **नागमणि** मामले में साक्षात्कार के लिए 50% अंक और गोपनीय रिपोर्ट के लिए 50% अंक चयन के लिए मापदंड बनाया गया था जिसे माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा मान्य ठहराया गया था। श्री राजीव रंजन ने अन्य बातों के साथ निवेदन किया कि निर्णय की गुणवत्ता, ए॰ सी॰ आर॰ निर्धारण एवं सेवावधि के आधार पर सेवा प्रोफाइल निर्धारित किया गया है। सेवा प्रोफाइल के लिए आवंटित 40 अंक और साक्षात्कार के लिए आवंटित 50 अंक नियम 5 (i) सह-पठित नियम 5 (iv) के अनुरूप हैं और याचीगण जिन्होंने चयन प्रक्रिया में भाग लिया असफल होने पर पलट नहीं सकते है और चयन प्रक्रिया को चुनौती नहीं दे सकते हैं। विद्वान अधिवक्ता ने **अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2002)4 SCC 247,** और अन्य निर्णयों पर भी विश्वास किया।

12. प्रत्यर्थी सं॰ 7, 8, 10 और 19 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजेन्द्र कृष्ण ने निवेदन किया कि चयन कमिटी द्वारा नियत न्यूनतम अर्हक अंक अर्थात् लिखित परीक्षा और साक्षात्कार के कुल अंकों का 40% विधि के अनुकूल है और प्रोन्नति के लिए कुल में अर्हक अंक के रूप में 40% नियत किया जाना झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली, 2001 से असंबद्ध नहीं है क्योंकि न्यूनतम अर्हक

अंक का नियतिकरण नियमावली में अंतर्निहित है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि प्रत्यर्थीगण को दिनांक 8.10.2013 की अधिसूचना द्वारा अधिसूचित किया गया है और इसलिए, संबंधित प्रत्यर्थीगण के पक्ष में अधिष्ठायी अधिकार सृजित किया गया है और नियमावली के किसी प्रावधान को असंवैधानिक घोषित करके उक्त अधिष्ठायी अधिकार वापस नहीं लिया जा सकता है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में, विद्वान अधिवक्ता ने **के॰ एच॰ सिराज बनाम केरल उच्च न्यायालय एवं अन्य, (2006)6 SCC 395** और **लीला धर बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य, AIR 1981 SC 1777** पर विश्वास किया है।

13. उक्त निवेदनों को दोहराते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 5, 9, 11, 15, 16, 25 और 26 के विद्वान अधिवक्ता श्री अनिल कुमार ने निवेदन किया कि चयन कमिटी न्यूनतम 40% अर्हक अंक विहित करके सन्नियम/प्रक्रिया विहित करने के लिए सशक्त है। अपने प्रतिवाद के समर्थन में, उन्होंने **के॰ मंजूश्री बनाम आंध्र प्रदेश राज्य एवं एक अन्य, (2008)3 SCC 512** में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है।

14. प्रत्यर्थी सं॰ 18 और 24 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री मनोज टंडन ने निवेदन किया कि नियम 4 (b) और 5 अधिकारातीत नहीं है और याचीगण ने यह नहीं दर्शाया है कि किस प्रकार नियम 4 (b) और 5 भारत के संविधान के अनुच्छेदों 14 और 21 के उल्लंघन में है। विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि ''प्रोन्नति के लिए विचार किया जाना'' अधिकार है और प्रोन्नति के लिए याचीगण पर सम्यक रूप से विचार किया गया था और याचीगण चयन प्रक्रिया में भाग लेने पर पलट नहीं सकते हैं और नियमावली के अधिकार को चुनौती नहीं दे सकते हैं।

15. हमने निवेदनों और अभिलेख पर मौजूद सामग्री पर विचार किया है। हमने झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली, 2001 का भी परिशीलन किया है।

16. झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली, 2001 ने मूलतः सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) से प्रोन्नति द्वारा 67% और प्रत्यक्ष भरती द्वारा 33% प्रावधानित किया है। **अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2002)4 SCC 247,** में पैरा सं॰ 28 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *"28. Lej.k djr g, iokDr d ifj.kkeku lkj ge fun'k nr g fd mPprj U;kf;d lok vFkkr fty U;k;kèkh'kk d dMj e Hkjrh%*
>
> *(1) (a) eèkk& lg&ojh;rk d fl)kr vkj mi;Drrk ijh{kk e mÙkh.krk d vkèkkj ij flfoy U;k;kèkh'kk (lhfu;j fMfotu) d chp e l çkUufr }kjk 50 çfr'kr(*
>
> *(b) ikp o"kk dh vgd lok l U;u ugh oky flfoy U;k;kèkh'kk (lhfu;j fMfotu) dh lhfer çfr;kfxrk ijh{kk d eklè;e l dBkjrkiod eèkk ij vkèkkfjr çkUufr }kjk 25 çfr'kr(vkj*
>
> *(c) mud mPp U;k;ky;k }kjk lpkfyr fyf[kr ijh{kk ,o lk{kkRdkj ijh{kk d vkèkkj ij ik= vfèkoDrkvk d chp e l çk;{k Hkjrh }kjk ink dk 25 çfr'kr Hkjk tk,xkA*
>
> *(2) mPp U;k;ky;k }kjk ;Fkk lHko 'kh?k lefpr fu;e fojfpr fd;k tk,xkA***

17. अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ मामले (ऊपर) में निर्देश के अनुपालन में झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली, 2001 को दिनांक 20 अगस्त, 2004 की अधिसूचना सं॰ 4544 के तहत निम्नलिखित प्रावधानित करते हुए संशोधित किया गया था:–

(i) eèkk&lg&ojh;rk vkj mi;Drrk ijh{kk e mUkh.krk d vkèkkj ij] tlk le;≤ ij mPp U;k;ky; }kjk fofgr fd;k tk ldrk g] mi U;k;kèkh'kk d chp e l çkUufr }kjk Hkj tku d fy, 50 çfr'krA

(ii) ikp o"kk l vU;u vkj foxr e mud lok vfHky[k dk lE;d è;ku e yr g, mi U;k;kèkh'kk d lhfer çfr;kfxrk ijh{kk d ekè;e l dBkjrkiod eèkk d vkèkkj ij çkUufr }kjk Hkj tku d fy, 25 çfr'krA

(iii) mPp U;k;ky; }kjk lpkfyr fyf[kr ijh{kk ,o lk{kkRdkj d vkèkkj ij U;k;ky; l çR;{k Hkjrh }kjk Hkj tku d fy, 25 çfr'krA

पुनः उपयुक्तता परीक्षा, जो 50 अंकों से गठित साक्षात्कार और 50 अंकों से गठित विगत दस वर्षों के सेवा प्रोफाइल के आधार पर उपयुक्तता से गठित है, अनुबंधित करते हुए खंड (iv) जोड़ते हुए और नियम 5 को संशोधित करते हुए दिनांक 14.3.2008 की अधिसूचना सं॰ 1507 के तहत नियमावली संशोधित की गयी थी। 25% सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के लिए परीक्षा संचालित करने का ढंग अनुबंधित करते हुए नियम 5 (v) भी जोड़ा गया था।

18. अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ एवं अन्य बनाम भारत संघ, (2010)15 SCC 170, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्देश दिया कि सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के लिए 25% को घटाकर 10% किया जाए। तदनुसार, दिनांक 14.12.2011 की अधिसूचना सं॰ 7974 के तहत झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली, 2001 पुनः संशोधित की गयी थी।

19. दिनांक 22 मार्च, 2012 की अधिसूचना के तहत मेधा–सह–वरीयता और उपयुक्तता परीक्षा के आधार पर सिविल न्यायाधीश (सिनियर डिविजन) के प्रोन्नति के 65% कोटा के विरुद्ध 64 रिक्तियाँ अधिसूचित की गयी थी। विभिन्न खंडों को आवंटित कुल अंक, जैसा नियमावली के नियम 5 (iv) द्वारा प्रावधानित किया गया है, (i) साक्षात्कार 50 अंक, (ii) सेवा प्रोफाइल 40 अंक और सेवाकाल 10 अंक कुल 100 अंक हैं।

20. चयन प्रक्रिया में विभिन्न तिथियों एवं घटनाओं की सूची निम्नलिखित है:–

22.3.2012	झारखंड उच्च न्यायालय (जे॰ एच॰ सी॰) ने जिला न्यायाधीश के पद पर प्रोन्नति के लिए 64 रिक्तियों को अधिसूचित किया।
12.4.2012	यह संकल्प लेते हुए कि पहले वाली प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा, जे॰ एच॰ सी॰ की नियुक्ति कमिटी की बैठक। अर्हक अंक के रूप में 40% विनिश्चित किया गया था।
19.6.2012	झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा कुछ 93 पात्र उम्मीदवारों की सूची प्रकाशित की गयी थी।
22, 23, 24 जून, 2012	कुल 93 पात्र उम्मीदवारों का साक्षात्कार किया गया।
	चयन कमिटी ने 53 उम्मीदवारों, जिन्होंने प्रोन्नति किए जाने के लिए 40% से अधिक प्राप्त किया था के नामों को अनुशंसित किया।
12.7.2012	जे॰ एच॰ सी॰ की स्थायी कमिटी ने तत्समय केवल 28 अधिकारियों का प्रोन्नत करने का निर्णय किया।

17.7.2012	जे॰ एच॰ सी॰ ने राज्य सरकार को प्रोन्नति के लिए 28 अधिकारियों का नाम अनुशंसित किया।
27.9.2012	28 अधिकारियों जिनके नामों को जे॰ एच॰ सी॰ द्वारा अनुशंसित किया गया था, को नियुक्त करने वाली राज्य सरकार की अधिसूचना और अक्टूबर, 2013 में जिला न्यायाधीश के रूप में कार्य करने के लिए उन 28 अधिकारियों को जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीशों के रूप में नियुक्त किया गया था।
6.9.2013	जे॰ एच॰ सी॰ ने जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के पद प्रोन्नति के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 का नाम अनुशंसित किया।
16.9.2013	याचीगण ने अन्य बातों के साथ दिनांक 6.9.2013 की अनुशंसा के उपांतरण के लिए सिविल अपील सं॰ 1867 वर्ष 2006 में आई॰ ए॰ सं॰ 123 वर्ष 2013 दाखिल किया।
23.9.2013	माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आई॰ ए॰ सं॰ 123/2013 में नोटिस जारी किया और मौखिक रूप से आगे कदमों को स्थगित करने का निर्देश दिया।
8.10.2013	राज्य सरकार ने प्रत्यर्थी सं॰ 4-26 को प्रोन्नत करते हुए अधिसूचना जारी किया।
23.10.2013	सिविल अपील सं॰ 1867/2006 में आई॰ ए॰ सं॰ 123/2013 में जे॰ एच॰ सी॰ की ओर से उत्तर शपथपत्र। जे॰ एच॰ सी॰ ने आई ए॰ सं॰ 123/2013 में अपने उत्तर शपथ पत्र में पैरा 116 पर कथन किया कि मौखिक स्थगन का आदर किया गया था और मामला आस्थगित रखा गया था।
18.11.2013	माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित आदेश पारित किया: ''सिविल अपील सं॰ 1867 वर्ष 2006 में दाखिल आई॰ ए॰ सं॰ 123 में उल्लिखित विवरणों का परिशीलन करने पर हमारा दृष्टिकोण है कि आवेदकों को समुचित याचिका दाखिल करके उच्च न्यायालय के समक्ष अपना शिकायत करना होगा। उक्त संप्रेक्षण के साथ मध्यक्षेप दाखिल करने की अनुमति के लिए आई॰ ए॰ सं॰ 123 और निर्देश के लिए आवेदन खारिज किया जाता है।''

21. जैसा दिनांक 22 मार्च, 2012 को अधिसूचित किया गया था, 64 रिक्तियाँ झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली, 2001 (जैसा वर्ष 2008 और वर्ष 2011 में संशोधित किया गया है) द्वारा शासित होती हैं। प्रतिवाद का अधिमूल्यन करने के लिए हम लाभदायी रूप से झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली, 2001 के नियमों 4 (b) और 5 को निर्दिष्ट कर सकते हैं जो निम्नलिखित हैं:–

*"4. **lok e fu;fDr-**&lok e fu;fDr] tk igyh ckj e lkekU; r% vij ftyk U;k;kèkh'k d in ij gkxk] jkT; iky }kjk mPp U;k;ky; d ijke'k l dh tk,xhA*

(a) 0;fDr;k dh çR;{k Hkjrh }kjk tlk Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 233 d [kM (2) d vèkhu ,lh fu;fDr d fy, mPp U;k;ky; }kjk vu'kflr fd, x, g(

(b) eèkk&lg&ojh;rk vkj mi;Drrk ijh{kk e mÙkh.krk d vkèkkj ij mi U;k;kèkh'kk (flfoy U;k;kèkh'k] lhfu;j fMfotu) d chp e l çkUufr }kjk vkj

(c) mlh dMj e 5 o"kk l vU;u dh lok oky mi U;k;kèkh'kk (flfoy U;k;kèkh'k] flfu;j fMfotu) d lhfer çfr;kfxrk ijh{kk d vkèkkj ij çkUufr }kjk

5. **lok d dMjk e dy in dk-**&(i) 65% eèkk&lg&ojh;rk vkj mi;Drrk ijh{kk e mÙkh.krk d vkèkkj ij] tlk le;≤ ij mPp U;k;ky; }kjk fofgr fd;k tk ldrk g] mi U;k;kèkh'kk (flfoy U;k;kèkh'k] flfu;j fMfotu) d chp e l çkUufr }kjk Hkjk tk,xkA

(ii) 10% 5 o"kk dh lok l U;u ugh oky vkj foxr e mud lok vfHky[k dk lE;d :i l è;ku e j[kr g, mi U;k;kèkh'kk (flfoy U;k;kèkh'k] flfu;j fMfotu) d lhfer çfr;kfxrk ijh{kk d ekè;e l dBkjrkiod eèkk d vkèkkj ij (p;u d :i e) çkUufr }kjk Hkjk tk,xkA

ijUr ;g fd ;fn 10% dkVk d fy, mEehnokj miyCèk ugh g vFkok ijh{kk e vfgr gku e l{ke ugh g, g] rc fu;fer çkUufr }kjk fjDr in Hkjk tk,xkA

(iii) 25% mPp U;k;ky; }kjk lpkfyr fyf[kr ijh{kk vkj lk{kkRdkj d vkèkkj ij U;k;ky; l çR;{k Hkjrh }kjk Hkjk tk,xkA

(iv) **mi;Drrk ijh{kk] tlk mDr [kM (i) e çkoèkkfur fd;k x;k g] 50 vd l xfBr lk{kkRdkj vkj 50 vd l xfBr foxr 10 o"kk d lok çkQkby d vkèkkj ij mi;Drrk l xfBr gkxkA**

ijUr ;g fd ijLij eèkk fofuf'pr dju e dMj e nh x;h lok dk fopkj e fy;k tk,xk vkj mlh dMj e lok d çR;d o"k d fy, ,d vd vkofVr fd;k tk,xk fdr] ,l mi;Dr mEehnokjk dh ijLij ojh;rk bl fu;ekoyh d fu;e 8 (b) d fucèkuku lkj fofuf'pr dh tk,xhA

(v) lhfer çfr;kfxrk ijh{kk] tlk mDr [kM (ii) e çkoèkkfur fd;k x;k g] fyf[kr ijh{kk vkj lk{kkRdkj l xfBr gkxkA fyf[kr ijh{kk pkj Hkkx vFkkr (i) flfoy (ii) nkfMd (iii) LFkkuh; fofèk lfgr vU; fofèk vkj (iv) vxth Hkk"kk ij vkèkkfjr ç'uk l xfBr fo"k;fu"B çÑfr dh gkxhA fo"k; 100 vdk dk gkxk vkj çR;d Hkkx 25 vd dk gkxkA leLr pkjk Hkkx dk mÙkj nuk mEehnokjk d fy, vfuok; gkxkA fdr mEehnokj dk 25 vd l xfBr çR;d Hkkx e de l de 30% vd çkIr dju dh vko';drk gkxhA doy fyf[kr ijh{kk e U;ure 40% vd çkIr dju oky mEehnokjk dk lk{kkRdkj ijh{kk d fy, cyk;k tk,xkA lk{kkRdkj ijh{kk 25 vdk dh gkxh vkj lk{kkRdkj ijh{kk e U;ure Ng vd çkIr dju oky mEehnokj dk p;u d fy, mi;Dr ekuk tk,xkA fyf[kr ijh{kk vkj lk{kkRdkj ijh{kk e mEehnokjk }kjk çkIr fd, x, lefdr vdk ij mEehnokjk dh eèkk lph r;kj dh tk,xhA doy U;ure 40% vd çkIr dju oky mEehnokj fu;fDr d fy, vfgr gkxA in ij fu;fDr dMj e miyCèk fjfDr;k d fo#) lQy mEehnokjk dh ijLij eèkk d vkèkkj ij dh tk,xh tlk mDr [kM (ii) e çkoèkkfur fd;k x;k gA fu;fDr d ckn ,l lQy mEehnokjk dh ijLij ojh;rk bl fu;ekoyh d fu;e 8 (b) d fucèkuku lkj fofuf'pr dh tk,xhA**

22. क्या लिखित परीक्षा और साक्षात्कार के कुल के न्यूनतम 40% अंक प्राप्त करने की आवश्यकता चयन प्रक्रिया दूषित करते हुए नियम 5 (i) सह-पठित 5 (iv) से असंबद्ध है:-

संशोधित नियम 5 (i) अन्य बातों के साथ उपयुक्तता परीक्षा, जैसा समय-समय पर उच्च न्यायालय द्वारा विहित किया गया है, में उत्तीर्ण होने पर मेधा-सह-वरीयता के आधार पर जिला न्यायाधीश के पद पर सिविल न्यायाधीशों, सीनियर डिविजन की प्रोन्नति प्रावधानित करती है। नियम 5 (iv) वह तरीका प्रावधानित करता है जिस तरीके से नियम 5 (i) में उल्लिखित उपयुक्तता परीक्षा संचालित की जानी है। नियम 5 (iv) के मुताबिक, साक्षात्कार के लिए 50% अंक और सेवा प्रोफाइल के आधार पर उपयुक्तता के निर्धारण के लिए 50% अंक आवंटित किए गए हैं। झारखंड उच्च न्यायालय द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र के पैराग्राफ 10 में विभिन्न खंडों के लिए आवंटित अंकों का ब्रेकअप (i) साक्षात्कार-50 अंक, (ii) सेवा प्रोफाइल 40 अंक और (iii) सेवाकाल-10 के रूप में दिया गया है।

23. विचारार्थ आया प्रश्न यह है कि क्या झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली उच्च न्यायालय को प्रोन्नति के लिए अर्हित होने के लिए कुल अंकों का न्यूनतम नियत करने के लिए सक्षम बनाती है।

24. चयन कमिटी ने दिनांक 12.4.2012 के अपने संकल्प द्वारा 40% अंक न्यूनतम अर्हक अंक के रूप में नियत किया है। याचीगण, जिनमें से अधिकतर प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 से वरिष्ठ थे, ने न्यूनतम अर्हक अंक प्राप्त नहीं किया था और प्रोन्नति के लिए उनके नामों को अनुशंसित नहीं किया गया था। प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 जिनमें से अधिकतर (कुछ को छोड़कर) याचीगण से कनिष्ठ थे, के नामों को प्रोन्नति के लिए अनुशंसित किया गया था।

25. अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ केस (1) के पैरा 27 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि उच्चतर न्यायिक सेवा में कुल पद का 50% (अब 65%) मेधा-सह-वरीयता के सिद्धांत के आधार पर प्रोन्नति द्वारा भरा जाना होगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निर्देश दिया कि इस प्रयोजन से उच्च न्यायालय को उन उम्मीदवारों के विधिक ज्ञान को अभिनिश्चित एवं परीक्षित करने के लिए और निर्णयज विधि के पर्याप्त ज्ञान के साथ उनकी निरंतर दक्षता के निर्धारण के लिए परीक्षा निर्मित एवं विकसित करना चाहिए। नियम 5 (iv) उपयुक्तता परीक्षा अनुबंधित करता है। नियम 5 (iv) के मुताबिक, उपयुक्तता परीक्षा 50 अंक से गठित साक्षात्कार और 50 अंक अर्थात् विभिन्न खंडों में आवंटित अंक से गठित और विगत 10 वर्षों के सेवा प्रोफाइल के आधार पर उपयुक्तता से गठित होगी।

26. नियम 5 (i) मेधा-सह-वरीयता के आधार पर उप न्यायाधीशों (सिविल न्यायाधीश, सीनियर डिविजन) के बीच में से प्रोन्नति द्वारा भरे जाने के लिए 65% पद प्रावधानित करता है और उपयुक्तता परीक्षा, 'जैसा समय-समय पर उच्च न्यायालय द्वारा विहित किया जा सकता है' में उत्तीर्णता अनुबंधित करता है। नियम 5 (iv) उच्च न्यायालय द्वारा विहित उपयुक्तता परीक्षा है। स्पष्टत: नियम 5 (iv) प्राप्त किए जाने वाले कुल अंकों का कोई न्यूनतम अनुबंधित नहीं करता है। नियम 5 (iv) केवल उपयुक्तता परीक्षा अर्थात् साक्षात्कार के लिए प्रावधानित 50% अंक और विगत 10 वर्षों के सेवा प्रोफाइल के आधार पर 50% अंक अनुबंधित करता है। नियम 5 (iv) कुल का कोई न्यूनतम मापदंड नियत नहीं करता है।

27. सांविधिक नियम 5 (i) सह-पठित नियम 5 (iv) उपयुक्तता परीक्षा का ढंग विशेष विहित करता है। नियम 5 (iv) कुल का न्यूनतम अर्हक अंक विहित किया जाना प्रावधानित नहीं करता है। प्राप्तांक का न्यूनतम अर्हक अंक प्रावधानित किया जाना एक तरह से न्यायिक अधिकारियों को छांटना है जो न्यूनतम अर्हक अंक प्राप्त नहीं कर सकते हैं। नियमों की अनुपस्थिति में, छाँटने के प्रयोजन से कुल के न्यूनतम अंक का विहितकरण दोषपूर्ण है जहाँ तक यह प्रतिकूल रूप से अधिकारियों को प्रभावित करता है जिन्होंने अनेक वर्षों तक सेवा दिया है।

28. नियम 5 (v) अनुबंधित करता है कि सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के लिए लिखित परीक्षा चार भागों से गठित होगी और प्रत्येक भाग 25 अंक से गठित है तथा प्रत्येक भाग में कम से कम 30% अंक

प्राप्त करना उम्मीदवार के लिए अनिवार्य है। केवल लिखित परीक्षा में न्यूनतम 40% अंक प्राप्त करने वाले उम्मीदवारों को साक्षात्कार परीक्षा के लिए बुलाया जाएगा। यह भी अनुबंधित करता है कि साक्षात्कार परीक्षा 25 अंक की होगी और साक्षात्कार में न्यूनतम छह अंक प्राप्त करने वाले उम्मीदवार को चयन के लिए उपयुक्त माना जाएगा। नियम 5 (v) यह भी अनुबंधित करता है कि उम्मीदवारों की मेधा सूची लिखित परीक्षा और साक्षात्कार में उम्मीदवारों द्वारा प्राप्त किए गए समेकित अंकों पर तैयार की जाएगी और केवल न्यूनतम 40% अंक प्राप्त करने वाले उम्मीदवार नियुक्ति के लिए अर्हित होंगे। इस प्रकार, नियम 5 (v) नियुक्ति के लिए लिखित परीक्षा में न्यूनतम अंक, साक्षात्कार परीक्षा में न्यूनतम अंक और प्राप्तांक के न्यूनतम 40% अंक विहित करते हुए इतना सारा मापदंड विहित करता है। यह गौर करना उपयुक्त है कि नियम 5 (i) सह-पठित नियम 5 (iv) में ऐसा कोई न्यूनतम अंक विहित नहीं किया गया है। नियमों की अनुपस्थिति में प्राप्तांक के 40% न्यूनतम अर्हक अंक विहित करना अननुज्ञेय है और चयन प्रक्रिया दूषित करता है।

29. प्रत्यर्थीगण की ओर से यह प्रतिवाद किया गया था कि याचीगण ने चयन प्रक्रिया में भाग लिया और असफल हुए थे और न्यूनतम अर्हक अंक विहित करके याचीगण पर कोई प्रतिकूल प्रभाव कारित नहीं किया गया था। उक्त तर्क स्वीकार करने योग्य नहीं है। जैसा पहले इंगित किया गया है, अधिसूचित 64 रिक्तियों में से केवल 53 उम्मीदवारों के नामों को अनुशंसित किया गया था। केवल नियत किए गए प्राप्तांक के 40% न्यूनतम अर्हक अंक के कारण याचीगण का चयन नहीं किया जा सका था और इसलिए, यह प्रतिवाद नहीं किया जा सकता है कि याचीगण पर प्रतिकूलता कारित नहीं की गयी थी।

30. नियम 5 (iv) प्राप्तांक का न्यूनतम अर्हक अंक विहित किया जाना प्रावधानित नहीं करता है। जब नियम 5 (iv) प्राप्तांक का न्यूनतम अर्हक प्रावधानित नहीं करता है, नियमावली के कठोर अनुपालन में चयन किया जाना है। सामर्थ्यकारी उपबंध की अनुपस्थिति में, कुल के न्यूनतम अंक का विहितकरण स्वयं नियमावली को संशोधित करने के तुल्य होगा। हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, नियमावली की अनुपस्थिति में, कुल का न्यूनतम अर्हक अंक विहित किया जाना चयन प्रक्रिया को दूषित करता है।

31. प्रतिवाद: वर्ष 2010 में उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए उन्हीं मापदंडों का अनुसरण करते हुए चयन कमिटी द्वारा प्राप्तांक के न्यूनतम अर्हक अंकों को नियत किया जाना।

तब प्रत्यर्थीगण ने प्रतिवाद किया कि 40% न्यूनतम अर्हक अंक का विहितकरण वर्ष 2010 की चयन प्रक्रिया में उच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित किया गया था और दिनांक 12.4.2012 के संकल्प के तहत चयन कमिटी ने इसी सन्नियम/प्रक्रिया को अपनाने का संकल्प लिया था जैसा दिनांक 29.10.2010 और दिनांक 3.11.2010 के चयन कमिटी के पूर्व संकल्पों में अनुसरित किया गया था और चयन कमिटी प्राप्तांक का ऐसा न्यूनतम अर्हक अंक विहित करने के लिए सशक्त थी।

32. जैसा पहले इंगित किया गया है, 65% कोटा के विरुद्ध सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) की प्रोन्नति के लिए दिनांक 22.3.2012 को रिक्तियाँ अधिसूचित की गयी थी। मुख्य न्यायाधीश के निर्देश पर चयन कमिटी नामांकित की गयी थी और तत्पश्चात चयन कमिटी ने दिनांक 12.4.2012 को अपनी बैठक की थी। दिनांक 12.4.2012 के अपने संकल्प के तहत चयन कमिटी ने प्राप्तांक के न्यूनतम अर्हक अंक को विहित करते हुए पूर्व के सन्नियम/प्रक्रिया को अपनाया था। 65% कोटा के विरुद्ध, मेधा-सह-वरीयता के आधार पर रिक्तियाँ पहले ही दिनांक 22.3.2012 को अधिसूचित की गयी थी। चयन प्रक्रिया आरंभ

होने के बाद चयन कमिटी ने पहले का संकल्प अपनाया और तद्द्वारा प्राप्तांक का न्यूनतम अर्हक अंक विहित किया। नियम 5 (iv) प्राप्तांक के न्यूनतम अर्हक अंक के नियतिकरण के प्रति मौन है। चयन प्रक्रिया आरंभ होने के बाद, चयन कमिटी अर्हक अंक के रूप में न्यूनतम स्तर विहित नहीं कर सकती है। **महाराष्ट्र, एस॰ आर॰ टी॰ सी॰ बनाम राजेन्द्र भीमराव मंदवे, (2001)10 SCC 51** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि ''चयन प्रक्रिया आरंभ हो जाने के बाद अथवा इसके मध्य में संबंधित प्राधिकारियों द्वारा खेल के नियमों अर्थात् चयन के मापदंड को परिवर्तित नहीं किया जा सकता है।''

33. के॰ मंजूश्री बनाम आंध्र प्रदेश राज्य एवं एक अन्य, (2008)3 SCC 512 पर विश्वास करते हुए श्री अनिल कुमार, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया कि जहाँ नियमावली कोई सन्नियम/प्रक्रिया विहित नहीं करती है, चयन कमिटी न्यूनतम अंक विहित करने के लिए सशक्त है। यह निवेदन किया गया था कि केवल दिनांक 19 जून, 2012 को पात्र उम्मीदवारों को सूचना देकर चयन प्रक्रिया आरंभ की गयी थी और उसके पहले भी दिनांक 12.4.2012 के संकल्प के तहत चयन कमिटी ने न्यूनतम अर्हक अंक विहित किया था और चयन प्रक्रिया में भाग लेने पर याचीगण चयन कमिटी द्वारा न्यूनतम अर्हक अंक के विहितकरण को चुनौती नहीं दे सकते हैं। **मंजूश्री मामला (ऊपर)** आंध्र प्रदेश राज्य उच्चतर न्यायिक सेवा में जिला एवं सत्र न्यायाधीशों (ग्रेड II) के 10 पदों की प्रत्यक्ष भरती से संबंधित है। प्रशासनिक कमिटी ने अपने संकल्प द्वारा पद्धति और चयन का तरीका विनिश्चत किया और इसने 75 अंकों के लिए लिखित परीक्षा के लिए और 25 अंकों के मौखिक परीक्षा के लिए उम्मीदवारों के लिए परीक्षा संचालित करने का संकल्प लिया। इसने साक्षात्कार के लिए न्यूनतम अर्हक अंक रखने का संकल्प भी किया। चयन प्रक्रिया पूरी होने के बाद नियुक्ति के लिए अनुशंसित उम्मीदवारों की सूची पूर्ण न्यायालय के समक्ष इसके द्वारा विचार किए जाने के लिए प्रस्तुत की गयी थी। पूर्ण न्यायालय साक्षात्कार कमिटी द्वारा तैयार की गयी और प्रशासनिक कमिटी द्वारा अनुमोदित सूची से सहमत नहीं हुआ और पूर्ण न्यायालय के संकल्प द्वारा उप-कमिटी का गठन किया गया था और उप-कमिटी ने अंकों को कम कर दिया और लिखित परीक्षा के अंक और साक्षात्कार के अंक के बीच के अनुपात को 3:1 से 4:1 तक घटा दिया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने चयन प्रक्रिया अपास्त करते हुए पैरा 33 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:-

> *"33. .....ge ble dkb lng ugh g fd p;u fu;fer dju oky fu;ek dk cuku okyk çkfèkdkjh fu;ek }kjk fyf[kr ijh{kk d fy, fdr lk{kkRdkj d fy, ugh U;ure vd fofgr dj ldrk g vFkok fyf[kr ijh{kk vkj lk{kkRdkj d fy, U;ure vd fofgr ugh dj ldrk gA tgk fu;e fdlh çfØ;k dk fofgr ugh djr g] p;u dfeVh U;ure vd Hkh fofgr dj ldrh g tl dFku mij fd;k x;k gA fdr ;fn p;u dfeVh lk{kkRdkj d fy, U;ure vd fofgr djuk pkgrh g] ;g p;u çfØ;k vkjHk gku d igy , lk dj ldrh gA* ***;fn p;u dfeVh u p;u çfØ;k vkjHk gku d igy doy fyf[kr ijh{kk d fy, U;ure vd fofgr fd;k g] ;g p;u çfØ;k d nkjku vFkok p;u çfØ;k d ckn vfrfjDr vko';drk ugh tkM ldrh g fd mEeInokjk dk lk{kkRdkj e U;ure vd Hkh ikIr djuk pkfg,A geu tk voèk ik;k g] og p;u çfØ;k ijh gku d ckn ekinM ifjofrr fd;k tkuk g tc lhi.k p;u çfØ;k ml vkèkkj ij vxlj gb fd lk{kkRdkj d fy, U;ure vd ugh gkxkA*****

उक्त निर्णय का निर्णयाधार प्रत्यर्थीगण का मामला आगे नहीं बढ़ाता है; दूसरी ओर, यह केवल याचीगण का मामला आगे बढ़ाता है। अर्थात यदि चयन कमिटी साक्षात्कार के लिए न्यूनतम अंक विहित करना चाहती है, इसे चयन प्रक्रिया आरंभ होने के पहले ऐसा करना चाहिए।

34. यह प्रतिवाद करने का क्षीण प्रयास किया गया था कि चयन प्रक्रिया केवल तब आरंभ हुई जब दिनांक 19.6.2012 को 93 पात्र उम्मीदवारों की सूची अधिसूचित की गयी थी और चयन कमिटी ने चयन प्रक्रिया आरंभ होने के काफी पहले अर्थात् उम्मीदवारों की सूची के प्रकाशन के पहले न्यूनतम अर्हक अंक प्राप्त करने के पूर्व के सन्नियम को दिनांक 12.4.2012 के अपने संकल्प के तहत अपनाया। प्रतिवाद कर रहे प्राईवेट प्रत्यर्थीगण के अनुसार, पात्र उम्मीदवारों की सूची के प्रकाशन की तिथि चयन प्रक्रिया आरंभ होने की तिथि है।

35. इस प्रतिवाद में कोई बल नहीं है कि चयन प्रक्रिया दिनांक 19.6.2012 को आरंभ हुई अर्थात् वह तिथि जिस पर पात्र उम्मीदवारों की सूची प्रकाशित की गयी थी। जैसा पहले इंगित किया गया है, नियम 4 (b) के अधीन मेधा-सह-वरीयता के आधार पर सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) से प्रोन्नति द्वारा 65% कोटा के विरुद्ध दिनांक 22.3.2012 को रिक्तियाँ अधिसूचित की गयी थी। मुख्य न्यायाधीश के कार्यवृत द्वारा चयन कमिटी नामांकित की गयी थी और केवल तत्पश्चात् चयन कमिटी ने दिनांक 12.4.2012 को अपना बैठक किया जिस तिथि पर चयन कमिटी ने उसी सन्नियम/प्रक्रिया को अपनाने का संकल्प किया जिसका अनुसरण पहले दिनांक 29.10.2010 और दिनांक 3.11.2010 के चयन कमिटी संकल्प द्वारा किया गया था। चयन प्रक्रिया आरंभ होने के बाद चयन कमिटी द्वारा प्राप्तांक के न्यूनतम अर्हक अंक का विहित किया जाना अननुज्ञेय है, विशेषत: जब न्यूनतम अर्हक अंक के विहितकरण के बारे में पात्र उम्मीदवारों को सूचित नहीं किया गया था।

36. रमेश कुमार बनाम दिल्ली उच्च न्यायालय एवं एक अन्य, (2010)3 SCC 104, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने साक्षात्कार के लिए न्यूनतम अर्हक अंक के विहितकरण की अनुज्ञेयता पर विचार किया। उक्त मामले में, दिल्ली में जिला न्यायाधीश कैडर में 20 रिक्तियों को भरे जाने के लिए दिल्ली उच्च न्यायालय ने विज्ञापन जारी किया। उन 20 रिक्तियों में से 13 सामान्य कोटि के उम्मीदवारों द्वारा और 3 अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों से और 4 अनुसूचित जनजाति उम्मीदवारों से भरी जानी थी। अनुसूचित जाति कोटि से आने वाले उसमें के याचीगण ने चयन प्रक्रिया का सामना किया। अनुसूचित जाति के उम्मीदवारों के लिए आरक्षित समस्त तीनों रिक्तियों को भरा नहीं जा सका था क्योंकि दिल्ली उच्च न्यायालय ने केवल एक व्यक्ति को पद के लिए उपयुक्त पाया था। उसमें के याचीगण को इस आधार पर अनुपयुक्त पाया गया था कि उन्होंने साक्षात्कार में आवश्यक न्यूनतम अंक प्राप्त नहीं किया था। दिल्ली उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली, 1970 के लिखित परीक्षा में अथवा साक्षात्कार में न्यूनतम अंक प्राप्त किया जाना प्रावधानित नहीं करता था। दिल्ली उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली का नियम 10 प्रावधानित करता है कि उच्च न्यायालय ऐसी परीक्षा ले सकता है जैसा यह आवश्यक समझता है। यह संप्रेक्षित करते हुए कि साक्षात्कार में न्यूनतम अंक प्राप्त करने के किसी सांविधिक आवश्यकता की अनुपस्थिति में उच्च न्यायालय को उक्त सिद्धांत का अनुसरण नहीं करना चाहिए था, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दिल्ली उच्च न्यायालय को याची रमेश कुमार को नियुक्ति का प्रस्ताव देने का निर्देश दिया। उक्त निर्णय के पैराओं 13 और 15 में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:-

> *"13. nxkpj.k feJk cuke mMhlk jkT; e bl U;k;ky; u mMhlk U;kf;d lok fu;ekoyh ij fopkj fd;k Fkk tk p;u d ç;ktu l lk{kkRdkj e U;ure dV&vkQ vd fofgr fd;k tkuk çkoèkkfur ugh djrh FkhA bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k fd lkeF;dkjh micèk dh vuifLFkfr e lk{kkRdkj e U;ure*

*vd dk fu;frdj.k Lo; fu;ek dk l'kkfèkr dju d rY; gkxkA mDr ekey dk fofuf'pr djr g, U;k;ky; u ch0 ,l0 ;kno cuke gfj;k.kk jkT;] ih0 d0 jkepn v;;j cuke Hkkjr l?k] vkj me'k pn 'kDyk cuke Hkkjr l?k e viu io d fu.k;k ij fo'okl fd;k ft le ;g vfHkfuèkkfjr fd;k x;k Fkk fd fu;ekoyh }kjk fofgr çfØ;k d vfrfjDr p;u d fy, ,l lfUu;e dk vfèkdfFkr dju d fy, p;u dfeVh@çkfèkdkjh dk ^^vrfufgr vfèkdkfjrk** ugh FkhA p;u lkfofèkd çkoèkkuk dk dBkj vuikyu djr g, fd;k tkuk g vkj ;fn ,l 'kfDr vFkkr ^^vrfufgr vfèkdkfjrk** dk nkok fd;k tkrk g] bl Li"V gkuk gkxk vkj bldk iBu vko';d foo{kk }kjk bl Li"V dkj.k l ugh fd;k tk ldrk g fd fu;ekoyh l ,l foiFku d vlèkk; vkj vuRØe.kh; gkfu dkfjr dju dh lHkkouk gA*

.....

*15. bl çdkj] bl fook|d ij bl çHkko dh fofèk lf{kIr dh tk ldrh g fd ;fn lkfofèkd fu;e p;u dk <x fo'k"k fofgr djr g] bldk rnulkj dBkj vuikyu djuk gkxkA ;fn fu;ek }kjk ifØ;k fofgr ugh dh x;h g vkj fofèk e dkb vU; :dkoV ugh g] l{ke çkfèkdkjh p;u dk lfUu;e vfèkdfFkr djr g, ijh{kk fofgr dj ldrk g vkj fyf[kr ijh{kk rFkk lk{kkRdkj d fy, U;ure vd fofufn"V dj ldrk gA***

37. नियम 5 (iv) प्राप्तांक के न्यूनतम अर्हक अंक का नियतिकरण प्रावधानित नहीं करता है। हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, नियमों की अनुपस्थिति में, प्राप्तांक के न्यूनतम अर्हक अंक का विहित किया जाना चयन प्रक्रिया को दूषित करता है।

38. साक्षात्कार के लिए आवंटित 50% अंक अत्यधिक हैं।

अब हम इस प्रतिवाद के गुणागुणों का परीक्षण कर सकते हैं कि 100 अंकों से 50 अंक का नियतिकरण अर्थात् मेधा-सह-वरीयता आधार पर सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) के लिए साक्षात्कार का 50% अत्यधिक है। **अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ** (i) में, यह अभिनिर्धारित करते हुए कि उच्चतर न्यायिक सेवा में कुल पद का 50% (अब 65%) मेधा-सह-वरीयता के सिद्धांत के आधार पर प्रोन्नति द्वारा भरा जाना होगा, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि **उच्च न्यायालय को उन उम्मीदवारों के विधिक ज्ञान को अभिनिश्चित एवं परीक्षित करने के लिए और निर्णयज विधि के पर्याप्त ज्ञान के साथ उनकी निरंतर दक्षता का निर्धारण करने के लिए परीक्षा निर्मित एवं विकसित करना चाहिए।** तद्नुसार, झारखंड उच्च न्यायालय ने साक्षात्कार के लिए 50 अंक और सेवा के लिए 50 अंक अर्थात् सेवा प्रोफाइल के लिए 40 अंक और सेवाकाल के लिए 10 अंक नियत करते हुए उपयुक्तता परीक्षा अर्थात् नियम 5 (iv) विकसित किया।

39. प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने अनेक निर्णयों पर यह प्रतिवाद करने के लिए विश्वास किया कि जहाँ लिखित परीक्षा उम्मीदवारों के एकेडमिक ज्ञान को परिसाक्ष्यित करेगी, वहीं मौखिक परीक्षा समग्र बौद्धिकता और सतर्कता, आदि जैसे व्यक्तिगत गुणों को सामने लाएगी जो जिला एवं अपर न्यायाधीश कैडर में न्यायिक अधिकारियों के लिए आवश्यक है।

40. चयन में साक्षात्कार के लिए अंकों के नियतिकरण के संबंध में अनेक निर्णय मोटे तौर पर तीन कोटियों में आते हैं:-

(i) 'k{kf.kd lLFkkuk e ço'k d fy, p;u(

(ii) lok e fu;ktu d fy, p;u(

(iii) eèkk& lg&ojh;rk d vkèkkj ij çkUufr d vxy Lrj d fy, p;uA

41. यह सुनिश्चित है कि साक्षात्कार पद विशेष के लिए उम्मीदवार की उपयुक्तता निर्धारित करने का सर्वोत्तम ढंग है क्योंकि यह सतर्कता, साधन संपन्नता, निर्णय लेने की क्षमता, नेतृत्व के गुण, आदि जैसा उम्मीदवारों की समग्र बौद्धिकता एवं निजी गुणों को सामने लाता है। **लीला धर बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य, (1981)4 SCC 159,** में साक्षात्कार लेने के महत्व का कथन माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सारगर्भित रूप से किया गया है:–

*"5. ..... vc ;g leku;rk çkIr g fd fyf[kr ijh{kk mEehnokj d Kku ,o ckf)d {kerk dk fuèkkj.k djrh g] mEehnokj dh lex ckf)d ,o futh x.kk dk fuèkkj.k dju d fy, lk{kkRdkj ijh{kk cgeY; gA ;|fi fyf[kr ijh{kk dk lk{kkRdkj ijh{kk d mij fuf'pr lfHkUu ykHk g] fQj Hkh vHkh rd ,lh dkbZ fyf[kr ijh{kk ugh g tk mEehnokj dh igydneh] lrdrk] l>&c>] fo'oluh;rk] lg;kfxrk] Li"V ,o rkfdd çLrfrdj.k dh {kerk] ppk e n{krk] cBd ,o vU; d lkFk C;kgkj dju e n{krk] vudyu'khyrk] fu.k; yu dh {kerk] urRo {kerk] ckf)d ,o ufrd v[kMrk dk eY;kfdr dj ldrh gA bu x.kk e l dN dk eY;kdu] xyrh dh dN xtkb'k d lkFk] lk{kkRdkj ckM d xBu ij vfèkd fuHkj djr g, lk{kkRdkj ijh{kk }kjk fd;k tk ldrk gA***

42. अशोक कुमार यादव एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य, (1985)4 SCC 417, में यही दृष्टिकोण अभिव्यक्त किया गया था। उक्त मामले में, हरियाणा सिविल सेवा (कार्यपालिका) एवं अन्य सहयोगी सेवाओं के लिए लिखित परीक्षा एवं साक्षात्कार के आधार पर चयन किया गया था। भूतपूर्व सेवा अधिकारियों के मामले में साक्षात्कार के लिए अंकों का आवंटन 33.3% और अन्य उम्मीदवारों के मामले में 22.2% था। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने महसूस किया कि भूतपूर्व सेवा अधिकारियों के लिए साक्षात्कार के लिए 33.3% अंक और अन्य उम्मीदवारों के लिए 22.2% अंक का आवंटन अत्यधिक था और कि इसे भूतपूर्व सेवा अधिकारियों के लिए 25% और अन्य उम्मीदवारों के लिए 12.2% के परे नहीं होना चाहिए। **अशोक कुमार यादव के मामले** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

*"23. .....çfr;kfxrk ijh{kk vuU; :i l fyf[kr ijh{kk ij vkèkkfjr gk ldrh g vFkok ;g vuU; :i l lk{kkRdkj ij vkèkkfjr gk ldrh g vFkok ;g nkuk dk feJ.k gk ldrh gA ;g fu.k; doy ljdkj dk djuk g fd fn, x, ekey e fdl çdkj dh çfr;kfxrk ijh{kk lefpr gkxhA---------**;g vfèkdfFkr djuk U;k;ky; dk dke ugh g fd D;k lk{kkRdkj ijh{kk yh tkuh pkfg, vFkok lk{kkRdkj ijh{kk d fy, fdruk vad fn;k tkuk pkfg,A fu'p; gh] vad U;u gkuk gkxk rkfd euekuiu d vkjki l cpk tk ld fdr ;g lno vko';d ugh gA** ,l in vkj fu;fDr gk ldr g tgk lk{kkRdkj ijh{kk p;u dh lefpr i)fr gk ldrh g---------*

25. vc ;fn fn, x, ekey e fyf[kr ijh{kk vkj lk{kkRdkj ijh{kk nkuk dk lefpr p;u d vko';d fo'k"krk d :i e Lohdkj fd;k tkrk g] mudk fn, x, ijLij vfèkeku d çfr ç'u mnHkr gk ldrk gA-------fyf[kr ijh{kk d fo#) lk{kkRdkj ijh{kk dk fn, tku oky lVhd vfèkeku d lcèk e dkb dBkj fu;e ugh gk ldrk gA ;g lok dh vko';drk] fofgr dh x;h U;ure vgrk] vk; leg ft ll p;u fd;k tkuk g] fudk; ft ldk lk{kkRdkj ijh{kk yu dk VkLd

*U;Lr fd;k tkuk çLrkfor g vkj vud vU; dkjdk d vulkj çR;d lok d fy, fHkUu gkxkA ;g vko';d :i l fo'k"kKk }kjk fuèkkfjr fd;k tkuk okyk fo"k; gA U;k;ky; d ikl vko';d midj.k ugh g vkj bl ij mn?kk"k.kk djuk U;k;ky; d fy, lgh ugh gkxk tc rd] yhyk èkj ekey e fpulik jMMh] U;k;efr d 'kCn dk mi;kx djr g,] fl) vFkok Li"V çNUu gr d lkFk vfr';kDr vfèkeku ugh fn;k x;k gA** (tkj fn;k x;k)*

43. अशोक कुमार यादव के मामले और अन्य निर्णयों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि लिखित परीक्षा के विरुद्ध साक्षात्कार परीक्षा को दिए जाने वाले सटीक अधिमान के संबंध में कोई कठोर नियम अधिकथित नहीं किया जा सकता है और उक्त अधिमान सेवा की आवश्यकतानुसार प्रत्येक सेवा के लिए भिन्न होगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आगे अभिनिर्धारित किया कि न्यायालय के पास आवश्यक उपकरण नहीं है और इस पर उद्घोषणा करना न्यायालय के लिए सही नहीं होगा। यह अधिकथित करना न्यायालय की सक्षमता के अंतर्गत नहीं है कि क्या साक्षात्कार परीक्षा बिल्कुल ली जानी चाहिए अथवा साक्षात्कार परीक्षा के लिए कितने अंक दिए जाने चाहिए और इसे विशेषज्ञों की बुद्धिमत्ता पर छोड़ देना होगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से अभिनिर्धारित किया कि साक्षात्कार के लिए आवंटित अंक न्यून होना होगा ताकि मनमानेपन के आरोप से बचा जा सके।

44. अजय हसिया बनाम खलिद मुजीब सेहरावर्दी एवं अन्य, (1981)1 SCC 722, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने दृष्टिकोण अपनाया कि साक्षात्कार के लिए कुल अंक के 33.3% के रूप में उच्च प्रतिशत का आवंटन युक्तियुक्त अनुपात के परे था और उम्मीदवारों के चयन को मनमाना करार दिया। **ए॰ पेरियाकरुप्पन एवं एक अन्य बनाम तमिलनाडू राज्य एवं अन्य, (1971)1 SCC 38,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि साक्षात्कार के लिए 275 अंकों में से 75 अंक (27.27%) कर्णांकित करना प्रथम दृष्टया अत्यधिक प्रतीत होता है। **लीला धर मामले** में न्यायालय ने **अजय हसिया मामले** को निर्दिष्ट किया जहाँ न्यायालय ने पाया कि मौखिक साक्षात्कार के लिए कुल अंक के 15% से अधिक का आवंटन मनमाना और अयुक्तियुक्त होगा और संवैधानिक रूप से अवैध के रूप में विखंडित कर दिए जाने का दायी होगा। न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि संचालित की गयी साक्षात्कार परीक्षा को निष्पक्ष, न्यायोचित, युक्तियुक्त और मनमानेपन के आरोपों से मुक्त अभिनिर्धारित करना होगा।

45. प्रत्यर्थीगण की ओर से **मनीष कुमार शाही बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (2010) 12 SCC 576,** और **के॰ एच॰ सिराज बनाम केरल उच्च न्यायालय एवं अन्य, (2006)6 SCC 395** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों पर यह न्यायोचित ठहराने के लिए काफी विश्वास किया गया था कि साक्षात्कार के लिए 50 अंक का आवंटन वैध है और उक्त दोनों निर्णयों पर इस आधार पर जोर दिया गया है कि ये न्यायिक सेवा से संबंधित हैं। आरंभ में ही, यह इंगित करना होगा कि वे दोनों निर्णय प्रत्यक्ष भरती की चयन प्रक्रिया से संबंधित हैं। **के॰ एच॰ सिराज** मामला केरल न्यायिक सेवा में मुंसिफ कैडर की नियुक्ति से संबंधित है जिसमें लिखित परीक्षा प्रत्येक के लिए 100 अंक वाले चार विषयों से गठित है। उम्मीदवार के सामान्य ज्ञान, विधि के सामान्य सिद्धांतों पर पकड़ और उपयुक्तता विनिश्चित करने के लिए 50 अंकों की मौखिक परीक्षा भी ली जानी थी। इस प्रकार, साक्षात्कार के लिए नियत अंक केवल 12.5% थे जबकि **मनीष कुमार शाही मामले** में साक्षात्कार के लिए आवंटित अंक कुल अंक का 19% था। साक्षात्कार के लिए नियत अंकों के उस प्रतिशत पर विचार करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने साक्षात्कार के लिए अंकों के आवंटन को मान्य ठहराया।

46. तब प्रत्यर्थीगण ने **के॰ ए॰ नागमणि बनाम इंडियन एयरलाइंस एवं अन्य, (2009)5 SCC 515,** पर काफी विश्वास किया जहाँ माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने साक्षात्कार के लिए 50 अंक और

गोपनीय रिपोर्ट के लिए 50 अंक के मापदंड को मान्य ठहराया जिसे इंडियन एयरलाइंस में वरीय प्रबंधकीय पद के लिए अपनाया गया था। **के॰ ए॰ नागमणि मामले** में इंडियन एयर लाइंस में वरीय प्रबंधकीय पद पर प्रोन्नति पर विचार किया और भरती एवं प्रोन्नति नियमावली की व्याख्या करने के बाद माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफों 44 और 45 पर अभिनिर्धारित किया कि उप-प्रबंधक का पद ''चयन ग्रेड पद'' है और चयन ''मेधा पर कठोर चयन'' है और अभिनिर्धारित किया कि ऐसा चयन ग्रेड पर प्रोन्नति ग्रेडों अथवा संबंधित ग्रेड के नीचे के अंतर संबंधित ग्रेडों में कर्मचारियों के बीच में से मेधा पर चयन के आधार पर की जाती है।

47. के॰ ए॰ नागमणि मामले में निर्णयाधार वर्तमान मामले पर प्रयोज्य नहीं हो सकता है जहाँ हमारा सरोकार मेधा-सह-वरीयता के आधार पर जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीशों के पद पर सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) की प्रोन्नति के साथ है और ऐसी प्रोन्नति को ''मेधा पर कठोर चयन'' नहीं कहा जा सकता है जैसा **के॰ ए॰ नागमणि** मामले में अभिनिर्धारित किया गया है।

48. इस मोड़ पर, हम **महानिदेशक, भारतीय कृषि शोध परिषद् एवं अन्य बनाम डी॰ सुन्दर राजू, (2011)6 SCC 605,** में दिए गए निर्णय को लाभदायी रूप से निर्दिष्ट कर सकते हैं। उक्त मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि साक्षात्कार के लिए 50% अंक का आवंटन अत्यधिक और बिल्कुल अन्यायोचित था। उक्त मामला भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा विरचित 'कैरियर एडवान्समेंट स्कीम' के अधीन प्रिंसिपल वैज्ञानिक के पद पर प्रोन्नति से संबंधित है। दो स्रोत हैं जिनमें से प्रिंसिपल वैज्ञानिक के पद पर चयन किया जाता है (i) प्रत्यक्ष भरती और (ii) निजी मेधा के आधार पर वरीय वैज्ञानिक के पद से प्रोन्नति। उसमें का प्रत्यर्थी आई॰ सी॰ ए॰ आर॰ की सेवा में वरीय वैज्ञानिक था और उसने 'कैरियर एडवान्समेंट स्कीम' के अधीन निर्धारण एवं साक्षात्कार के लिए स्वयं को प्रस्तुत किया था। उसमें के प्रत्यर्थी ने 100 अंक में से केवल 49 अंक प्राप्त किया था और उसे प्रिंसिपल वैज्ञानिक के पद पर प्रोन्नति के अयोग्य पाया गया था। प्रत्यर्थी ने केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण, बंगलोर पीठ के समक्ष इसे चुनौती दिया और अधिकरण ने स्पष्टतः अभिनिर्धारित किया कि आई॰ सी॰ ए॰ आर॰ ने निजी साक्षात्कार के लिए 50% अंक आवंटित करने में मनमाने तरीके से कृत्य किया था और उसमें के प्रत्यर्थी के गैर-चयन को अपास्त कर दिया गया था। केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण के आदेश को उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गयी थी और उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि साक्षात्कार के लिए 50% अंक अत्यधिक था जिसने चयन प्रक्रिया को मनमाना बना दिया और उच्च न्यायालय ने केंद्रीय प्रशासनिक अधिकरण के निर्णय को मान्य ठहराया। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष उच्च न्यायालय के निर्णय को चुनौती दिया। **अशोक कुमार यादव एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य, (1985)4 SCC 417,** को निर्दिष्ट करते हुए, आई॰ सी॰ ए॰ आर॰ द्वारा दाखिल अपील खारिज करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराओं 41 और 42 पर निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:-

> *"41. fofèkd voLFkk] tk bl U;k;ky; d fuEufyf[kr ekeyk vFkkr v'kkd dekj ;kno] vt; gfl;k] yhyk èkj vkj ,0 ifj;kd#liu d lefpr loh{k.k d ckn lkeu vkrh g] dh nf"V e vk{kfir fu.k; e dkbZ nk"k ugh ik;k tk ldrk gA fçfliy oKkfud d in d fy, lk{kkRdkj d fy, vkofVr 50% vd vR;fèkd Fkk vkj bl U;k;ky; d fu.k;k dh J[kyk l vulfjr lfuf'pr fofèkd çfriknuk d foijhr FkkA*
>
> *42. **vihykFkhx.k lk{kkRdkj d fy, 50% vd vkofVr dju e i.krh vU;k;kfpr Fk** fo'k"krk tc vihykFkhx.k u çR;Fkh dk ;g çdV rd ugh fd;k Fkk fd mDr in d fy, mEehnokj dh mi;Drrk dk eY;kdu dju d fy,*

*lk{kkRdkj Hkh fy;k tk,xkA çR;Fkh dk eY;kdu dju d fy, p;u dfeVh }kjk fodfl r dh x;h çfØ;k fcYdy euekuh Fkh vkj lfuf'pr fofèkd voLFkk d foijhr FkhA** (tkj fn;k x;k)*

49. इसी प्रकार से, **मोहिंदर सेन गर्ग बनाम पंजाब राज्य, (1991)1 SCC 662,** में साक्षात्कार परीक्षा के लिए कुल अंकों के 25% का आवंटन मनमाना और अत्यधिक अभिनिर्धारित किया गया था। **पी॰ मोहनन पिल्लई बनाम केरल राज्य, (2007)9 SCC 497,** में साक्षात्कार के लिए नियत 50% अंक अत्यधिक अभिनिर्धारित किया गया था।

50. हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, साक्षात्कार के लिए कुल अंक का 50% आवंटित करने वाला नियम 5 (iv) अनेक निर्णयों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए संगत दृष्टिकोण के अनुकूल नहीं है। **अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ (1)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने उच्च न्यायालयों को उम्मीदवारों के विधिक ज्ञान को अभिनिश्चित एवं परीक्षित करने के लिए और निर्णयज विधि के पर्याप्त ज्ञान के साथ उनकी निरंतर दक्षता को निर्धारित करने के लिए परीक्षा निर्मित एवं विकसित करने का निर्देश दिया। उपयुक्तता परीक्षा का अभिप्राय यह नहीं है कि साक्षात्कार 50 अंक का होगा जो अनेक मामलों में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए संगत दृष्टिकोण के अनादर में होगा।

51. इस मोड़ पर, हम झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली के नियम 5 (v) को लाभदायी रूप से निर्दिष्ट कर सकते हैं जो सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के लिए प्रक्रिया अनुबंधित करता है जहाँ शुद्धत: मेधा आधार पर चयन किया जाना है। जैसी चर्चा पहले की गयी है, एल॰ सी॰ ई॰ के लिए लिखित परीक्षा चार भागों से गठित होती है और प्रत्येक भाग के लिए 25 अंक होते हैं और केवल लिखित परीक्षा में न्यूनतम 40% अंक प्राप्त करने वाले उम्मीदवारों को साक्षात्कार परीक्षा के लिए बुलाया जाएगा। सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के लिए भी जो कठोरतापूर्वक मेधा के आधार पर है, नियम 5 (v) साक्षात्कार के लिए केवल 25 अंक विहित करता है (जिसका अर्थ है कुल अंक का 20%) और साक्षात्कार में छह अंक प्राप्त करने वाला उम्मीदवार चयन के लिए उपयुक्त माना जाएगा। जब सीमित प्रतियोगिता परीक्षा में साक्षात्कार के लिए केवल 20% अंक अनुबंधित किया गया है, हमारा दृष्टिकोण है कि मेधा–सह–वरीयता के आधार पर प्रोन्नति के लिए साक्षात्कार के लिए 50% अंक नियत करना अत्यधिक है, साक्षात्कार के लिए नियत ऐसा उच्च अंक न्यायिक अधिकारियों पर प्रतिकूल प्रभाव कारित करते हुए प्रवर्तित होता है।

52. अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ (1) में जो अनुबंधित किया गया है वह उम्मीदवारों की उपयुक्तता और निर्णयज विधि के पर्याप्त ज्ञान के साथ उनकी निरंतर दक्षता का निर्धारण है। आवश्यक जो है वह उपयुक्तता है। निश्चय ही, निरंतर सेवा के लिए उपयुक्तता और दक्षता का कुछ मानक आवश्यक है। किंतु जब अधिकारी ने अनेक वर्षों तक सेवा दिया है, सेवा की लंबी अवधि के कारण अधिकारियों की उपयुक्तता निर्धारित करना उच्च न्यायालय के लिए आसान होगा। **मलिक मजहर सुल्तान एवं एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग एवं अन्य, (2008)17 SCC 703,** में अधीनस्थ न्यायालयों में रिक्तियों के उपर चिंता अभिव्यक्त करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने समय अनुसूची विहित करते हुए सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) से प्रोन्नति द्वारा भरे जाने के लिए प्रोन्नति के विरूद्ध 50% (अब 65%) रिक्तियों के संबंध में जिला न्यायाधीश के कैडर में अधीनस्थ न्यायालयों में समस्त रिक्तियों को भरने के लिए कतिपय निर्देश जारी किया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित मापदंडों को अधिकथित किया है:–

ekinM \$

(a) foxr ikp o"kk dk ,0 lh0 vkj0(

(b) fn, x, fu.k;k dk eY;kdu(vkj

(c) ekf[kd lk{kkRdkj e çn'ku

53. मलिक मजहर सुल्तान एवं एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग एवं अन्य, (2009)17 SCC 530, में बिहार राज्य में रिक्त पड़े जिला न्यायाधीशों के अनेक पद और (25% सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के अधीन) सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) की प्रोन्नति के लिए उपलब्ध 60 रिक्तियों पर विचार करते हुए माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पटना उच्च न्यायालय को वरीयता-सह-मेधा के आधार पर सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) की प्रोन्नति द्वारा उन पदों को भरने का निर्देश दिया और आगे निर्देश दिया कि जब कभी सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के लिए जिला न्यायाधीशों की कोटि में प्रोन्नत किए जाने के लिए उम्मीदवार उपलब्ध नहीं होते हैं, ऐसे पदों को वरीयता-सह-मेधा के आधार पर सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) से उपलब्ध उम्मीदवारों के बीच में से प्रोन्नति द्वारा भरा जाए और उन रिक्तियों को भरने के लिए उच्च न्यायालय को अत्यावश्यक कदमों को उठाने का निर्देश दिया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:-

> *"3. ge n[kr g fd fty U;k;kèkh'kk dh vud fjfDr;k fjDr iMh g D;kfd mPp U;k;ky; }kjk le; ij mu ink ij çkUufr ugh dh tk jgh gA fty U;k;kèkh'kk d vud fjDr ink ij fopkj djr g, mPp U;k;ky; dk ojh; rk&lg&eèkk d fl)kr dk è;ku e j[kr g, bu fjfDr;k dk Hkju d fy, le; iod dkjokb djuk pkfg,A mPp U;k;ky; flfoy U;k;kèkh'k (lhfu;j fMfotu) dk çkUufr l budkj dj ldrk g doy ;fn og çkUur fd, tku d mi;Dr ugh g vkj fty U;k;kèkh'k d in ij flfoy U;k;kèkh'kk (lhfu;j fMfotu) dk çkUufr nu e lno ojh;rk dh vfèkekuh Hkfedk gkuh pkfg,A ;fn le; ij fty U;k;kèkh'kk d ink dk ugh Hkjk tkrk g] lHkkouk g fd l= ekeyk dk le; iod fopkj.k ugh gkxk tk rn}kjk U;k; çnku dju okyh ç.kkyh dh li.k çfØ;k dk foyfcr djxkA ge mPp U;k;ky; l fty U;k;kèkh'kk d ink ij çkUufr ,o budk Hkju d ekey e 0;ogkfjd gku dk vujkèk djr gA-------***

54. मलिक मजहर सुल्तान के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निर्देश 25% सीमित प्रतियोगिता परीक्षा के अधीन उपलब्ध रिक्तियों की संख्या के संदर्भ में था। 65% कोटा के विरुद्ध सिविल न्यायाधीशों (सीनियर डिविजन) की प्रोन्नति पर विचार करते हुए **मलिक मजहर सुल्तान एवं एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग एवं अन्य, (2009)17 SCC 530,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित सिद्धांत अर्थात् वरीयता के सिद्धांत को ध्यान में रखना होगा।

55. मलिक मजहर सुल्तान एवं एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग एवं अन्य, (2009)17 SCC 583, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने आंध्र प्रदेश राज्य अधीनस्थ न्यायिक सेवा के कैडर में 18 सिविल न्यायाधीशों (जूनियर डिविजन), जिन्हें सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) कैडर में प्रोन्नति देने से इनकार किया गया था, के मामले पर विचार किया। उसमें के आवेदकों द्वारा आग्रहित मुख्य प्रतिवाद यह था कि सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) जो सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) कैडर में प्रोन्नति के लिए विचाराधीन क्षेत्र में थे, को मौखिक साक्षात्कार के अध्यधीन किया गया था और साक्षात्कार में प्राप्त अंकों के आधार पर प्रोन्नति दी गयी थी और आवेदक सहित 33 उम्मीदवारों को प्रोन्नति देने से इनकार किया गया था।

56. मलिक मजहर सुल्तान एवं एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग एवं अन्य, (2009)17 SCC 583, में जब आंध्र प्रदेश राज्य अधीनस्थ न्यायिक सेवा के सदस्यों द्वारा यह शिकायत की गयी थी कि उन्हें मौखिक साक्षात्कार के अध्यधीन किया गया था और साक्षात्कार में प्राप्त अंकों के आधार पर प्रोन्नति दी गयी थी जिसके द्वारा उन्हें प्रोन्नति देने से इनकार किया गया था, माननीय सर्वोच्च

न्यायालय यह कहने की सीमा तक गया है कि प्रोन्नति केवल ए० सी० आर० के मूल्यांकन और वरीयता पर ही आधारित होनी चाहिए। माननीय न्यायाधीशों ने मलिक मजहर सुल्तान मामले में दिए गए पूर्व निर्देशों पर विचार करते हुए निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

"5. mPp U;k;ky; u ;g dFku djr g, çfr'kiFk i=@ mÙkj nkf[ky fd;k g fd mUgku efyd etgj lYrku (3) cuke m0 ç0 ykd lok vk;kx e fnukd 4.1.2007 dk ikfjr fu.k; e bl U;k;ky; }kjk tkjh ekxn'kd fl)krk dk vulj.k fd;k gA mDr fu.k; e] flfoy U;k;kèkh'k (lhfu;j fMfotu) d dMj e çkUufr d lcèk e bl U;k;ky; u [kM (4) d vèkhu fun'k fn;k FkkA ;g dFku djrk g fd çkUufr }kjk Hkj tku d fy, flfoy U;k;kèkh'k (lhfu;j fMfotu) dMj e fjfDr;k dk Hkju d ç;ktu l%

*^^---------- lk{kkRdkj ekinM***

vkj vkx dFku fd;k x;k Fkk%

^^(a) foxr ikp o"kk dk ,0 lh0 vkj0]

(b) fn, x, fu.k;k dk eY;kdu(vkj

*(c) ekf[kd lk{kkRdkj e çn'kuA***

6. flfoy U;k;kèkh'k (tfu;j fMfotu) dMj l flfoy U;k;kèkh'k (lhfu;j fMfotu) e çkUufr vèkhuLFk U;kf;d lok e çFke çkUufr pj.k gA bu leLr vfèkdkfj;k u jkT; vèkhuLFk lok e ikp o"kk l vfèkd rd dke fd;k gh gkxk vkj dN ekeyk e mUgku doy flfoy U;k;kèkh'k (tfu;j fMfotu) d :i e 10 o"kk dh lok ijh dju d ckn flfoy U;k;kèkh'k (lhfu;j fMfotu) d :i e çkUufr ik;h gkxhA vr% mudk çn'ku mud foxr ,0 lh0 vkj0 d vkèkkj ij eY;kfdr fd;k tkrk g vkj vko';drk dh fLFkfr e eY;kdu d ç;ktu l mud fu.k;k dk ifj'kh yu Hkh fd;k tk ldrk gA fdr ge ugh le>r g fd bu vfèkdkfj;k dk çkUufr d ç;ktu l ekf[kd lk{kkRdkj d vè;èkhu fd;k tkuk pkfg,A ***lkekU;r% çkUufr ,0 lh0 vkj0 d eY;kdu vkj ojh;rk d vkèkkj ij nh tkrh gA ge ugh le>r g fd flfoy U;k;kèkh'k (lhfu;j fMfotu) d :i e mudh çkUufr d ç;ktu l mUg ekf[kd lk{kkRdkj d vè;èkhu fd;k tk,xkA*** *mDr fu.k; e bl U;k;ky; dk fun'k fd çkUufr d ç;ktu l ekf[kd lk{kkRdkj ij vkèkkfjr mud çn'ku dk foykfir fd, x, d :i e ekuk tk,xkA ;fn fdlh mPp U;k;ky;@jkT; ljdkj u bl U;k;ky; d fun'k d vulj.k e dkb fu;e fojfpr fd;k g] ml fu;e dk Hkh foykfir fd, x, d :i e ekuk tk,xkA** (tkj fn;k x;k)*

57. उक्त मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि ''सामान्यत:'' प्रोन्नतियाँ ए० सी० आर० और वरीयता के मूल्यांकन के आधार पर दी जाती है।'' यद्यपि उक्त संप्रेक्षण सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) से सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) के पद पर प्रोन्नति के संदर्भ में था, हमारा दृष्टिकोण है कि उक्त निर्णय के निर्णयाधार कि सामान्यत: प्रोन्नतियाँ ए० सी० आर० और वरीयता के मूल्यांकन के आधार पर दी जाती है, को दृष्टि में रखना होगा।

58. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अधिकथित मापदंड के मुताबिक, यद्यपि जोर उपयुक्तता पर है, वरीयता को भी दृष्टि में रखा जाना है। वस्तुत:, झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली स्वयं वरीयता पर जोर देती है। नियम 5 (iv) का परन्तुक प्रावधानित करता है कि उपयुक्त उम्मीदवारों की परस्पर उपयुक्तता नियमावली के नियम 8 (b) के निबंधनानुसार विनिश्चित की जाएगी। नियम 8 (b) प्रावधानित करता है

कि ''प्रोन्नत किए गए अधिकारियों की परस्पर वरीयता झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली के अधीन उनकी नियुक्ति के तुरन्त पहले झारखंड न्यायिक सेवा में विद्यमान उनकी वरीयता के आधार पर विनिश्चित की जाएगी।'' नियम 5 (v) के निबंधनानुसार, सीमित प्रतियोगिता परीक्षा में सफल उम्मीदवारों की परस्पर वरीयता भी नियम 8 (b) के निबंधनानुसार विनिश्चित की जाएगी। नियम 8 (b) के निबंधनानुसार परस्पर वरीयता नियत किया जाना स्पष्टत: दर्शाता है कि झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली वरीयता पर जोर देती है जैसा यह झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा नियमावली के अधीन उनकी नियुक्ति के तुरन्त पहले झारखंड न्यायिक सेवा में विद्यमान है।

59. हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, मेधा-सह-वरीयता के आधार पर 65% कोटा के विरुद्ध जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के रूप में सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) की प्रोन्नति के लिए कुल अंक के 50% का आवंटन अत्यधिक है और इसने उन अधिकारियों पर गंभीर प्रतिकूलता कारित किया है जिन्होंने अनेक वर्षों तक सेवा दिया है और इस आधार पर भी प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 का चयन अपास्त करना ही होगा।

60. प्रत्यर्थीगण का प्रतिवाद यह है कि याचीगण, जिन्होंने चयन प्रक्रिया में भाग लिया है, को चयन के मापदंड को चुनौती देने से विर्वंधित किया जाता है और यदि याचीगण की कोई वैध आपत्ति थी, उन्हें विज्ञापन को और इसमें भाग लिए बिना चयन प्रक्रिया को चुनौती देना चाहिए था जैसा **धनंजय मलिक एवं अन्य बनाम उत्तरांचल राज्य एवं अन्य, (2008)4 SCC 171 एवं एम॰ वी॰ थिमय्या एवं अन्य बनाम संघ लोक सेवा आयोग एवं अन्य, (2008)4 SCC 119,** मामलों में दिए गए निर्णयों में अभिनिर्धारित किया गया है। **मनीष कुमार शाही बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, (2010)12 SCC 576,** मामले में दिए गए निर्णय पर भी विश्वास किया गया है जिसमें उम्मीदवारों जिन्होंने चयन प्रक्रिया में भाग लिया था में से एक द्वारा भरती प्रक्रिया और पटना उच्च न्यायालय द्वारा बिहार सिविल न्यायाधीश, जूनियर डिविजन के चयन को चुनौती दी गयी थी। पैरा 16 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि ''यह अच्छी तरह जानते हुए कि साक्षात्कार परीक्षा के लिए 19% अंक कर्णांकित किए गए हैं, चयन प्रक्रिया में भाग लेने के बाद याची मापदंड अथवा चयन प्रक्रिया को चुनौती देने का हकदार नहीं था और याची का आचरण स्पष्टत: उसे चयन प्रक्रिया को चुनौती देने का गैर हकदार बनाता है।''

61. वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों में, चयन प्रक्रिया में याची की भागीदारी चयन प्रक्रिया को चुनौती देने से विवंध के रूप में प्रवर्तित नहीं होगी। जैसा चर्चा पहले की गयी है, न्यूनतम 40% अर्हक अंक का नियतिकरण नियमावली द्वारा प्रावधानित नहीं किया गया है और इसलिए यह अननुज्ञेय था। दिनांक 22.3.2012 को रिक्तियाँ अधिसूचित किए जाने के बाद, नियुक्ति कमिटी ने दिनांक 12.4.2012 को की गयी बैठक में संकल्प लिया था कि पूर्व चयन प्रक्रिया में अपनायी गयी प्रक्रिया का अनुसरण किया जाएगा जो अन्य बातों के साथ न्यूनतम अर्हक अंक का नियतिकरण सम्मिलित करता था। याचीगण को कुल के न्यूनतम 40% अर्हक अंक के नियतिकरण के बारे में सूचित नहीं किया गया था। याचीगण के अनुसार, उन्हें सिविल अपील सं॰ 1867 वर्ष 2006 में आई॰ ए॰ सं॰ 123/2013 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय में तृतीय प्रत्यर्थी द्वारा दाखिल उत्तर शपथ पत्र से पूर्वोक्त तथ्य का पता चला। जैसा याचीगण के विद्वान वरीय अधिवक्ता द्वारा सही प्रकार से प्रतिवाद किया गया है, इस तथ्य कि रिक्तियों को अधिसूचित किए जाने के बाद ऐसा मापदंड अनुबंधित किया गया था, के साथ न्यूनतम अर्हक अंक प्राप्त करने की किसी सांविधिक आवश्यकता की अनुपस्थिति में, वह भी उम्मीदवारों को सूचना दिए बिना, उपमति का प्रश्न ही उद्‌भूत नहीं होता है।

62. राजेश कुमार गुप्ता एवं अन्य बनाम उ॰ प्र॰ राज्य एवं अन्य, (2005)5 SCC 172, में दिए गए निर्णय में विशेष मूल अध्यापक प्रमाणपत्र (बी॰ टी॰ सी॰ प्रशिक्षण) प्राप्त करने के लिए चयन हेतु राज्य सरकार द्वारा आवेदन आमंत्रित किए गए थे जहाँ उपयुक्त उम्मीदवारों को सहायक शिक्षकों के रूप में चयनित एवं नियुक्त किया गया था और उम्मीदवारों की राज्य स्तरीय मेधा सूची तैयार करने के लिए आरंभिक नीतिगत निर्णय लिया गया था और बाद में जिलावार मेधा सूची तैयार करने का नीतिगत निर्णय लिया गया था। उम्मीदवारों में से कुछ ने, जिन्होंने राज्य स्तरीय मेधा सूची की तैयारी के लिए निर्णय के आधार पर आवेदन दिया था, स्वयं को जिलावार मेधा सूची की तैयारी के मापदंड में परिवर्तन के परिणामानुसार विचार किए जाने से छोड़ दिया गया पाया और जब मेधा सूची अधिसूचित की गयी थी, उसमें अपना नाम नहीं पाने पर उन्होंने राज्य सरकार की कार्रवाई को चुनौती देते हुए रिट याचिका दाखिल किया। उक्त मामले में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि विवंध का प्रश्न ही नहीं था और न ही वचन विबंध का कोई अभिवचन किया जा सकता था। वर्तमान मामले में, रिक्तियों को अधिसूचित किए जाने और चयन प्रक्रिया आरंभ होने के बाद न्यूनतम अर्हक अंक विहित किया गया था जिसे अधिकारियों को अधिसूचित नहीं किया गया था और इसलिए, याचीगण के विरुद्ध विबंध/उपमति का अभिवचन नहीं किया जा सकता है।

63. प्रत्यर्थीगण द्वारा आगे यह आपत्ति की गयी है कि तृतीय प्रत्यर्थी द्वारा किए गए अनुशंसा के अनुसरण में 53 उम्मीदवारों में से 28 उम्मीदवारों को पहले ही दिनांक 27.9.2012 की अधिसूचना के तहत प्रोन्नत किया गया था और कि याचीगण ने उक्त अधिसूचना को चुनौती नहीं दिया है और न ही उन 28 अधिकारियों को पक्षकार बनाया है जो अक्टूबर, 2012 से जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीशों के प्रोन्नत पद पर कार्यरत है। प्रत्यर्थीगण का प्रतिवाद यह है कि चयन प्रक्रिया को आंशिक रूप से चुनौती नहीं दी जा सकती है और जब याचीगण ने पूर्व अधिसूचना को चुनौती नहीं दिया है, प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26, जिनके नामों को उसी चयन प्रक्रिया में अनुशंसित किया गया था, की प्रोन्नति को चुनौती देने की छूट उनको नहीं है।

64. उसके प्रत्युत्तर में, याचीगण की ओर से यह निवेदन किया गया था कि दिनांक 27.9.2012 की पूर्व की अधिसूचना द्वारा इस प्रकार प्रोन्नत 28 अधिकारियों में से अधिकतम अधिकारी (3-4 को छोड़कर) याचीगण से वरिष्ठ थे और इसलिए इसको चुनौती नहीं दी गयी थी। इसके अतिरिक्त, चयन प्रक्रिया को पृथक किया जा सकता है और उस सीमा तक चुनौती दी जा सकती है जहाँ तक यह दोषपूर्ण है।

65. नियमावली के नियमों 4 (b) और 5 (iv) की शक्तिमत्ता को मनमाने और भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के उल्लंघनकारी के रूप में चुनौती दी गयी है। याचीगण का मामला यह है कि साक्षात्कार के लिए 50 अंक का आवंटन युक्तियुक्त अनुपात के परे है जो **अखिल भारतीय न्यायाधीश संघ एवं अन्य बनाम भारत संघ एवं अन्य, (2002)4 SCC 247,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी निर्देशों का उल्लंघनकारी है। याचीगण का आगे मामला यह है कि **मलिक मजहर सुल्तान एवं एक अन्य बनाम उत्तर प्रदेश लोक सेवा आयोग एवं अन्य, (2008)17 SCC 703,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने तीन मापदंडों अर्थात् (i) ए॰ सी॰ आर॰, (ii) निर्णयों का मूल्यांकन और (iii) साक्षात्कार को विनिर्दिष्ट किया था और याचीगण समझते हैं कि तीनों मापदंडों में से प्रत्येक को समान अनुपात में निर्धारित किया जाना चाहिए और चूँकि चुनौती के अधीन नियमों ने उन तीनों मापदंडों को समान अनुपात नहीं दिया है, नियम भारत के संविधान के अनुच्छेद 14 के उल्लंघनकारी हैं और इस प्रकार अधिकारातीत हैं।

66. झारखंड उच्चतर न्यायिक सेवा (भरती, नियुक्ति एवं सेवा शर्त) नियमावली, 2001 का नियम 30 उच्च न्यायालय को विनियम एवं नियम विरचित करने के लिए सशक्त बनाता है। नियम 30 के अधीन

ऐसी शक्ति के प्रयोग में उच्च न्यायालय ने समय-समय पर नियमों को विरचित और संशोधित किया है। नियम 5 (i) अनुबंधित करता है कि उपयुक्तता परीक्षा जैसा समय-समय पर उच्च न्यायालय द्वारा विहित किया जा सकता है, में उत्तीर्णता के अध्यधीन मेधा-सह-वरीयता के आधार पर प्रोन्नति दी जाए। उपयुक्तता परीक्षा नियम 5 (iv) में प्रावधानित की गयी है। जैसी चर्चा पहले की गयी है, निश्चय ही, नियम 5 (iv) में, साक्षात्कार के लिए 50 अंक आवंटित करके साक्षात्कार को अत्यधिक अधिमान दिया गया है। किंतु नियम 5 (iv) को भारत के संविधान के अधिकारातीत इस आधार पर अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है कि साक्षात्कार को अत्यधिक अधिमान दिया गया है।

67. चूँकि हम पहले वर्णित किए गए आधारों पर प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 के चयन को अपास्त कर रहे हैं, हम याचीगण द्वारा किए गए अन्य प्रतिवादों पर विचार करने के इच्छुक नहीं हैं अर्थात् (i) साक्षात्कार में अंक देने में मनमानापन, (ii) चयन के एक वर्ष बाद प्रोन्नति के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 के नामों की अनुशंसा भेजा जाना; (iii) प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 के नामों, जिन्हें प्रतीक्षा (वाच) सूची के अधीन रखा गया था, को उनके प्रति अनुग्रह दर्शाने के बाद प्रोन्नत किया गया था जबकि याचीगण, जिनके पास अच्छा सेवा अभिलेख है, पर विचार नहीं किया जा रहा है।

68. अपने निष्कर्ष को संक्षिप्त करते हुए हम अभिनिर्धारित करते हैं कि 65% कोटा के विरुद्ध जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के पद पर सिविल न्यायाधीश (सीनियर डिविजन) प्रत्यर्थी सं॰ 4 से 26 की मेधा-सह-वरीयता के आधार पर प्रोन्नति निम्नलिखित आधारों पर दूषित है:-

(i) ikIrkd d U;ure vgd vd dk fofgr fd;k tkuk >kj[kM mPprj U;kf;d lok (Hkjrh] fu;fDr ,o lok 'kr) fu;ekoyh d fu;e 5 (iv) l vlc) gA

(ii) flfoy U;k;kèkh'k (lhfu;j fMfotu) dh ftyk ,o vij l= U;k;kèkh'k d :i e (65% dkVk) in ij çkUufr d fy, lk{kkRdkj d fy, 50% vdk dk vkoVu egkfun'kd] Hkkjrh; Ñf"k vulèkku ifj"kn ,o vU; cuke MhO lUnjk jkt] (2011)6 SCC 605; je'k dekj cuke fnYyh mPp U;k;ky; ,o ,d vU;] (2010)3 SCC 104; v'kkd dekj ;kno ,o vU; cuke gfj;k.kk jkT; ,o vU;] (1985)4 SCC 417; v t ; gfl;k cuke [kkfyn e thc lgjkonh ,o vU;] (1981)1 SCC 722; vkj efyd etgj lYrku ,o ,d vU; cuke mÙkj çn'k ykd lok vk;kx ,o vU;] (2009)17 SCC 530, ekeyk e fn, x, fu.k;k e ekuuh; lokPp U;k;ky; }kjk viuk, x, lxr nf"Vdk.k d vudy ugh gA

यह आदेश 28 अधिकारियों की प्रोन्नति को प्रभावित नहीं करेगा जिन्हें पहले ही जिला एवं अपर सत्र न्यायाधीश के रूप में प्रोन्नत किया गया है और जो अक्टूबर, 2012 से प्रोन्नत पदों पर कार्यशील हैं, क्योंकि उनकी प्रोन्नति चुनौती के अधीन नहीं है।

69. परिणामस्वरूप, यह अभिनिर्धारित किया जाता है:-

(i) çR;Fkh lO 4 l 26 dh çkUufr d fy, fnukd 6.9.2013 d eek lO 9353/ fu;fDr e vrfo"V mPp U;k;ky; dh vu'kIk vkj fnukd 8.10.2013 d eek e vrfo"V vfèkIpuk lO 9853 l 9875 vfHk[kfMr dh tkrh g vkj çR;Fkh lO 4 l 26 dh çkUufr vikLr dh tkrh gA

(ii) rrh; çR;Fkh dk mPp U;k;ky; d ç'kkIfud i{k ij >kj[kM mPprj U;kf;d lok (Hkjrh] fu;fDr ,o lok 'kr) fu;ekoyh] 2001 (t lk o"k 2008 vkj o"k 2011 e l'kkfèkr fd;k x;k g)] tk egkfun'kd] Hkkjrh; Ñf"k vulèkku ifj"kn ,o vU; cuke MhO lUnjk jkt] (2011)6 SCC 605; v'kkd dekj ;kno ,o vU; cuke gfj;k.kk jkT; ,o vU;] (1985)4 SCC 417 vkj v t ; gfl;k cuke [kkfyn

ethc lgjkonh ,o vU;] (1981)1 SCC 722 e fn, x, ekuuh; lokPp U;k;ky; d fu.k; d vudy lk{kkRdkj d fy, 50% vd fofgr djrk g] d fu;e 5 (iv) dk l'kkfèkr dju dk fu.k; yu dk fun'k fn;k tkrk gA

(iii) rrh; çR;Fkh dk ç'kklfud i{k ij ;g fu.k; yu dk fun'k fn;k tkrk g fd D;k iklrkd d U;ure vgd vd dk fofgr fd;k tkuk ftyk ,o vij l= U;k;kèkh'k d in ij (65% dkVk d fo#)) flfoy U;k;kèkh'k lhfu;j fMfotu dh çkUufr d fy, vko';d g vkj ;fn ,lk g] >kj[kM mPprj U;kf;d lok (Hkjrh] fu;fDr ,o lok 'kr) fu;ekoyh] 2001 (2008 vkj 2011 e l'kkfèkr) dk mi;Dr :i l l'kkfèkr dju dk fun'k fn;k tkrk gA

,o

(iv) >kj[kM jkT; e mPprj U;kf;d lok e foiy fjfDr;k dh nf"V e rrh; çR;Fkh dk >kj[kM mPprj U;kf;d lok (Hkjrh] fu;fDr ,o lok 'kr) fu;ekoyh d l'kkèku d fy, 'kh?k dne mBku vkj vkjfHkd frfFk ij fnukd 31.12.2014 rd Hkkoh fjfDr;k lfgr >kj[kM jkT; mPprj U;kf;d lok e fjfDr;k dk vfèklfpr dju vkj p;u çfØ;k Rofjr dju dk fun'k fn;k tkrk gA

तद्नुसार यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

महेन्द्र सिंह

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 301 of 2013. Decided on 17th February, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 190 एवं 482—संज्ञान के आदेश का अभिखंडन–वर्तमान मामले में न्यायालय ने उन व्यक्तियों के विरुद्ध संज्ञान लिया जिन्हें आरोप-पत्रित किया गया था–बाद में पूरक आरोप पत्र की प्रस्तुति पर न्यायालय ने इस तथ्य के बावजूद कि याची के विरुद्ध सामग्री नहीं पायी गयी है, अपराध का संज्ञान लिया–न्यायालय को पुनः संज्ञान लेने की आवश्यकता नहीं थी जब न्यायालय ने अपराध का संज्ञान पहले ही लिया गया है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किया गया और विधि के अनुरुप आदेश पारित करने के लिए सी॰ जे॰ एम॰ के पास मामला वापस भेजा गया–आवेदन निपटाया गया। (पैराएँ 2 से 5)

निर्णयज विधि.–2014 (1) JBCJ 539 (HC) : 2014 (1) JLJ 212 (JHC) (Const. Bench) : 2013(3) East Cr.C. 307 (SC)—Relied.

अधिवक्तागण.–Mr. N.K. Pandey, For the Petitioner; Mr. APP., For the State.

आदेश

अज्ञात के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन और सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम की धारा 17 के अधीन भी सिमरिया पी॰ एस॰ केस सं॰ 87 वर्ष 2005 (जी॰ आर॰ सं॰ 711/2005) की प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। पुलिस ने अन्वेषण के बाद दिनांक 7.11.2009 को चार अभियुक्तगण के

विरुद्ध आरोप–पत्र दाखिल किया। अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध आगे अन्वेषण खुला रखा गया था। बाद में, दिनांक 30.4.2010 को नारायण महतो के विरुद्ध उसको फरार के रूप में दर्शाते हुए आरोप–पत्र दाखिल किया गया था। जहाँ तक याची का संबंध है, यह दर्ज किया गया था कि इस याची की आपराधिकता दर्शाने वाली सामग्री नहीं पायी गयी थी। फिर भी, न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/34 के अधीन और सी॰ एल॰ ए॰ अधिनियम के अधीन भी दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया गया है जिसे **धरमपाल बनाम हरियाणा राज्य, (2013)3 East Cr.C. 307 (SC) [: 2014 (1) JBCJ 539 (SC) : 2014 (1) JLJ 212 (SC) Const. Bench]** के मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में वैध नहीं कहा जा सकता है जिसके आधार पर **बिगन मियाँ उर्फ सिराज मियाँ बनाम झारखंड राज्य (दांडिक विविध याचिका सं॰ 1413 वर्ष 2008)** मामला इस न्यायालय द्वारा विनिश्चित किया गया है जिसमें निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *^^bl çdkj] voLFkk tk lkeu vkrh g ;g g fd ;fn l= U;k;ky; }kjk fopkj.k ;kX; vijkèk@vijkèkk d fy, nk vFkok vfèkd vfHk;Drx.k d fo#) ekeyk nt fd;k tkrk g vkj mue l dN d fo#) vkjki&i= nkf[ky fd;k tkrk g vkj 'k"k dk fopkj.k d fy, ugh Hktk tkrk g] rc nMkfèkdkjh dk doy vkjki&if=r 0;fDr d fo#) vijkèk dk lKku yu dh 'kfDr gA fdr] U;k;ky; dk ;g irk dju dh Hkh vko';drk g fd D;k l= U;k;ky; }kjk fd, tku oky fopkj.k d fy, ugh Hkt x, 0;fDr d fo#) lkexh g ;k ughA ;fn U;k;ky; fopkj.k e vxlj gku d fy, çFke n"V;k lkexh ikrk g] ml ekey dk l= U;k;ky; dk lin dju dh vko';drk gA blh çdkj l] ;fn dN vfHk;Drx.k d fo#) vkjki&i= nkf[ky fd;k tkrk g vkj dN vfHk;Drx.k d fo#) vkx d vUo"k.k d fy, ekeyk [kyk j[kk tkrk g vkj U;k;ky; vkjki&if=r 0;fDr;k d fo#) vijkèkk dk lKku yrk g] ml nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 209 e vrfo"V çkoèkku d fucèkuku lkj ekey dk l= U;k;ky; dk lin dju dh vko';drk gA*
>
> *ckn e] ;fn vU; vfHk;Drx.k] ftUg igy vkjki&if=r ugh fd;k x;k Fkk] d fo#) vkjki&i= nkf[ky fd;k tkrk g] U;k;ky; dk mlh jkLr dk viuk;k tkuk g vFkkr ;g irk djuk fd D;k fopkj.k gr vxlj gku d fy, ml 0;fDr d fo#) lkexh g vkj ;fn nMkfèkdkjh lr"V g fd lkexh g] ml doy ekey dk l=k U;k;ky; dk lin dju dh vko';drk g vkj] rn}kjk] l= U;k;ky; dk nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 193 e vrfo"V çkoèkku d fucèkuku lkj vijkèk dk lKku yuk g vkj fopkj.k gr vxlj gkuk gA***

2. यहाँ, वर्तमान मामले में, जैसा उपर कथन किया गया है, न्यायालय ने उन व्यक्तियों के विरुद्ध संज्ञान लिया जिन्हें आरोप–पत्रित किया गया था। बाद में, दिनांक 30.4.2010 को पूरक आरोप पत्र दाखिल किया गया था जिसमें यह दर्ज किया गया था कि याची के विरुद्ध सामग्री नहीं पायी गयी हैं किंतु उसके बावजूद, न्यायालय ने याची के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया है यद्यपि उन्हें पुन: अपराध का संज्ञान लेने की आवश्यकता कभी नहीं थी जब उन्होंने पहले ही चार व्यक्तियों के मामले में अपराध का संज्ञान लिया था, बल्कि न्यायालय को संग्रहित सामग्री से यह पता लगाना था कि क्या याची की प्रथम दृष्टया अपराधिता दर्शाने वाली कोई सामग्री थी और यदि न्यायालय ऐसी सामग्री पाता है, उसे केवल याची के मामले को सुपुर्द करने की आवश्यकता थी।

3. चूँकि दंडाधिकारी द्वारा ऐसा नहीं किया गया है, संज्ञान लेने वाला आदेश दोषपूर्ण है। तद्नुसार, संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किया जाता है।

4. किंतु, मामले को मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी के समक्ष वापस भेजा जाता है ताकि न्यायालय विधि के अनुरूप आदेश पारित कर सके जैसा उपर उपदर्शित किया गया है।

5. इस संप्रेक्षण के साथ इस आवेदन को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

ठाकुर दास महतो

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

L.P.A. No. 424 of 2013. Decided on 10th March, 2014.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 21 एवं 226—राज्य पुनर्वास नीति, 2003—स्वर्ण रेखा बहुप्रयोजनीय परियोजना, चांडिल के बेदखल व्यक्तियों को मुआवजा का भुगतान–इस आधार कि अपीलार्थी राज्य सरकार की किसी गैर सांविधिक नीति जिसके लिए परमादेश रिट जारी नहीं किया जा सकता है के आधार पर धनीय लाभ का दावा कर रहा है, अपीलार्थी को वाद दाखिल करने की स्वतंत्रता देते हुए एकल न्यायाधीश द्वारा अनुतोष से इनकार किया गया–अपीलार्थी को पुनर्वास अधिकारी, स्वर्ण रेखा बहुप्रयोजनीय परियोजना, चांडिल के पास जाने की स्वतंत्रता दी गयी। (पैराएँ 3 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. H.K. Mahto, For the Appellant; Mr. V.K. Prasad, For the Respondent.

आदेश

श्री एच॰ के॰ महतो द्वारा अपीलार्थी का और श्री वी॰ के॰ प्रसाद, एस॰ सी॰ (एल॰ एन्ड सी॰) द्वारा प्रत्यर्थीगण का प्रतिनिधित्व किया गया है।

रिट याचिका डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1726 वर्ष 2013 की खारिजी से व्यथित होकर, जिसमें और जिसके द्वारा विद्वान एकल न्यायाधीश ने ''विकास पुस्तिका'' जारी करने के लिए और वर्ष 2003 की पुनर्वास नीति जिसे स्वर्ण रेखा बहुप्रयोजनीय परियोजना, चांडिल की 2012 योजना द्वारा आगे उपांतरित किया गया है के अधीन याची को पुनर्वास अनुदान का भुगतान का निर्देश प्रत्यर्थीगण को देने से इनकार कर दिया है।

2. अपीलार्थी का मामला यह है कि वह स्वर्ण रेखा बहुप्रयोजनीय परियोजना, चांडिल (संक्षेप में परियोजना) के निर्माण में बेदखल व्यक्ति है क्योंकि उसकी समस्त खेती योग्य संपत्ति और उसका घर पूर्वोक्त परियोजना के प्रयोजन से अर्जित किया गया है और उस प्रयोजन से, प्रत्यर्थीगण द्वारा संगणित मुआवजा का भुगतान अपीलार्थी को किया गया है। अपीलार्थी का आगे मामला यह है कि दिनांक 21.9.1990 को अपीलार्थी के पिता के नाम में विकास पुस्तिका सं॰ 09326 जारी की गयी थी। किंतु वर्ष 2003 में परिवार के वयस्क सदस्यों को पृथक के रूप में मानने के लिए और उनको पुनर्वास अनुदान प्रदान करने के लिए प्रत्यर्थी राज्य द्वारा पुनर्वास नीति प्रकाशित की गयी थी।

3. याची के अनुसार, उसने राज्य की पुनर्वास नीति, 2003 के मुताबिक पुनर्वास का लाभ पाने के लिए आवेदन दिया था किंतु इस पर विचार नहीं किया गया था। चूँकि प्रत्यर्थी राज्य द्वारा अपीलार्थी के

आवेदन पर विचार नहीं किया गया था, वह डब्ल्यू॰ पी॰ (सी॰) सं॰ 1726 वर्ष 2013 दाखिल करके इस न्यायालय के पास आया।

4. विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अपीलार्थी राज्य सरकार की किसी गैर-सांविधिक नीति जिसके लिए परमादेश रिट जारी नहीं किया जा सकता है के आधार पर धनीय लाभ का दावा कर रहा है, अपीलार्थी को राज्य की पुनर्वास नीति, 2003 के मुताबिक उक्त लाभों का दावा करने वाला वाद दाखिल करने की स्वतंत्रता देते हुए उक्त रिट याचिका को खारिज कर दिया।

5. हमने अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री एच॰ के॰ महतो तथा प्रत्यर्थीगण राज्य की ओर से उपस्थित होने वाले श्री वी॰ के॰ प्रसाद (S.C.) (L & C) को सुना है।

6. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने हमारा ध्यान पुनर्वास नीति, 2003 जिसे वर्ष 2012 में आगे उपांतरित किया गया है के अधीन बेदखल व्यक्तियों के अभ्यावेदन पर विचार करने का निर्देश प्रत्यर्थी राज्य को देते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित विभिन्न आदेशों की ओर आकृष्ट किया है।

7. इन परिस्थितियों में, अपीलार्थी के दावा के गुणागुण पर विचार किए बिना अपीलार्थी को पुनर्वास नीति, 2003 जिसे वर्ष 2012 में आगे उपांतरित किया गया है के अधीन समुचित अनुतोष इप्सित करने के लिए आज के दिन से चार सप्ताह की अवधि के भीतर नए अभ्यावेदन के साथ प्रत्यर्थी सं॰ 3 पुनर्वास अधिकारी, स्वर्ण रेखा बहुप्रयोजनीय परियोजना, चांडिल, सरायकेला-खरसावा के पास जाने की स्वतंत्रता देते हुए एल॰ पी॰ ए॰ निपटाया जाता है। ऐसे अभ्यावेदन की प्राप्ति पर प्रत्यर्थी सं॰ 3 पुनर्वास अधिकारी, स्वर्ण रेखा बहुप्रयोजनीय परियोजना जिला सराय केला-खरसावां विधि के अनुरुप इस पर विचार करेंगे और आवश्यक एवं प्रासंगिक दस्तावेजों के सत्यापन के बाद और राज्य की पुनर्वास नीति, 2003 जिसे वर्ष 2012 में उपांतरित किया गया है को ध्यान में लेकर 12 सप्ताह की अवधि के भीतर तार्किक एवं सकारण आदेश पारित करेंगे।

8. यदि अपीलार्थी 2003 की पुनर्वास नीति के लाभ का हकदार है, उसे इसे जल्द दिया जाएगा।

9. तद्नुसार, यह लेटर्स पेटेन्ट अपील पूर्वोक्त तरीके से निपटाया जाता है।

---

ekuuh; ihñ ihñ HkVV] U;k;efr

शिवेन्द्र कुमार

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 258 of 2009. Decided on 7th February, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 504 सह-पठित अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 के धाराओं 3 (1) एवं 3 (5) के अधीन अपराध के लिए संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए प्रार्थना—याची जो जिला शिक्षा अधीक्षक के कार्य का निर्वहन कर रहा था

के विरुद्ध परिवाद दाखिल करने में 44 दिनों का स्वीकृत विलंब हुआ है–इसके अतिरिक्त, अवर न्यायालय को याची के विरुद्ध संज्ञान लेने के पहले दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 197 (1) के अधीन अंतर्विष्ट प्रावधानों पर विचार करना चाहिए था–याची के अभियोजन के लिए पूर्व मंजूरी प्राप्त नहीं की गयी है–कार्यवाही अभिखंडित की गयी–याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 7, 9 एवं 14)

निर्णयज विधि.–1992 Supp. (1) SCC 335; (2006) 4 SCC 584; 2011 (2) JLJR 469; 2011(2) JLJR 455—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Manoj Tandon, Kumari Rashmi, S.S. Kr., N.K. Singh, For the Petitioner; Mr. Shree Prakash Jha, For the State; Mr. Manoj Kumar Chaubey, For the Opp. Party No.2.

आदेश

याची ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के अधीन वर्तमान याचिका दाखिल करके पी॰ सी॰ आर॰ सं॰ 387/2007 (टी॰ आर॰ सं॰ 1211/2008) में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, मधुपुर, देवघर द्वारा पारित दिनांक 5.12.2008 के आदेश, जिसके द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 504 सह-पठित अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 3 (i) और 3 (x) के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया है, सहित संपूर्ण दांडिक अभियोजन अभिखंडित करने के लिए प्रार्थना किया है।

2. वर्तमान याचिका को उद्भूत करने वाले संक्षिप्त तथ्य निम्नलिखित है:

याची को जिला शिक्षा अधीक्षक-सह-जिला प्रोग्राम अधिकारी, देवघर के रूप में पदस्थापित किया गया था और परिवादी को जिला देवघर में, जो याची जो जिला में प्राथमिक शिक्षा का अध्यक्ष हैं के प्रशासनिक नियंत्रण के अधीन है, कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय, मधुपूर में रसोईया के रूप में पदस्थापित किया गया था। छात्राओं और उनके अभिभावकों द्वारा परिवादी के विरुद्ध परिवाद के कारण जो अत्यन्त गंभीर प्रकृति का था याची ने प्रशासनिक अध्यक्ष होने के नाते परिवादी के विरुद्ध कार्रवाई किया और अंतत: परिवादी की सेवा समाप्त कर दी गयी थी। अपना प्रतिशोध लेने के लिए परिवादी द्वारा याची के विरुद्ध आक्षेपित परिवाद दर्ज किया गया था। विद्वान अवर न्यायालय ने याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 504 के अधीन तथा (अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धाराओं 3 (i) और 3 (x) के अधीन भी अपराध का संज्ञान लिया। अत:, याची ने वर्तमान याचिका दाखिल करके दिनांक 5.12.2008 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित संपूर्ण दांडिक अभियोजन को चुनौती दिया है।

3. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि याची निर्दोष है और उसने कोई अपराध नहीं किया है जैसा उसके विरुद्ध अभिकथित किया गया है। किंतु, केवल परेशानी कारित करने की दृष्टि से उसे इस मामले में झूठा आलिप्त किया गया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची सरकारी पदधारी है। वस्तुत:, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 (मूल परिवादी) के विरुद्ध परिवाद प्राप्त किया गया था और उसके व्यवहार के आधार पर विभागीय कार्रवाई भी की गयी थी और इसलिए, प्रति आक्रमण के रूप में याची के विरुद्ध आक्षेपित परिवाद दाखिल किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने इस याचिका के साथ संलग्न दस्तावेजों को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि अभिकथित घटना की तिथि दिनांक 12.8.2007 है जबकि परिवाद की तिथि 26.9.2007 है। अत: आक्षेपित परिवाद वर्तमान याची, जो सरकारी पदधारी

है और प्रशासन के हित में सद्विश्वास में कृत्य किया है, को परेशान करने की दृष्टि से अभिकथित घटना की तिथि से 44 दिनों के विलंब के बाद दाखिल किया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि वर्तमान याची को सरकारी पदधारी होने के नाते पूर्व मंजूरी के बिना अभियोजित नहीं किया जा सकता है जैसा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) के अधीन आवश्यक है। याची को सरकारी पदधारी होने के नाते दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) के अधीन संरक्षण प्राप्त है। यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान मामले में पूर्व मंजूरी प्राप्त नहीं की गयी है जैसा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) के अधीन आवश्यक है और इसलिए इस आधार पर विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा पारित आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने अनेक परिशिष्टों को निर्दिष्ट करते हुए इंगित किया कि वर्तमान याची ने कस्तूरबा गांधी आवासीय विद्यालय, मधुपुर की छात्राओं द्वारा सूचक/परिवादी के विरुद्ध परिवाद प्राप्त किया था। इस संदर्भ में विद्वान अधिवक्ता ने कारण बताओ नोटिस और परिवादी द्वारा दिए स्पष्टीकरण को भी निर्दिष्ट किया है और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 (मूल परिवादी) के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही भी आरंभ की गयी थी। आगे यह निवेदन किया गया है कि नियमित विभागीय जाँच करने के बाद दिनांक 21.2.2008 के आदेश के तहत विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की सेवा समाप्त कर दी गयी थी।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **हरियाणा राज्य एवं अन्य बनाम भजन लाल एवं अन्य, 1992 Supp (1) SCC 335,** मामले में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय को उद्धृत किया है। याची के विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, याची का मामला उक्त निर्णय के पैराग्राफ 102 के खंड (7) में उपदर्शित मापदंड के अंतर्गत आच्छादित है जिसमें यह संप्रेक्षित किया गया है कि जहाँ दांडिक कार्यवाही स्पष्टत: असद्भावपूर्ण है और/अथवा अभियुक्त से प्रतिशोध लेने के अंतरस्थ हेतु और निजी दुश्मनी के कारण उसका अपमान करने की दृष्टि से संस्थित की गयी है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में **संकरन मोइत्रा बनाम साधना दास एवं एक अन्य, (2006)4 SCC 584,** मामले में एक अन्य निर्णयज विधि को भी उद्धृत किया है। उक्त निर्णय के पैराग्राफों 11, 22, 23 और 25 को निर्दिष्ट करते हुए यह निवेदन किया गया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) के अधीन आवश्यक मंजूरी वर्तमान मामले में प्राप्त नहीं की गयी है। अत:, याची का मामला उक्त निर्णय द्वारा पूरी तरह आच्छादित है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने 2011 (2) JLJR 455 और (2011)2 JLJR 469 में प्रकाशित निर्णयों को भी निर्दिष्ट किया है और इन पर विश्वास किया है। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची ने अपने आधिकारिक कर्तव्य का निर्वहन करते हुए सद्विश्वास में कृत्य किया है और इसलिए, उक्त निर्दिष्ट दो निर्णयों में अधिकथित निर्णयाधार वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर भी प्रयोज्य है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन के समर्थन में दांडिक विविध याचिका सं॰ 1418 वर्ष 2007 में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 3.8.2011 के आदेश को भी निर्दिष्ट किया है और इस पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि इस न्यायालय ने दृष्टिकोण अपनाया है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) में अंतर्विष्ट प्रावधानों के मुताबिक कोई न्यायालय राज्य सरकार की पूर्व मंजूरी के बिना याची के विरुद्ध संज्ञान नहीं ले सकता है। यह निवेदन किया गया है कि याची का मामला भी उक्त निर्णय द्वारा पूरी तरह आच्छादित है।

5. विरोधी पक्षकार परिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने परिवाद के पैराग्राफ सं॰ 8 को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया कि परिवादी ने स्पष्टीकरण दिया है और विलंब जो परिवाद संस्थित करने में कारित हुआ है को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया है। यह निवेदन किया गया है कि परिवादी आरंभ में अपनी

शिकायत दूर करवाने प्राधिकारियों के पास गया। चूँकि प्राधिकारियों ने सकारात्मक प्रत्युत्तर नहीं दिया है, उसके पास आक्षेपित परिवाद दाखिल करके न्यायालय के पास आने के अलावे कोई विकल्प नहीं था। विरोधी पक्षकार–परिवादी के विद्वान अधिवक्ता ने किसी मीरा टोप्पो द्वारा दिए गए बयान को निर्दिष्ट किया है, जो विद्यालय में अध्यापिका थी, जिसमें उसने कथन किया है कि परिवादी के विरुद्ध ऐसा पूर्ववृत नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि वर्तमान याची के कृत्य को आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन के भाग के रूप में नहीं माना जा सकता है और इसलिए, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) में संगणित संरक्षित आच्छादन वर्तमान याची को उपलब्ध नहीं होगा। आगे यह निवेदन किया गया है कि याची का मामला भारतीय दंड संहिता की धारा 52 की परिधि के अंतर्गत नहीं आता है जो ''सद्विश्वास'' में किए गए कृत्य से संबंधित है। अंत में निवेदन किया गया है कि वर्तमान याची के मामला में गुणागुण नहीं है और यह अस्वीकार किए जाने योग्य है।

6. विरोधी पक्षकार राज्य सरकार के विद्वान अधिवक्ता ने भी विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश को न्यायोचित ठहराने का प्रयास किया है और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 (मूल परिवादी) के विद्वान द्वारा प्रस्तुत तर्कों का समर्थन किया है।

7. पूर्वोक्त परस्पर विरोधी निवेदनों पर विचार करते हुए और अभिलेख पर मौजूद सामग्रियों तथा खासकर परिवादी द्वारा दाखिल परिवाद और विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित आदेश के परिशीलन पर यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) में अंतर्विष्ट प्रावधानों का अधिमूल्यन करने में विफल रहा है। याची को सरकारी पदधारी होने के नाते दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197(1) के अधीन संरक्षण प्राप्त है। स्वीकृत रूप से, वर्तमान मामले में, यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि इस मामले में संज्ञान लेने के पहले पूर्व मंजूरी ली गयी थी। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) का पठन निम्नलिखित है:–

> ***^^197. U;k;kèkh'kk vkj ykd lodk dk vfHk;kstu-****&(1) tc fdlh 0;fDr ij] tk U;k;kèkh'k ;k eftLVV ;k ,lk ykd lodg ;k Fkk ftl ljdkj }kjk ;k mldh etjh lgh mld in lgVk;k tk ldrk g@Fkk vU;Fkk ugh] fdlh ,l vijkèk dk vfHk;kx g ftl dkj e ;g vfHkdfFkr g fd og mld }kjk rc fd;k x;k Fkk tc og viu inh; dr0; d fuogu e dk; dj jgk Fkk tc mldk ,lk dk; djuk rkRif;r Fkk] rc dkb Hkh U;k;ky; ,l vijkèk dk lKku&*
>
> *(a) ,l 0;fDr dh n'kk e] tk l?k d dk;dyki d lcèk e] ;FkkfLFkfr] fu;kftr g ;k vfHkdfFkr vijkèk fd, tku d le; fu;kftr Fkk] dUnh; ljdkj dh(*
>
> *(b) ,l 0;fDr dh n'kk e] tk fdlh jkT; d dk;&dyki d lcèk e] ;FkkfLFkfr] fu;kftr g ;k vfHkdfFkr vijkèk fd, tku d le; fu;kftr Fkk] ml jkT; ljdkj dh] io etjh lgh djxk] vU;Fkk ugh(*
>
> *ijUr tgk vfHkdfFkr vijkèk [kM (b) e fufn"V fdlh 0;fDr }kjk ml vofèk d nkjku fd;k x;k Fkk tc jkT; e lfoèkku d vuPNn 356 d [kM (1) d vèkhu dh xb mn?kk"k.kk çoÙk Fkh] ogk [kM (b) bl çdkj ykx gkxk] ekuk mle vku oky ^^jkT; ljdkj** in d LFkku ij ^^dUnh; ljdkj** in ij j[kk x;k gA*

8. इस संदर्भ में याची के विद्वान अधिवक्ता ने **संकरण मोइत्रा (ऊपर)** में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है और इस पर विश्वास किया है जिसमें सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*"25. mPp U;k;ky; u dFku fd;k g fd vR;fèkd cy d ç;kx }kjk 0;fDr dh gR;k dr0; dk ikyu dHkh ugh gk ldrh FkhA ;gk rd ;g ckr lgh gk ldrh gA fdr ç'u ;g g fd D;k ÑR; dr0; d ikyu e vFkok dr0; d rkRif;r ikyu e fd;k x;k FkkA ;fn bl dr0; d ikyu e vFkok dr0; d rkRif;r ikyu e fd;k x;k Fkk] ;g rd ndj fd vkfèkdkfjd gfl;r e 0;fDr dh gR;k dHkh ugh dh tk ldrh Fkh vkj ifj.kkeLo#i lfgrk dh èkkjk 197(1) vkÑ"V ugh gk ldrh Fkh] lfgrk dh èkkjk 197(1) dh mi{kk ugh fd;k tk ldrk gA ,sk rd igy fufn"V fd, x, bl U;k;ky; d fu.k;k d fu.k;kèkkj d fo#) gkxkA mPp U;k;ky; }kjk fn;k x;k ,d vU; dkj.k ;g g fd ;fn mPp U;k;ky; etjh dh deh d vkèkkj ij gLr{ki djxk] U;kf;d çfØ;k e ykxk dk fo'okl gV tk,xk] Hkh lkfofèkd vko';drk vFkok lj{k.k nu dk vkèkkj ugh gk ldrk gA lLFkku e ykd fo'okl viuh vfèkdkfjrk d vrxr vku oky grvk dk xg.k djd] fofèk vkj LFkkfir çfØ;k d vu#i vkj foyc d fcuk rRijrkiod bldk U;Lr dr0;k dk ikyu djd cuk, j[kk tk ldrk gA lkfofèkd vko';drk vFkok vfèkdkfjrk dk 0;;u] tk Lo; U;k; fu.k;u dk vrr% çHkkfor djxh] dk ifj.kke ç.kkyh e ykxk dk fo'okl gVku e gkxkA vr%] ml fufeÙk mPp U;k;ky; }kjk fn;k x;k dkj.k nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 197(1) d vèkhu etjh dh vfèkdkfjrki.k vko';drk d mij fot; iku d fy, bldk l{ke cuku d fy, i;kIr ugh gk ldrk gA vr% ge lr"V g fd mPp U;k;ky; ;g vfHkfuèkkfjr dju e xyr Fkk fd bl ekey e èkkjk 197(1) d vèkhu etjh vko';d ugh FkhA ge vfHkfuèkkfjr djr g fd ,sk etjh vko';d Fkh vkj etjh dh deh d pyr bl pj.k ij vfHk;ktu [kfMr djuk gh gkxkA ge vc ifjoknh d fo}ku vfèkoDrk d fuonu dk mÙkj ugh nuk g fd ;g ,sk etjh çnku dju d fy, lokfèkd l;kX; ekeyk gA***

9. इसके अतिरिक्त आक्षेपित परिवाद के परिशीलन से यह पता चलता है कि अभिकथित घटना की तिथि दिनांक 12.8.2007 है जबकि परिवाद की तिथि दिनांक 26.9.2007 है। परिवादी ने परिवाद के पैरा 8 में आक्षेपित परिवाद दर्ज करने में कारित विलंब के लिए स्पष्टीकरण देने का प्रयास किया है, किंतु परिवाद दाखिल करने में 44 दिनों का स्वीकृत विलंब हुआ है। इस याचिका के साथ संलग्न अनेक परिशिष्ट भी उपदर्शित करते हैं कि परिवादी के अवचार के कारण उसके विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ की गयी थी जिसके परिणामस्वरुप आक्षेपित परिवाद दाखिल करने के पहले उसकी सेवा समाप्त कर दी गयी थी। अत:, याची को परेशानी कारित करने की दृष्टि से ऐसा परिवाद दाखिल किए जाने की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 197 (1) में अंतर्विष्ट प्रावधानों को विचार में लेते हुए विद्वान अवर न्यायालय को याची के विरुद्ध संज्ञान लेने के पहले इस पहलू पर विचार करना चाहिए था, किंतु प्रकटत: वर्तमान मामले में ऐसा नहीं किया गया है।

10. इसी प्रकार से, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 482 के विस्तार के संबंध में **भजन लाल (ऊपर)** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय के पैराग्राफ 102 में अधिकथित मापदंड को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

"102. vè;k;&XIV d vèkhu lfgrk d vud çklfxd çkoèkkuk dh 0;k[;k vkj vuPNn 226 d vèkhu vlkèkkj.k 'kfDr vFkok lfgrk dh èkkjk 482 d vèkhu vrfufgr 'kfDr ftl geu ;gk mij fudkyk vkj m)r fd;k g d ç;kx l lcfèkr fu.k;k dh J[kyk e bl U;k;ky; }kjk çfrikfnr fofèk d fl)krk dh

i"BHkfe e ge mnkgj.kLo#i ekeyk dh fuEufyf[kr dkfV;k nr g ftue fdlh U;k;ky; dh çfØ;k dk n#i;kx jkdu d fy, vFkok vU;Fkk U;k; dk fgr lfuf'pr dju d fy, , lh 'kfDr dk ç;kx fd;k tk ldrk Fkk ;fi fdlh lVhd] Li"Vr% ifjHkkf"kr vkj i;kIr :i l puyÑr ,o dBkj ekxn'kd fl}krk vFkok dBkj Qkeyk dk vfèkdfFkr djuk vkj vud çdkj d ekeyk dh lex lph nuk lHko ugh gk ldrk g ftle , lh 'kfDr dk ç;kx fd;k tkuk pkfg,A

(1) tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, vfHkdFkuk dk ;fn T;k dk R;k fy;k tkrk g vkj mudh li.krk e Lohdkj fd;k tkrk g] o çFke n"V;k dkb vijkèk xfBr ugh djr g vFkok vfHk;Dr d fo#) ekeyk ugh cukr gA

(2) tgk çkFkfedh ,o çkFkfedh d lkFk lyXu vU; lkexh] ;fn gk] e fd, x, vfHkdFku lfgrk dh èkkjk 155(2) d dk; {k= d vrxr nMkfèkdkjh d vkn'k d vèkhu d flok; lfgrk dh èkkjk 156 (1) d vèkhu ifyl vfèkdkfj;k }kjk vUo"k.k dk U;k;kfpr Bgjkr g, lK; vijkèk çdV ugh djr gA

(3) tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, v[kMuh; vfHkdFku vkj bld leFku e lxfgr lk{; fdlh vijkèk dh dkfjrk çdV ugh djr g vkj vfHk;Dr d fo#) ekeyk ugh cukr gA

(4) tgk çkFkfedh e fd, x, vfHkdFku lK; vijkèk xfBr ugh djr g cfYd doy vlK; vijkèk xfBr djr g vkj nMkfèkdkjh d vkn'k d fcuk ifyl vfèkdkjh }kjk vUo"k.k dh vuefr ugh nr g tlk lfgrk dh èkkjk 155(2) d vèkhu vuè;kr fd;k x;k gA

(5) tgk çkFkfedh vFkok ifjokn e fd, x, vfHkdFku bru crd vkj vrfufgr :i l vufèklHkk0; g ftud vkèkkj ij dkb food'khy 0;fDr bl U;k;kfpr fu"d"k ij dHkh ugh igp ldrk g fd vfHk;Dr d fo#) vxlj gku d fy, i;kIr vkèkkj gA

(6) tgk dk;okgh d lLFkkiu ,o bl tkjh j[ku d çfr lfgrk vFkok lcfèkr vfèkfu;e d çkoèkkuk e l fdlh e çfr"Bkfir dkb vfHk0;Dr fofèkd otuk g vkj@vFkok tgk lfgrk vFkok lcfèkr vfèkfu;e e 0;fFkr i{k dh f'kdk;r dk çHkkodkjh çfrrk"k çkoèkkfur djrk gvk fofufn"V çkoèkku gA

*(7) tgk nkfMd dk;okgh Li"V :i l vlnHkkoi.k g vkj@vFkok tgk dk;okgh vfHk;Dr l çfr'kkèk yu d vrjLFk gr d lkFk vkj futh n'euh d dkj.k mldk viekfur dju dh nf"V l }"kiod lLFkkfir dh x;h gA***

11. वर्तमान मामले के तथ्यों को देखते हुए यह प्रतीत होता है कि पैराग्राफ 102 के खंड 7 में विहित मापदंड प्रयोज्य हैं। याची का मामला पैराग्राफ 102 के खंड 7 द्वारा आच्छादित है।

12. विजय प्रताप सिंह बनाम झारखंड राज्य, 2011 (2) JLJR 455, में इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया:–

^^12. ekey d rF;k ,o ifjfLFkfr;k vkj ;gk Åij fufn"V i{kk d vfèkoDrk }kjk fd, x, ijLij fojkèkh fuonuk d vfèkeY;u dk è;ku e j[ku ij tc ç'u mBk;k x;k g fd D;k ifjoknh dk mldh tkfr d uke l cyk;k x;k

Fkk vFkok xkyh nh x;h Fkh vFkok mlds xgu vfHk;Dr }kjk Nhu x, Fk] ;g rF;k d {k= e vkrk g vkj ,l fook|d fopkj.k U;k;ky; }kjk fofuf'pr fd, tk ldr gA

*fdr lkFk gh tc ifjoknh çFke n"V;k ;g ç{kfir dju e foQy jgk fd li.k ?kVuk ,l LFkku ij gb tgk mlds ,l0 lh0 ,o ,l0 Vh0 (vR;kpkj (fuokj.k) vfèkfu;e] 1989 dh èkkjk 3 (1) (x) d vèkhu vijkèk d fucèkukulkj ^lkotfud :i l xkyh nh x;h Fkh vkj ihVk x;k Fkk] ;g U;k;ky; vfHkdfFkr vijkèk d fy, nkfMd dk;okgh vfHk[kfMr dju d fy, viuh vrfufgr 'kfDr dk ç;kx dj ldrk gA***

13. मनोरंजन प्रसाद सिन्हा बनाम झारखंड राज्य, 2011 (2) JLJR 469, मामले में इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"2. l{ki e vfHk;ktu ekeyk ;g Fkk fd lpd fojkèkh i{kdkj l0 2u fnukd 30.8.2006 dk tkerkjk ifyl d le{k fyf[kr fjikV mle ;g dFku djr g, nkf[ky fd;k fd ml foxr ,d o"k l ?kjy ukdj d :i e ;kph dk;ikyd vfHk;rk] vkj0 b0 vk0] tkerkjk eukj tu çlkn flUgk }kjk fu;kftr fd;k x;k FkkA lpd u vfHkdfFkr fd;k fd ;kph u fnukd 20.7.2006 dk ml dk nk fnuk d Hkhrj fuek.k l lcfèkr vko';d oLrvk dk [kjhnu d fy, 1,00,000/- (,d yk[k) #i;k dh 0;oLFkk dju dk çLrko fn;k ;fn og oLrr% viu ?kj d cxy e çLrkfor ipk;r eMi dk dke djuk pkgrk Fkk vkj ml d fy, mlu ml dk lde vkn'k nu dk vk'oklu fn;kA ;kph }kjk fn, x, ,l çLrko d vulj.k e lpd u viu 15 nkLrk l èku dh 0;oLFkk dh vkj jkf'k nu d fy, og viu leLr ing fe=k d lkFk 23.7.2006 dk ;kph d ?kj x;kA vkx vfHkdfFkr fd;k x;k g fd ;kph u ml dk ing fe=k d lkFk iku ij lpd dk vdyk viu ?kj vku dk dgk vkj mlu ml l li.k jkf'k y fy;kA ;kph u fun'k fn;k fd fnukd 28.7.2006 dk uho Mkyh tkuh Fkh vkj rRi'pkr lpd fnukd 8.8.2006 l fuek.k dk; vkjHk djxkA bl fun'k d vulj.k e] lpd u fnukd 8.8.2006 l fuek.k dk; 'k: fd;k vkj rhu fnuk ckn ;kph u lpd dk iu% viu ?kj cyk;kA og fnukd 13.8.2006 dk çkr% yxHkx 10 ct ;kph d ?kj x;k tgk ml iu% vkj 50,000/- (ipkl gtkj) #i;k dh 0;oLFkk dju d fy, dgk x;k Fkk D;kfd ml ih0 lh0 nuk FkkA rc lpd u ,lh jkf'k dk Hkxrku dju e viuh v{kerk vfHk0;Dr fd;k ftl ij ;kph u ml d tkfr uke pekj dgdj xkyh fn;k vkj ;g Hkh dgk fd ml d dke dh çÑfr trk&pliy flyuk g] vkj ml lfonk dke dh mEehn ugh j[kuh pkfg, vkj ml ihVk x;k FkkA ml lkoèkku fd;k x;k Fkk fd ;fn og fcYdy dke tkjh j[kuk pkgrk Fkk] ml vxyh lcg rd 50,000/- (ipkl gtkj) #i;k dh 0;oLFkk dju d fy, dgk x;k FkkA lpd u vfHk0;Dr fd;k fd ,l 'kCnk u ml dh futh çfr"Bk vkj tkfr dk çfrdy :i l çHkkfor fd;k gA ml d fyf[kr fjikV ij Hkkjrh; nM lfgrk dh èkkjk 385 d vèkhu vkj vulfpr tkfr ,o vulfpr tutkfr (vR;kpkj fuokj.k) vfèkfu;e] 1989 dh èkkjk 3 (1) (x) d vèkhu Hkh tkerkjk ih0 ,l0 dl l0 187/06 nt fd;k x;k FkkA fdr] vUo"k.k d ckn doy vulfpr tkfr ,o vulfpr tutkfr (vR;kpkj fuokj.k) vfèkfu;e] 1989 dh èkkjk 3 (1) (x) d vèkhu vkjki&i= nkf[ky fd;k x;k Fkk tk vk{kfir vkn'k gA

12. ekey d rF;k ,o ifjfLFkfr;k] i{kk dh vkj l fn, x, rdk vkj nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 161 vkj nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 164 d vèkhu Hkh nt

*xokgk d c;ku dk è;ku e j[ku ij e ikrk g fd lpd ft lu ?kVuk vfHkdfFkr fd;k d flok; xokgk e l fdlh u ?kVuk n[ku dk nkok ugh fd;k vkj o lxr Fk fd lpd u mUg ?kVuk d ckj e crk;k FkkA fdr xokgk e l ,d u nM çfØ;k lfgrk dh èkkjk 164 d vèkhu nt viu c;ku e lkjoku fodkl fd;k t lh ppk ;gk mij dh x;h gA e ikrk vkj lçf{kr djrk g fd vulfpr tkfr ,o vulfpr tutkfr (vR;kpkj fuokj.k) vfèkfu;e] 1989 dh èkkjk 3 (1) (x) d vèkhu vijkèk d vo;o ;kph d fo#) vkÑ"V ugh gkr g D;kfd vfHkdfFkr ?kVuk ^^lkotfud :i l** ugh gb Fkh vkj bl çdkj vulfpr tkfr ,o vulfpr tutkfr (vR;kpkj fuokj.k) vfèkfu;e] 1989 dh èkkjk 3 (1) (x) d vèkhu ;kph d fo#) nkfMd dk;okgh U;k; dh gkfu d rY; gkxhA e vkx ikrk g fd lpd duh; vfHk;rk dh fjikV ij yk;h x;h] lfgrk dh èkkjk 107 d vèkhu vkjHk dh x;h dk;okgh dk i{k Fkk tc nk fojkèkh xVk u ipk;r eMi d fuek.k dk lfonk dk; tcju gVku dk ç;kl fd;kA mDr dfFkr dkj.kk l tkerkjk ih0 ,l0 dl l0 187/06, th0 vkj0 l0 471/06 d rRle] e ;kph dh nkfMd dk;okgh d lkFk vkn'k ft ld }kjk vfèkfu;e dh èkkjk 3 (1) (x) d vèkhu vijkèk dk lKku fy;k x;k Fkk vfHk[kfMr fd;k tkrk g vkj bl ;kfpdk dk vuKkr fd;k tkrk gA***

14. याची के विद्वान अधिवक्ता द्वारा उद्धृत अनेक निर्णय वर्तमान मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों पर प्रयोज्य हैं। विरोधी पक्षकार (मूल परिवादी) के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिया गया तर्क उक्त निर्दिष्ट निर्णय की दृष्टि में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। जैसी चर्चा उपर की गयी है, इसके अतिरिक्त विधि की प्रतिपादना भी इस मामले में संज्ञान लिए जाने के पहले विचार में लिए जाने योग्य है, किंतु अवर न्यायालय मामले के इस पहलू का अधिमूल्यन करने में विफल रहा है। तद्नुसार, इस याचिका को अनुज्ञात किया जाता है और पी॰ सी॰ आर॰ सं॰ 0387/2007 (टी॰ आर॰ सं॰ 1211/2008) में विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, मधुपुर, देवघर, द्वारा पारित दिनांक 5.12.2008 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित याची के विरुद्ध आरंभ की गयी संपूर्ण दांडिक कार्यवाही को अभिखंडित एवं अपास्त करने का आदेश दिया जाता है।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

डॉ॰ बालेश्वर मिश्रा

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. M.P. No. 1205 of 2013. Decided on 25th February, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एवं भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406, 420, 467, 468 एवं 471 के अधीन दाखिल प्राथमिकी का अभिखंडन–प्राथमिकी में किए गए अभिकथन छल, न्यास के दांडिक भंग अथवा कूटरचना का अपराध गठित नहीं करते हैं–सूचक द्वारा सूचित किया गया है कि याची ने किसी प्राधिकार के बिना भूखंड का आवंटन रद्द कर दिया है–किसी प्रवंचना का अभिकथन बिल्कुल नहीं है क्योंकि यह परिवादी

का सरल मामला है कि धन जमा किए जाने पर उसे भूखंड आवंटित किया गया था–परिवादी का मामला यह नहीं है कि कपटपूर्वक अथवा गैर ईमानदार रूप से प्रेरित किए जाने पर भूखंड के आवंटन के लिए धन जमा किया गया था–परिवाद में किए गए अभिकथन अपराध गठित नहीं करते हैं जिसके अधीन प्राथमिकी दर्ज की गयी है–प्राथमिकी अभिखंडित की गयी–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 13, 14, 21, 22 एवं 23)

अधिवक्तागण.–M/s Pandey Neeraj Rai, Rohit Ranjan Sinha, S.Pandey, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Prakash Chandra, For the Opp. Party No.2.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह आवेदन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420, 467, 468, 471 के अधीन दर्ज काँके पी॰ एस॰ केस सं॰ 16 वर्ष 2013 की प्राथमिकी सहित संपूर्ण दांडिक कार्यवाही के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है।

3. पक्षों द्वारा किए गए निवेदनों पर विचार करने के पहले परिवादी के मामले को ध्यान में लेने की आवश्यकता है।

4. परिवादी का मामला यह है कि वह सोसाइटी रजिस्ट्रेशन अधिनियम के अधीन रजिस्टर्ड सोसाइटी, आदर्श गृह निर्माण सहयोग समिति का सदस्य हुआ करता है। पूर्वोक्त सोसाइटी ने सदस्यों के बीच इसके आवंटन के प्रयोजन से भूमि का टुकड़ा अर्जित किया था। वर्ष 1983-84 के बीच परिवादी ने 10 डिसमिल माप वाली भूखंड सं॰ A/15 के भूमि के टुकड़े के आवंटन के प्रयोजन से विभिन्न शीर्षों के अधीन राशियों को जमा किया। इसका आवंटन किया गया था। आवंटन के बाद परिवादी ने भूखंड के उपर चारदीवारी खड़ी करने के लिए विपुल धन का निवेश किया।

5. आगे मामला यह है कि याची ने पूर्वोक्त सोसाइटी का मानदेय सचिव होने के नाते आवंटन को रद्द करने के बाद परिवादी के खाता में कपटपूर्वक 1,97,216/- रुपयों की राशि जमा किया। उसके बाद याची ने रजिस्टर्ड डाक के अधीन परिवादी को 9,89,000/- रुपयों की राशि का 20 बैंक ड्राफ्ट भेजा। याची ने उस राशि को किसी व्यक्ति से विक्रय मूल्य के रूप में प्राप्त किया था जिसे उसी भूखंड का आवंटन किया गया था जिसे पहले परिवादी को आवंटित किया गया था। इसके बारे में जानकारी होने पर परिवादी ने जिला सहकारिता अधिकारी, राँची के समक्ष परिवाद किया। जब परिवादी को याची की ओर से किसी बेईमानी का संदेह हुआ, परिवादी ने रजिस्टर्ड डाक के माध्यम से 20 बैंक ड्राफ्ट लौटा दिया किंतु याची ने इसे स्वीकार करने से इनकार कर दिया। इस प्रकार, यह अभिकथित किया गया है कि याची को उस भूखंड जिसे परिवादी को आवंटित किया गया था को किसी अन्य व्यक्ति को आवंटित करने की अधिकारिता नहीं थी और इस तरीके से याची ने केवल अपने निजी लाभ के लिए और परिवादी के साथ छल एवं प्रवंचना करने के लिए सोसाइटी के नाम में दस्तावेज सृजित करके कूट रचना का अपराध किया।

6. ऐसे अभिकथन पर भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420, 467, 468, 471 के अधीन मामला कॉके पी॰ एस, केस सं॰ 16 वर्ष 2013 के रूप में दर्ज किया गया था। वह प्राथमिकी चुनौती के अधीन है।

7. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री पांडे नीरज राय निवेदन करते हैं कि प्राथमिकी में किए गए समस्त अभिकथन को सत्य मानने पर भी कूटरचना अथवा छल और न्यास के दांडिक भंग

का अपराध नहीं बनता है क्योंकि याची को किसी तरीके से परिवादी के साथ कपट करने का अभिकथन नहीं किया गया है। परिवादी का सरल मामला यह है कि कतिपय राशि जमा करने पर उसे भूखंड आवंटित किया गया था। बाद में, परिवादी द्वारा जमा की गयी राशि उसको लौटा दी गयी थी जब उक्त भूखंड जिसे पहले परिवादी को आवंटित किया गया था, तीसरे व्यक्ति को आवंटित किया गया था और इसका कारण यह था कि आवंटन के समय पर नियत किए गए कतिपय निबंधनों एवं शर्तों को परिवादी द्वारा परिपूर्ण नहीं किया गया था किंतु यह याची का बचाव है और यदि इस बचाव को नहीं माना जाता है, तब भी याची को उपलब्ध बिंदु यह है कि परिवाद में किए गए अभिकथन प्रकटत: कूटरचना अथवा न्यास के दांडिक भंग अथवा छल का अपराध नहीं बनाते हैं।

8. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची अवैतनिक सचिव होने के नाते आवंटन रद्द करने और तीसरे व्यक्ति को इसे आवंटित करने के लिए सक्षम नहीं था और तद्द्वारा याची की कार्रवाई प्राधिकाररहित थी और उस स्थिति में यह आसानी से कहा जा सकता है कि याची ने कूटरचना एवं छल का अपराध किया है।

9. आगे यह निवेदन किया गया था कि सोसाइटी की प्रबंध कमिटी को आवंटन रद्द करने की शक्ति है जिसको साधारण निकाय द्वारा अनुमोदित कराने की आवश्यकता है किंतु इस मामले में ऐसी कोई प्रक्रिया अपनायी नहीं गयी है बल्कि याची ने स्वयं अपने आप आवंटन रद्द कर दिया और तद्द्वारा उसे कूटरचना का अपराध करता कहा जा सकता है। इसके अतिरिक्त, आरोप-पत्र पहले ही दाखिल किया गया है।

10. इस प्रकार, एक ओर याची की ओर से किया गया अभिवचन यह है कि अगर किसी प्राधिकार के बिना आवंटन रद्द करने का याची के विरुद्ध किया गया अभिकथन स्वीकार किया जाता है, तब भी अपराध जिसके अधीन प्राथमिकी दर्ज की गयी है नहीं बनता है। दूसरी ओर, सूचक की ओर से किया गया निवेदन यह है कि चूँकि याची ने किसी प्राधिकार के बिना आवंटन रद्द कर दिया है, याची का कृत्य छल का अपराध गठित करता है।

11. अत: यह विचार किया जाना है कि क्या प्राथमिकी में किए गए अभिकथन छल, न्यास के दांडिक भंग अथवा कूटरचना का अपराध गठित करते हैं या नहीं?

12. भारतीय दंड संहिता की धारा 415 के अधीन छल का अपराध परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *^^**Ny-**&tks dksbZ fdlh 0;fDr ls çopuk djus mls 0;fDr dks] ftls bl çdkj çofpr fd;k x;k g] diViwoZd ;k cbekuh ls mRçfjr djrk g fd og dksbZ lEifÙk fdlh 0;fDr dks ifjnÙk djs n] ;k ;g lEefr n n fd dksbZ 0;fDr fdlh lEifÙk dks j[ks j[ks ;k lk'k; mls 0;fDr dks] ftls bl çdkj çofpr fd;k x;k g] mRçfjr djrk g fd og ,Slk dksbZ dk;Z djs] ;k djus dk yksi djs ftls og ;fn mls bl çdkj çofpr u fd;k x;k gksrk rks] u djrk] ;k djus dk yksi u djrk] vkSj ftl dk;Z ;k yksi ls mls 0;fDr dks 'kkjhfjd] ekufld] [;kfr lacèkh ;k lkEifÙkd udlku ;k vigkfu dkfjr gksrh g] ;k dkfjr gksuh lEHkkO; g] og ^^Ny** djrk g] ;g dgk tkrk gA*

इसके पठन से यह प्रतीत होता है कि छल का अपराध गठित करने के लिए निम्नलिखित अवयव आवश्यकत: होने चाहिए।

> *(1) mls èkks[kk nsdj mls 0;fDr dks diViw.kZ vFkok èkks[kkèkM+h Hkjk çyksHku gksuk pkfg,A*

(2) (a) bl çdkj Nyk x;k 0;fDr fdlh 0;fDr dk lifÙk dk ifjnk; dju d fy, çfjr fd;k tkuk pkfg, ;k bl ij lgefr nu okyk gkuk pkfg, fd dkb 0;fDr fdlh lifÙk dk viu ikl j[kxkA

(b) bl çdkj Nyk x;k 0;fDr vk'kf;r :i l ,lk dk; dju ;k u dju d fy, çfjr gkuk pkfg, ftl og djrk ;k ugh djrk ;fn ml bl çdkj Nyk ugh x;k gkrkA

(3) 2 (b) }kjk vkPNkfnr ekeyk e dk; ;k foyki ,lk gkuk pkfg, tk Ny x, 0;fDr dk 'kkjhfjd :i l ;k mldh çfr"Bk ;k lifÙk dk gkfu dkfjr dj ;k gkfu ;k udlku dkfjr fd, tku dh lHkkouk gkA

13. इस प्रकार, छल का अपराध गठन करने के लिए पहला आवश्यक तत्व यह है कि अभियुक्त द्वारा परिवादी की प्रवंचना होनी है। जब तक प्रवंचना नहीं होगी, छल का अपराध कभी आकर्षित नहीं हो सकता है। प्रवंचना किए जाने के बाद छला गया व्यक्ति किसी कार्य को करने या नहीं करने के लिए प्रेरित किया गया होना चाहिए।

14. यहाँ वर्तमान मामले में कोई भी पा सकता है कि किसी प्रवंचना का कोई अभिकथन नहीं है क्योंकि परिवादी का सरल मामला यह है कि धन जमा किए जाने पर उसे भूखंड आवंटित किया गया था। परिवादी का मामला यह कभी नहीं है कि कपटपूर्वक अथवा गैरईमानदार रूप से प्रेरित किए जाने पर भूखंड के आवंटन के लिए धन जमा किया गया था।

15. इस प्रकार, छल का अपराध गठित करने वाले प्रथम तत्व की कमी है और इसलिए, छल के अपराध की कारिता का प्रश्न ही उद्भूत नहीं होता है।

16. जहाँ तक भारतीय दंड संहिता की धारा 406 के अधीन अपराध का संबंध है, वह भी याची के विरुद्ध बनता प्रतीत नहीं होता है। भारतीय दंड संहिता की धारा 405 में न्यास के दांडिक भंग को परिभाषित किया गया है जिसका पठन निम्नलिखित है:–

*"405. **vkijkfèkd U;klHkx-**&tk dkb lEifÙk ;k lEifÙk ij dkb Hkh v[R;kj fdlh çdkj viu dk U;Lr fd, tku ij ml lEifr dk cbekuh l nfofu;kx dj yrk g ;k ml viu mi;kx e lifjofrr dj yrk g ;k ftl çdkj ,lk U;kl fuogu fd;k tkuk g] ml dk fofgr dju okyh fofèk d fdlh fun'k dk] ;k ,l U;kl d fuogu d ckj e mld }kjk dh xb fdlh vfHk0;Dr ;k foof{kr oèk lfonk dk vfrØe.k djd cbekuh l ml lEifÙk dk mi;kx ;k 0;;u djrk g] ;k tkuc>dj fdlh vU; 0;fDr dk ,lk djuk lgu djrk g] og ^^vkijkfèkd U;klHkx** djrk gA*

17. उक्त प्रावधान के पठन पर भारतीय दंड संहिता के अधीन अपराध गठित करने के लिए निम्नलिखित अवयव होने चाहिए:–

(a) fdlh 0;fDr dk lifÙk U;Lr vFkok lifÙk d mij v[r;kj U;Lr fd;k tkuk pkfg, FkkA

(b) ml 0;fDr dk ml lifÙk dk Lo; viu mi;kx d fy, xj bekunkj :i l nfofu;kftr vFkok lifjofrr djuk pkfg, vFkok ml lifÙk dk xj bekunkj :i l mi;kx dju vFkok cpu d fy, vFkok ,lk dju d fy, fdlh vU; 0;fDr dk tkuc> dj ihfMr djuk pkfg,A

(c) fd ,l nfofu;kx] lifjoru] mi;kx vFkok fuiVku dk ml <x ftle ,l U;kl dk fuogu fd;k tkuk g] vFkok fdlh fofèkd lfonk ftl ,l U;kl d fuogu dk Li'k djr g, 0;fDr }kjk fd;k x;k g] dk fofgr dju okyh fofèk;k d fdlh fun'k d mYy?ku e gkuk pkfg,A"

18. प्राथमिकी में किए गए अभिकथन की पृष्ठभूमि में मैं उपर उल्लिखित अवयवों में से किसी को परिपूर्ण किया जाता नहीं पाता हूँ। अत:, यह आसानी से कहा जा सकता है कि न्यास के दांडिक भंग का अपराध नहीं बनता है।

19. मामले के अन्य पहलू पर आते हुए यह कथन किया जाए कि कूटरचना भारतीय दंड संहिता की धारा 463 के अधीन परिभाषित किया गया है जो अनुबंधित करता है कि झूठा दस्तावेज बनाया जाना कूटरचना है। धारा 464 झूठा दस्तावेज बनाने के बारे में कहती है। किसी व्यक्ति के निम्नलिखित कृत्य झूठा दस्तावेज बनाने के तुल्य होंगे:–

^^igyh dkfV og g tgk 0;fDr ;g fo'okl dkfjr fd, tku d vk'k; d lkFk fd ,lk nLrkot fdlh vU; 0;fDr }kjk vFkok fdlh vU; 0;fDr d çkfèkdkj }kjk ft ld }kjk vFkok ft ld çkfèkdkj }kjk og tkurk g fd bl cuk;k vFkok fu"ikfnr ugh fd;k x;k Fkk] xj bekunkj :i l vFkok diViod nLrkot cukrk ;k fu"ikfnr djrk gA

nljh dkfV og g tgk 0;fDr xjbekunkj :i l vFkok diViod fofèki.k çkfèkdkj d fcuk jídj.k }kjk vFkok vU;Fkk }kjk nLrkot d fdlh rkfRod Hkkx e Lo; }kjk vFkok fdlh vU; 0;fDr }kjk cuk, tku vFkok fu"ikfnr fd, tku d ckn ifjofrr djrk gA

rhljh dkfV og g tgk 0;fDr ;g tkur g, fd ,lk 0;fDr

(a) foÑrfpÙkrk((b) u'kk(vFkok (c) ml ij dh x;h çopuk d dkj.k nLrkot dh fo"k;oLr vFkok ifjoru dh çÑfr dk ugh tku ldrk Fkk] xj bekunkj :i l vFkok diViod fdlh 0;fDr dk nLrkot ij gLrk{kj dju] fu"ikfnr dju vFkok ifjofrr dju d fy, etcj djrk gA

l{ki e] 0;fDr dk ^>Bk c;ku nrk gvk dgk tkrk g ;fn (i) mlu dkb vkj gku vFkok fdlh vU; }kjk çkfèkÑr fd, tku dk nkok djr g, nLrkot cuk;k vFkok fu"ikfnr fd;k gk vFkok (ii) mlu nLrkot dk ifjofrr fd;k vFkok bld lkFk NMNkM fd;k gk(vFkok (iii) mlu çopuk djd vFkok 0;fDr tk viuh bfn;k d fu;=.k e ugh g l nLrkot çkIr fd;k gkA*

20. दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि जहाँ व्यक्ति यह विश्वास कारित किए जाने के आशय के साथ कि ऐसा दस्तावेज किसी अन्य व्यक्ति द्वारा अथवा किसी अन्य व्यक्ति के प्राधिकार द्वारा जिसके द्वारा अथवा जिसके प्राधिकार द्वारा वह जानता है कि इसे बनाया अथवा निष्पादित नहीं किया गया था, गैर ईमानदार रूप से अथवा कपटपूर्वक दस्तावेज बनाता अथवा निष्पादित करता है।

21. आगे यह प्रतीत होता है कि जहाँ व्यक्ति गैरईमानदार रूप से अथवा कपटपूर्वक विधिपूर्ण प्राधिकार के बिना रद्दकरण द्वारा अथवा अन्यथा द्वारा दस्तावेज के किसी तात्विक भाग में स्वयं द्वारा अथवा किसी अन्य व्यक्ति द्वारा बनाए जाने अथवा निष्पादित किए जाने के बाद परिवर्तित करता है और आगे जहाँ व्यक्ति यह जानते हुए कि ऐसा व्यक्ति (a) विकृत चित्तता, (b) नशा अथवा उस पर की गयी प्रवंचना के कारण दस्तावेज की विषय वस्तु अथवा परिवर्तन की प्रकृति को नहीं जान सकता था, गैर ईमानदार रूप से अथवा कपटपूर्वक किसी व्यक्ति को दस्तावेज पर हस्ताक्षर करने, निष्पादित करने अथवा परिवर्तित करने के लिए मजबूर करता है, तब भी यह झूठा दस्तावेज बनाने का मामला होगा।

22. यहाँ परिवाद में किए गए अभिकथन झूठा दस्तावेज बनाने की किसी कोटि में कभी नहीं आते हैं। उस स्थिति में, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 467, 468 या 471 के अधीन अपराध की कारिता का प्रश्न ही नहीं है।

23. इस प्रकार, मैं पाता हूँ कि परिवाद में किए गए अभिकथन अपराध गठित नहीं करते हैं जिनके अधीन प्राथमिकी दर्ज की गयी है।

तद्नुसार, प्राथमिकी एतद् द्वारा अभिखंडित की जाती है।

परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

बलवंत सहाय

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1478 of 2009. Decided on 21st February, 2014.

विद्यालय विधि–प्रोन्नति–ए॰ सी॰ पी॰–प्रत्यर्थीगण प्रशिक्षण प्राप्ति की तिथि के बजाए नियुक्ति की आरंभिक तिथि से सेवा के 12 वर्षों की गणना करते हुए ए॰ सी॰ पी॰ के प्रदान की तिथि पुनरीक्षित करने के लिए बाध्य हैं–प्राधिकारी को मामले में निर्णय लेने और याची को देय तिथि से ए॰ सी॰ पी॰ का लाभ देने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 2 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. M.M. Pan, For the Petitioner; J.C. to G.A., For the Respondent.

आदेश

पक्षों के अधिवक्ता सुने गए।

2. क्षेत्रीय उप निदेशक, शिक्षा, उत्तरी छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग द्वारा जारी मेमो सं॰ 2286 के तहत दिनांक 11.12.2007 के आदेश द्वारा याची का तिथि जिस पर उसने अध्यापक प्रशिक्षण अर्हता अर्जित किया अर्थात् दिनांक 19.4.1995 को उस तिथि जिससे वरीयता की गणना करनी होगी के रूप में मानते हुए दिनांक 19.4.2007 के प्रभाव से प्रथम ए॰ सी॰ पी॰ का लाभ दिया गया था। उसी आदेश द्वारा 35 अन्य व्यक्तियों को भी ए॰ सी॰ पी॰ का लाभ दिया गया था। याची ने सेवावधि की गणना करने के प्रयोजन से दिनांक 19.7.1986 को उसकी नियुक्ति की आरंभिक तिथि मानकर दिनांक 19.4.2007 के बजाए दिनांक 9.8.1999 के प्रभाव से ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान किए जाने की तिथि पुनरीक्षित करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 2, क्षेत्रीय उप निदेशक, उत्तरी छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग को निर्देश देने के अभिवचन के साथ रिट आवेदन दिया। याची ने अब **लेटर्स पेटेन्ट अपील सं॰ 214 वर्ष 2008,** जिसे झारखंड राज्य द्वारा निजी कर्मचारियों के विरुद्ध दाखिल एक अन्य सदृश मामले **एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 295 वर्ष 2008** के साथ दिनांक 6.11.2012 को विनिश्चित किया गया था, में **अरुण सिन्हा एवं अन्य बनाम बिहार लोक सेवा आयोग, पटना** के मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है। उसी निर्णय द्वारा, याची के मामले अर्थात् डब्ल्यू॰ पी॰ एस॰ सं॰ 4235 वर्ष 2004 में विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्णय के विरुद्ध झारखंड राज्य द्वारा दाखिल लेटर्स पेटेन्ट अपील सं॰ 319 वर्ष 2008 भी विनिश्चित किया गया था। इस न्यायालय की खंडपीठ ने विद्वान एकल न्यायाधीश के निर्देशों को मान्य ठहराया जिसके अधीन निदेशक, प्राथमिक शिक्षा, झारखंड राज्य को यह देखने का निर्देश दिया गया था कि प्रोन्नति के लिए याची के मामले पर वरीयता/ग्रेडेशन सूची में उसके उपर के किसी व्यक्ति की वरीयता को प्रभावित किए बिना पदग्रहण की तिथि से और न कि प्रशिक्षित हो जाने की तिथि से विचार किया जाएगा। पूर्वोक्त एल॰ पी॰ ए॰ में निर्णय के विरुद्ध झारखंड राज्य द्वारा दाखिल विशेष अनुमति अपील एस॰ एल॰ पी॰ सं॰ 5520-

5522 वर्ष 2013 भी माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिनांक 8.3.2013 के निर्णय के तहत खारिज कर दी गयी थी। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा लेटर्स पेटेन्ट अपीलों और विशेष अनुमति अपील में दिए गए निर्णयों को वर्तमान रिट याचिका के आई॰ ए॰ सं॰ 322 वर्ष 2014 में परिशिष्ट 7 और 8 के रूप में संलग्न किया गया है।

3. अत: याची के विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि इस न्यायालय द्वारा दिए गए और माननीय सर्वोच्च न्यायालय तक मान्य ठहराया गए निर्णयों द्वारा सुनिश्चित विधिक अवस्था की दृष्टि में प्रत्यर्थीगण दिनांक 19.4.1995 को प्रशिक्षण प्राप्ति की तिथि के बजाए नियुक्ति की आरंभिक तिथि अर्थात् दिनांक 19.7.1986 से सेवा के 12 वर्षों की गणना करते हुए ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान करने की तिथि पुनरीक्षित करने के लिए बाध्य हैं।

4. राज्य के विद्वान अधिवक्ता स्वयं याची के मामले सहित यहाँ उपर निर्दिष्ट किए गए निर्णयों द्वारा सुनिश्चित विधिक अवस्था की दृष्टि में ऐसी प्रार्थना पर आपत्ति नहीं करते हैं।

5. मामले के उस दृष्टिकोण में, याची की नियुक्ति की तिथि अर्थात् दिनांक 19.7.1986 से सेवा के 12 वर्षों की गणना करके तिथि अर्थात् दिनांक 9.8.1999, जिस पर उक्त परिपत्र प्रभावकारी बनाया गया था, के प्रभाव से ए॰ सी॰ पी॰ प्रदान करने की तिथि पुनरीक्षित करने के लिए क्षेत्रीय उप निदेशक, शिक्षा, उत्तरी छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग को निर्देश देने के लिए वर्तमान रिट याचिका में की गयी प्रार्थना अनुज्ञात किए जाने योग्य है।

6. तद्नुसार, प्रत्यर्थी सं॰ 2, क्षेत्रीय उपनिदेशक, शिक्षा, उत्तरी छोटानागपुर डिविजन, हजारीबाग को आदेश की प्रति की प्राप्ति की तिथि से 10 सप्ताह के युक्तियुक्त अवधि के भीतर याची को देय तिथि से ए॰ सी॰ पी॰ का लाभ प्रदान करने और मामले में निर्णय लेने का निर्देश दिया जाता है।

7. पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है और तद्नुसार समस्त अंतर्वर्ती आवेदनों को बंद किया जाता है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

जन्मेजय कुमार सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Cont. Case (Civil) No. 1047 of 2013. Decided on 22nd March, 2014.

न्यायालय अवमान अधिनियम, 1971—धारा 12—न्यायालय का अवमान–सेवा निवृत्ति लाभों के भुगतान एवं अनुकंपा पर नियुक्ति से संबंधित मामला–अपराध के अधीन निर्णय का सारवान रूप से पालन किया गया है–पारिवारिक पेंशन एवं उपदान के भुगतान के लिए याची को बिहार राज्य के अधीन सक्षम प्राधिकारी के पास जाने की स्वतंत्रता दी गयी–अवमान याचिका निपटायी गयी। (पैराएँ 4 से 6)

अधिवक्तागण.–Mr. Kundan Kumar Ambastha, For the Petitioner; J.C. to Sr.S.C.-II, For the Opp. Parties.

आदेश

प्रत्यर्थी सं॰ 3 की ओर से अन्य बातों के साथ यह कथन करते हुए प्रति शपथ पत्र दाखिल किया गया है कि विभाग ने दिनांक-24 सितम्बर, 2013 के मेमो सं॰ 1130 (परिशिष्ट-ए॰) के तहत अवकाश

नगदकरण लाभ के लिए याची को अनुमति दी गयी है और दिनांक 28 अक्टूबर, 2013 के मेमो सं॰ 1310 (परिशिष्ट–बी॰) के तहत पारिवारिक पेंशन एवं उपदान भी मंजूर किया गया है। अनुकंपा पर नियुक्ति से संबंधित मामला सक्रिय विचार के अधीन लंबित है और केंद्रीय अनुकंपा पर नियुक्ति कमिटी के गठन पर दो माह की अवधि के भीतर मामला निपटाने की उम्मीद की जाती है।

2. विरोधी पक्षकार–महालेखाकार, झारखंड के विद्वान अधिवक्ता ने यह कथन भी किया है कि उपदान एवं पेंशन के भुगतान के लिए प्राधिकार परची दिनांक 22 नवंबर, 2013 को उनके कार्यालय से जारी की गयी है। किंतु याची के अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि याची की माता को अभी तक पारिवारिक पेंशन एवं उपदान का भुगतान नहीं किया गया है।

3. महालेखाकार के विद्वान अधिवक्ता दिनांक 22 नवंबर, 2013 के विशेष सील प्राधिकारी का प्रसंग देकर स्पष्ट करते हैं कि चूँकि महालेखाकार, बिहार के कार्यालय द्वारा पूर्वोक्त भुगतान किया जाना है, अंतत: अरवल कोषागार, बिहार से भुगतान किए जाने के लिए उनके पक्ष में पूर्वोक्त प्राधिकार जारी किया गया है जैसा याची ने चुना है।

4. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि अपराध के अधीन निर्णय का पालन सारवान रूप से किया गया है। यदि याची ने पूर्वोक्तानुसार दिनांक 22 नवंबर, 2013 के विशेष सील प्राधिकार के निबंधनानुसार पारिवारिक पेंशन एवं उपदान निकालने के लिए प्राधिकार परची अभी तक प्राप्त नहीं किया है, याची आवश्यक के लिए बिहार राज्य के अधीन सक्षम प्राधिकारी के पास जाने के लिए स्वतंत्र है।

5. इस उम्मीद के साथ कि संबंधित विरोधी पक्षकार अपने कारण बताओं में अपने द्वारा उपदर्शित समय के भीतर अनुकंपा पर नियुक्ति के मामले में समुचित निर्णय लेंगे, अवमान याचिका निपटायी जाती है।

6. याची को न्यायालय के ध्यान में इसे लाने की छूट होगी यदि संबंधित विरोधी पक्षकार द्वारा अपने कारण बताओं में उपदर्शित समय तक याची की अनुकंपा नियुक्ति से संबंधित निर्णय नहीं लिया जाता है।

---

ekuuh; ujUn ukFk frokjh] U;k;efr

अलख नाथ पांडे

cuke

अनिरुद्ध राम एवं अन्य

W.P. (C) No. 3330 of 2012. Decided on 28th January, 2014.

भारत का संविधान–अनुच्छेद 226—मूल विक्रय विलेख मंगाने के लिए याची द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार करने वाले आदेश के विरुद्ध रिट याचिका–विक्रय विलेख मंगाने का पूर्व आदेश इसी न्यायालय द्वारा पारित किया गया था–बाद के चरण पर उसी न्यायालय द्वारा आदेश बदलना विधि के प्रावधान के विपरीत है–आक्षेपित आदेश अपास्त।

(पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. Sanjay Kumar Tiwari, For the Petitioner; Mr. Lalit Kumar Lal, For the Respondents.

आदेश

याची ने विद्वान सिविल न्यायाधीश, सीनियर डिविजन-I (उपन्यायाधीश-I) गढ़वा द्वारा पारित दिनांक 2 जून, 2012 के आदेश को अपास्त करने के लिए प्रार्थना किया है जिसके द्वारा जिला सब रजिस्ट्रार के कार्यालय से लिए गए आरक्षी उपाधीक्षक, गढ़वा के कार्यालय से मूल विक्रय विलेख सं॰ 1533 वर्ष 2008 को मांगने के लिए दिनांक 2 जून, 2012 को याची प्रतिवादी सं॰ 1 द्वारा दाखिल आवेदन अस्वीकार कर दिया गया है।

2. यह कथन किया गया है कि पहले दिनांक 8 सितंबर, 2010 के आदेश द्वारा प्रार्थना अनुज्ञात की गयी थी। न्यायालय द्वारा अभिलेख तलब किया गया था, किंतु वर्णन में कुछ गलती के कारण विक्रय-विलेख प्रस्तुत नहीं किया जा सका था। तत्पश्चात उक्त विक्रय विलेख को मंगाने के लिए प्रतिवादी सं॰ 1 की ओर से पुनः याचिका दाखिल की गयी थी, किंतु दिनांक 2 जून, 2012 के आक्षेपित आदेश द्वारा विद्वान अवर न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि मूल विक्रय विलेख को मंगाने की आवश्यकता नहीं है और प्रतिवादी की याचिका अस्वीकार कर दिया।

3. यह निवेदन किया गया है कि प्रतिवादी द्वारा दाखिल विक्रय विलेख से तुलना करने के लिए और वाद में अंतर्ग्रस्त विवाद्यकों के न्यायोचित न्याय निर्णयन के लिए मूल विक्रय विलेख आवश्यक है। मूल विक्रय विलेख की आवश्यकता पर विचार करते हुए न्यायालय ने मूल विलेख मंगाने के लिए दिनांक 8 सितंबर, 2010 का आदेश पारित किया था।

4. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि किसी उच्चतर न्यायालय द्वारा उक्त आदेश अपास्त अथवा परिवर्तित नहीं किया गया था और न ही आदेश के पुनर्विलोकन/वापस बुलाने की कोई प्रार्थना की गयी थी। विद्वान उप न्यायाधीश ने याची की प्रार्थना अस्वीकार करने और अपने पूर्व आदेश में छेड़छाड़ करने में गंभीर गलती की है। आक्षेपित आदेश न्यायिक औचित्यता के विरुद्ध है और पूर्णतः अवैध और असंपोषणीय है।

5. प्रत्यर्थीगण उपस्थित हुए और आक्षेपित आदेश का समर्थन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया। किंतु प्रतिशपथ पत्र में यह कथन नहीं किया गया है कि पूर्व आदेश को चुनौती दी गयी थी अथवा उच्चतर न्यायालय द्वारा इसे परिवर्तित अथवा अपास्त किया गया था। प्रत्यर्थीगण की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि चूँकि विद्वान अवर न्यायालय ने मूल विक्रय विलेख की आवश्यकता महसूस नहीं किया था, उन्होंने आक्षेपित आदेश पारित किया है।

6. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और आक्षेपित आदेश के साथ दिनांक 8 सितंबर, 2010 के आदेश का परिशीलन किया है। यह स्वीकृत स्थिति है प्रश्नगत मूल विक्रय विलेख को मंगाने के लिए की गयी प्रार्थना उसी न्यायालय द्वारा दिनांक 8 सितंबर, 2010 के आदेश द्वारा अनुज्ञात की गयी थी। तत्पश्चात किसी पक्ष द्वारा आदेश को चुनौती नहीं दी गयी थी। उक्त आदेश वापस लेने के लिए अभिलेख पर याचिका मौजूद नहीं है। उसकी दृष्टि में, पूर्व आदेश के साथ छेड़छाड़ करने और इसके प्रभाव को उलटने का अवसर विद्वान अवर न्यायालय के पास नहीं है।

7. यदि कोई आदेश गलत, अवैध अथवा अनुचित है, समुचित न्यायालय के समक्ष आदेश को चुनौती देने के लिए प्रावधान हैं। बाद के चरण पर स्वप्रेरणा पर उसी न्यायालय द्वारा आदेश बदलना विधि के प्रावधान के विपरीत है और अननुज्ञेय है। यह न्यायिक औचित्यता एवं सुनिश्चित मानकों के भी विरुद्ध है।

8. इस प्रकार, आक्षेपित आदेश पूर्णतः अवैध और असंपोषणीय है और इसे एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

9. यह सूचित किया गया है कि वाद तर्क के चरण पर है। विद्वान अवर न्यायालय पूर्व आदेश की दृष्टि में वाद पर कार्यवाही करेगा और सुनवाई शीघ्र करेगा ताकि आगे किसी विलंब के बिना वाद निपटाया जा सके।

रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

भोला नाथ रजक एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) Nos. 7526 of 2013 with I.A. No. 173 of 2014. Decided on 16th January, 2014.

(क) सेवा विधि–आयु–कट-ऑफ तिथि नियत किया जाना–उच्चतर आयु सीमा के लिए कट-ऑफ तिथि नियत करने और अपने आवेदन देने के लिए समय बढ़ाने और पिछड़े कोटि के उम्मीदवारों के लिए महत्तम आयु सीमा में शिथिलीकरण के लिए भी प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने के लिए रिट याचिका–स्वीकृत रूप से, वर्ष 2008 के बाद सिविल न्यायाधीश (मुंसिफ) का पद भरने के लिए परीक्षा नहीं ली गयी थी–सिविल न्यायाधीशों की भरती के लिए नियमित परीक्षा की अनुपस्थिति में याचीगण परीक्षा में उपस्थित नहीं हो सके थे–इस बीच रिट याचीगण ने और समस्थित व्यक्तियों ने भी 35 वर्ष की महत्तम आयु पूरा कर लिया है–अभिनिर्धारित, परीक्षा लेने में विलंब के कारणों से याचीगण को अनर्हित नहीं किया जाना चाहिए–विज्ञापन में नियत कट-ऑफ तिथि उपांतरित की गयी–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 8 एवं 13)

(ख) झारखंड न्यायिक सेवा (भरती) नियमावली, 2004—नियम 5—उच्च आयु सीमा का शिथिलीकरण–नियमावली केवल एस॰ सी॰ और एस॰ टी॰ कोटियों से आने वाले उम्मीदवारों के लिए उपरी आयु सीमा का शिथिलीकरण प्रावधानित करती है–नियमावली पिछड़े उम्मीदवारों के लिए आयु सीमा का शिथिलीकरण अनुबंधित नहीं करता है। (पैरा 12)

निर्णयज विधि.–(1997)6 SCC 614; 2008 (2) JLJR 543; (2005) 3 JLJR 622—Relied upon.

अधिवक्तागण.–Mr. Anil Kumar, For the Petitioners; Mr. Jai Prakash, For the Resp.-State; Mr. Sanjoy Piprawall, For the Resp.-JPSC; Mr. Ajit Kumar, For the High Court.

आर॰ बानुमथी, मुख्य न्यायाधीश.–याचीगण सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) के पद के लिए आवेदन आमंत्रित करने वाले दिनांक 10.12.2013 के विज्ञापन सं॰ 4/2013 के तहत जारी विज्ञापन में इसको प्रतिस्थापित करके दिनांक 31.1.2009 को उपरी आयु सीमा के लिए कट ऑफ तिथि नियत करने और अपने आवेदन देने के लिए समय बढ़ाने और कि पिछड़ी कोटि के उम्मीदवारों को महत्तम आयु सीमा में तीन वर्ष का शिथिलीकरण दिया जाए, के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित करते हैं।

2. झारखंड लोक सेवा आयोग (जे॰ पी॰ एस॰ सी॰) ने विज्ञापन सं॰ 4/2013 जारी किया जो दिनांक 10.12.2013 को अनेक समाचारपत्रों में प्रकाशित हुआ जिसके द्वारा 35 वर्ष की महत्तम आयु की संगणना करने के प्रयोजन से दिनांक 31.1.2013 की कट-ऑफ तिथि के साथ सामान्य कोटि के

उम्मीदवारों के लिए 35 वर्ष की महत्तम आयु निहित करते हुए सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) के पद के लिए पात्र उम्मीदवारों से आवेदन आमंत्रित किया गया था। रिट याचीगण परीक्षा के आकांक्षी उम्मीदवार हैं। याचीगण का मामला यह है कि वर्ष 2008 में सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) के पद पर नियुक्ति के लिए परीक्षा ली गयी थी और तत्पश्चात सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) के पद पर नियुक्ति के लिए परीक्षा नहीं ली गयी थी। चूँकि वर्ष 2008 के बाद परीक्षा नहीं ली गयी थी, रिट याचीगण और समस्थित उम्मीदवारों ने 35 वर्ष की आयु पूरा कर लिया था और चूँकि उन्होंने 35 वर्ष की उपरी आयु सीमा, जैसा आक्षेपित विज्ञापन में प्रत्यर्थीगण द्वारा नियत किया गया है, पार कर लिया है, याचीगण को परीक्षा में उपस्थित होने के अवसर से वंचित किया जा रहा है। चूँकि वर्ष 2008 के बाद परीक्षा नहीं ली गयी थी, 35 वर्ष की महत्तम आयु सीमा की संगणना करने के लिए कट ऑफ-तिथि दिनांक 31.1.2013 के बजाय दिनांक 31.1.2009 के रूप में नियत की जानी चाहिए थी। अत: यह रिट याचिका दाखिल किया गया है।

3. जब यह मामला दिनांक 20.12.2013 को सुनवायी के लिए आया, रिट याचीगण और प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता को सुनने के बाद और **संजीव कुमार सहाय एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य,** 2008(2) JLJR 543, जो वर्ष 2008 में सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) के पद पर भरती से संबंधित है, में दिए गए निर्णय का अनुसरण करते हुए हमने निम्नलिखित आदेश पारित किया:–

> *"14. ;kphx.k d çfroknk d x.kkx.k ij dkb er vfHk0;Dr fd, fcuk ge fnukd 31.1.2009 dk dV&vkQ&frFk d lkFk 35 o"k dh egÙke vk; fu;r djr g, ;kphx.k dk viuk vkonu nu dh vuefr nr gA ge mu leLr lefLFkr 0;fDr;k dk Hkh vuefr nr g tk (35 o"k dh egÙke vk; d fy,) fnukd 31.1.2009 dk dV vkQ frFk ekur g,] viuk vkonu nu vkj ijh{kk e mifLFkr gku d ik= gkxA*
>
> *15. ge çR;Fkh l0 2 l 4 dk bl lcèk e fnukd 31.1.2009 dk dV&vkQ frFk d lkFk 35 o"k dh egÙke vk; fu;r djr g, fnukd 24.12.2013 rd ijd foKkiu tkjh dju dk fun'k nr gA fnukd 31.1.2009 dk dV&vkQ frFk d :i e yr g, bl çdkj çkIr fd, x, vkonu bl ekey d fu.k; d vè;èkhu gkx vkj bl ijd foKkiu e minf'kr fd;k tk,xkA***

तद्नुसार, जे॰ पी॰ सी॰ ने 35 वर्ष की महत्तम आयु की संगणना के प्रयोजन से दिनांक 31.1.2009 को कट-ऑफ-तिथि नियत करते हुए और आवेदन देने के लिए समय को दिनांक 6.1.2014 से दिनांक 10.1.2014 तक बढ़ाते हुए पूरक अधिसूचना जारी किया है।

4. इस मामले में विचारार्थ बिन्दु यह आया है कि क्या रिट याचीगण झारखंड न्यायिक सेवा (भरती) नियमावली, 2007 के निबंधनानुसार परीक्षा नहीं लिए जाने के कारण 35 वर्ष की महत्तम आयु की संगणना के प्रयोजन से दिनांक 31.1.2009 के रूप में कट-ऑफ तिथि के हकदार हैं।

5. सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) की भरती के लिए प्रासंगिक नियमों को निर्दिष्ट करना प्रासंगिक होगा और झारखंड न्यायिक सेवा (भरती) नियमावली, 2004 के नियम 4 और 5 प्रासंगिक होने के नाते नीचे उद्धृत किए जाते हैं;–

> *^^4. le;≤ ij vk;kx mPp U;k;ky; l ijke'k djd flfoy U;k;kèkh'k (tfu;j fMfotu@eflQ) dh fjfDr;k dh l[;k fofuf'pr vkj vfèklfpr dj ldrk g tlk bu fu;ek d vu#i vfèk"Bk;h vFkok rnFk vkèkkj ij dh tku okyh fu;fDr }kjk Hkj tku d fy, vko';d g vkj rc çR;{k Hkjrh dh çfØ;k*

vkjHk dju d fy, vkj bu fu;ek d vèkhu fu;fDr d ik= vk'k; j[ku oky mEehnokjk l vkonu vkef=r dju d fy, vxlj gkxkA

fdr fjfDr;k dk fofuf'pr ,o vfèklfpr djr g, vk;kx bl jkT; d vèkhu ink ,o lokvk e fjfDr;k d vkj{k.k d lcèk e çHkkoh vfèkfu;ek] fu;ekoyh] vkj fofu;euk d vè;èkhu djxk rkfd vulfpr tkfr] vulfpr tutkfr vkj vU; fiNMk ox d fy, vkjf{kr dkfVokj fjfDr;k dk bl ç;ktu l mPp U;k;ky; }kjk tkjh vfèklpuk e fofgr l[;k e lfEefyr fd;k tk ldA

*5 **ik=rk-**&bl fu;ekoyh d vèkhu flfoy U;k;kèkh'k] tfu;j fMfotu (eflQ) d :i e fu;Dr fd, tku d fy, mEehnokj ik= gkxk ijUr ;g fd*

(a) o"k ftle ijh{kk d fy, og 22 o"k dh vk; l mij vkj 35 o"k dh vk; l uhp dk gA

ijUr ;g fd efgyk mEehnokj vFkok vulfpr tkfr vFkok vulfpr tutkfr l vku oky mEehnokj d ekey e rhu o"k rd mijh vk; lhek dk f'kfFkyhdj.k gkxk]

(b) og ekU;rk çkIr fo'ofo|ky; l fofèk Lukrd gk vkj vfèkoDrk vfèkfu;e] 1961 d vèkhu vfèkoDrk d :i e ithÑr fd;k x;k gkA

(c) mldk LokLF; vPNk gk] mldk ufrd pfj= vPNk gk vkj og ufrd vèkerk vrxLr dju oky fdlh nkfMd ekey e vrxLr ugh gk vFkok bll lcfèkr ugh gkA

6. नियमों के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) के पद के लिए विहित महत्तम आयु विनिश्चित करने के लिए कट ऑफ तिथि नियत करने के लिए प्रावधान नहीं है। हम इस तथ्य के प्रति जागरुक हैं कि सामान्यत: कट-ऑफ तिथि नियत करने के निर्णय में न्यायालयों द्वारा हस्तक्षेप नहीं किया जाता है। किंतु, अविनिश्चित मामलों की विपुल संख्या, अनेक रिक्तियाँ जो वर्ष 2008 से जमा हो गयी हैं जिसने राज्य की जनसंख्या की तुलना में न्यायाधीशों के अनुपात को भी प्रभावित किया है, भी विचार योग्य है जिन्हें हमें ध्यान में रखना होगा।

7. डॉ॰ आमी लाल भट्ट बनाम राजस्थान राज्य एवं अन्य, (1997)6 SCC 614, में सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि पद के लिए विहित महत्तम अथवा न्यूनतम आयु विनिश्चित करने के लिए कट ऑफ तिथि विहित किया जाना नियम निर्माता प्राधिकार अथवा नियोक्ता के स्वविवेक में है। स्वतंत्र कट ऑफ तिथि निहित किया जाना, मनमाने होने के बजाए महत्तम आयु विनिश्चित करने में अनिश्चितता दूर करता है। किंतु इस विवाद्यक को विनिश्चित करते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि लोक हित में शिथिलीकरण की शक्ति का प्रयोग करने की आवश्यकता है, उदाहरणस्वरुप, यदि अन्य उपयुक्त उम्मीदवार पद के लिए उपलब्ध नहीं हैं और उम्मीदवार जो उपयुक्त हैं ने महत्तम आयु सीमा पार कर लिया है अथवा दिए गए मामले में कठिनाई कम करने के लिए, और माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:-

"11. gekj nf"Vdk.k e vk; d f'kfFkyhdj.k d fy, fu;e dh bl çdkj dh 0;k[;k ugh dh tk ldrh gA fn, x, ekey e] ykd fgr e f'kfFkyhdj.k dh 'kfDr dk ç;kx dju dh vko';drk g(mnkgj.kLo#i] ;fn vU; mi;Dr mEehnokj in d fy, miyCèk ugh g vkj ,dek= mEehnokj tk mi;Dr gu egÙke vk; lhek ikj dj fy;k g vFkok fn, x, ekey e dfBukb de dju d fy,A fn, x,

*ekey dh fo'k"k ifjfLFkfr;k e , lk f'kfFkyhdj.k ml ekey dk jktLFkku ykd lok vk;kx dk fufn"V dju d ckn ç'kklu }kjk fn;k tkuk gA dkb Hkh li.k :i.k f'kfFkyhdj.k ugh fn;k tk ldrk g D;kfd foKkiu foyfcr gvk g vFkok fjfDr;k igy l ektn Fkh fo'k"krk tc foKkiu tkjh dju e fdlh foyc d lcèk e fdlh vlnHkko dk vfHkdFku ugh gA li.k#i.k f'kfFkyhdj.k dh 'kfDr mEehnokj dh egÙke vk; fofuf'pr dju e dy vfuf'prrk dk nj djxhA ;g , l vud mEehnokjk d fy, vufpr gk ldrk g tk lefLFkr gk ldr g fdr tk ;gh lkpr g, fd o vk; oftr g vkonu ugh n ldr gA ge ;g n[ku e foQy g fd fdl çdkj çfrokn fd, x, rjhd l f'kfFkydj.k dh 'kfDr dk ç;kx fd;k tk ldrk gA***

8. स्वीकृत रूप से, वर्ष 2008 के बाद सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) का पद भरने के लिए परीक्षा नहीं ली गयी थी। सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) के कैडर में न्यायिक अधिकारियों की भरती के लिए नियमित परीक्षा की अनुपस्थिति में याचीगण परीक्षा में उपस्थित नहीं हो सके थे। इस बीच, रिट याचीगण और समस्थित उम्मीदवारों ने 35 वर्ष की महत्तम आयु पूरा कर लिया है। परीक्षा लेने में विलंब के कारण से रिट याचीगण को परीक्षा में उपस्थित होने से अनर्हित नहीं किया जाना चाहिए।

9. याचीगण के विद्वान अधिवक्ता ने **संजीव कुमार सहाय एवं अन्य बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य,** 2008 (2) JLJR 543, मामले में दिए गए निर्णय पर विश्वास किया जहाँ इस न्यायालय ने दिनांक 31.1.2008 से दिनांक 31.1.2003 तक 35 वर्ष की महत्तम आयु नियत करते हुए कट ऑफ तिथि उपांतरित करके आयु शिथिलीकरण अनुज्ञात किया। इस न्यायालय ने आदेश दिया कि आक्षेपित विज्ञापन सं॰ 13/2008 में नियत कट ऑफ तिथि दिनांक 31.3.2003 हो। नियमों 4 और 5 और माननीय सर्वोच्च न्यायालय के और पटना उच्च न्यायालय के अनेक निर्णयों को निर्दिष्ट करने के बाद इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया:–

*^^LohÑr :i l] foxr lkr o"kk l efIQ d in ij fu;fDr d fy, ijh{kk ugh yh x;h FkhA ;|fi çR;Fkh@jkT; çR;d o"k fjDr ink dk Hkju d fy, vkj ijh{kk yu d fy, ckè;rk d vèkhu FkkA ;|fi jkT; ljdkj dh vkj l fu;fDr dju d fy, etcjh@vfuok;rk ugh g] fjfDr;k miyCèk Hkh g] fdr blh le; ij ;fn fjfDr;k dk tek gku dh vuefr nh tkrh g vkj ,d gh le; dkQh vfèkd fu;fDr dh tkrh g] fuEu eèkk oky mEehnokjk dh fu;fDr gk tku dh lHkkouk gA fdr ;fn vofèkdkfyd :i l ijh{kk yh tkrh g] mEehn g fd miyCèk mEehnokjk e l lokÙke fu;Dr fd, tk,xA bld vfrfjDr] çR;d o"k ijh{kk yu e çR;Fkhx.k dh vkj l fuf"Ø;rk d dkj.k mu fofèk Lukrdk u fofHkUu U;k;ky;k e U;olk; djuk 'k: dj fn;k vkj mUgku ikp o"k l vfèkd dk U;k;ky; vuHko Hkh çkIr dj fy;k gA ;fn mu fofèk Lukrd] tk ijh{kk ugh fy, tku d dkj.k vk; d ij gk tk,x] dk vk; f'kfFkyhdj.k fn;k tkrk g] rc çR;d volj g fd vPN vuHkoh mEehnokjk dk mDr in ij fu;Dr fd;k tk ldrk gA***

10. सुबोध कुमार झा बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, (2005)3 JLJR 622, मामले में झारखंड लोक सेवा आयोग ने ए॰ पी॰ पी॰ के पद पर नियुक्ति के लिए आवेदन आमंत्रित करते हुए वर्ष 2005 में विज्ञापन जारी किया। विज्ञापन में रखे गए शर्तों में से एक यह था कि दिनांक 31.1.2005 को उपरी आयु सीमा सामान्य कोटि के उम्मीदवारों के लिए 35 वर्ष के परे नहीं होनी चाहिए। रिट याचीगण द्वारा समरुप अभिवचन किया गया था कि यद्यपि झारखंड राज्य नवंबर, 2000 में अस्तित्व में आया, लोक

अभियोजक के पद को भरने के लिए परीक्षा नहीं ली गयी थी और इसलिए अधिकतम पात्र उम्मीदवारों को इस तथ्य के कारण वंचित कर दिया गया था कि उन्होंने 35 वर्ष की आयु पार कर लिया है। उक्त निर्णय के पैराग्राफों 5 और 6 में न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

"5. ble dkb fookn ugh g fd fcgkj iuxBu vfèkfu;e d QyLo#i >kj[kM jkT; fnukd 14 uocj] 2000 dk vfLrRo e vk;kA LohÑr :i l] >kj[kM jkT; d l tu l ,0 ih0 ih0 d p;u d fy, ijh{kk ugh yh x;h Fkh vkj igyh ckj o"k 2005 e çR;Fkhx.k u foKkiu fn;k gA mEehnokj] tk mDr in d fy, vkonu nu d ik= Fk vkj ftUgku vc 35 o"k dh vk; ikj dj fy;k g] dk fu'p; gh çR;Fkhx.k dh fuf"Ø;rk d dkj.k mDr in l ofpr dj fn;k x;k gA , lh ifjfLFkfr;k e] mu mEehnokjk ftUgku egÙke vk; lhek ikj dj fy;k g dk vk; e f'kfFkyhdj.k fn;k tkuk gA

*6. vk;kx dh vkj l mifLFkr fo}ku vfèkoDrk Jh fiijoky u ej le{k MCY;0 ih0 ,l0 l0 289/2003 e ikfjr fnukd 22.1.2003 d vkn'k dk çLrr fd;k g vkj fuonu fd;k g fd le#i ifjfLFkfr;k e bl U;k;ky; }kjk ,d fjV ;kfpdk [kkfjt dj nh x;h FkhA vkn'k d ifj'khyu l ;g çrhr gkrk g fd vk;kx u >kj[kM flfoy lok e fu;fDr d fy, l;Dr çfr;kfxrk ijh{kk d fy, foKkiu tkjh fd;k FkkA fjV ;kph u lkekU; dkfV d fy, 35 o"k dh mijh vk; lhek e rhu o"kk dk f'kfFkyhdj.k nu d fy, çR;Fkhx.k dk fun'k nu dh çkFkuk fd;kA bl U;k;ky; d fo}ku ,dy U;k;kèkh'k u ;g vfHkfuèkkfjr djr g, fjV ;kfpdk [kkfjt dj fn;k fd fu;fDr d fy, vk; f'kfFky dju dh 'kfDr vFkok fu;fDr d fy, egÙke vk; fofgr dju dh 'kfDr vFkok fu;fDr d fy, dV&vkQ&frfFk fu;r dju dh 'kfDr fu;fDr çkfèkdkjh@>kj[kM jkT; e fufgr gA fdr] fo}ku vfèkoDrk Jh fiijoky u fu"i{krk fuonu fd;k fd mDr fjV ;kfpdk dh [kkfjt h d ckn çR;Fkh jkT; u l;Dr çfr;kfxrk ijh{kk e mifLFkr gku d fy, nk o"k dk f'kfFkyhdj.k fn;k gA***

11. स्वीकृत रूप से सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) मुंसिफ के पद पर भरती के लिए आयोग ने वर्ष 2008 में विज्ञापन जारी किया और तत्पश्चात दिनांक 10.12.2013 को विज्ञापन सं॰ 4/2013 जारी किया और वर्ष 2008 में जारी पूर्व विज्ञापन और वर्ष 2013 में जारी विज्ञापन के बीच पाँच वर्षों से अधिक का अंतराल है। परिणामस्वरुप, सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) परीक्षा में उपस्थित होने के लिए प्रत्याशा रखने वाले पात्र उम्मीदवारों ने वर्ष 2008 और वर्ष 2013 की अवधि के बीच अपनी आयु पार कर लिया होगा और इसलिए परीक्षा में उपस्थित होने का अवसर उनके पास नहीं था। इस तथ्य को ध्यान में रखने पर कि सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) के पद पर भरती के लिए परीक्षा नहीं ली गयी थी, (विज्ञापन सं॰ 4/2013) के तहत वर्ष 2013 के सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) की भरती के लिए कट ऑफ तिथि उच्च आयु के कारण वंचित पात्र उम्मीदवारों के साथ न्याय करने के लिए दिनांक 31.1.2009 होनी चाहिए। तद्नुसार, आक्षेपित अधिसूचना में 35 वर्ष की महत्तम आयु नियत करने के लिए कट–ऑफ तिथि को दिनांक 31.1.2013 के बजाए दिनांक 31.1.2009 करने का आदेश दिया जाता है।

12. महत्तम आयु सीमा में 3 वर्षों द्वारा इसको बढ़ा करके उपरी आयु में बी॰ सी॰–I और बी॰ सी॰–II में पिछड़े वर्गों को आयु शिथिलीकरण देने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देने के लिए आई॰ ए॰ सं॰ 173/2014 दाखिल किया गया है। झारखंड न्यायिक सेवा (भरती) नियमावली, 2004 का नियम 5 केवल

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति से आने वाले उम्मीदवारों के लिए तीन वर्ष उपरी आयु सीमा का शिथिलीकरण प्रावधानित करता है और नियम पिछड़े उम्मीदवारों के लिए उपरी आयु सीमा का शिथिलीकरण अनुबंधित नहीं करता है। डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 7667 वर्ष 2013 में दिनांक 16.1.2014 के पृथक आदेश द्वारा हमने पिछड़ी कोटि के उम्मीदवारों के संबंध में आयु शिथिलीकरण इप्सित करने वाले रिट याचिका को खारिज कर दिया है।

13. झारखंड न्यायिक सेवा (भरती) नियमावली, 2004 विगत 10 वर्षों से प्रभावी है। याचीगण ने न तो नियमों को चुनौती दिया है और न ही पिछड़ी कोटि के उम्मीदवारों के लिए महत्तम आयु सीमा शिथिल करने के लिए निर्देश इप्सित करने वाली किसी रिट याचिका को दाखिल किया है। सिविल न्यायाधीश (जूनियर डिविजन) (मुंसिफ) भरती, 2013 की परीक्षा के लिए आवेदन दाखिल करने की अंतिम तिथि के कगार पर अंतर्वर्ती आवेदन दाखिल किया गया है। चूँकि अंतर्वर्ती आवेदन अंतिम क्षण पर दाखिल किया गया है, हम इस अंतर्वर्ती आवेदन को ग्रहण करने के इच्छुक नहीं हैं और इस अंतर्वर्ती आवेदन को खारिज करते हैं।

14. निम्नलिखित संप्रेक्षणों/निर्देशों के साथ इस रिट याचिका को अनुज्ञात किया जाता है:

(A) दिनांक 10.12.2013 के आक्षेपित विज्ञापन सं॰ 4/2013 में नियत कट ऑफ तिथि दिनांक 31.1.2013 से दिनांक 31.1.2009 के रूप में उपांतरित की जाती है और कट-ऑफ तिथि को उपांतरित करके आयु में शिथिलीकरण न केवल रिट याचीगण तक सीमित है बल्कि उन समस्थित उम्मीदवारों के लिए भी है जो झारखंड लोक सेवा आयोग द्वारा जारी दिनांक 10.12.2013 के विज्ञापन सं॰ 4/2013 के मुताबिक अध्यपेक्षित अर्हता रखते हैं।

(B) इस न्यायालय के दिनांक 20.12.2013 के आदेश के अनुसरण में झारखंड लोक सेवा आयोग द्वारा दिनांक 6.1.2014 से दिनांक 10.1.2014 तक बढ़ायी गयी आवेदन दाखिल करने की अंतिम तिथि संपुष्ट की जाती है।

(C) झारखंड लोक सेवा आयोग को इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 20.12.2013 के अंतरिम आदेश के अनुसरण में रिट याचीगण एवं अन्य उम्मीदवारों जिन्होंने आवेदन दिया है के आवेदनों को प्राप्त एवं प्रसंस्कृत करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

डॉ॰ कुलदीप नारायण जायसवाल एवं एक अन्य

cuke

श्री शिव नारायण जायसवाल एवं अन्य

I.A. Nos. 961 of 2012 in Misc. Appeal No. 18 of 2003. Decided on 15th March, 2014.

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 39 नियम 3–व्यादेश–नोटिस–एकपक्षीय व्यादेश आदेश पारित करने के कारण आदेश से गायब है और आदेश 39 के नियम 3 का अनुपालन नहीं किया गया है–आदेश जिसे उसको संसूचित कभी नहीं किया गया था की अवज्ञा के लिए प्रत्यर्थी को दंड देना न्यायोचित एवं समुचित नहीं होगा–प्रत्यर्थी को वाद् संपत्ति बेचने एवं अन्य संक्रांत करने से अवरुद्ध किया गया। (पैराएँ 12 से 14)

निर्णयज विधि.–(2000)7 SCC 695—Applied; (1998)7 SCC 59; MANU/PH/0793/2010; (1995)6 SCC 50; (2008) 8 SCC 348; (1997) 3 SCC 443; AIR 2003 Allahabad 321—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Ratnesh Kumar, Vikash Kishore Prasad, For the Appellants; M/s A.K. Srivastava, D.K. Prasad, For the Respondents.

आदेश

आई॰ ए॰ सं॰ 961 वर्ष 2012 प्रत्यर्थी सं॰ 1 की संपत्तियों को कुर्क करने की प्रार्थना के साथ और आगे आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 में पारित दिनांक 10.10.2006 के आदेश, जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 को अस्थायी व्यादेश के प्रदान के लिए दाखिल आवेदन निपटाए जाने तक यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया गया है, की अवज्ञा करने के लिए सिविल कारावास के अधीन उसको निरुद्ध करने के लिए सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXXIX नियम 2A के अधीन दाखिल किया गया है।

2. संक्षेप में तथ्य ये हैं कि अभिधान वाद सं॰ 156 वर्ष 2002 के संबंध में तत्कालीन विद्वान उपन्यायाधीश, राँची द्वारा पारित दिनांक 10.10.2002 के आदेश, जिसके द्वारा सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXXIX नियम 1 और 2 सह-पठित धारा 151 के अधीन दिनांक 16.9.2002 की याचिका अस्वीकार कर दी गयी थी, के विरुद्ध याची द्वारा विविध अपील सं॰ 18 वर्ष 2003 दाखिल किया गया है। विविध अपील दिनांक 14.7.2006 को ग्रहण की गयी थी और प्रत्यर्थीगण के विरुद्ध नोटिसों को तामील करने का निर्देश दिया गया था। नोटिस के तामीले के बावजूद प्रत्यर्थीगण उपस्थित नहीं हुए थे जिसके बाद अपीलार्थी ने विविध अपील सं॰ 18 वर्ष 2003 के निपटान तक वाद संपत्ति अंतरित करने से उसको अवरुद्ध करते हुए प्रत्यर्थी सं॰ 1 के विरुद्ध अस्थायी व्यादेश प्रदान करने के लिए अंतर्वर्ती आवेदन आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 पर जोर दिया। जब प्रत्यर्थी सं॰ 1 उपस्थित नहीं हुआ था, इस माननीय न्यायालय ने दिनांक 10.10.2006 के आदेश के तहत अस्थायी व्यादेश प्रदान करने के लिए दाखिल अंतर्वर्ती आवेदन के निपटान तक प्रत्यर्थी सं॰ 1 को यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया। दिनांक 10.10.2006 के आदेश को अवर न्यायालय को संसूचित किया गया था और तद्नुसार ऑर्डरशीट में सम्मिलित किया गया था। प्रत्यर्थी सं॰ 1 पैरवी करने के लिए नियमित रूप से अवर न्यायालय में उपस्थित हो रहा था और उसने साक्ष्य भी दिया था। आदेश जिसके द्वारा यथास्थिति प्रदान किया गया था अच्छी तरह से प्रत्यर्थी सं॰ 1 की जानकारी मे था जो अवर न्यायालय के ऑडरशीट से प्रकट है किंतु प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने इस न्यायालय द्वारा पारित आदेश की घोर अवज्ञा में और उसके प्रति तिरस्कार दर्शाते हुए किसी सुभाष चंद्र भोथ्रा के पक्ष में भूखंड सं॰ 1793 के संबंध में, जो अभिधान वाद सं॰ 156 वर्ष 2002 का विषयवस्तु होने के नाते वाद संपत्ति का भाग है, दिनांक 3.7.2010 का विक्रय विलेख निष्पादित किया। इस प्रकार, प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने जानबूझकर, आशयपूर्वक और जानबूझकर दिनांक 10.10.2006 के आदेश का उल्लंघन और अवज्ञा किया जिसके द्वारा उसे वाद संपत्ति के संबंध में यथास्थिति बनाए रखने का आदेश दिया गया था और इसलिए वह सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXXIX नियम 2A के अधीन दंडित किए जाने का दायी है और निम्नलिखित संपत्ति कुर्क करने के लिए समुचित आदेश पारित किया जाना चाहिए:–

(i) uxjikfydk lo Hk[kM lo 1141, 0.10 , dM (10 fM lfey) {k=Qy okyk ij vofLFkr okM lo XII (ijkuk)] jkph d vrxr èkfr lo 921B okyk ^ch0 Vkbi DokVj] Cykd lo 1.

(ii) ekt k dkdk] jkph vofLFkr 0.32 {k=Qy okyk [kkrk lo 153, okM lo VII (ijkuk) èkfr lo 769A, Fkkuk lo 198 d vèkhu uxjikfydk lo Hk[kM lo 43A, [koV lo 3 d vrxr xfBr HkkfeA

(iii) dkdj] Mkd?kj , o Fkkuk dkdj] jkph vofLFkr 17 fM lfey {k=Qy okyk [kkrk lo 97 d vèkhu iujhf{kr lo Hk[kM lo 896, [koV lo 2 d vrxr xfBr HkkfeA

(iv) ikp fM lfey {k=Qy oky uxjikfydk@iujhf{kr lo Hk[kM lo 822 d Hkkx ij [kMk djeVkyh] jkph e xg lo 4, èkfr lo 258A, okM lo VIIB.

(v) ekt dkdk] jkph vofLFkr 13 fM lfey {k=Qy okyk iujhf{kr lo Hk[kM lo 888, [koV lo 2, [kkrk lo 96 d vrxr xfBr HkfeA

इसके अतिरिक्त, वह न्यायालय के आदेश की अवज्ञा के लिए सिविल कारा में निरुद्ध किए जाने का दायी भी है।

3. प्रत्यर्थी सं॰ 1 ने आई॰ ए॰ सं॰ 961 वर्ष 2012 के विरुद्ध उसमें यह कथन करते हुए कारण बताओ दाखिल किया कि अभिधान वाद सं॰ 156 वर्ष 2002 उसके भाई और कजिन द्वारा संयुक्त रूप से दाखिल किया गया है किंतु वह अकेला वाद का प्रतिवाद कर रहा है। सेठिया भूमि का वह अंश अभिधान वाद सं॰ 156 वर्ष 2002 का विषयवस्तु है जिसमें अपीलार्थी अपने 1/10 हिस्सा का दावा कर रहा है। वस्तुत: 4.63 एकड़ से गठित सेथिया भूमि प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा वर्ष 1958 में अर्थात् वर्ष 1954 में संयुक्त परिवार के बँटवारा के काफी बाद रजिस्टर्ड विलेख द्वारा स्वयं उसकी अपनी निधि एवं संसाधनों से खरीदी गयी थी और इसके पहले उसने उस भूमि का अंश विभिन्न खरीददारों को बेचा है और अभिधान वाद सं॰ 156 वर्ष 2002 के पक्षों में से किसी के द्वारा इस पर आपत्ति कभी नहीं की गयी थी। अब कुल मिलाकर 105 कट्ठा का क्षेत्र प्रत्यर्थी सं॰ 1 के पास बचा हुआ है और वह उक्त संपत्ति का संपूर्ण स्वामी है और इसलिए, उसे इसे बेचने का प्रत्येक अधिकार है। अपीलार्थी द्वारा की गयी व्यादेश के प्रदान की प्रार्थना तत्कालीन उपन्यायाधीश-1, राँची द्वारा दिनांक 16.9.2002 के तहत अस्वीकार कर दी गयी थी। हाल-हाल तक प्रत्यर्थी सं॰ 1 को दिनांक 16.9.2002 के आदेश के विरुद्ध दाखिल विविध अपील सं॰ 18 वर्ष 2003 के लंबित रहने के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। इस माननीय न्यायालय के समक्ष लंबित ऐसी अपील अथवा किसी आदेश जिसके द्वारा पक्षों को यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया गया है के बारे में बिल्कुल अनभिज्ञ होने के कारण उसने वाद संपत्ति के उपर अपने अधिकारों के सम्यक एवं खुले प्रयोग में भूमि का 11 कट्ठा बेचा था जो 105 कट्ठा मापवाले कुल भूमि क्षेत्र का छोटा क्षेत्र था। दिनांक 3.7.2010 के रजिस्टर्ड विलेख द्वारा विक्रय किया गया था। प्रत्यर्थी पर विविध अपील सं॰ 18 वर्ष 2013 में उसकी उपस्थिति के लिए कोई नोटिस तामील नहीं किया गया था। मामला अभिलेख से यह स्पष्ट होगा कि आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 में नोटिस कभी नहीं जारी की गयी थी और इस न्यायालय को अंधकार में रखकर अपीलार्थी द्वारा दिनांक 10.10.2006 का आदेश प्राप्त किया गया है। इस न्यायालय ने अपीलार्थी के पक्ष में एकपक्षीय आदेश पारित करने के लिए तर्क नहीं दिया है। उक्त आदेश पारित किए जाने के पहले सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXXIX नियम 3 का अनुपालन नहीं किया गया था और इसलिए आदेश XXXIX नियम 2A के अधीन दाखिल याचिका सिरे से खारिज किए जाने की दायी है। इस संदर्भ में उन्होंने **(2000)7 SCC 695** पैरा 15 में प्रकाशित निर्णय पर विश्वास किया है। उन्होंने आगे मामला बनाया है कि रजिस्टर्ड विक्रय विलेख के निष्पादन के 18 माह बाद उसे अभिधान वाद सं॰ 156 वर्ष 2002 के संबंध में विद्वान उपन्यायाधीश-1, राँची द्वारा पारित दिनांक 16.9.2002 के आदेश के विरुद्ध दाखिल इस विविध अपील सं॰ 18 वर्ष 2003 के लंबित होने के बारे में पता चल सका था। जोरदार तर्क किया गया था कि अपीलार्थी विचारण न्यायालय द्वारा अपने पक्ष में व्यादेश आदेश प्राप्त करने में विफल रहा है और तब उसने अपील दाखिल किया और प्रत्यर्थी को अंधेरे में रखते हुए और प्रत्यर्थी सं॰ 1 की जानकारी में इसे लाए बिना कि विविध अपील दाखिल की गयी है, उसने एकपक्षीय अंतरिम व्यादेश आदेश प्राप्त किया है जिसके द्वारा पक्षों को यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया गया है। यह स्वीकृत अवस्था है कि आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 के संबंध में उत्तर दे रहे प्रत्यर्थी पर नोटिस तामील नहीं किया गया था।

4. अपीलार्थी ने प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा परिशिष्टों अर्थात् अभिधान वाद सं॰ 156 वर्ष 2002 से संबंधित अवर न्यायालय के ऑडरशीट की प्रति परिशिष्ट-3, अवर न्यायालय में प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा दाखिल लिखित बयान की प्रति परिशिष्ट-4, एक फोटो परिशिष्ट-5, एफ॰ ए॰ सं॰ 123 वर्ष 1995 में पारित आदेश की

प्रति परिशिष्ट 6 के साथ दाखिल कारण बताओ का उत्तर दाखिल किया है। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने **(1998)7 SCC 59 (समी खान बनाम बिंदु खान); AIR 2002 Punjab & Haryana 12 (राजिन्दर कौर बनाम सुखबीर सिंह); Manu/PH/0793/2010 पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय (गुरदीप सिंह बनाम मनदीप सिंह); (1995)6 SCC 50 (सुरजीत सिंह बनाम बरबंस सिंह); (2010)11 SCC 557 (मनोहर लाल बनाम उग्रसेन); (2008)8 SCC 348 (अर्जुन सिंह बनाम पुनीत अहलूवालिया); (1997)3 SCC 443 तय्यब भाई एम॰ बगसरवाला बनाम हिंद रबर इंडस्ट्रीज प्रा॰ लि॰); AIR 2003 Allahabad 321 (सावित्री देवी बनाम सिविल न्यायाधीश) (सिनियर डिविजन) गोरखपुर** और **(2000)7 SCC 695 (ए॰ वेंकटसुब्बैय्या नायडू बनाम एस॰ चेलप्प्न)** में निर्णयों पर विश्वास किया है।

5. मैंने मामला अभिलेख का परिशीलन किया है जिससे यह प्रतीत होता है कि विविध अपील सं॰ 18 वर्ष 2003 दिनांक 14.7.2006 को ग्रहण की गयी थी और अपीलार्थी को रजिस्टर्ड कवर के अधीन नोटिसों के अध्यपेक्षित वस्तुओं को दाखिल करने का निर्देश दिया गया था और तद्नुसार इसे दाखिल किया गया था। दिनांक 11.8.2006 को अभिस्वीकृति भी प्राप्त की गयी थी। जब प्रत्यर्थी सं॰ 1 उपस्थित नहीं हुआ था, दिनांक 10.10.2006 को आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 के संबंध में आदेश पारित किया गया था जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 को इस न्यायालय द्वारा व्यादेश के लिए अंतर्वर्ती आवेदन को अंतिम रूप से सुने और निपटाए जाने तक यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया गया था।

6. स्वीकृत स्थिति जो मामला के अभिलेख से प्रतीत हो रही है यह है कि अपीलार्थी को सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXXIX नियम 1 और 2 सह-पठित धारा 151 के अधीन अस्थायी व्यादेश के प्रदान के लिए दाखिल आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 के संबंध में प्रत्यर्थीगण के विरुद्ध नोटिस के तामीले के लिए अध्यपेक्षित वस्तुओं को दाखिल करने का निर्देश नहीं दिया गया था। प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा दाखिल कारण बताओ के विरुद्ध अपीलार्थी द्वारा दाखिल उत्तर परिशिष्ट-3 अर्थात् अभिधान वाद सं॰ 156 वर्ष 2002 के संबंध में विचारण न्यायालय द्वारा पारित आदेश है। दिनांक 31.10.2006 का आदेश उपदर्शित करता है कि आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 के संबंध में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 10.10.2006 का आदेश दिनांक 13.10.2006 के मेमो सं॰ 4853 के तहत संसूचित किया गया था और उक्त आदेश अवर न्यायालय अभिलेख में स्थान पाता है। प्रत्यर्थी सं॰ 1 द्वारा निवेदन किया गया था कि इस आदेश को विचारण न्यायालय द्वारा दिनांक 31.10.2006 को पारित किया गया था और यह मामला अभिलेख में नियत तिथि नहीं थी। दूसरी ओर, अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा निवेदन किया गया था कि उक्त आदेश की संसूचना के बाद प्रत्यर्थी सं॰ 1 पैरवी करने के प्रयोजन से व्यक्तिगत रूप से अवर न्यायालय में उपस्थित हो रहा था और उसने पश्चातवर्ती तिथियों पर गवाहों का परीक्षण भी किया था और इसलिए, निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 में इस न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 10.10.2006 का आदेश जिसके द्वारा प्रत्यर्थी सं॰ 1 को यथास्थिति बनाए रखने का निर्देश दिया गया था उसकी जानकारी में था और उसने जानबूझकर आदेश की अवज्ञा किया है और दिनांक 3.7.2010 को रजिस्टर्ड विक्रय विलेख द्वारा संपत्ति अंतरित किया है।

7. प्रत्यर्थी का विरोधी निवेदन यह है कि आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 में पारित दिनांक 10.10.2006 का आदेश उसके ध्यान में कभी नहीं लाया गया था और उस पर इसकी तामील कभी नहीं की गयी थी और इसलिए, यह उसकी जानकारी में नहीं था। यह तर्क भी किया गया था कि सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXXIX नियम 3 का अनुपालन नहीं किया गया था और इस प्रकार उक्त कथित परिस्थितियों में उसे उक्त आदेश जिसे उसको संसूचित कभी नहीं किया गया था की अवज्ञा के लिए दायी अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता है और अपीलार्थी सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXXIX नियम 2A का लाभ नहीं ले सकता है। यह प्रतिवाद किया गया था कि आदेश XXXIX नियम 3 में परिकल्पित अध्यपेक्षित वस्तुओं का अनुपालन किए बिना व्यादेश प्रदान करने वाला आदेश शून्य है।

8. अब हम आदेश XXXIX नियम 3 का परिशीलन करते हैं जो निम्नलिखित है:–

"3. ogk d flok; tgk ;g çrhr gkrk g fd 0;kn'k nu dk mí'; foyEc }kjk fu"Qy gk tk,xk U;k;ky; lc ekeyk e 0;kn'k nu l io ;g fun'k nxk fd 0;kn'k d vkonu dh lpuk fojkèkh i{kdkj dk n nh tk,%

ijUr tgk ;g çLFkkiuk dh tkrh g fd fojkèkh i{kdkj dk vkonu dh lpuk fn, fcuk 0;kn'k n fn;k tk, ogk U;k;ky; viuh ,lh jk; d fy, fd foyEc }kjk 0;kn'k nu dk mí'; foQy gk tk,xk] dkj.k vfHkfyf[kr djxk vkj vkond l ;g vi{kk dj ldxk fd og&

(a) 0;kn'k nu okyk vkn'k fd, tku d rjUr i'pkr 0;kn'k d fy, vkonu dh çfr fuEufyf[kr d lkFk&

(i) vkonu d leFku e Qkby fd, x, 'kiFki= dh çfr(

(ii) okni= dh çfr(vkj

(iii) mu nLrkotk dh çfr;k] ftu ij vkond fuHkj djrk g] fojkèkh i{kdkj dk n ;k ml jftLVhÑr Mkd }kjk Hkt] vkj

(b) ml rkjh[k dk ft ldk ,lk 0;kn'k fn;k x;k g ;k ml fnu d Bhd vxy fnu dk ;g dFku dju okyk 'kiFki= Qkby dj fd iokDr çfr;k bl çdkj n nh xb g ;k Hkt nh xb gA

9. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **(2000)7 Supreme Court Cases 695 (ए॰ वेंकट सुब्बैय्या नायडू बनाम एस॰ चेलप्पन)** में प्रकाशित निर्णय के पैरा 15 में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

*"15. D;k voLFkk gkxh ;fn U;k;ky; ftlu vrfje ,di{kh; 0;kn'k çnku dju okyk vkn'k ikfjr fd;k Fkk] mldk dkj.k nt ugh fd;k Fkk vkj vkn'k 39 d fu;e 3 d [kMk (a) vkj (b) e lxf.kr dr0;k dk ikyu djuk vkond d fy, vko';d ugh cukrk FkkA gekj nf"Vdk.k e ,l vkn'k dk de l de foo{kk }kjk ,lh vko';drkvk dk vrfo"V djrk le>k tk ldrk g Hky gh Li"V :i l 'kCnk e mldk dFku ugh fd;k x;k gA fdr ;fn i{k ft ld i{k e ,di{kh; vkn'k ikfjr fd;k x;k Fkk] mu dr0;k ftudk ikyu ml djuk gh g dk vuikyu dju e foQy jgrk g tlk mij m)r ijUrd }kjk vko';d cuk;k x;k g] ml tkf[ke yuk gh gkxkA mldh vkj l ,lh vè;if{kr dk;k d vuuikyu dk fdlh ifj.kke d fcuk cp fudyu vkj ml doy bldk ykHk yu d fy, l{ke cuku dh vuefr ugh nh tk ldrh gA dr0;k ftudk ikyu dju dh vko';drk ml g dk vuikyu ugh dju d fy, i{k (ftlu vkn'k ikIr fd;k g) d fy, ifj.kke ;g g fd ml ,l vkn'k dk ykHk yu dh vuefr ugh nh tk ldrh g ;fn vU; i{k }kjk vkn'k dh vkKk dk ikyu ugh fd;k tkrk gA fdlh vkn'k d voKkdkjh ykHkkFkh d fdlh vU; i{k d fo#) vfHkdfFkr fdlh voKk d fo#) ifjokn djr ugh luk tk ldrk gA***

10. मैंने सावधानीपूर्वक एम॰ ए॰ सं॰ 18 वर्ष 2003 में पारित आदेश का परिशीलन किया है। निर्विवादत: दिनांक 10.10.2006 का आदेश पारित किए जाने के पहले अथवा तत्पश्चात आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 के संबंध में प्रत्यर्थीगण के विरुद्ध नोटिस जारी करने का कोई निर्देश कभी दिया गया था। स्वीकृत रूप से, अपीलार्थी ने आदेश XXXIX नियम 3 के खंडों (a) और (b) में संगणित कर्तव्यों का पालन नहीं किया था। यह सत्य है कि इस न्यायालय ने उक्त आदेश पारित करने के पहले प्रत्यर्थी सं॰ 1 के आचरण को ध्यान में लिया है जो अपने स्टॉफ में से एक द्वारा प्राप्त किए गए नोटिस के तामीले के बाद भी, जो अभिस्वीकृति से प्रकट है, मुख्य अपील अर्थात् एम॰ ए॰ सं॰ 18 वर्ष 2003 में उपस्थित

नहीं हुआ था। प्रत्यर्थी सं॰ 1 के पूर्वोक्त आचरण पर विचार करते हुए उक्त आदेश पारित किया गया था। अपीलार्थी ने अभिलेख पर लाने के लिए उक्त निर्दिष्ट निर्णयों को उद्धृत किया है कि क्या परिणाम होगा यदि पक्ष जिसके विरुद्ध व्यादेश का आदेश पारित किया गया था द्वारा जानबूझकर और आशयपूर्वक व्यादेश के आदेश की अवज्ञा की जाती है। सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXXIX के नियम 2A के अधीन अंतर्विष्ट गंभीरता एवं बल को प्रकाशमान किया गया है। उक्त निर्दिष्ट निर्णयों को निर्दिष्ट करके यह इंगित किया गया था कि भले ही व्यादेश के आदेश को बाद में अपास्त कर दिया गया था, इससे अवज्ञा मिट नहीं जाती है। यह बिल्कुल भिन्न मामला है कि अवज्ञा की कठोरता अस्वीकार कर दी जा सकती है यदि आदेश बाद में अपास्त कर दिया जाता है। (पैरा 12 **(1998)7 SCC 59 (समी खान बनाम बिंदु खान)** अधिकथित सिद्धांत का पंजाब एवं हरियाणा उच्च न्यायालय द्वारा **गुरदीप सिंह एवं अन्य बनाम जीत सिंह एवं अन्य** मामले में पूरी तरह अनुसरण किया गया है।

11. (1995)6 SCC (सुरजीत सिंह बनाम हरबंश सिंह) में निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *^^tc U;k;ky; dk;dyki dh fLFkfr fo'k"k fo|eku cuk, j[ku dk vk'k; j[krk g tc ;g okn ij fopkj dj jgk g] dk;dyki dh m l fLFkfr dk u doy cuk, j[ku dh vko';drk g cfYd bl U;k;ky; d vU;Fkk vkn'k nu rd fo|eku mièkkfjr fd;k tkrk gA bu ifjfLFkfr;k e U;k;ky; dk viu leLr ç;ktuk l vU; lØke.k@leun'ku dk fcYdy ugh gvk ekuu dk drO; vkj vfèkdkj Hkh gA tc ,d ckj ,l gkrk g] leun'kd ,o leunf'krh] oreku çR;FkhZx.k leun'ku d vkèkkj ij i{kk d :i e i{kdkj cuk, tku dk nkok ugh dj ldr gA vr%] leunf'krh çR;FkhZx.k dk viu vkn'kk dh voKk e okn d i{kk d :i e fopkj.k U;k;ky; }kjk i{kdkj ugh cuk;k tk ldrk FkkA fopkjkèkhu okn d fl)kr fcYdy fHkUu vkèkkjk ij gA***

12. नि:संदेह न्यायालय द्वारा पारित आदेश के प्रवृत्त बल तथा पवित्रता को बनाए रखना होगा और अनुपालन करना होगा। न्यायालय की जानबूझकर की गयी अवज्ञा पर कठोरतापूर्ण रवैया अपनाना होगा। किंतु तब हमारे यहाँ हमारे देश में विरोधात्मक न्यायिक प्रणाली है जिसमें वाद के प्रत्येक पक्ष को अभियोजित अथवा बचाव करने का समुचित अवसर दिया जाना चाहिए। सिविल वाद में वादी–प्रतिवादी दोनों को अपने परस्पर दावा और उसके समर्थन में साक्ष्य और दस्तावेज प्रस्तुत करने का समान अवसर दिया जाना चाहिए।

13. अभिलेख से प्रतीत होने वाली स्वीकृत अवस्था यह है कि एकपक्षीय व्यादेश का आदेश पारित करने के कारण दिनांक 10.10.2006 के आदेश में गायब है और आदेश XXXIX नियम 3 का अनुपालन नहीं किया गया था। अपीलार्थी ने वर्तमान आई॰ ए॰ सं॰ 961 वर्ष 2012 दाखिल करने के पहले भी सी॰ पी॰ सी॰ के आदेश XXXIX के नियम 3 के खंडों (a) और (b) में संगणित कर्तव्यों का पालन नहीं किया था और इसलिए, आदेश जिसे आदेश XXXIX नियम 3 के अधीन अंतर्विष्ट प्रक्रिया के मुताबिक उसे संसूचित नहीं किया गया था की अवज्ञा के लिए प्रत्यर्थी को दंड देना न्यायोचित और समुचित नहीं होगा और **ए॰ वेंकटसुब्बैय्या नायडू बनाम एस॰ चेलप्पन (ऊपर)** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय का निष्कर्ष वर्तमान मामले पर प्रयोज्य है।

14. अब आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 में पारित दिनांक 10.10.2006 का आदेश प्रत्यर्थी सं॰ 1 की पूरी जानकारी में था और इसलिए उसे अगले आदेश तक वाद संपत्ति जो अभिधान वाद सं॰ 156 वर्ष 2002 की विषय वस्तु है, को बेचने और अन्यसंक्रांत करने से एतद् द्वारा अवरुद्ध किया जाता है और उसे आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 का उत्तर, यदि हो, दाखिल करने की अनुमति दी जाती है अथवा यदि वह चुनता है, वह एम॰ ए॰ सं॰ 18 वर्ष 2003 में प्रतिशपथपत्र भी दाखिल कर सकता है ताकि मामले

को अंतिम रूप से निपटाया जा सके। आई॰ ए॰ सं॰ 2458 वर्ष 2006 के संबंध में आगे कोई नोटिस तामील करने की आवश्यकता नहीं है। उत्तर/प्रतिशपथ पत्र दाखिल करने के लिए प्रत्यर्थी सं॰ 1 को सक्षम बनाने के लिए दो सप्ताह का समय अनुज्ञात किया जाता है। उक्त चर्चा एवं संप्रेक्षण के साथ आई॰ ए॰ सं॰ 961 वर्ष 2012 निपटाया जाता है।

15. इस मामले को 'सुनवाई के लिए' शीर्षक के अधीन प्रथम दस मामलों में इस मामले को दिनांक 24 मार्च, 2014 पर सूचीबद्ध करें।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

मदन सिंह

cuke

भारत कोकिंग कोल लिमिटेड एवं अन्य

W.P. (S) No. 5919 of 2009. Decided on 16th January, 2014.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन आवेदन के मामले में।

श्रम एवं औद्योगिक विधि–बर्खास्तगी–बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के अधीन कार्यरत क्लर्क याची के विरुद्ध पारित बर्खास्तगी के दंड के विरुद्ध रिट याचिका–दाखिल की गयी अपील भी खारिज की गयी–वर्तमान मामले में नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का स्पष्ट उल्लंघन हुआ है–रिट न्यायालय विभागीय कार्यवाही में अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य का अधिमूल्यन नहीं कर सकता है, किंतु स्वीकृत तथ्यों पर उच्च न्यायालय के पास अधिरोपित दंड में हस्तक्षेप करने की शक्ति है–याची को सेवा में पुनर्बहाल करने के निर्देश के साथ रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 17 एवं 18)

निर्णयज विधि.–(2012)2 SCC 580; (1970) 3 SCC 548; (2009) 12 SCC 78—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Amit Kumar Das, For the Petitioner; Mr. Anoop Kumar Mehta, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

2. याची को दिनांक 25.2.1991 के पत्र के तहत लिपिक (टी॰) कोटि के रूप में नियुक्त किया गया था। दिनांक 6/10.1.1997 को बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ के प्रमाण पत्रित स्थायी आदेश के खंडों 26.1.2, 26.1.11 और 26.1.15 के अधीन अवचार करने के लिए याची को कारण बताओ जारी किया गया था। मामले की जाँच की गयी थी और आरोपों को सिद्ध नहीं किया गया पाते हुए दिनांक 5.4.1997 की जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी। बाद में, दिनांक 3.10.1997 के संयुक्त निरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर दिनांक 19.10.2000 का एक अन्य आरोप ज्ञापन याची को जारी किया गया था। मामले की जाँच की गयी थी और याची के विरुद्ध आरोप सिद्ध किया गया पाते हुए दिनांक 4.1.2004 की जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी। दिनांक 14.4.2007 को याची को द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था जिसका याची ने उत्तर दिया। दिनांक 28.4.2007 को सेवा से बर्खास्तगी का आदेश पारित किया गया था और याची द्वारा दाखिल अपील दिनांक 16.10.2009 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गयी थी।

3. निम्नलिखित कथन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है:–

"5. fd vc ;g fofèk dk lfuf'pr fl)kr g fd nkfMd ekey e foefDr dk vFk ;g ugh g fd c[kkLrxh dk vkn'k vfHk[kfMr fd, tkus ;kX; gA bl lcèk

e (2007)9 SCC 755, (2007)10 SCC 385 vkj (2007)10 SCC 561 e çdkf'kr ekuuh; lokPp U;k;k;y; d fu.k;k dk fufn"V fd;k tk ldrk gA

9. fd fjV vkonu d ijk 2 e fojfpr fcn bl U;k;k;y; }kjk fopkj fcn d vrxr ugh vk,xA ;g fofèk dk vc lfuf'pr fl)kr g fd ;g ekuuh; U;k;k;y; Hkkjr d lfoèkku d vuPNn 226 d vèkhu çnÙk 'kfDr;k d ç;kx e lk{; dk iuvfèkeY;u ugh djxkA ;kph u ekeyk ugh cuk;k g fd nM dk vkn'k vkuikfrdrk d fl)kr d fo#) g vFkok ;g ulfxd U;k; d fl)kr d mYy?ku e gA ;g dFku fd;k x;k g fd pfd Mh ty dh pkjh dk vkjki fl) fd;k x;k g] lok l c[kkLrxh d vkn'k dk vuuikfrd vfHkfuèkkfjr ugh fd;k tk ldrk gA

12. fd ijkxkQ 11 e fn;k x;k c;ku vfHky[k dk ekeyk gA ;g dFku fd;k x;k g fd fnukd 6/10.1.1997 d vkjki&i= d lcèk e tkp lekIr ugh gb Fkh vkj mDr vkjki&i= d lekiu d igy Lo; vkjki&i= jí dj fn;k x;k FkkA bl budkj fd;k tkrk g fd vkjkik dk fl) dHkh ugh fd;k x;k FkkA**

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है यद्यपि दिनांक 6/10.1.1997 के आरोप ज्ञापन में अंतर्विष्ट अभिकथन की जाँच की गयी है और यह पाते हुए कि आरोप सिद्ध नहीं किया गया था, दिनांक 5.4.1997 की जाँच रिपोर्ट दाखिल की गयी है, फिर भी उसी आरोप के लिए दिनांक 19.10.2000 का आरोप ज्ञापन जारी करके याची के विरुद्ध द्वितीय आरोप के लिए दिनांक 19.10.2000 का आरोप ज्ञापन जारी करके याची के विरुद्ध द्वितीय जाँच संस्थित की गयी थी जो विधि में अनुज्ञेय नहीं है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि यद्यपि डीजल के 3499.42 लीटर के दुर्विनियोग का विनिर्दिष्ट आरोप है, उक्त आरोप जाँच के दौरान सिद्ध नहीं किया गया था क्योंकि जाँच अधिकारी ने केवल यह निष्कर्ष दर्ज किया है कि 620.74 लीटर डीजल की कमी पायी गयी थी। विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया कि डीजल के वास्तविक स्टॉक का भौतिक सत्यापन नहीं किया गया था और केवल याची द्वारा तैयार किए गए दस्तावेजों के आधार पर विभाग याची के विरुद्ध अग्रसर हुआ है और गलत संगणना के कारण जाँच अधिकारी इस निष्कर्ष पर आया कि 620.74 लीटर डीजल की कमी थी।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री अनूप कुमार मेहता ने निवेदन किया है कि चूँकि समुचित रूप से गठित विभागीय जाँच में, जिसमें याची को अपना बचाव करने का पूरा अवसर दिया गया था, उसे अवचार का दोषी पाया गया है, इस मामले में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि चूँकि याची ने नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन का अभिवचन नहीं किया है, याची को उपलब्ध समुचित उपचार औद्योगिक अधिकरण के पास जाना होगा जहाँ तथ्यों को न्याय निर्णीत किया जा सकता है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निरंतर अभिनिर्धारित किया गया है कि कर्मकार के मामलों में दंड आदेश को श्रम न्यायालय के समक्ष चुनौती दी जानी चाहिए।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए प्रतिवादों का अधिमूल्यन करने पर मेरा मत है कि मात्र इसलिए कि दिनांक 5.4.1997 को जाँच रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी थी, दिनांक 19.10.2000 के आरोप ज्ञापन का जारी किया जाना विधि में वर्जित नहीं है। दिनांक 5.4.1997 की जाँच रिपोर्ट प्रकट करेगी कि जाँच एकपक्षीय रूप से की गयी थी क्योंकि बार-बार स्मरण पत्र भेजे जाने पर भी विभाग विभागीय जाँच

के दौरान उपस्थित नहीं हुआ था। मैं पाता हूँ कि ऐसे मामलों में जहाँ जाँच नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत के उल्लंघन में संचालित की गयी पायी गयी है अथवा प्रथम जाँच में तकनीकी त्रुटि है, द्वितीय जाँच विधि में वर्जित नहीं है।

7. ''नंद कुमार वर्मा बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य,'' (2012)3 SCC 580 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है:–

*"26. ....lkekU; fl)krk ij vopkj fo'k"k d fy, vkjki d lcèk e doy ,d tkp gk ldrh g vkj lkekU;r% fu;e Hkh ;gh çkoèkkfur djrk gA ;fn fdlh rduhdh vFkok vU; vPN vkèkkj] çfØ;kRed vFkok vU;Fkk] d dkj.k çFke tkp vFkok nM vFkok foefDr dk fofèk e nk"ki.k ik;k tkrk g] ,lk dkb fl)kr ugh g fd f}rh; tkp vkjHk ugh dh tk ldrh gA vr%] tc ijh dh x;h tkp dk;okgh rduhdh vFkok çfØ;kRed ncyrk d vkèkkj ij l{ke Qkje }kjk vikLr fd;k tkrk g] mlh vkjki ij u;h dk;okgh vuK; gA**

8. मामले में प्रस्तुत किए गए अभिलेखों से, मैं पाता हूँ कि याची के विरुद्ध आरोप वर्ष 1994 से संबंधित है। याची के विरुद्ध विनिर्दिष्ट आरोप 3499.42 लीटर डीजल के दुर्विनियोग का है। यह भी स्वीकृत तथ्य है कि डीजल की कमी के संबंध में कोई भौतिक सत्यापन नहीं किया गया था और न ही विभागीय कार्यवाही के दौरान दुर्विनियोग के संबंध में कोई साक्ष्य प्रस्तुत किया गया था।

9. दिनांक 19.10.2000 के ज्ञापन में अंतर्विष्ट आरोप को नीचे उद्धृत किया जाता है:–

^^o"k 1994 d nkjku ejk;Mhg dkfy;jh] cjkjk {k=] chO lhO lhO ,yO d ejk;Mhg Mhty fMlifIx ;fuV (MhO MhO ;O) d fyfid@çHkkjh d :i e vkj ejk;Mhg Mhty fMlifIx ;fuV d Mhty LVkd d vfHkj{kd d :i e rukr jgu ,o dk; dju d nkjku vkiu viu Hkkfrd dCtk vkj vfHkj{kk e Mhty e l 3499.42 yhVj Mhty LVkd dk nfofu;kx fd;kA

xjbekunkjh d vkid mDr Ñr; chO lhO lhO ,yO] èkuckn d vèkhu LFkkiuk d dedkjk d fy, çek.kif=r LFkk;h vkn'k d 26.1.2011 d [kM d mYy?ku e vkidh vkj l xHkhj vopkj xfBr djr gA

vki dr0;fu"Bk cuk, j[ku e foQy g, g vkj diuh d fgr d çfrdy ÑR; fd;k gA

*vki diuh dh lifÙk d nfofu;kx dk ÑR; dju e fylr gkdj dr0; d çfr lei.k Hkkouk vkj diuh e fo'okl cuk, j[ku e foQy g, gA**

10. मैं आगे पाता हूँ कि जाँच अधिकारी ने अपना निष्कर्ष निम्नलिखित रूप में दर्ज किया है:–

fu"d"k%

(i) vkjki] tlk vopkj d ykNu d c;ku e vrfo"V g] fd lhO bO u Vd ,O e 9395 yhVj d :i e Mhty dk vkjfHkd cyl nt fd;k FkkA fnukd 1.4.1994 dk Vd ,O e Mhty d vkjfHkd cyl d :i e 9593 yhVj d okLrfod vkdMk d ctk, mDr ekfld fooj.k e fl) fd;k x;k vfHkfuèkkfjr fd;k x;k gA

2(i) Jh enu flg d dk;dky d nkjku Vd ,O e Mhty dh deh dk vkjki doy 355.71 yhVj dh lhek rd fl) fd;k x;k g vkj u fd 3034.9 yhVj dh lhek rd tlk vkjki&i= d vopkj d ykNu d c;ku e fn;k x;k gA

(ii) Jh enu flg d dk;dky d nkjku Vd ch0 e Mhty dh deh dk vkjki doy 265.03 yhVj dh lhek rd fl) fd;k x;k g vkj u fd 3034.0 yhVj dh lhek rd tlk vkjki&i= d vopkj d ykNu d c;ku e fn;k x;k gA

vr%

dy deh = 355.71 + 265.03

= 620.74 yhVj

vr% Jh enu flg d dk;dky d nkjku Mhty dh deh d lcèk e vkjki 3499.42 yhVj d LFkku ij 620.74 yhVj dh lhek rd fl) fd;k x;k vfHkfuèkkfjr fd;k x;k g tlk Kkiu e vrfo"V gA

*vr% ;g ekeyk doy vkf'kd :i l fl) fd;k x;k gA***

11. मैं पाता हूँ कि 3499.42 लीटर डीजल के दुर्विनियोग का विनिर्दिष्ट आरोप याची के विरुद्ध विरचित किया गया था किंतु, जाँच अधिकारी द्वारा दुर्विनियोग का निष्कर्ष दर्ज नहीं किया गया है। अनुशासनिक प्राधिकारी ने ध्यान में लिया है कि जाँच अधिकारी ने आरोप को केवल आंशिक रूप से सिद्ध किया गया पाया है और उसने जाँच अधिकारी के निष्कर्ष के साथ अपनी सहमति दर्ज किया है। मैं आगे पाता हूँ कि अनुशासनिक प्राधिकारी ने साक्ष्य से स्थापित ''डीजल के दुर्विनियोग'' का निष्कर्ष दर्ज नहीं किया है।

12. आरोप ज्ञापन जिसे दिनांक 6/10.1.1997 को जारी किया गया था, वापस ले लिया गया बताया जाता है और दिनांक 19.10.2000 का आरोप ज्ञापन दिनांक 3.10.1997 के संयुक्त निरीक्षण रिपोर्ट के आधार पर जारी किया गया है। मैं वर्ष 1994 में उसके द्वारा किए गए अभिकथित दुर्विनियोग के संबंध में वर्ष 2000 में याची के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही आरंभ करने के लिए कोई औचित्य नहीं पाता हूँ। संयुक्त निरीक्षण रिपोर्ट दिनांक 10.1.1997 का आरोप ज्ञापन वापस लेने का कारण नहीं है। संयुक्त निरीक्षण रिपोर्ट भी दिनांक 3.10.1997 की है। इसके अतिरिक्त, दिनांक 5.4.1997 की जाँच रिपोर्ट में दर्ज निष्कर्ष पर विचार बिल्कुल नहीं किया गया है। चूँकि याची ने विभाग के जाँच अधिकारी द्वारा गलत संगणना अभिकथित किया है, दिनांक 5.4.1997 की जाँच रिपोर्ट पर जाँच अधिकारी द्वारा विचार किया जाना चाहिए था। मैं आगे पाता हूँ कि याची के विरुद्ध विरचित आरोप बिल्कुल अस्पष्ट है। आरोप ज्ञापन में अथवा याची को आपूर्त के लांछन विवरण में कोई विशिष्ट तथ्य अथवा विवरण उपदर्शित नहीं किया गया है। मेरा दृष्टिकोण है कि भले ही अवचारी कर्मचारी ने आरोप की अस्पष्टता के संबंध में आपत्ति नहीं किया है, आरोप में विनिर्दिष्ट विवरण अंतर्विष्ट होना चाहिए। वर्तमान मामले में सिवाए इसके कि दुर्विनियोग वर्ष 1994 से संबंधित है, आरोप ज्ञापन में कोई विनिर्दिष्ट उदाहरण उपदर्शित नहीं किया गया है।

13. ''सूरथ चंद्र चक्रवर्ती बनाम पश्चिम बंगाल राज्य,'' (1970)3 SCC 548, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"5. .....;g le> d ij g fd frFk] le;] LFkku vkj 0;fDr vkfn d çfr fooj.k vkjki dk vkj Hkh fuf'pr ugh cuk, gkr tlk [kMihB dk er çrhr gkrk gA ge ;g lger gku e v{ke g fd fooj.k ft ld fcuk vopkjh lod lefpr :i l Lo; dk cpko ugh dj ldrk g] lk{; dk ekeyk gA bl lcèk e ey fu;e 55 d çfr fun'k fd;k tk ldrk g tk vU; ckrk d lkFk ;g çkoèkkfur

djrk g fd ykd lod tkp vfèkfu;e] 1850 d çkoèkkuk d çfrdy g, fcuk c[kkLrxh] gVk, tku vFkok vour fd; tku dk vkn'k lok d lnL; ij ikfjr ugh fd;k tk,xk tc rd ml fyf[kr e vkèkkjk] ftu ij dkjokb dju dk çLrko fn;k x;k g] lfpr ugh fd, x, g vkj ml viuk cpko dju dk i;kIr volj ugh fn;k x;k gA vkèkkjk] ftu ij dkjokb fd;k tkuk çLrkfor g dk vkjki vFkok vkjkik ftUg vfHkdFkuk ftu ij çR;d vkjki vkèkkfjr g d fooj.k d lkFk vkjkfir 0;fDr dk llfpr fd;k x;k g vkj fdlh vU; ifjfLFkfr ftl vkn'k ikfjr dju e fopkj e fy, tku dk çLrko fn;k x;k g dk Hkh dFku djuk gkxkA ;g fu;e ml fl)kr dk lekfo"V djrk g tk viuk cpko dju d fy, ;fDr;Dr vFkok i;kIr volj d ey fo"k; oLrvk e l ,d gA ;fn 0;fDr dk Li"Vr% vkj fuf'pr :i l ;g ugh crk;k tkrk g fd vfHkdFku D;k g ftu ij ml d fo#) yxk, x, vkjki vkèkkfjr g] og lHkor% Lo; viuh dYiuk l leLr rF;k ,o ifjfLFkfr;k dh [kkt ugh dj ldrk g tk ml d fo#) LFkkfir fd, tku d fy, çkfèkdkfj;k d vuè;ku e gk ldrk gA**

14. ''भारत संघ बनाम ज्ञान चंद्र चत्तर'', (2009)12 SCC 78 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

"34. lokb flg cuke jktLFkku jkT; e bl U;k;ky; u vfHkfuèkkfjr fd;k fd ?kjy tkp e Hkh vkjki dk Li"V] fuf'pr ,o fofufn"V gkuk gkxk D;kfd vLi"V vkjkik dk lkeuk djuk fdlh vipkjh d fy, ef'dy gkxkA fn;k x;k lk{; yk ijokg ugh gkuk pkfg, Hky gh vipkjh cpko ugh djrk g vFkok bld fo#) fojkèk ugh djrk g fd vkjki vLi"V gA ;g tkp dk nf"kr gku l bl dkj.k ugh cpkrk g D;kfd dkjokb e fu"i{krk gkuh gh pkfg, fo'k"kr% çfrdy vFkok 'kkfLrd ifj.kkek dk vrxLr dju oky vkn'k d lcèk eA

*35. mDr dh nf"V e fofèk lf{kIr dh tk ldrh g fd lkfofèkd çkoèkkuk dk vkj ulfxd U;k; d fl)kr dk dBkj vuikyu djr g, fdlh 0;fDr d fo#) dkb tkp dh tkuh gA vkjki dk fofufn"V] fuf'pr vkj ?kVukvk dk fooj.k nu oky gkuk pkfg, ftlu vkjkik dk vkèkkj fufer fd;k gkA vLi"V vkjkik ij tkp ugh dh tk ldrh gA tkp fu"i{kr%] oLrijd :i l vkj u fd 0;fDrfu"B :i l djuh gkxhA fu"d"k foÑr vFkok v;fDr;Dr ugh gku pkfg, vkj u gh bUg vuekuk vkj vVdyk ij vkèkkfjr gkuk pkfg,A çek.k ,o lng d chp lfHkUurk gA vipkjh dh vkj l çR;d ÑR; vFkok yki vopkj ugh gk ldrk gA çkfèkdkjh dk vopkj ifjHkkf"kr dju oky lfofèk d lnHk e rF; d fu"d"k ij vku d fy, dkj.kk dk nt djuk gkxkA**

15. आरोप ज्ञापन के साथ संलग्न दस्तावेजों की सूची प्रकट करेगी कि प्राथमिकी आर॰ सी॰ 3 (ए॰)/98 (डी॰) की प्रति और दिनांक 3.10.1997 के संयुक्त निरीक्षण मेमो की प्रति विभाग की ओर से प्रस्तुत की गयी थी। यह स्वीकृत अवस्था है कि सी॰ बी॰ आई॰ ने मामले में अन्वेषण के बाद में मामले में अग्रसर नहीं होने का निर्णय किया। जाँच अधिकारी ने भी दर्ज किया है कि चूँकि संग्रहित साक्ष्य अभियोजन के लिए पर्याप्त नहीं थे, मामले में आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया था। आरोप जो 3499.42 लीटर डीजल की कमी अंतर्ग्रस्त करने वाले वर्ष 1994 में किए गए दुर्विनियोग से संबंधित है, को विभागीय जाँच के क्रम में सिद्ध नहीं किया गया है। जाँच अधिकारी ने केवल 620.74 लीटर डीजल की कमी पायी है।

16. मैं आगे पाता हूँ कि यद्यपि याची डिपो का प्रभारी था, अभिकथित दुर्विनियोग का पता लगाने में कर्तव्य की अवहेलना के विरुद्ध याची के किसी अन्य पर्यवेक्षक अधिकारी के विरुद्ध अग्रसर नहीं हुआ है। यद्यपि दुर्विनियोग वर्ष 1994 में किया गया था, वर्ष 1997 में आरोप मेमो जारी किया गया था जिसे वापस ले लिया गया था और पुन: वर्ष 2000 में आरोप ज्ञापन जारी किया गया था। जाँच रिपोर्ट वर्ष 2004 में प्रस्तुत की गयी थी। वर्ष 2007 में द्वितीय कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था, वर्ष 2007 में दंड आदेश पारित किया गया था और अपीलीय आदेश वर्ष 2009 में पारित किया गया है। मेरा दृष्टिकोण है कि याची पर गंभीर प्रतिकूलता कारित हुई है क्योंकि कार्यवाही अभिकथित घटना के 15 वर्ष बाद समाप्त की गयी थी।'' **पंजाब राज्य बनाम बानी सिंह, (1990)Suppl. SCC 738,** में वर्ष 1975-77 में की गयी अनियमितता के संबंध में वर्ष 1987 में कार्यवाही आरंभ की गयी थी और सर्वोच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि विभागीय कार्यवाही को आगे अग्रसर होने की अनुमति देना अनुचित होगा।

17. प्रत्यर्थीगण की ओर से किए गए प्रतिवाद पर आते हुए कि याची के पास समुचित उपचार श्रम न्यायालय के पास जाना है, मेरा मत है कि ऐसे मामले में जहाँ आक्षेपित कार्यवाही प्रकटत: नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत का उल्लंघन प्रकट करती है, याची सही प्रकार से इस न्यायालय के पास आया है। यह सत्य है कि रिट न्यायालय विभागीय कार्यवाही में अभिलेख पर लाए गए साक्ष्य का पुनर्अधिमूल्यन नहीं कर सकता है, किंतु स्वीकृत तथ्यों पर इस न्यायालय के पास कर्मचारी पर अधिरोपित दंड में हस्तक्षेप करने की शक्ति है।

18. पूर्वोक्त की दृष्टि में यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है। प्रत्यर्थीगण को याची को सेवा में पुनर्बहाल करने का निर्देश दिया जाता है।

---

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

कपीलदेव चौधरी

cuke

अजमेरूण बीबी एवं अन्य

M.A. No. 89 of 2010. Decided on 24th February, 2014.

पांचवें अपर जिला न्यायाधीश-सह-अपर मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण (फास्ट ट्रैक न्यायालय, दुमका, संथाल परगना द्वारा पारित दिनांक 17.3.2010 के निर्णय तथा अधिनिर्णय के विरूद्ध।

मोटर यान अधिनियम, 1988–धाराएँ 168 एवं 173–दुर्घटना–प्रतिकर–मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण द्वारा पारित आदेश तथा अधिनिर्णय के विरूद्ध अपील जिसके द्वारा अपीलार्थी पर मृतक के आश्रित को प्रतिकर का भुगतान करने की दायिता अधिरोपित की गयी है–मृतक की मृत्यु अभिकथित दुर्घटना में नहीं हुई थी–अपीलार्थी ने बीमा पॉलिसी के किसी निबंधन एवं शर्त्तों का उल्लंघन नहीं किया है तथा चालक को वाहन सौंपने के पहले सभी सावधानियां बरती थी–बीमा कंपनी अधिनिर्णीत राशि का भुगतान करने का दायी है–अधिकरण का यह निष्कर्ष अपास्त किया गया कि अपीलार्थी प्रतिकर की राशि का भुगतान करने का दायी है–प्रत्यर्थी बीमा कंपनी को राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया गया–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 6, 9 एवं 13)

निर्णयज विधि.–2013 (4) JCR 221 (SC)—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Indrajit Sinha, Bibhash Sinha, Kumar Vimal, Anay Kumar Sah, For the Appellant; M/s Ashish Jha, Bharat Kumar, For the Res. No. 1 to 5.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–पांचवें अपर जिला न्यायाधीश–सह–मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, दुमका द्वारा अभिधान दावा वाद संख्या 53/2008 में पारित दिनांक 17 मार्च, 2010 के निर्णय तथा अधिनिर्णय के विरूद्ध कपीलदेव चौधरी (वाहन के स्वामी) द्वारा यह अपील दाखिल की गयी है, जिसके द्वारा अपीलार्थी पर एम॰ भी॰ अधिनियम की धारा 140 के अधीन पहले ही भुगतान किये गये 50,000/– रुपये के अंतरिम प्रतिकर के अलावा 3,29,600/– रुपये की सीमा तक के प्रतिकर का भुगतान करने का दायित्व अधिरोपित किया गया है तथा आक्षेपित निर्णय में दिये गये निर्देशानुसार अधिनिर्णीत राशि का वितरण किया जायेगा तथा उसे जमा किया जायेगा। यह भी निर्देश दिया गया था कि इस प्रकार अधिनिर्णीत प्रतिकर की राशि का आदेश की तिथि से एक महीने के भीतर भुगतान किया जायेगा जिसमें विफल होने पर अपीलार्थी को मामले के संस्थित किये जाने की तिथि से राशि की वसूली तक सात प्रतिशत साधारण ब्याज का भुगतान करना होगा।

2. तथ्य संक्षेप में यह हैं कि फारूख अंशारी, होमगार्ड संख्या 7850 पुलिस गश्ती दल का एक सदस्य था तथा गश्ती के अनुक्रम में, पुलिस जीप कर्मा मोड़ के निकट रूकी थी। मृतक शौच क्रिया के लिए जा रहा था तथा सड़क पार करने के अनुक्रम में, वह एक ट्रक के पहियों के नीचे आ गया था जिसे अंधाधुंध रूप से तथा लापरवाही से चलाया जा रहा था तथा उसकी मौके पर ही मृत्यु हो गयी थी। आघाती वाहन की निबंधन संख्या BR-12H0023 थी। पीछा किये जाने के उपरान्त ट्रक को पकड़ लिया गया था तथा चालक ने अपना नाम ब्रह्मदेव यादव बताया था जो सिधो यादव का पुत्र था। इस संबंध में, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 279, 304A के अधीन दुमका (मुफस्सिल) पुलिस थाना केस संख्या 23/2007 दर्ज किया गया था। मृतक के आश्रित ने प्रतिकर प्रदान किये जाने के लिए आवेदन दाखिल किया था जिसे अभिधान दावा वाद संख्या 53/2008 के तौर पर दर्ज किया गया था।

3. नोटिस की प्राप्ति पर स्वामी, चालक एवं बीमाकर्त्ता अवर न्यायालय के समक्ष हाजिर हुए थे तथा अपने–अपने कारण पृच्छा दाखिल किया था। उस मामले में निर्णय के उपरान्त, उपरोक्त यथा इंगित अधिनिर्णय पारित किया गया था।

4. अपीलार्थी ने आक्षेपित निर्णय तथा अधिनिर्णय की मुख्यत: इस आधार पर आलोचना किया है कि आघाती वाहन सुसंगत समय पर प्रत्यर्थी संख्या 6–यूनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड के यहां बीमित था तथा अतएव, अधिनिर्णीत राशि की क्षतिपूर्ति करने का निर्देश दिया जाना चाहिए था तथा बीमा कंपनी को प्रतिकर की राशि का भुगतान करने का निर्देश दिया जाना चाहिए था। विद्वान अधिकरण ने विचार किया है कि आघाती वाहन के चालक के पास भारी मोटर यान चलाने का वैध लाईसेंस नहीं था तथा अभिनिर्धारित किया था कि बीमित ने पॉलिसी के निबंधनों एवं शर्त्तों का उल्लंघन किया था तथा अतएव, बीमाकर्त्ता द्वारा उसकी दायिता की क्षतिपूर्ति नहीं की जा सकती है। अपीलार्थी ने विद्वान अधिकरण के सम्परीक्षण के इस हिस्से को चुनौती दी है, प्रथमत: इस आधार पर कि चालक के पास वैध अनुज्ञप्ति थी एवं बीमा कंपनी द्वारा नियुक्त अन्वेषक की रिपोर्ट मामले का निर्णय करने के लिए निश्चायक नहीं होती है। द्वितीयत:, प्रश्नाधीन यान मोटर वाहन अधिनियम, 1988 की धारा 2(21) में प्रगणित परिभाषा के अनुसार एक हल्का मोटर यान था क्योंकि वाहन का बोझ रहित भार 7500 किलोग्राम था। तृतीयत:, अपीलार्थी ने पॉलिसी के किसी निबंधन एवं शर्त्तों का उल्लंघन नहीं किया है तथा उसने चालक को वाहन सौंपने के पहले सभी सावधानी बरती थी तथा अतएव, प्रत्यर्थी–बीमा कंपनी अधिनिर्णित राशि का भुगतान करने का दायी है।

5. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी–बीमा कंपनी के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि दिनांक 2.3.2012 के आदेश द्वारा इस अपील का अंतिम रूप से निस्तारण किया गया था तथा मामला दावा अधिकरण को प्रतिप्रेषित कर दिया गया था इस प्रश्न का निर्णय करने के लिये कि दुर्घटना में संलिप्त वाहन, अर्थात, टाटा–407 एक 'भारी वाहन' था या एक 'हल्का मोटर वाहन' था। उक्त आदेश की अभिप्रमाणित प्रतिलिपि के प्रस्तुतिकरण की तिथि से तीन महीनों की अवधि के भीतर प्रश्न का निर्णय करने का निर्देश दिया गया था। चूँकि मामले का अंतिम रूप से निस्तारण कर दिया गया था, अपीलार्थी वर्तमान अपील में पुन: वही मुद्दा नहीं उठा सकता है। अगर वह अधिकरण के निष्कर्ष से असंतुष्ट है, उसे पृथक विविध अपील दाखिल करना चाहिए था।

मामले का अंतिम रूप से निस्तारण कर दिया गया है, अतएव, पूर्व न्याय का सिद्धांत भी लागू होगा। उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि भारत के संविधान के अनुच्छेद 215 के अधीन, यह एक अभिलेख न्यायालय है तथा यह न्यायालय अपने ही आदेश या निर्णय की समीक्षा नहीं कर सकता। अगर अपीलार्थी दिनांक 2.3.2012 के आदेश से व्यथित है, उसे वृहत्तर पीठ के समक्ष एल॰ पी॰ ए॰ दाखिल करना चाहिए था।

6. दावेदारों के लिए उपस्थित होने वाले अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वह अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत प्रतिकर की राशि प्राप्त करने के लिए एक स्थान से दूसरे स्थान दौड़ रहे हैं तथा उन्हें परेशान नहीं किया जा सकता है अगर बीमाकर्त्ता तथा बीमित के बीच मुकदमा जारी रहता है। अवर न्यायालय में इसपर विवाद नहीं किया गया है कि 22.2.2007 को अभिकथित घटना में मृतक फारूख अंसारी की मृत्यु नहीं हुई थी। दावेदारों के पक्ष में अधिकरण द्वारा दिये गये अन्य निष्कर्षों का अनुपालन किया जाना है तथा यह चुनौती के अधीन नहीं है।

7. मुद्दों पर निष्कर्ष निकालने के पहले, कतिपय बातों को स्पष्ट कर दिये जाने की आवश्यकता है। दिनांक 2.3.2012 के आदेश द्वारा, आक्षेपित निर्णय तथा अधिनिर्णय न तो अपास्त किया गया है, न बरकरार रखा गया है और न ही उपांतरित किया गया है बल्कि यह अभिनिर्धारित किया गया था कि ''इस दौरान, दिनांक 17.3.2010 के अधिनिर्णय का प्रवर्तन प्रास्थगित रहेगा''।

मामला दावा अधिकरण को प्रतिप्रेषित कर दिया गया था इस विनिर्दिष्ट प्रश्न का निर्णय करने के लिये कि घटना में संलिप्त यान, अर्थात, टाटा 407 एक भारी यान है या एक हल्का मोटर यान है। आदेश की अभिप्रमाणित प्रतिलिपि के प्रस्तुतिकरण की तिथि से तीन महीनों के भीतर इस मुद्दे का निर्णय करने का अधिकरण को निर्देश दिया गया है।

जब दिनांक 2.3.2012 के आदेश की दृष्टि में पक्षकार अधिकरण के समक्ष उपस्थित हुए थे, दावा अधिकरण ने इसे स्पष्ट कर दिया है कि आघाती वाहन टाटा 407 नहीं था बल्कि यह एल॰ पी॰ टी॰ 1612 था जिसकी निबंधन संख्या BR12H0023 थी। वाहन की प्रकृति के संबंध में यह भ्रम इस न्यायालय द्वारा दिनांक 21.11.2013 के आदेश से दूर कर दिया गया था। अपीलार्थी के इस स्वीकरण के आधार पर कि दुर्घटना में संलिप्त निबंधन संख्या BR12H0023 वाला यान टाटा 407 नहीं है बल्कि यह टाटा ट्रक एल॰ पी॰ टी॰ 1612 है, तब अधिकरण को इस उपांतरित आदेश के प्रस्तुतिकरण की तिथि से तीन महीनों की अवधि के भीतर पुन: इस मुद्दे का निर्णय करने का निर्देश दिया गया था कि दुर्घटना में संलिप्त आघाती वाहन हल्का मोटर वाहन था या भारी मोटर।

8. विद्वान अधिकरण ने दिनांक 28.1.2014 के आदेश द्वारा मुद्दे का निर्णय किया है तथा एक आदेश पारित किया है उसमें यह घोषित करते हुए कि निबंधन संख्या BR12H0023 वाला आघाती यान टाटा ट्रक एल॰ पी॰ टी॰ 1612 भारी मोटर यान है तथा स्वयं वाहन के मालिक (अपीलार्थी) द्वारा यह तथ्य स्वीकार किया गया है। अंतत: गुणावगुणों पर अपील का निर्णय करने के लिए अधिकरण के निष्कर्ष की अभिप्रमाणित प्रतिलिपि इस न्यायालय के समक्ष पेश की गयी है।

9. इस चरण में, इसे दोहराया गया है कि दिनांक 2.3.2012 के आदेश द्वारा अपील का गुणावगुणों पर निर्णय नहीं किया गया था, अपितु अधिनिर्णय को प्रास्थगित रखा गया था तथा इस मुद्दे का निर्णय

करने का निर्देश दिया गया था कि दुर्घटना में संलिप्त यान हल्का मोटर यान है या भारी मोटर यान। केवल पूर्वोक्त मुद्दे का निर्णय करने की सीमा तक मामला प्रतिप्रेषित किया गया था तथा अपील का अंतत: गुणावगुणों पर निर्णय नहीं किया गया था। आक्षेपित निर्णय तथा अधिनिर्णय न तो अपास्त किया था और न बरकरार रखा गया था, न ही उपांतरित किया गया था बल्कि अधिनिर्णय का प्रवर्तन प्रास्थगित रखा गया है। अभिलेख पर प्रतीत होनेवाली परिस्थितियों में, प्रत्यर्थी–बीमा कंपनी के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क टिकने योग्य नहीं है। यह नहीं कहा जा सकता है कि दिनांक 2.3.2012 के आदेश के पारित होने के उपरान्त इस अपील की पोषणीयता समाप्त हो चुकी है तथा आगे के निष्कर्ष, अगर इस न्यायालय द्वारा दिये गये हैं, पूर्व न्याय के सिद्धांत से प्रभावित होंगे। इस प्रकार, बीमा कंपनी के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क सिरे से ही अस्वीकार किया जाता है।

प्रत्यर्थी–बीमा कंपनी के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता ने अन्य बिन्दुओं पर अपीलार्थी के लिए उपस्थित होने वाले विद्वान अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्क का कोई जवाब नहीं दिया है। अपीलार्थी ने निर्णय के पैराओं 8 एवं 9 को निर्दिष्ट किया है तथा निवेदन किया है कि ब्रह्मदेव यादव (आघाती वाहन के चालक) की ब॰ सा॰ 1 के तौर पर परीक्षा की गयी है तथा उसने अभिसाक्ष्य दिया है कि 22.2.2007 को वह कपीलदेव चौधरी (अपीलार्थी) के BR12H0023 निबंधन संख्या वाले टाटा ट्रक एल॰ पी॰ टी॰ 1612 को चला रहा था। उसके पास वैध अनुज्ञप्ति थी तथा वाहन वैध परमिट, बीमा एवं कर टोकन के अधीन भी चलाया जा रहा था। वह भारी मोटर यान चलाने के लिए प्राधिकृत था परन्तु मूल अनुज्ञप्ति फट गयी थी, अत: उसने दुमका से अनुज्ञप्ति का नवीकरण कराया था। इस गवाह द्वारा पेश की गयी मूल अनुज्ञप्ति प्रदर्श 1 के तौर पर अंकित की गयी है। कपीलदेव चौधरी (वाहन के मालिक) ने अपनी परीक्षा ब॰ सा॰ 2 के तौर पर कराई है तथा उसने कथित किया है कि ब्रह्मदेव यादव ब॰ सा॰ 1 (आघाती वाहन के चालक) के पास वैध एवं प्रभावी चालन अनुज्ञप्ति थी। उसने उसे जांचा था फिर नियुक्त किया था। वाहन का बीमा युनाईटेड इंडिया इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड द्वारा कराया गया था। ब॰ सा॰ 1 द्वारा प्रस्तुत अनुज्ञप्ति की अधिकरण द्वारा परीक्षा की गयी थी तथा यह सम्परीक्षित किया गया है कि इसपर एल॰ एम॰ वी॰ + एच॰ एम॰ वी॰ का पृष्ठांकन था परन्तु अधिकरण ने अन्वेषक द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट पर भरोसा करके त्रुटि कारित किया है, जिसे प्रत्यर्थी–बीमा कंपनी द्वारा नियुक्त किया गया था। अन्वेषक द्वारा प्रस्तुत रिपोर्ट प्रदर्श B के तौर पर अंकित की गयी है जो इंगित करती है कि डी॰ टी॰ ओ॰, भागलपुर ने प्रमाण पत्र प्रदान किया था जिसके अनुसार ब्रह्मदेव यादव के पास चालन अनुज्ञप्ति संख्या 1199/98 था। वह केवल हल्का मोटर यान चलाने के लिए प्राधिकृत था। निर्णय के इन पैराओं को निर्दिष्ट करके जिनमें इस मुद्दे पर चर्चा की गयी थी, ये निवेदन किया गया था कि इसे सही मान लेने पर भी कि चालक के पास केवल हल्का मोटर यान चलाने का लाईसेंस था, यद्यपि यह सही नहीं है, प्रत्यर्थीगण–बीमा कंपनी बीमित की क्षतिपूर्ति करने के अपने दायित्व से बच नहीं सकती है। विद्वान अधिवक्ता ने **2013(4) JCR 221 (SC)** में रिपोर्ट किये गये निर्णय, **पेप्सु रोड ट्रांस्पोर्ट कॉरपोरेशन बनाम राष्ट्रीय बीमा कंपनी** को निर्दिष्ट किया है तथा निवेदन किया है कि वाहन के मालिक से यह अपेक्षित नहीं होता है कि वह संबद्ध जिला के डी॰ टी॰ ओ॰ से पत्राचार करेगा जहां से उस चालक के पक्ष में लाइसेंस निर्गत की गयी है। जिसे वह वाहन चलाने के लिये सौंपने जा रहा है। वाहन के मालिक द्वारा बरती जानेवाली अपेक्षित सावधानी इस हद तक सीमित हो सकती है कि वह चालक के नियोजन के समय उसके द्वारा प्रस्तुत चालन अनुज्ञप्ति की जांच करेगा या वह इसकी जांच कर सकता है कि क्या वह चालक वाहन चलाने में सक्षम है जिसे वह चलाने के लिए वाहन सौंपने जा रहा है। प्रस्तुत मामले में मालिक ने चालक को वाहन सौंपने के पहले अपने आप को संतुष्ट करने के प्रयास किये थे तथा एक जांच की गयी थी। इसके अतिरिक्त, स्वयं

चालक न्यायालय के समक्ष हाजिर हुआ है तथा अनुज्ञप्ति के वैध होने की चुनौती देते हुए इसे पेश किया है। ऐसी परिस्थितियों के अधीन वाहन के मालिक पर प्रतिकर का भुगतान करने की दायिता अधिरोपित नहीं की जा सकती है, अगर दुर्घटना के समय वाहन एक वैध बीमा पॉलिसी के अधीन चलाया जा रहा है।

10. पेप्सु रोड ट्रांस्पोर्ट कॉरपोरेशन बनाम राष्ट्रीय बीमा कंपनी (ऊपर) के मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि:–

*^^tc dkb ekfyd ,d pkyd j[k jgk gkrk g] rc ml mldh tkp djuh gkxh fd pkyd d ikl ,d pkyu vuKflr g ;k ughA vxj pkyd ,d pkyu vuKflr i'k djrk g tk ckgj l n[ku ij fo'k) irhr gkrh g] ekfyd l bldk irk yxkuk vif{kr ugh gkrk g fd vuKflr ,d l{ke ikfèkdkjh }kjk fuxr dh x;h g ;k ughA bld ckn ekfyd pkyd dh tkp djxkA vxj og ikrk g fd pkyd okgu pyku e l{ke g] og ml pkyd dk ukdjh n nxkA ge bl FkkMk fofp= ikr g fd chek diuh;k ekfydk l vkj0 Vh0 vk0 l iNrkN dju dh vi{kk djrh g] tk n'k Hkj e Qy g, g] bl lcèk e fd mUg n'kk;h x;h pkyu vuKflr oèk g ;k ughA bl idkj] tc ekfyd u viu vki dk lr"V dj fn;k g fd pkyd d ikl ,d vuKflr g rFkk og d'kyrkiod pkyu dj jgk g] rc èkkjk 149(2)(a)(ii) dk dkb mYy?ku ugh gkxkA rc] chek diuh dk nkf;rk l eDr ugh fd;k tk;xkA vxj vrr% ;g lkeu vkrk g fd vuKflr tkyh Fkh] chek diuh nk;h cuh jgxh tcrd fd og fl) ugh dj nr g fd ekfyd@chfer dk bldh tkudkjh Fkh ;k ml d è;ku e x;k Fkk fd vuKflr tkyh Fkh rFkk fQj Hkh ml 0;fDr dk pkyu dh vuefr n nh FkhA***

11. (2004) 3 SCC 297 में रिपोर्ट किये गये निर्णय, **राष्ट्रीय बीमा कंपनी लिमिटेड बनाम स्वर्ण सिंह एवं अन्य** में, यह अभिनिर्धारित किया गया था कि :–

^^èkkjk 149(2). fuEukfdr d vèkhu cpko r;kj djuk

*(i) **iek.k dk Hkkj**–&fofèk dh ;g ifriknuk vc vfu.khr ugh jg x;h g fd tk 0;fDr mYy?ku dk vfHkdFku djrk g ml vko';d :i l bl fl) djuk gA bl idkj] chek diuh d fy, mDr mYy?ku dk vdkV; lk{; }kjk fl) dju dh vko';drk gA bl Hkh c<dj] vfèkfu;e dh èkkjk 149 d ikoèkkuk dk ,d dkjk ifj'khyu ek= bl fu"d"k dh vkj y tkrk g fd lkekU; fu;e ;g g fd ,d ckj chfer }kjk fl) dj nu ij fd n?kVuk vfuok; chek [kM }kjk vkPNkfnr g] ;g fl) djuk chekdÙkk dk dke g fd ;g ,d viokn d Hkhrj vkrk gA chek diuh d bl fl) dju e foQy gku dh n'kk e fd chfer dh vkj l ikfyh d 'kÙkk dk mYy?ku gvk g] chek diuh dk ml d nkf;Ro l eDr ugh fd;k tk ldrk gA***

*(ii) **'kÙk dk mYy?ku fn[kk;k tkuk g**–&èkkjk 149(2) bu 'kCnk ^^ikfyh dh ,d fofufn"V 'kÙk dk mYy?ku gvk g** d lkFk ikjHk gkrh g] ft ldk fufgrkFk ;g g fd chekdÙkk d cpko dh dkjokb ikfyh d fucèkuk ij fuHkj djxhA viuh nkf;rkvk l cpu dk è;ku e j[kdj chek diuh d fy, u doy ;g n'kku dh vko';drk g fd èkkjkvk 149(2)(a) ;k (b) d vèkhu vfèkdfFkr 'kÙkk dk lekèkku fd;k x;k g] cfYd ;g Hkh fl) dju dh vko';drk g fd chfer dh vkj l ,d mYy?ku gvk g] vFkkr ; fd mUg chfer }kjk fofèk d tkuc>dj fd; x; ,d mYy?ku dk vko';d :i l fl) djuk gA dN ekeyk e nkfMd fofèk dk mYy?ku] fo'k"kdj vfèkfu;e d ikoèkkuk d mYy?ku d ifj.kker% chfer eDr gk ldr g] ijUr ;g ,d rhlj i{kdkj d ekey e vko';d :i l iHkkoh ugh gk ldrk gA fdlh Hkh n'kk e] doy tkuc>dj fd; x; ;k bruh ykijokgh*

l fd; x; ÑR;k ij gh viokn ykx gkrk g tk ;g fpfUgr dj fd chfer u bl ckr dh ijokg ugh dh Fkh fd mld dk; d ifj.kke D;k gk ldr gA**

(iii) causality : fd mYy?ku l ihfMr dk gku okyh udlkuh dk n'kk;k tkuk gA chfer dh vkj l g, ,l mYy?ku (tlk fd Åij ppk fd;k x;k g) dk chekdÙkk }kjk vko';d :i l fl) djuk g ;g n'kku d fy; fd u doy chfer u vfèkfu;e d mYy?ku e okgu dk bLreky fd;k Fkk ;k bLreky djk;k Fkk ;k djku dh vuefr nh Fkh cfYd ;g Hkh fd tk udlku ihfMr dk gvk Fkk] og mYy?ku l mYiUu gvk FkkA vFkkr ;g fd] tgk chekdÙkk pkyd }kjk ,d oèk vuKfIr èkkj.k dju ;k llxr vofèk d nkjku pkyu e mldh vgrk l lcfèkr ikfylh dh 'kÙk d lcèk e chfer dh vkj l g; mYy?ku dk fl) dju e leFk Hkh g] rk Hkh chekdÙkk dk chfer d ifr viuh nkf;rk l cpu dh vuefr ugh nh tk;xh tcrd fd pkyu vuKfIr dh 'kÙk ij mDr mYy?ku ;k db mYy?ku bru ekfyd u gk fd mUg ?kVuk d dkj.k e ;kxnku nuokyk ik;k x;k gA vfèkdj.k ikfylh dh 'kÙkk dh O;k[;k dju e fofu;e dh èkkjk 149(2) d vèkhu chekdÙkk dk miyCèk cpkok dk vuKkr dju d fy, ^^e[; mí'; d fu;e** rFkk ^^ekfyd mYy?ku** dh ifjdYiuk dk ykx djxA

(iv) **iek.k dh lhek**&iR;d ekey d rF;k ,o ifjfLFkfr;k d vykok iek.k dh lhek] tk iokfYyf[kr vko';drk dk ijk djxh] chek dh lfonk d fucèkuk ij fuHkj gkxhA chek dh ,d lfonk Hkh lfonk d {k= d Hkhrj vkrh gA bl idkj] fdlh vU; lfonk dh rjg] i{kdkjk d vk'k; dk vko';d :i l mle i;Dr vfHkO;fDr;k l le>k tkuk gA ikfylh d fucèkuk ,o 'kÙkk d vLi"V gku dh n'kk e] foy[k d vFkkUo;u d mí'; d fy, vkl&ikl dh ifjfLFkfr;k rFkk i{kdkjk d vkpj.k dk Hkh voykdu djuk vuekU; gA U;k;ky; Hkh rRijrk l chfer d i{k e rFkk chekdÙkk d fo:) vfHkR;tu dk fl)kr ykx dj nr gA D;k tkf[ke dh ,d lHkkouk bruh cMh Fkh fd ,d chek l cpk tkuk Fkk ;k ugh] ;g vko';d :i l ekey dh ifjfLFkfr;k e lhek dk ,d i'u rFkk U;k;ky; dh ,d jk; dk i'u gkxkA**

12. आक्षेपित निर्णय में की गयी चर्चा से यह प्रकट है कि अपीलार्थी ने एक विनिर्दिष्ट बचाव लिया है कि चालक ब्रह्मदेव यादव द्वारा प्रस्तुत अनुज्ञप्ति की उसके द्वारा जांच की गयी थी तथा उक्त चालक को वाहन सौंपने के पहले चालन का परीक्षण भी लिया गया था तथा अतएव, जो सावधानी वाहन के मालिक से अपेक्षित होती है, वह सम्यक् रूप से ली गयी थी। इतना ही नहीं, ब्रह्मदेव यादव (आघाती वाहन का चालक) दायित्व के अपने हिस्से से भागा नहीं था तथा पूरी निश्चितता के साथ अधिकरण के समक्ष उपस्थित हुआ था एवं ब॰ सा॰ 1 के तौर पर साक्ष्य प्रस्तुत किया था तथा अनुज्ञप्ति के वैध होने की चुनौती देते हुए इसे पेश भी किया था। पूर्वोक्त अभिवाक का यह हिस्सा तथा अपीलार्थीगण का आचरण उपरोक्त उद्धृत निर्णय से पूर्ण समर्थन पाता है।

13. ऊपर की गयी परिचर्चाओं की दृष्टि में तथा उद्धृत निर्णय पर भरोसा करते हुए भी, अधिकरण का यह निष्कर्ष कि अपीलार्थी प्रतिकर की राशि का भुगतान करने का दायी है, अपास्त किया जाता है तथा यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि अधिकरण द्वारा अधिनिर्णीत प्रतिकर की राशि का इस आदेश की तिथि से साठ (60) दिनों के भीतर प्रत्यर्थी–बीमा कंपनी द्वारा भुगतान किया जायेगा, जिसमें विफल होने पर आक्षेपित निर्णय में यथा इंगित ब्याज का भी भुगतान करने की प्रत्यर्थी–बीमा कंपनी दायी होगी।

14. यह अपील अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; ,p॰ lh॰ feJk] U;k;efr

वाहिद हुसैन

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

Criminal Revision No. 519 of 2013. Decided on 4th March, 2014.

परिवाद केस संख्या 787 वर्ष 2013 में श्री संजय कुमार सिंह, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 4.6.2013 के आदेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860–धारा 498-A–दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धाराएँ 177 एवं 178–क्रूरता–न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा ऐसा अभिनिर्धारित करके कि न्यायालय को मामले में आगे कार्यवाही करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी, परिवाद मामला खारिज करते हुए पारित आदेश के विरूद्ध पुनरीक्षण याचिका–मृतका के साथ क्रूरता बरते जाने एवं यातना दिये जाने या उसकी दहेज हत्या कारित करने के सारे अभिकथन स्वीकार्यत: अवर न्यायालय की अधिकारिता के भीतर कारित नहीं किये गये थे–अवर न्यायालय ने उचित रूप से अभिनिर्धारित किया है कि उसे मामले का विचारण करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी–आवेदन खारिज। (पैराएँ 12, 13 एवं 14)

निर्णयज विधि.–1992 Supp. (1) SCC 335—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Devesh Krishna, For the Petitioner; Mr. Tapas Roy, For the State; Mr. Deepak Kumar, For the Opp. Party Nos. 2 to 7.

एच॰ सी॰ मिश्रा, न्यायमूर्ति.–याची के विद्वान अधिवक्ता तथा राज्य के विद्वान अधिवक्ता एवं विपक्षी संख्याओं 2 से 7 के विद्वान अधिवक्ताओं को भी सुना।

2. याची परिवाद केस संख्या 787 वर्ष 2013/टी॰ आर॰ संख्या 1885 वर्ष 2013 में श्री संजय कुमार सिंह, विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, हजारीबाग द्वारा पारित दिनांक 4.6.2013 के आदेश से व्यथित है, जिसके द्वारा, अभियुक्त-विपक्षी संख्याओं 2 से 7 के विरूद्ध याची द्वारा दाखिल परिवाद मामला जांच पर खारिज कर दिया गया है ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए कि मृतका की मृत्यु अजमेर जिला में हुई थी जो राजस्थान राज्य के अंतर्गत आता है, तथा अवर न्यायालय को आगे कार्यवाही करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी।

3. इस मामले को उद्‌भूत करने वाले तथ्य ये हैं कि परिवादी की पुत्री, जिसका विवाह विपक्षी संख्या 2 रौशन सोमी के साथ हुआ था, की मृत्यु हो गयी थी, जब परिवार एक कार से दिल्ली से अजमेर जा रहा था। परिवादी की पुत्री राजस्थान राज्य में गेगल पुलिस थाना के भीतर सड़क पर NH-8 पर बुरी तरह घायल हो गयी थी। उसे अस्पताल लाया गया था जहां ईलाज के अनुक्रम में उसकी मृत्यु हो गयी थी।

4. भारतीय दंड संहिता की धाराओं 279, 337 एवं 304-A के अधीन अपराध के लिए इसे एक सड़क दुर्घटना दर्शाते हुए, जिसमें कार भी बुरी तरह क्षतिग्रस्त हो गयी थी, पुलिस मामला संस्थित किया गया था जो गेगल पुलिस थाना केस संख्या 45 वर्ष 2013 था। जे॰ एल॰ एन॰ चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल, अजमेर में पोस्टमार्टम भी किया गया था, तथा सिर एवं छाती पर की मृत्यु पूर्व उपहतियों के परिणामस्वरूप सदमें के कारण मृत्यु का कारित होना पाया गया था।

5. तत्पश्चात्, 8.5.2013 को मृतका महिला के पिता द्वारा अवर न्यायालय में परिवाद मामला दाखिल किया गया था, जिसे परिवाद केस संख्या 787 वर्ष 2013 के तौर पर दर्ज किया गया था उसमें

यह अभिकथित करते हुए कि उसकी पुत्री निकहत परवीन का हजारीबाग में 5.4.2010 को विपक्षी संख्या 2 रौशन सोमी के साथ विवाह हुआ था। उक्त विवाह में दहेज भी लिया गया था तथा विवाह के उपरान्त, लड़की को बोकारो ले जाया गया था जहां से उसे दिल्ली ले जाया गया था जहां वह अपने पति के साथ रहती थी। यह अभिकथित किया गया है कि दहेज की मांग के लिए उसके साथ यातना एवं क्रूरता बरती जाती थी तथा अंततः, परिवादी दिल्ली गया था तथा एक अल्टो कार दिया था, परन्तु फिर भी पांच लाख रुपये की मांग हुई थी, जिसके लिए पति एवं ससुराल वालों द्वारा उसके साथ क्रूरता एवं यातना बरती जाती थी। परिवाद याचिका से, यह प्रतीत होता है कि जहां तक अभियुक्त-विपक्षियों के विरूद्ध मृतका के साथ क्रूरता एवं यातना बरते जाने के अभिकथनों का सवाल है, परिवाद याचिका में किये गये निम्नलिखित अभिकथनों के अलावा समूची घटना अभिकथित रूप से दिल्ली में कारित की गयी थी:–

"11. ;g dh ifjoknh u cgr feUur dh rk cVh dh lkl u budh cVh vkj ukrh dk bud lkFk ,d ekg d fy, fonk fd;kA ftl ydj ifjoknh gtkjhckx vk x, vkj viu lkFk ,d ekg rd j[k fnukd 30 ekg vDrcj] 2012 rd gtkjhckx e gh jghA

12. ;g dh ifjoknh d cVh dk lljky okyk fo'k"kdj lkl] tBkuh] tB] uun] ifr] llj u bruk irkfMr fd;k ftld pyr ok l[kdj dkVk gk xbA

13. ;g dh nkekn viu firk d lkFk ekg vDVcj d vfre llrkg e gtkjhckx ¼cfy;k½ vk, vkj /kedh nr g, cky fd dkj vkil y fy;k ckdh 5 yk[k #i;k Hkh tYn l n fnft, ojuk vtke cjk gkxkA ol Hkh bl fj'r l ge [k'k ugh gA

14. ;g dh fnukd 25.11.2012 ekg uoEcj dk erd d lkgj ,o llj gtkjhckx vkdj ml fonk djkdj ckdkjk y x; tgk vU; vfHk;Drx.k igy l gh ektn Fk ogk igpu d ckn yMdh dk Qku ifjoknh d ikl vk;k dh ikik vxy ekg fnYyh tkuk gA buykx ilk d fy, irkfMr dj jg gA ifjoknh u viu nkekn] le/kh] le/ku] uun l vkjt feUur fd;kA ge cgr xjhc gA fdlh rjg dkj fn; vkj Hkh #i;k 0;oLFkk djd nxA

*15. ;g dh vrr% vfHk;Dr l0 1 ifjoknh d cVh ,o cPp dk ydj fnYyh py x, tgk ml ckj & ckj rx ,o irkfMr djr jg bl ckj e ifjoknh dh cVh cjkcj budk [kcj djrh jgrh FkhA**

6. परिवाद याचिका में यह भी अभिकथित किया गया है कि विपक्षी संख्या 2 का दिल्ली में एक अन्य लड़की के साथ संबंध भी था तथा एक लड़की के साथ उसके छायाचित्र परिवाद याचिका में संलग्न किये गये हैं। यह अभिकथित किया गया है कि 17.3.2013 को लगभग 10 बजे पूर्वाह्न में, परिवादी को उसके दामाद द्वारा दूरभाष पर सूचित किया गया था कि उनके साथ एक दुर्घटना घटित हुई है तथा पुत्री को अस्पताल ले जाया जा रहा है एवं लगभग 12 बजे दोपहर में, उसे सूचित किया गया था कि उसकी पुत्री की मृत्यु हो चुकी है। यह भी कथित किया गया है कि मृतका के ससुर ने परिवार को दिल्ली आने को कहा था जहां शव की अंत्येष्टि की जानी थी, जिसपर, उसने वहां जाने से इनकार कर दिया था तथा उन्हें शव हजारीबाग लाने को कहा था। 18.3.2013 को, मृतका का शव जे॰ एल॰ एन॰ चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल, अजमेर की एम्बुलेंस पर लाया गया था तथा अन्य अभियुक्त व्यक्ति परिवादी के घर आये थे, जहां उन्होंने सूचित किया था कि जब वह कार से अजमेर जा रहे थे, उक्त कार के

साथ एक दुर्घटना हो गयी थी, जिसमें मृतका की मृत्यु हो गयी थी। परिवाद याचिका में यह अभिकथित किया गया है कि परिवादी को मृतका की दुर्घटना के बारे में दोषपूर्ण रूप से सूचित किया गया था तथा इस संबंध में परिवाद याचिका में निम्नांकित अभिकथन किये गये हैं:–

"21. ;g dh ifjoknh dk mld nkekn] le/kh] le/khu ifjokj d vU; ykx tk vfHk;Dr g u ;g xyr tkudkjh nh fd fudgr ijohu dh n?kVuk e ekr gb g cfYd lp rk ;g g fd lHkh vfHk;Drk u feydj "kM;= dj gR;k dh gA ?kVuk dk "kM;= jpk g vkj lHkh u feydj vijk/k fd;k gA ft ld fy, mUg nM nuk U;k;kfpr gA

22. ;g fd lp rk ;g g fd fnYyh l dkj l tc vtej 'kjhQ d fy, jokuk g, rk jkLr e iVky ii d ikl ,d gkVy ¼<kck½ e #dA fudgr d ifr vkj t"B pk; Xyk l e ydj vk, vkj pk; fudgr dk ihu d fy, fn; ft l ihr gh ml pDdj vku yxk ,o ij gkFk [khpu yxkA rc ok t"B l ckyh fd cPp dk y fyth,A e> vPNk ugh yx jgk g bld ckn ok cgk'k gk xbA

23. ;g fd vfHk;Dr l0 1, 2, 3 u feydj Hkkjh gfFk;kj l fudgr ijohu d lj d fiNy fgL l e tkj l ekjk vkj nkfgu gkFk d ckg dk fdlh /kkjnkj gfFk;kj ¼CyM] pkd½ l diMk lfgr frjNk dkV fn;k rFkk iV vkj lhuk d chp e etcr jkM ;k 'kfj;k dk ?kl k fn;k ft ld dkj.k erd dk QQMk QV x;k vkj 'kjhj dk lkjk [ku fxjkdj bl gR;k dk n?kVuk dk #i nu d fy, dkj dk jkM d fMokbMj l tku c>dj VDdj ekjdj dkj dk n?kVukxLr dj fn;k vkj pyrh xkMh l xV [kkydj /kDdk n fn;k blh dkj.k erd d vykok fdlh vkj dk [kjkp rd ugh vkbA tcrd fudgr dh ekr ugh gk xb rc rd ; ykx ifyl dk [kcj rd ugh gku fn;kA

24. ;g fd vkuu&Qkuu e vfHk;Drk u viu djhch ykxk dh enn l ;k tukulkj ?kVukLFky ij igp vkj vLirky d vf/kdkfj;k dh feyh Hkxr l ekey dk jQk nQk fd;k vkj gR;k d okjnkr dk n?kVuk e cnyu dh dkf'k'k dhA

*25. ;g fd ifjoknh fQj fnYyh x;] vtej 'kjhQ x; vxy cxy d ykxk l fey vkj bl lp dk tku fy, fd budh cVh dh gR;k gb gA vkj lck u bldh if"V Hkh dhA ft ld fy, ;g ifjokn i= U;k;ky; e lefir dj jg g] fd vfHk;Drk dk lefpr nM fn;k tk;A***

7. इन अभिकथनों के साथ, परिवार के सभी सदस्यों के विरूद्ध परिवाद याचिका दाखिल की गयी थी जो पति, ससुर, सास, देवर एवं ननदें हैं। यद्यपि परिवाद याचिका के पैरा 25 में यह कथित किया गया है कि परिवादी–याची को इन तथ्यों के बारे में दिल्ली एवं अजमेर शरीफ के व्यक्तियों से जानकारी मिली थी, परन्तु परिवाद याचिका में ऐसे कोई व्यक्ति गवाह के तौर पर उद्धृत प्रतीत नहीं होते हैं, बल्कि यह प्रतीत होता है कि परिवाद में उद्धृत साक्षीगण घटना के चश्मदीद गवाह नहीं हो सकते हैं। इस आवेदन में अभिलेख पर ऐसे किसी गवाह का बयान नहीं लाया गया है। परिवादी एवं उसके गवाहों, जिनके बयान जांच के चरण में अभिलिखित किये गये थे, ने परिवादी के मामले का समर्थन किया है।

8. अवर न्यायालय ने प्राथमिकी को ध्यान में लिया है, जिसे राजस्थान के अजमेर जिला में गेगल पुलिस थाना में संस्थित किया गया था, जिसमें पीड़िता निखहत परवीन की मृत्यु दुर्घटना से हुई एक मृत्यु

दर्शायी गयी थी। अवर न्यायालय ने पाया था कि चूँकि मृतका की मृत्यु राजस्थान राज्य के अजमेर जिला में हुई थी, न्यायालय को मामले पर विचारण करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी तथा तद्नुसार, परिवाद याचिका खारिज कर दिया था।

9. याची के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि अवर न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश पूर्णतः अवैधानिक है क्योंकि दहेज की मांग के लिए मृतका के साथ क्रूरता एवं यातना बरते जाने का अपराध एक सतत् चलने वाला अपराध है तथा उस अपराध का हिस्सा हजारीबाग में भी घटित हुआ था, जो न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता के अंतर्गत आता है। इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने **2010(2) East. Cr.C. 58 (Patna)** में रिपोर्ट किये गये **अमरेन्द्र सिंह उर्फ मुन्ना सिंह एवं अन्य बनाम बिहार राज्य एवं एक अन्य** में माननीय पटना उच्च न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है। यह भी निवेदन किया है कि यद्यपि मृतका की मृत्यु राजस्थान राज्य में घटित हुई थी, संज्ञान लेने में क्षेत्रीय अधिकारिता अवर न्यायालय के लिए कोई वर्जन नहीं थी तथा इस संबंध में, याची के विद्वान अधिवक्ता ने **1999(8) SCC 686** में रिपोर्ट किये गये **ट्राईसन्स केमीकल इन्डस्ट्री बनाम राजेश अग्रवाल एवं अन्य** में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय पर भरोसा किया है, जिसमें निम्नवत् अभिनिर्धारित किया गया है:–

> *^^11. ;g ,d nk"ki.k nf"Vdk.k g fd fdlh vijkèk dk lKku yu oky U;kf;d nMkfèkdkjh d fy, vko';d :i l ekey ij fopkj.k dju d fy, {k=h; vfèkdkfjrk Hkh gkuh gA*
>
> **** *** ****
>
> *14. vfèkdkfjrk lcèkh igy rHkh llxr gk tkrk g tc tkp ;k fopkj.k dk i'u mnHkr gkrk gA vr,o] ;g ,d nk"ki.k lkp g fd doy ekey dk fopkj.k dju dh vfèkdkfjrk oky nMkfèkdkjh dk gh vijkèk dk lKku yu dh 'kfDr gkrh gA vxj og iFke J.kh dk ,d nMkfèkdkjh g] vijkèk dk lKku yu dh mldh 'kfDr {k=h; fucèkuk }kjk ckfèkr ugh gkrhA lKku yu d mijkUr og bl lcèk e fu.k; y ldrk g fd fdl U;k;ky; dk vijkèk dh tkp iMrky dju ;k fopkj.k dju dh vfèkdkfjrk g vkj ;g voLFkk lKku d ckn oky pj.k d nkjku gh mRiUu gkxh rFkk igy ughA***

इन निर्णयों पर भरोसा करते हुए, विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश कानून की नजर में बरकरार नहीं रखा जा सकता है, तथा इस तथ्य की दृष्टि में कि अपराध एक सतत् चलने वाला अपराध है जिसका एक हिस्सा हजारीबाग में भी घटित हुआ था, अवर न्यायालय को मामले का विचारण करने की अधिकारिता थी।

10. राज्य के विद्वान अधिवक्ता तथा विपक्षी संख्याओं 2 से 7 के विद्वान अधिवक्ताओं ने भी निवेदन किया है कि समूचा परिवाद दुर्भावनापूर्ण है तथा परिवाद याचिका में किये गये अभिकथन पर प्रथम दृष्टया विश्वास नहीं किया जा सकता है। मृतका की मृत्यु सड़क दुर्घटना के कारण हुई थी, जिसके लिए पुलिस मामला भी दर्ज किया गया था एवं जे॰ एल॰ एन॰ चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल, अजमेर द्वारा निर्गत पोस्टमार्टम रिपोर्ट में इसका पूर्ण समर्थन किया है। यह भी निवेदन किया गया है कि घटना के पहले, किसी दहेज की मांग के लिए अभियुक्त को पीड़ित किये जाने का अभियुक्त–विपक्षियों के विरूद्ध कभी भी किसी प्रकार का कोई अभिकथन नहीं किया गया था तथा जो कुछ अभिकथन है, वे केवल काल्पनिक हैं, तथा अभियुक्त–विपक्षीयों से केवल प्रतिशोध लेने के लिए मृतका की मृत्यु के बाद किये गये हैं। यह भी निवेदन

किया गया है कि मामले की किसी भी दृष्टि में, मृत्यु 17.3.2013 को हुई थी, परन्तु परिवाद मामला काफी विलंब से, अर्थात, 8.5.2013 को दाखिल किया गया है तथा इसे अवर न्यायालय द्वारा जांच के उपरांत उचित रूप से खारिज कर दिया गया था। विद्वान अधिवक्ताओं ने यह भी निवेदन किया कि परिवाद याचिका के अनुसार भी, घटना का कोई भी हिस्सा कभी भी अवर न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर घटित नहीं हुआ था तथा अवर न्यायालय ने उचित रूप से आवेदन अस्वीकार कर दिया है। तद्नुसार, विद्वान अधिवक्ताओं ने निवेदन किया कि आक्षेपित आदेश में कोई अवैधानिकता नहीं है।

11. दोनों पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं की सुनवाई करने के उपरान्त तथा अभिलेख का अवलोकन करने पर, मैं पाता हूँ कि मृतका की मृत्यु, जो कथित रूप से सड़क दुर्घटना से कारित हुई है, प्रथम दृष्टया प्राथमिकी द्वारा भी सिद्ध होती है, जो दुर्घटना की ही तिथि को अजमेर जिला में दर्ज की गयी थी तथा पोस्टमार्टम परीक्षा जे॰ एल॰ एन॰ चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल, अजमेर में की गयी थी, तथा यह भी मृतका की दुर्घटना में हुई मृत्यु का समर्थन करती है। अभिकथित घटना के लगभग डेढ़ महीने के बाद, वर्तमान परिवाद याचिका संस्थित की गयी थी, जिसमें पहली बार अभियुक्त के साथ क्रूरता एवं यातना बरते जाने का अभिकथन किया गया था। स्वीकार्यत:, प्राथमिकी में मुख्य अभिकथन भारतीय दंड संहिता की धारा 304B से संबंधित है, परन्तु यह अवर न्यायालय की क्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर कारित नहीं हुआ था, बल्कि मृतका की अभिकथित दहेज मृत्यु, अगर कोई हुई थी, राजस्थान के अजमेर जिला में कारित की गयी थी। जहां तक धारा 498A के अधीन अभिकथन का सवाल है, जो समूचे अभिकथन हैं वो अभिकथित रूप से दिल्ली में घटित हुए थे। जैसा कि ऊपर कथित किया गया है, यद्यपि परिवाद याचिका के पैराओं 11 से 15 में यह कथित किया गया है कि याची अपनी पुत्री को हजारीबाग वापस ले आया था, परन्तु परिवाद याचिका दर्शाती है कि हजारीबाग में किसी क्रूरता तथा यातना का कोई अभिकथन नहीं था। केवल यह अभिकथित है कि अक्टुबर, 2012 के महीने में, मृतका के पति एवं ससुर आये थे तथा पांच लाख रुपये की मांग की थी ऐसा कथित करते हुए कि वह इस संबंध से प्रसन्न नहीं थे। इस अभिकथन के अलावा, हजारीबाग में क्रूरता एवं यातना का कोई अन्य अभिकथन नहीं है एवं स्वीकार्यत:, इसके बाद मृतका को बोकारो होते हुए दिल्ली वापस ले जाया गया था।

12. ऐसे मामलों में यह प्रश्न कि किस न्यायालय को अपराध में जांच पड़ताल करने एवं उसका विचारण करने की क्षेत्रीय अधिकारिता होगी, अब और अनिर्णीत विषय नहीं रह गया है। **2007(1) SCC 262** में रिपोर्ट किये गये **मनीष रतन एवं अन्य बनाम मध्य प्रदेश राज्य एवं एक अन्य** में, माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा विधि अधिकथित की गयी है ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 177 आवश्यक बनाती है कि प्रत्येक अपराध का सामान्यत: उस न्यायालय द्वारा जांच पड़ताल एवं विचारण किया जायेगा जिसकी क्षेत्रीय अधिकारिता के भीतर, यह कारित किया गया था। उक्त मामले में, परिवादी अपने पति के साथ जबलपुर में रह रही थी तथा जबलपुर में क्रूरता एवं यातना का अभिकथन था, मात्र यह अभिकथित करते हुए कि दशहरा के समय अभियुक्त व्यक्तियों ने उसके साथ इतना दुर्व्यवहार किया था कि उसने अपना घर छोड़ दिया था तथा किसी तरह अपनी जान बचाई थी तथा भोपाल में अपने मामा के घर पहुँच गयी थी तथा वहां से, वह अपने घर पहुँची थी तथा तभी से वह दतिया में अपने पिता के साथ रह रही थी। उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया था कि दतिया के न्यायालय को मामले की जांच पड़ताल करने तथा विचारण करने की कोई अधिकारिता नहीं थी क्योंकि अपराध को एक सतत् चलने वाला अपराध अभिनिर्धारित नहीं किया जा सकता था मात्र इस कारण कि परिवादी को अपना वैवाहिक घर छोड़ने पर विवश किया गया था। वर्तमान मामले में भी, परिवाद याचिका के अनुसार कुछ

अवधि के लिए मृतका हजारीबाग में अपने माता पिता के घर में रही थी, परन्तु दहेज की अभिकथित मांग के अलावा उस अवधि के दौरान किसी यातना एवं क्रूरता का कोई अभिकथन नहीं है। मृतका के साथ क्रूरता एवं यातना बरते जाने, या उसकी दहेज मृत्यु कारित करने के सारे अन्य अभिकथन स्वीकार्यत: अवर न्यायालय की अधिकारिता के भीतर कारित नहीं किये गये थे तथा मेरी सुविचारित राय में, अवर न्यायालय ने उचित रूप से अभिनिर्धारित किया है कि इसे मामले का विचारण करने की कोई क्षेत्रीय अधिकारिता नहीं थी तथा परिवाद याचिका को खारिज कर दिया है।

13. वर्तमान मामला प्रथम दृष्टया दर्शाता है कि मृतका की अजमेर जिला में एक सड़क दुर्घटना में दुर्भाग्यपूर्ण मृत्यु हो गयी थी, जब वह अपने परिवार के सदस्यों के साथ दिल्ली से अजमेर जा रही थी तथा यह प्राथमिकी द्वारा, जो अजमेर जिला में दर्ज की गयी थी, एवं जे॰ एल॰ एन॰ चिकित्सा महाविद्यालय एवं अस्पताल, अजमेर द्वारा निर्गत पोस्टमार्टम रिपोर्ट द्वारा भी समर्थित है। ऐसे अभिकथन किये गये हैं कि मृतका को बेहोश करने वाला कोई पेय दिया गया था तथा तत्पश्चात्, उसपर तीक्ष्ण धारदार एवं कठोर तथा कुंद हथियारों से प्रहार किया गया था, उसके सिर, शरीर एवं फेफड़ों पर उपहतियां कारित की गयी थी तथा इसके बाद, सड़क दुर्घटना का एक झुठा चित्र बनाया गया था। स्वीकार्यत:, परिवादी एवं उसके परिवार के सदस्य इस घटना के गवाह नहीं थे तथा उन्हें उनके पास मृतका पर प्रहार के ऐसे अनिश्चित अभिकथनों की सूचना का कोई स्रोत नहीं था। यद्यपि, यह कथित किया गया है कि परिवादी को दिल्ली एवं अजमेर में व्यक्तियों से इन तथ्यों के बारे में जानकारी मिली थी, परन्तु यह प्रतीत होता है कि परिवाद याचिका में इन स्थानों के किसी चश्मदीद गवाह को उद्धृत नहीं किया गया है, न ही ऐसे गवाह का बयान इस आवेदन के अभिलेख पर लाया गया है। यह अभिकथन स्पष्टत: प्रथम दृष्टया दर्शाते हैं कि केवल अटकलों एवं अनुमानों के आधार पर अभियुक्त-याचीगण के विरूद्ध परिवादी द्वारा मामला दाखिल किया गया है।

14. मेरी सुविचारित राय में, प्रथम दृष्टया परिवाद याचिका दुर्भावनापूर्वक तथा निजी एवं वैयक्तिक दुर्भाव के कारण अभियुक्त व्यक्तियों को नुकसान पहुँचाने को दृष्टिगत रखते हुए उनसे प्रतिशोध लेने के परतर हेतु के साथ दाखिल की गयी प्रतीत होती है। **1992 Supp. (1) SCC 335** में रिपोर्ट किये गये **हरियाणा राज्य एवं अन्य बनाम भजन लाल एवं अन्य** में, सर्वोच्च न्यायालय ने विधि अधिकथित की है तथा दृष्टांत के माध्यम से मामलों की कतिपय कोटियां विरचित की थीं, जिसमें भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन असाधारण शक्ति या दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 482 के अधीन अंतर्निहित शक्ति का भी उच्च न्यायालय द्वारा या तो न्यायालय की आदेशिका के दुरूपयोग को रोकने के लिए या अन्यथा न्याय के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा वर्णित ऐसे मामलों की कोटियों में वह मामले शामिल हैं जहां प्राथमिकी या परिवाद में अभिकथन बेतुके एवं अंतर्निहित रूप से अनधिसंभाव्य हैं तथा वे भी जहां दांडिक कार्यवाही प्रकटत: दुर्भावना से युक्त है तथा/या जहां निजी एवं वैयक्तिक दुर्भाव के कारण अभियुक्त को क्षति पहुँचाने को दृष्टिगत रखकर उसके साथ प्रतिशोध लेने के परतर हेतू के साथ कार्यवाही दुर्भावनापूर्वक संस्थित की गयी है। मेरी सुविचारित राय में, वर्तमान मामला भी इन कोटियों के भीतर आता है तथा इस कारण भी मेरा अवर न्यायालयों द्वारा पारित आक्षेपित आदेश के साथ हस्तक्षेप करने का इरादा नहीं है।

15. मामले के पूर्वोल्लिखित तथ्यों एवं परिस्थितियों में, मैं पुनरीक्षण अधिकारिता में आक्षेपित आदेश में हस्तक्षेप के योग्य कोई अवैधानिकता एवं/या अनियमितता नहीं पाता हूँ। इस आवेदन में कोई गुण नहीं है तथा इसे, तद्नुसार, खारिज किया जाता है।

ekuuh; Mhñ ,uñ iVy ,o ihñ ihñ HkVV] U;k;efrx.k

सुखलाल सिरका उर्फ लुसा

cuke

झारखंड राज्य

Cr. Appeal (DB) No. 1529 of 2003. Decided on 15th January, 2014.

एस॰ टी॰ संख्या 24/2003/एस॰ टी॰ संख्या 17/2003 में श्री नित्यानंद सिंह, अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक न्यायालय-III, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 21 जुलाई, 2003 के दोषसिद्धि के निर्णय तथा दंडादेश के विरूद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860–धारा 302–डायन प्रथा निवारण अधिनियम, 1999–धाराएँ 3 एवं 4–दंड प्रक्रिया संहिता, 1973–धारा 374–हत्या–दोषसिद्धि–डायन का कार्य करने का संदेह–अन्य नामजद गवाहों के साक्ष्य द्वारा अ॰ सा॰ 3 का साक्ष्य पूर्णतः सम्पोषित–मामले के अन्वेषण पदाधिकारी ने भी अभियोजन के मामले का समर्थन किया है–साक्ष्यों का मूल्यांकन करने में विचारण न्यायालय द्वारा कोई त्रुटि कारित नहीं की गयी है–अपील खारिज।

(पैराएँ 6 एवं 7)

अधिवक्तागण.–Mr. P.K. Nayak, For the Appellant; Mr. A.P.P., For the Respondent.

डी॰ एन॰ पटेल, न्यायमूर्ति.–सत्र विचारण संख्या 24 वर्ष 2003 में अपर सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक न्यायालय-III, चाईबासा द्वारा पारित दिनांक 21 जुलाई, 2003 के दोषसिद्धि के निर्णय एवं दंडादेश दोनों के विरूद्ध अपीलार्थी-अभियुक्त द्वारा वर्तमान अपील दाखिल की गयी है जिसके द्वारा वर्तमान अपीलार्थी-अभियुक्त को मुख्यतः भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कारावास से दंडित किया गया है तथा डायन प्रथा निवारण अधिनियम, 1999 की धारा 3 के अधीन तीन वर्षों के सश्रम कारावास से भी दंडित किया गया है तथा उसको धारा 4 के अधीन छह महीनों का भी सश्रम कारावास दिया गया है। तथापि, सभी दंडादेशों के साथ-साथ चलने का आदेश किया गया था। दोषसिद्धि के इस निर्णय तथा दंडादेश के विरूद्ध वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

2. अभियोजन का मामला यह है कि 1.8.2002 को तीन बजे अपराह्न में, सूचनादाता मुन्नी सिरका (अ॰ सा॰ 2) ने राजकीय अस्पताल, कुमारडुबी में पुलिस को 1.8.2002 को आठ बजे पूर्वाह्न में फर्दबयान दिया था कि सूचनादाता अपनी माता चन्दू कुई सिरका (मृतका) के साथ घास काटने के लिए अपने धान के खेत में गई थी, जो मटकमडीपा में जलदीहा गांव के अंतर्गत अवस्थित था। इसके बाद, लगभग 11 बजे पूर्वाह्न में अपीलार्थी-अभियुक्त सुखलाल सिरका उर्फ लुसा वहां आया था तथा मृतका से पूछा था कि उसने क्यों डायन का कार्य करके अभियुक्त के माता को मार दिया था तथा उसने उसे यह भी बताया था कि वह उसे नहीं छोड़ेगा ऐसा कहकर, उसने सिर के पीछे लाठी से सूचनादाता पर प्रहार करना प्रारंभ कर दिया था तथा दायीं कनपट्टी के क्षेत्र पर एक और वार किया गया था जिसके कारण वह नीचे गिर पड़ी थी तथा वहीं उसकी मृत्यु हो गयी थी। तत्पश्चात्, सूचनादाता ने डर के कारण वहां से भागना प्रारंभ कर दिया था तथा अभियुक्त ने उसकी भी दायीं कनपट्टी के क्षेत्र पर प्रहार किया था जिसके कारण उसे कटने की उपहति हुई थी तथा वह जमीन पर नीचे गिर पड़ी थी तथा इसके बाद अभियुक्त वहां से भाग गये थे। कुछ समय बाद जब सूचनादाता को होश आया था, उसका पिता भी वहां पहुँच गया था तथा उसने अपने पिता को समुचित घटना सुनाई थी। तत्पश्चात्, उसे प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, कुमारडुंगी ले जाया गया था जहां उसका उपचार किया गया था।

3. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अभियोजन अभिकथित रूप से वर्तमान अपीलार्थी द्वारा कारित हत्या के अपराध को सभी युक्तिसंगत संदेहों से परे सिद्ध करने में विफल रहा है। तथाकथित अ॰ सा॰ 2 एक चश्मदीद गवाह नहीं है एवं इस अ॰ सा॰ 2 के अभिसाक्ष्य में बड़े विलोप एवं विरोधात्मकताएं हैं। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का उपयुक्त रूप से मूल्यांकन नहीं किया गया है। अपीलार्थी के अधिवक्ता ने विस्तार से अ॰ सा॰ 2 द्वारा दिये गये अभिसाक्ष्य को निर्दिष्ट किया है तथा यह निवेदन किया गया है कि वह मृतका की पुत्री है; वह केवल 'हो' भाषा जानती है; जिस व्यक्ति ने हिन्दी भाषा में फर्दबयान का अनुवाद किया था, उसे एक गवाह के तौर पर परीक्षित नहीं किया गया है; इससे भी बढ़कर, उसके अभिसाक्ष्य को देखते हुए, अ॰ सा॰ 2 ने कथित किया है कि फर्दबयान उसे उसके समक्ष पढ़कर नहीं सुनाया गया था तथा उसने केवल अपने अंगूठे का निशान लगा दिया था। इस प्रकार, तथाकथित चश्मदीद गवाह वस्तुतः चश्मदीद गवाह है ही नहीं। अभियोजन फर्दबयान एवं प्राथमिकी भी सिद्ध करने में विफल रहा है तथा जिस व्यक्ति ने सूचनादाता की 'हो' भाषा का अनुवाद किया है, उसे परीक्षित नहीं किया गया है एवं मामले के इस पहलू का विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा उपयुक्त रूप से मूल्यांकन नहीं किया गया है।

4. अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी पर घायल गवाह को कोई उपहति कारित करने का कोई आरोप नहीं लगाया गया था, न ही उसके लिए कोई दोषसिद्धि हुई है। इससे भी बढ़कर, अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, जो अ॰ सा॰ 2 का पिता है, द्वारा दिये गये अभिसाक्ष्य के अनुसार एक सप्ताह के लिए मुर्छित थी तथा इसलिए भी, अन्वेषण पदाधिकारी द्वारा लिखित में दर्ज फर्दबयान सही नहीं है तथा उसे प्रदर्श संख्या दिया ही नहीं जा सकता है। अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि चश्मदीद गवाह अ॰ सा॰ 2 के साक्ष्य में कई बड़ी विरोधात्मकतायें एवं विलोप हैं क्योंकि मृतका कुछ हल्का नाश्ता करने के उपरान्त घर से निकली थी, परन्तु पोस्टमार्टम रिपोर्ट को देखते हुए, उसका पेट खाली था। इस प्रकार, घटना के बारे में अ॰ सा॰ 2 द्वारा दिया गया समूचा वृत्तांत झूठा है एवं, अतएव, अ॰ सा॰ 2 एक अविश्वसनीय तथा भरोसे के लायक गवाह नहीं है। इस प्रकार, जब दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन सह-अभियुक्त का बयान दर्ज किया गया था, डायन शब्द का इस्तेमाल करते हुए हत्या कारित किये जाने के बारे में उसके समक्ष कोई प्रश्न नहीं रखा गया था। वैकल्पिक रूप से, यह निवेदन किया गया है कि हिरासत की अवधि को देखते हुए, जो लगभग 11 वर्ष एवं छह महीने है, दोषसिद्धि को भारतीय दंड संहिता की धारा 304(ii) के अधीन दोषसिद्धि में परिवर्तित कर दिया जाए तथा एक दंड के तौर पर अपीलार्थी पर भुगत लिया गया दंडादेश अधिरोपित किया जाय। अपीलार्थी के अधिवक्ता द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 3 भी भरोसे के लायक नहीं है क्योंकि उसने भी कथित किया था कि उसने भी फर्दबयान पर अपना हस्ताक्षर किया था, परन्तु, अ॰ सा॰ 2 द्वारा दिये गये फर्दबयान पर अ॰ सा॰ 3 का ऐसा कोई हस्ताक्षर नहीं था। विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा मामले के इस पहलू का उपयुक्त मूल्यांकन नहीं किया गया है तथा अतएव, विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि का निर्णय एवं दंडादेश अभिखंडित एवं अपास्त किये जाने योग्य है।

5. हमने राज्य के विद्वान अधिवक्ता ए॰ पी॰ पी॰ को सुना है, जिन्होंने निवेदन किया है कि अभिलेख पर साक्ष्य का मूल्यांकन करने में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा कोई त्रुटि कारित नहीं की गयी है। अभियोजन का मामला चश्मदीद गवाह के अभिसाक्ष्य पर आधारित है जो अ॰ सा॰ 2 है और जो घायल गवाह भी है। ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह निवेदन किया गया है कि घटना 1 अगस्त, 2002 को लगभग 11 बजे पूर्वाह्न में घटित हुई थी तथा अ॰ सा॰ 2 का फर्दबयान अस्पताल में दर्ज किया गया था क्योंकि अ॰ सा॰ 2 एक घायल चश्मदीद गवाह थी और उसे भी चोटें आयी थी जिन्हें अ॰ सा॰ 13 डॉक्टर भुनेश्वर साह द्वारा सिद्ध किया गया है तथा उपहति प्रमाण पत्र प्रदर्श 5 है। ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह निवेदन किया

गया है कि सबसे पहले एक प्राथमिकी हुई थी तथा प्राथमिकी में अपीलार्थी का नाम उल्लिखित है। अ॰ सा॰ 2 एक घायल चश्मदीद गवाह है; अपनी माता के साथ अपराध के स्थल पर उसकी मौजूदगी भी स्वाभाविक है तथा उसके अभिसाक्ष्य को देखते हुए, बिना किसी अतिशयोक्ति के उसने विस्तार से समूची घटना बताई है तथा ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी ने अ॰ सा॰ 2 की माता को लाठी, जो एक कठोर तथा कुंद पदार्थ है, से उपहति कारित किया था। अ॰ सा॰ 2 द्वारा प्राथमिकी में एवं अपनी अभिसाक्ष्य में भी घटना का ढंग निर्दिष्ट किया गया है। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 2 एक विश्वास योग्य एवं भरोसेमंद गवाह है तथा अ॰ सा॰ 2 द्वारा दिये गये साक्ष्य का मूल्यांकन करने में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा कोई त्रुटि कारित नहीं की गयी है। ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 2 विश्वास योग्य है क्योंकि जब अपीलार्थी उसकी माता को मार-पीट रहा था, उसने भागने का प्रयास किया था परन्तु अपीलार्थी द्वारा उसे भी घायल कर दिया गया था। तत्पश्चात्, अ॰ सा॰ 3, जो अ॰ सा॰ 2 का पिता एवं मृतका का पति है, अ॰ सा॰ 4 एवं अन्य गवाहों के साथ वहां दौड़ कर पहुँचा था। इस प्रकार, अ॰ सा॰ 2 द्वारा दिये गये अभिसाक्ष्य को देखने पर, यद्यपि वह एक चश्मदीद गवाह नहीं है, उसने घटना स्थल, घटना के समय एवं अ॰ सा॰ 2 के निकटतम पक्ष को भी सिद्ध किया है। ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 3 एक गंवार गवाह है तथा कई सप्ताहों के उपरान्त, अर्थात, लगभग तेरह सप्ताह के उपरान्त अपना अभिसाक्ष्य दे रहा है तथा, अतएव, यह प्रतीत होता है कि उसने यह वर्णित किया है कि अ॰ सा॰ 2 एक सप्ताह के लिए मूर्छित थी। ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अभियोजन गवाहों के अभिसाक्ष्य में सत्य की सदैव संभावना रहती है तथा दांडिक विधि शास्त्र में एक बार झूठ तो प्रत्येक बार झूठ का सिद्धान्त लागू नहीं होता है। इस प्रकार, अन्वेषण पदाधिकारी अ॰ सा॰ 3 द्वारा अतिशयोक्तिपूर्ण पक्ष रखा गया है तथा ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 3 के एक या दो वाक्यों के अलावा, अ॰ सा॰ 3 द्वारा दिये गये अभिसाक्ष्य में कोई अधिक परिवर्त्तन नहीं है। ए॰ पी॰ पी॰ द्वारा यह भी निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 2 को अ॰ सा॰ 11, जो डॉक्टर सुरेन्द्र लोव हैं, द्वारा दिये गये चिकित्सीय साक्ष्य से पर्याप्त सम्पोषण प्राप्त हो रहा है। मृतका को कई उपहतियां आई थी जिनमें से उपहति संख्या 3 प्राणघातक प्रकृति की थी तथा चिकित्सीय साक्ष्य के अनुसार, उपहतियां कठोर एवं कुंद पदार्थ द्वारा कारित की जा सकती थी। अ॰ सा॰ 8 द्वारा मृत्यु समीक्षा पंचनामा सिद्ध किया गया है। अन्वेषण पदाधिकारी ने फर्दबयान, प्राथमिकी एवं मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट सिद्ध किया है जो क्रमशः प्रदर्श 2, 3, एवं 4 है। अ॰ सा॰ 2 का उपहति प्रमाण पत्र अ॰ सा॰ 13 द्वारा सिद्ध किया गया है जो प्रदर्श 5 है। इस प्रकार, अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए, मृतका की हत्या कारित करने के लिये अपीलार्थी की दोषसिद्धि एवं दंडादेश करने में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा कोई त्रुटि कारित नहीं की गयी है तथा अभियोजन ने अपीलार्थी द्वारा कारित हत्या के अपराध को सभी युक्तिसंगत संदेहों से परे सिद्ध किया है। अतएव, इस न्यायालय द्वारा इस अपील को ग्रहण न किया जाय।

6. दोनों पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ताओं को सुनकर तथा अभिलेख पर साक्ष्यों को देखकर, हम मुख्यतः निम्नांकित तथ्यों, कारणों एवं अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्यों के कारण इस अपील को ग्रहण करने का कोई कारण नहीं देखते हैं:-

(i) vfHk;ktu dk ;g ekeyk g fd ?kVuk 1 vxLr] 2002 dk yxHkx 11 ct iokgu e ?kfVr gb Fkh(tc v0 lk0 2 viu [kr e erdk d lkFk Fkh] vihykFkh ykBh d lkFk vk;k Fkk rFkk mu nkuk l dg jgk Fkk fd v0 lk0 2 dh ekrk ,d Mk;u Fkh rFkk v0 lk0 2 dh ekrk d dkj.k vihykFkh dh ekrk dh eR; gk x;h Fkh rFkk vihykFkh v0 lk0 2 ,o v0 lk0 2 dh ekrk dk Hkh ugh NkMxk rFkk mlu pUn db fljdk uked v0 lk0 2 dh ekrk d lkFk xkyh&xyk t djuk ikjHk dj fn;k Fkk rFkk v0 lk0 2 dh ekrk ij ykBh l igkj fd;k FkkA ykBh }kjk dkfjr migfr d dkj.k] v0 lk0 2 dh ekrk dk ekd ij gh eR; gk x;h FkhA v0 lk0 2 u l=kl fd;k Fkk] ijUr] fudV e dkb ugh Fkk rFkk] vr,o] mlu viu vki dk cpku dk i;kl fd;k Fkk(tc og Hkkx jgh Fkh] vihykFkh u mldk Hkh ihNk fd;k Fkk rFkk ykBh }kjk migfr dkfjr dh FkhA v0 lk0 2 uhp fxj iMh Fkh rFkk

rRi'pkr] v0 lk0 3] tk v0 lk0 2 dk firk ,o erdk dk ifr g] vU; 0;fDr;k d lkFk ogk ij nkM dj igpk FkkA pUn db fljdk dh eR; dk n[kr g, rFkk v0 lk0 2 dk Hkh n[kr g,] tk ?kk;y Fkh] ml v0 lk0 3 }kjk vLirky y tk;k x;k Fkk tgk v0 lk0 13 MkDVj Hku'oj lkg u ml dh tkp dh Fkh ,o v0 lk0 2 dk vkb nk pkVk dk mfYyf[kr fd;k Fkk rFkk in'k 5 d rkj ij vfdr migfr iek.k i= fuxr fd;k Fkk] v0 lk0 13 d vfHklk{; ij ml dk Qnc;ku 1 vxLr] 2002 dk ifyl }kjk yxHkx 3 ct vijkgu e vLirky e gh vfHkfyf[kr fd;k x;k FkkA bl idkj] ;g irhr gkrk g fd v0 lk0 2 ,o v0 lk0 3 egRoi.k vfHk;ktu lk{khx.k gA

(ii) Qnc;ku rFkk ikFkfedh dk n[ku ij] ;g irhr gkrk g fd ikFkfedh ,o Qnc;ku lcl igy gb Fkh rFkk nk ?kVk d Hkhrj gh v0 lk0 2 dk Qnc;ku nt fd;k x;k Fkk ,o ikFkfedh Hkh nt dh x;h Fkh ft le] bl vihykFkh dk uketn fd;k x;k g(erdk dh gR;k dkfjr dju e bl vihykFkh }kjk fuHkkb x;h Hkfedk d ckj e i;kIr fooj.kk d lkFk lepk ?kVuk of.kr dh x;h gA ikFkfedh ?kVuk dh frfFk] vihykFkh dk uke] vihykFkh dh igpku] vihykFkh }kjk i;Dr gfFk;kj] erdk pn db fljdk dk vkb pkV rFkk lpuknkrk (v0 lk0 2) dk vkb pkVk dk idV djrh gA ikFkfedh u bl rF; dk Hkh idV fd;k Fkk fd v0 lk0 3 dk rRdky lfpr dj fn;k x;k FkkA Qnc;ku in'k 2 ij g rFkk ikFkfedh in'k 3 ij gA v0 lk0 2 }kjk fn; x; vfHklk{; dk n[ku ij] ;g irhr gkrk g fd og erdk dh i=h g(?kVuk LFky ij ml dh ektnxh LokHkkfod Fkh] mlu Li"Vr% of.kr fd;k g fd vihykFkh i=h ,o ekrk nkuk dk cjk&Hkyk dgr g, ykBh ydj vk;k Fkk e[;r% bl dkj.k fd vihykFkh d vulkj v0 lk0 2 dh ekrk ,d Mk;u Fkh rFkk v0 lk0 2 dh ekrk d dkj.k] vihykFkh dh ekrk dk ngkr gk x;k Fkk rFkk] vr,o] og ifr'kkèk yuk pkgrk Fkk rFkk vihykFkh u v0 lk0 2 dh ekrk ij ykBh l igkj fd;k FkkA ifrijh{kk dk n[ku ij] vihykFkh d i{k e dN Hkh lkeu ugh vk jgk gA vihykFkh d vfèkoDrk }kjk ;g fuonu fd;k x;k g fd v0 lk0 2 doy ^gk Hkk"kk tkurh g] tcfd Qnc;ku fgUnh Hkk"kk e nt fd;k x;k g rFkk ft l 0;fDr] vFkkr] tju fljdk u bldk vuokn fd;k g] vfHk;ktu }kjk ijhf{kr ugh fd;k x;k gA ;g rd vihykFkh d vfèkd lgk;d ugh g e[;r% bl dkj.k fd tju fljdk igy gh Qnc;ku ij viuk gLrk{kj dj pdk g rFkk v0 lk0 2 d vfHklk{; dk n[ku ij] ml dk Qnc;ku v0 lk0 12] tk vUo"k.k inkfèkdkjh g] d lkFk ifyl dh Hkh ektnxh e nt fd;k x;k Fkk(Qnc;ku ij v0 lk0 2 d vxB dk fpUg g] ft l 0;fDr] vFkkr] tju fljdk u Qnc;ku dk vuokn fd;k g] mlu Hkh viuk gLrk{kj fd;k g rFkk vU;Fkk Hkh] v0 lk0 2 d vfHklk{; dk n[kr g,] mlu fdlh cMh foyki] fojkèkkRedrkvk ;k lèkkjk d fcuk Li"V :i l lHkh i;kIr fooj.kk d lkFk lepk ?kVuk of.kr dh gA v0 lk0 2 ,d fo'oluh; ,o Hkjk len xokg gA ;|fi og erdk dh i=h g] ;g ugh dgk tk ldrk g fd U;k;ky; }kjk ml dk vfHklk{; udkj fn;k tkuk pkfg, ek= bl dkj.k fd og erdk dh ,d lcèkh gA U;k;ky; dk v0 lk0 2 }kjk fn; x; lk{; ij ijh lrdrk d lkFk nf"Vikr djuk g rFkk ml d vfHklk{; dk n[kr g,] gekjh jk; g fd mlu lepk ?kVuk rFkk fo'k"kdj erdk dh gR;k dkfjr dju e vihykFkh }kjk fuHkkb x;h Hkfedk dk ,d Li"V o.ku fn;k gA bl l Hkh c<dj] v0 lk0 2 ,d ?kk;y xokg gA ml dk migfr iek.k i= v0 lk0 13 MkDVj Hku'oj lkg }kjk fl) fd;k x;k g rFkk ml dk migfr iek.k i= in'k 6 d rkj ij*

vfdr g rFkk] bl idkj] ;g vO lkO 2 Hkh vfHk;ktu }kjk fl) ?kVukLFky ij Fkk rFkk] vr,o] gekj ikl vO lkO 2 ij vfo'okl dju dk dkb dkj.k ugh gA

(iii) vO lkO 11 MkO ljUn yko }kjk fn;k x;k vfHklk{; dk n[ku ij] ;g irhr gkrk g fd mUgku erdk d 'ko dk ikLVekVe fd;k Fkk tk in'k 1 gA erdk dk fuEukfdr migfr;k vk;h Fkh%&

"(i) nk;h vk[k d ik'o Hkkx ij 1 c.m. x 0.5 c.m. × 0.5 cm vkdkj dk fonh.k ?kkoA

(ii) nk;k dku d ihN 1 c.m. x ½ c.m. x ½ cm dk fonh.k ?kkoA

(iii) efLr"d xgk dh xgjkb rd x;k vkDlhihVy {k= ij nk;h rjQ 4 c.m. x 1 c.m. dk fonh.k ?kkoA

(iv) vfLFk dh xgjkb rd xnu dh ui ij 3 c.m. x 1 c.m. dk fonh.k ?kkoA

vkrfjd ijh{kk ij&

migfr l[;k 3 ij fonh.k efLr"d

Nkrh&QQM&,uO ,O MhO

ân;&nkuk idk"B [kkyh

vkr&vkek'k; [kkyh

e=k'k;&Hkjk gvkA xHkk'k;&NkVkA

facal incontenance

vU; foljk&,uO ,O MhO

migfr dk dkj.k&ykBh tlk dBkj dn inkFk

eR;q dk dkj.k&lnek] jDr lko ,o migfr l[;k 3 ij efLr"d dk gbZ migfrA

eR;q d cknl l xtjk le; 6 l 36 ?kVkA**

vO lkO 11 }kjk fn;k x;k vfHklk{; dk n[ku ij] ;g irhr gkrk g fd migfr l[;k 3 ik.k?kkrd iÑfr dh Fkh rFkk ykBh tl dBkj ,o dn inkFk }kjk migfr lHko FkhA vO lkO 11 dk vfHklk{; ?kk;y p'enhn xokg vO lkO 2 }kjk fn;k x;k lk{; dk lEik"kd gA

(iv) vO lkO 12] tk vUo"k.k inkfèkdkjh g] }kjk fn;k x;k vfHklk{; dk n[ku ij] mlu foLrkj l ikFkfedh (in'k 3) rFkk eR;q leh{kk fjikV (in'k 4) fl) fd;k gA bl xokg u Li"Vr% dfFkr fd;k g fd tc og ?kVuk LFky ij igpk Fkk] pUn dbZ fljdk dk 'ko [kr e iMk gvk FkkA mlu Hkh foLrkj l ?kVuk LFky dk of.kr fd;k gA vO lkO 2 Hkh ?kk;y voLFkk e FkhA ml ifylk dh fjikV d lkFk tkp d fy, MkDVj d ikl Hktk x;k FkkA vO lkO 12 dk vfHklk{; Hkh ?kk;y p'enhn xokg vO lkO 2 }kjk fn;k x;k vfHklk{; dk lEik"kd gA

(v) vO lkO 13 MkDVj Hku'oj lkg u vO lkO 2 dh migfr dk fl) fd;k g rFkk vO lkO 2 dk vkb pkV fuEuor g%&

(i) nk;k dku d uhp yxHkx 1½" x ¼" dk fonh.k ?kkoA

(ii) nk;k dku d uhp 1" x 1" dk [kjkp dk ?kkoA nkuk migfr;k lkèkkj.k iÑfr dh g rFkk dBkj ,o dn inkFk }kjk dkfjr dh x;h gA

bl idkj] vO lkO 13 dk vfHklk{; Hkh ?kk;y p'enhn xokg vO lkO 2 }kjk fn;s x;s vfHklk{; dk lEiks"kd gSA

(vi) vO lkO 3] tks vO lkO 2 dk firk rFkk e`rdk dk ifr g] }kjk fn;s x;s vfHklk{; dk n[ku ij] mlus Hkh dfFkr fd;k gS fd ;|fi og ,d p'enhn xokg ugha g] og ?kVuk ?kfVr gksus d ckn rRdky nkSM iMk Fkk rFkk mlus viuh iRuh pn db fljdk dk [kr e iMk gvk ik;k Fkk rFkk mlds eR; gks pdh Fkh ,o mlds i=h] tks vO lkO 2 g] Hkh [kr e iMh gbZ Fkh rFkk vO lkO 3 }kjk mls vLirky yk;k x;k FkkA ;g irhr gksrk g fd vO lkO 3 us viuh ifr ijh{kk e ;g Hkh dfFkr fd;k g fd vO lkO 2 ,d lIrkg rd cgk'k Fkh rFkk vO lkO 3 d bl vfre okD; ij vihykFkh }kjk dkQh rd iLrr fd;k x;k gSA ;g okD; Hkh vihykFkh d fdlh dke dk ugh g e[;r% bl dkj.k fd ;g xokg Hkh yxHkx rhl lIrkgk d mijkUr vfHklk{; n jgk gSA og ,d ngkrh xokg Hkh gS fdlh xokg }kjk fn;s x;s ,d okD; dk vdy e eY;kdu ugh fd;k tk ldrk gSA lHkh vfHk;ktu lkf{k;k }kjk fn;s x;s lk{; dk lexrkiod eY;kdu fd;k tkuk pkfg, D;kfd Hkkjr l vukt dk vyx djuk U;k;ky; dk nkf;Ro g rFkk nkfMd fofèk 'kkL= e ,d ckj >B rks iR;d ckj >B dk Hkh fl)kr ykx ugh gksrkA vxj vfHk;ktu xokg dk ,d okD; xyr g] bldk ;g vFk ugh gk tkrk g fd og ij rkj ij xyr gS vlR; dh ,d lkoV gks ldrh g tc dHkh Hkh ,d xokg d rkj ij fudV lcèkh dh ijh{kk dh tkrh g] ;gk Hkh] vUo"k.k inkfèkdkjh (vO lkO 12) }kjk fn;s x;s vfHklk{; dk n[ku ij] mlus Li"Vr% dfFkr fd;k g fd vO lkO 3 us nO iO lO dh èkkjk 161 d vèkhu viu c;ku e dfFkr ugh fd;k g fd vO lkO 2 ,d lIrkg rd cgk'k FkhA bl idkj] vO lkO 3 d vfHklk{; dk vfre okD; rkfRod lèkkj g ftldk lk{; dh lis.krk d vkykd e eY;kdu fd;k tkuk pkfg, rFkk vfHk;ktu lk{kh d lexz lk{; dk n[kr g,] ge vihykFkh dk bl okD; dk dkbZ ykHk inku dju dk dkbZ dkj.k ugh n[kr gSA vO lkO 3 us Hkh ?kk;y p'enhn xokg vO lkO 2 d vfHklk{; dk lEiks"k.k fd;k g tgk rd ?kVuk dh frfFk] ?kVuk LFky] e`rdk dh eR; rFkk vO lkO 2 dh migfr dk loky gSA ;g vO lkO 3 g tks vO lkO 2 dk vLirky y x;k Fkk] tgk vLirky e vO lkO 2 dk Qnc;ku vfHkfyf[kr fd;k x;k FkkA blh idkj] vO lkO 3 us Hkh dfFkr fd;k g fd mlus Hkh Qnc;ku ij gLrk{kj fd;k Fkk] ijUr vO lkO 12 d vfHklk{; dk n[ku ij] vO lkO 3 dk dkbZ gLrk{kj ugh FkkA oLrr%] Qnc;ku bl vO lkO 2 }kjk fn;k x;k Fkk rFkk tju fljdk }kjk gLrk{kfjr Hkh fd;k x;k Fkk ftlus ^gk* Hkk"kk dk fgUnh Hkk"kk e vuokn fd;k gSA ;g vfr'k;kfDri.k i{k Hkh vihykFkh d T;knk dke dk ugh g] D;kfd vO lkO 3 db lIrkg d mijkUr vfHklk{; n jgk g rFkk] vr,o] mld vfHklk{; e rF;k l dN fHkUurk gSA

(vii) vO lkO 8 }kjk fn;s x;s vfHklk{; dk n[kr g,] mlus vijkèk d LFkku ij ifyl }kjk dh x;h eR; leh{kk dk fl) fd;k gS mlus eR; leh{kk ipukek ij gLrk{kj Hkh fd;k gSA

(viii) vO lkO 4 ,d vuJr xokg g tcfd vO lkO 5] vO lkO 6 ,o vO lkO 7 i{knkgh xokg gSA

7. इस प्रकार, अभिलेख पर साक्ष्य को देखते हुए, घायल चश्मदीद गवाह अ० सा० 2 ने मृतका की हत्या के सभी युक्तिसंगत संदेहों से परे अपराध को सिद्ध किया है जो इस अपीलार्थी द्वारा कारित किया गया है तथा उसका अभिसाक्ष्य प्रदर्शों 2, 3, 4, 5 एवं 6 के साथ पठित अ० सा० 3, अ० सा० 8, अ०

सा॰ 11, अ॰ सा॰ 12 एवं अ॰ सा॰ 13 के अभिसाक्ष्य से पर्याप्त सम्पोषण प्राप्त कर रहा है। अभिलेख पर साक्ष्यों का मूल्यांकन करने में तथा मृतका की हत्या कारित करने के लिए वर्तमान अपीलार्थी की दोषसिद्धि एवं दंडादेश करने में विद्वान विचारण न्यायालय द्वारा कोई त्रुटि कारित नहीं की गयी है। इस दांडिक अपील में कोई दम नहीं है तथा इसे एतद्द्वारा खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

श्री डेविड हडसन, प्रबंध निदेशक उर्फ डी॰ आई॰ हडसन

cuke

बिहार राज्य (अब झारखंड) एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 774 of 2000(R). Decided on 10th April, 2014.

सी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 299 वर्ष 1997 में तत्कालीन मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 10.7.1997 के आदेश के विरुद्ध।

संविदा श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम, 1970—धारा 24—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—कंपनी द्वारा अपराध–इस प्रभाव का अभिकथन नहीं है कि याची कंपनी के दैनिक क्रियाकलाप के लिए जिम्मेदार था अथवा इसके प्रभार में था–याची के विरुद्ध अभियोजन पोषित नहीं किया जा सकता है–संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित।

(पैराएँ 10 एवं 11)

अधिवक्तागण.–M/s Rajiv Ranjan & V.K. Trivedi, For the Petitioners; Mr. S.S. Sahay, For the State; Mr. Prabhash Kumar, For the O.P. No.2.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों को सुना गया।

2. यह आवेदन सी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 299 वर्ष 1997 में पारित दिनांक 10.7.1997 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन संविदा श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम की धारा 24 के अधीन अपराध का संज्ञान याची के विरुद्ध लिया गया है।

3. परिवादी का मामला यह है कि जब परिवादी, श्रम प्रवर्तन अधिकारी (केंद्रीय), झरिया, धनबाद ने याची की कंपनी जिसे टिस्को द्वारा सुरक्षा सेवा देने के काम में लगाया गया था के स्थापन का निरीक्षण किया, निम्नलिखित अनियमितताएँ पायी गयी थी:–

"(i) fu;kftr 0;fDr;k dk jftLVj Bdnkj }kjk dk;LFky d ifjlj d fudVre lfoèkktud Hkou d dk;ky; vFkok 3 fd0 eh0 dh ifjfèk d vrxr LFkku ij ugh j[kk x;k FkkA mDr fu;ekoyh d fu;e 75 lg&ifBr fu;e 80(1) dk Hkx

(ii) eLVj jky vkj etnjh dk jftLVj Bdnkj }kjk dk;LFky d ifjlj d fudVre lfoèkktud Hkou d dk;ky; vFkok 3 fd0 eh0 dh ifjfèk d vrxr LFkku ij ugh j[kk x;k FkkA fu;e 78(1) (a) (i) dk HkxA

(iii) vfxe dk jftLVj] tekuk dk jftLVj vkj udlkuh vFkok gkfu d fy, dVkrh dk jftLVj Bdnkj }kjk dk;ky; e ugh j[kk x;k FkkA fu;e 78(1) (a) (ii)

(iv) vkoj Vkbe dk jftLVj Bdnkj }kjk dk;LFky d ifjlj d fudVre

lfoèkk tud Hkou d dk;ky; vFkok 3 fd0 eh0 dh ifjfèk d vrxr LFkku ij ugh j[k x;k FkkA fu;e 78(1) (a) (iii) lg&ifBr fu;e 80(1) dk HkxA

(v) Bdnkj }kjk vxth vkj fgnh e dk;LFky ij fuEufyf[kr ukfVl dk çnf'kr ugh fd;k x;k Fkk tl fu;e 81(1)(i) d vèkhu vko';d gA

(vi) (i) etnjh dh nj] (ii) dk;?kVk] (iii) Hkxrku dh frfFk] (iv) etnjh vofèk (v) Hkxrku ugh dh x;h etnjh d Hkxrku dh frfFk] (vi) LFkkiu d mij vfèkdkfjrk j[ku oky fujh{kd vFkkr lgk;d Je vk;Dr (dnh;)] èkuckn vkj Je çoru vfèkdkjh (dnh;) >fj;k] èkuckn dk uke vkj irkA

(vi)(a) etnjh vofèk] etnjh d lforj.k dk LFkku vkj le; Bdnkj }kjk dk;LFky ij çnf'kr ugh fd;k x;k Fkk vkj bldh çfr vfHkLohÑfr d vèkhu ièkku fu;kDrk vFkkr çcèkd] tkeknkck ok'kjh] fVLdk] èkuckn dk ugh Hktk x;h Fkh tlk fu;e 71 d vèkhu vko';d gA

(vii) Bdnkj }kjk vxth vkj fgnh e lh0 ,y0 lh0 (lh0), u;h fnYyh }kjk vuekfnr Qke e vfèkfu;e ,o mld vèkhu fojfpr fu;ekoyh dk lkjk'kA fu;e 75.

(viii) LFkkiu d mij vfèkdkfjrk j[ku oky fujh{kd vFkkr Je çoru vfèkdkjh (lh0) >fj;k] èkuckn dk Bdnkj }kjk vxth vkj fgnh e ukfVl dh çfr;k dk ugh Hktk x;k Fkk tk mDr fu;ekoyh d fu;e 81 (2) dk mYy?ku gA

(ix) Bdnkj }kjk etnjk d fu;ktu dh frfFk l rhu fnuk d Hkhrj fu;ktu dkM tkjh ugh fd;k x;k Fkk tk mDr fu;ekoyh d fu;e 76 (i) d vèkhu vko';d gA

(x) etnjh d lforj.k d de l de ,d fnu igy lcfèkr etnjk dk Bdnkj }kjk etnjh iph ugh tkjh dh x;h FkhA fu;e 78 (1) (b) dk HkxA

(xi) mDr vfèkfu;e dh èkkjk 1 lg&ifBr fu;ekoyh d fu;e 58 l 62 d erkfcd çkFkfed mipkj lfoèkk çnku ugh dh x;h gA

(xii) Bdnkj etnjk dk foJke xg çnku dju e foQy jgk g tk mDr fu;ekoyh d fu;e 41 d vèkhu vko';d gA**

4. इस प्रकार, यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्त ने उक्त प्रावधान का उल्लंघन करके स्वयं को संविदा श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम के अधीन अभियोजित किए जाने का दायी बनाया है। परिवाद दाखिल किए जाने पर जब दिनांक 10.7.1997 के आदेश के तहत अपराध का संज्ञान लिया गया था, उस आदेश को दोषपूर्ण के रूप में चुनौती दी गयी थी।

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजीव रंजन निवेदन करते हैं कि याची समूह–4 सिक्यूरिटास इंडिया (प्रा०) लि० के रूप में ज्ञात कंपनी का प्रबंध निदेशक हुआ करता है, फिर भी उसे ऐसे किसी अभियोग कि याची कंपनी के दैनिक क्रियाकलाप के प्रभार में था अथवा इसके लिए जिम्मेदार था की अनुपस्थिति में अभियुक्त बनाया गया है और ऐसे अभिकथन की अनुपस्थिति में यदि याची को अभियोजित किया जा रहा है, उसे प्रतिनिधिक दायित्व के कारण अभियोजित किया जाता कहा जा सकता है जो अनुज्ञेय नहीं है और तद्द्वारा संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

6. इसके विरुद्ध, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री प्रभाष कुमार निवेदन करते हैं कि वस्तुत: इस याची के माध्यम से कंपनी को अभियुक्त बनाया गया है क्योंकि कंपनी को अधिनियम एवं नियमावली के अनेक प्रावधानों का उल्लंघन करता पाया गया है और इसलिए संज्ञान लेने वाला आदेश में कोई अवैधता नहीं है।

7. इस पर श्री राजीव रंजन निवेदन करते हैं कि द॰ प्र॰ सं॰ की धारा 305 में अंतर्विष्ट प्रावधान की दृष्टि में कंपनी को किसी अधिकारी के माध्यम से अभियुक्त नहीं बनाया जा सकता है बल्कि कंपनी को कंपनी का प्रतिनिधित्व करने के लिए अपने प्रतिनिधियों को चुनना है।

8. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर और अभिलेख का परिशीलन करने पर यह प्रतीत होता है कि जब कंपनी का निरीक्षण किया गया था, संविदा श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम और नियमावली के अनेक प्रावधानों का उल्लंघन करने वाले कतिपय अनियमितताओं को पाया गया था। ऐसे अभिकथन पर, परिवाद दाखिल किया गया था। परिवाद में इस प्रभाव का कोई अभिकथन बिल्कुल नहीं है कि याची कंपनी के दैनिक क्रियाकलाप के लिए जिम्मेदार था अथवा इसके प्रभार में था और उसकी अनुपस्थिति में याची को प्रबंध निदेशक होने के नाते अभियोजित नहीं किया जा सकता है।

9. इस चरण पर, हम संविदा श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम की धारा 25 में अंतर्विष्ट प्रावधान को ध्यान में ले सकते हैं जिसका पठन निम्नलिखित है:–

> *"25. **difu;k }kjk vijkèk**-&(1) ;fn bl vfèkfu;e d vèkhu vijkèk dju okyk 0;fDr diuh g] vijkèk dh dkfjrk d le; ij diuh vkj bld 0;olk; d lpkyu d fy, diuh d çHkkj e vkj diuh d çfr ftEenkj çR;d 0;fDr dk vijkèk dk nk"kh le>k tk,xk vkj og vfHk;kftr ,o nfMr fd, tku dk nk;h gkxkA*
>
> *ijUr ;g fd bl mièkkjk e vrfo"V dkb pht ,l fdlh 0;fDr dk fdlh nM dk nk;h ugh cuk,xh ;fn og fl) djrk g fd vijkèk mldh tkudkjh d fcuk fd;k x;k Fkk vFkok fd mlu ,l vijkèk dh dkfjrk jkdu d fy, leLr lE;d rRijrk dk ç;kx fd;k FkkA*
>
> *(2) mièkkjk (1) e vrfo"V fdlh pht d ckotn tgk bl vfèkfu;e d vèkhu diuh }kjk vijkèk fd;k x;k g vkj ;g fl) fd;k tkrk g fd diuh d fdlh fun'kd] çcèkd] çcèkd ,tUV vFkok fdlh vU; vfèkdkjh dh lgefr vFkok ekukudyrk l fd;k x;k g vFkok fd vijkèk dh dkfjrk mudh vkj l mi{kk d QyLo:i gb g] ,l fun'kd] çcèkd] çcèkd ,tUV vFkok fdlh vU; vfèkdkjh dk ml vijkèk dk nk"kh le>k tk,xk vkj og rnulkj vfHk;kftr rFkk nfMr fd, tku dk nk;h gkxkA**"*

10. इसके परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि यदि कंपनी द्वारा अधिनियम के कतिपय प्रावधानों का उल्लंघन किया जाता है, कंपनी और व्यक्ति जो कंपनी के दैनिक क्रियाकलाप के लिए जिम्मेदार है अथवा इसके प्रभार में है को अभियोजित किया जा सकता है किंतु यदि कंपनी का अधिकारी अभियुक्त बनाया जाता है, उस प्रभाव का विनिर्दिष्ट अभिकथन होना चाहिए कि वह कंपनी के दैनिक क्रियाकलाप के लिए जिम्मेदार था अथवा इसके प्रभार में था। वर्तमान मामले में, जैसा मैंने उपर कथित किया है, इस

प्रभाव का अभिकथन बिल्कुल नहीं है कि याची कंपनी के दैनिक क्रियाकलाप के लिए जिम्मेदार था अथवा इसके प्रभार में था। उस स्थिति में, याची के विरुद्ध अभियोजन पोषित नहीं किया जा सकता है।

11. तद्नुसार, सी॰ एल॰ ए॰ केस सं॰ 299 वर्ष 1997 में संविदा श्रम (विनियमन एवं उत्सादन) अधिनियम की धारा 24 के अधीन याची के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लेने वाला तत्कालीन मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, धनबाद द्वारा पारित दिनांक 10.7.1997 का आदेश एतद्द्वारा अभिखंडित किया जाता है।

12. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

राजेन्द्र प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 1221 of 2013. Decided on 17th January, 2014.

सेवा विधि–विभागीय कार्यवाही–जब पहले जाँच संचालित की गयी थी और याची के विरुद्ध आरोप सिद्ध नहीं किया गया पाते हुए जाँच रिपोर्ट दी गयी थी, नयी जाँच करने के लिए एक अन्य जाँच अधिकारी की नियुक्ति के विरुद्ध रिट याचिका–आगे जाँच पर विचार किया जा सकता है यदि वह आवश्यक है किंतु नया जाँच नहीं किया जा सकता है–रिट याचिका अनुज्ञात। (पैराएँ 7 एवं 11)

निर्णयज विधि.–(1978)1 SCC 405; (2012)3 SCC 580; (1971)2 SCC 102—Referred.

अधिवक्तागण.–M/s Saurav Arun, Deepak Kr. Dubey, For the Petitioner; Mr. Bhola Nath Ojha, For the Respondents.

आदेश

दिनांक 17.2.2012 के आरोप मेमो में अंतर्विष्ट अभिकथनों में नयी जाँच करने के लिए जाँच अधिकारी नियुक्त करने वाले दिनांक 6.10.2012 के आदेश से व्यथित होकर याची इस न्यायालय के पास आया है।

2. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

3. जाँच की गयी थी और याची के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को सिद्ध नहीं किया गया पाते हुए दिनांक 29.6.2012 की जाँच रिपोर्ट दी गयी थी। तत्पश्चात, दिनांक 6.10.2012 के आक्षेपित आदेश द्वारा दिनांक 17.2.2012 के आरोप मेमो में अंतर्विष्ट अभिकथनों में नयी जाँच करने के लिए एक अन्य जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया है।

4. निम्नलिखित कथन करते हुए प्रतिशपथ पत्र दाखिल किया गया है:–

"6. fd ;g fouerkiod dFku vkj fuonu fd;k tkrk g fd iFk fuek.k foHkkx] jkph] >kj[kM d fnukd 6.10.2012 d eek l0 7222 (,l0) e vrfo"V vkn'k] ft ld }kjk vkj ft ld vèkhu ;kph d fo#) lfLFkr foHkkxh; dk;okgh dh tkp fjikV vLohdkj dj nh x;h g vkj fnukd 17.2.2012 d eek l0 1202 (,l0) e vrfo"V ldYi d rgr lfLFkr iokDr foHkkxh; dk;okgh dh u;h tkp d fy, ,d vU; lpkyu djuokyk vfèkdkjh vkj çLrr dju okyk vfèkdkjh

fu;Dr fd;k x;k g] d vfHk[kMu d fy, vkj vkx u, lpkyu dju oky vfèkdkjh d vèkhu foHkkxh; dk;okgh d lkFk vxlj ugh gku d fy, çR;Fkhx.k dk fun'k tkjh dju d fy, ;kphx.k }kjk oreku fjV ;kfpdk nkf[ky dh x;h gA

7. fd ;g fouerkiod dFku vkj fuonu fd;k tkrk g fd ;kph iFk fuek.k foHkkx] >kj[kM d ç'kklfud fu;=.k d vèkhu lgk;d vfHk;rk gA ;kph dk igy jk"Vh; mPp iFk fMfotu] èkuckn e lgk;d vfHk;Urk d :i e inLFkkfir fd;k x;k FkkA ih0 vkb0 ,y0 e fn, x, ekuuh; >kj[kM mPp U;k;ky; d fun'k d vulj.k e dl l0 vkj0 lh0 10 (,0)@2010 (vkj0) d vèkhu ,u0 ,p0 fMfotu] èkuckn e fcVeu ?kkVkyk l lcfèkr ekey e lh0 ch0 vkb0 }kjk çkFkfedh nt dh x;h Fkh vkj ;g ml vofèk l lcfèkr g tc ;kph ogk inLFkkfir FkkA ;lfi ;kph dk mDr nkfMd ekey e ukfer vfHk;Dr ugh cuk;k x;k g fdr lh0 ch0 vkb0 u mDr nkfMd ekey l lcfèkr viu fjikV e mld fo#) e[; nM d fy, fu;fer foHkkxh; dk;okgh dh vu'klk dh gA mDr lh0 ch0 vkb0 fjikV d iufoykdu d ckn ljdkj u ;kph d fo#) foHkkxh; dk;okgh vkjHk dju dk fu.k; fd;k g ftl fnukd 17.2.2012 d eek l0 1202 (,l0) e vrfo"V ldYi d rgr lfLFkr fd;k x;k g ftld }kjk Jh ,u0 d0 feJk] vkb0 ,0 ,l0] flfoy çfrj{kk vk;Dr] >kj[kM] jkph vkj dk;ikyd vfHk;rk] ,u0 ,p0 fMfotu] èkuckn dk Øe'kh tkp dju oky vfèkdkjh vkj çtfVx vfèkdkjh d :i e fu;Dr fd;k x;k gA

8. fd ;g fouerkiod dFku vkj fuonu fd;k tkrk g fd iokDr foHkkxh; dk;okgh d lpkyu vfèkdkjh Jh ,u0 d0 feJk u foHkkxh; dk;okgh ijk dj fy;k g vkj bl foHkkx dk viuk tkp fjikV çLrr fd;k gA mDr foHkkxh; dk;okgh d fy, ;kph d fo#) fojfpr leLr pkj vkjkik dk tkp dju oky vfèkdkjh Jh ,u0 d0 feJk dh tkp fjikV e fl) fd;k x;k tk idkf'kr ugh fd;k x;k gA

*9. fd ;g fouerkiod dFku vkj fuonu fd;k tkrk g fd lh0 ch0 vkb0 u Bdnkj }kjk çLrr udyh fcVeu chtd d vkèkkj ij iFk fuek.k d lcfèkr Bdnkj dk Hkxrku dh çfØ;k e ;kph dh Li"V vrxLrrk dk fjikV fd;k g] vr% tkp dju oky vfèkdkjh Jh ,u0 d0 feJk dh tkp fjikV dk bld iufoykdu e fo'oluh;@lgefr ;kX; ugh ik;k x;k gA bl çdkj] mDr iufoykdu d vkykd e ljdkj u u;h tkp d fy, iokDr foHkkxh; dk;okgh d mDr tkp dju oky vfèkdkjh vkj çtfVx vfèkdkjh dk cnyu dk fu.k; fd;k g vkj bl iFk fuek.k foHkkx] jkph] >kj[kM d fnukd 6.10.2012 d eek l0 7222 (,l0) e vrfo"V vkn'k }kjk vfèklfpr fd;k x;k gA pfd tkp dju oky vfèkdkjh Jh ,u0 d0 feJk dh mDr tkp fjikV d vkèkkj ij vkx dkb dkjokb dju dk vk'k; vu'kklfud çkfèkdkjh ugh j[krk g] vr% vkjkfir ljdkjh lod dk vlgefr dk dkj.k crkuk vko';d ugh ik;k x;k gA***

5. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि जब एक बार जाँच अधिकारी ने याची के विरुद्ध आरोप सिद्ध नहीं किया गया पाया, आधार, जिन पर अनुशासनिक प्राधिकारी ने विभागीय कार्यवाही में दर्ज निष्कर्षों के साथ असहमत होने का निर्णय किया, उपदर्शित करते हुए याची

को कारण बताओ नोटिस जारी करने की छूट प्रत्यर्थी प्राधिकारी को थी किंतु दिनांक 17.2.2012 के आरोप मेमों में अंतर्विष्ट अभिकथनों में नयी जाँच संचालित करने की छूट प्रत्यर्थीगण को नहीं थी। नैसर्गिक न्याय के सिद्धांत की आवश्यकता का अनुपालन करने के बाद दंड का आदेश पारित करने की छूट अनुशासनिक प्राधिकारी को थी किंतु मामले में नया जाँच करने की छूट प्रत्यर्थी–प्राधिकारी को नहीं थी। **के॰ आर॰ देब बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क आयुक्त, शिलांग, (1971)2 SCC 102** और **नंद कुमार वर्मा बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, (2012)3 SCC 580,** में निर्णयों पर विश्वास करते हुए याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि वर्तमान मामले में दिनांक 6.10.2012 का आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने का दायी है।

6. उक्त के विरुद्ध, प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री भोला नाथ ओझा ने निवेदन किया है कि चूँकि सरकार ने जाँच अधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्ष से असहमत होने का निर्णय किया, दिनांक 6.10.2012 के आदेश द्वारा दिनांक 17.2.2012 के आरोप मेमो में अंतर्विष्ट अभिकथनों में नयी जाँच करने के लिए एक अन्य जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया था।

7. दिनांक 6.10.2012 के आक्षेपित आदेश का परिशीलन उपदर्शित करता है कि सरकार ने जाँच रिपोर्ट से असहमत होने का निर्णय किया, अतः नयी जाँच करने के लिए एक अन्य जाँच अधिकारी नियुक्त किया गया था। सिवाए इसके कि सरकार ने जाँच अधिकारी द्वारा दर्ज निष्कर्ष से असहमत होने का निर्णय किया, आक्षेपित आदेश में कोई और कारण उपदर्शित नहीं किया गया है। मैं प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता द्वारा किए गए प्रतिवाद में कोई बल नहीं पाता हूँ कि चूँकि जाँच अधिकारी तात्विक तथ्यों पर विचार करने में विफल रहा, सरकार ने नयी जाँच संस्थित करने का निर्णय किया। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णयों की श्रृंखला द्वारा इस विवाद्यक पर विधि सुनिश्चित की गयी है। यह स्पष्टतः अभिनिर्धारित किया गया है कि केवल उन मामलों में जहाँ जाँच रिपोर्ट तकनीकी कमी से पीड़ित है, नयी जाँच संस्थित की जा सकती है। अन्य समस्त मामलों में, मामले में केवल आगे जाँच की जा सकती है और न कि बिल्कुल नयी जाँच।

8. ''के॰ आर॰ देब बनाम केंद्रीय उत्पाद शुल्क आयुक्त, शिलांग, (1971)2 SCC 102, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *"12. ge ;g çrhr gkrk g fd fu;e 15, idVr%] oLrr% doy ,d tkp çkoèkkfur djrk g fdr ;g lHko gk ldrk g fd fdlh ekeyk fo'k"k e lefpr tkp ugh dh x;h g D;kfd tkp e dN xHkhj =fV vk x;h g vFkok tkp d le; ij dN egRoi.k xokg miyCèk ugh Fk vFkok dN vU; dkj.k l mudk ijh{k.k ugh fd;k x;k Fkk] rc vu'kklfud çkfèkdkjh tkp vfèkdkjh dk vkx lk{; nt dju d fy, dg ldrk gA fdr bl vkèkkj ij fd tkp vfèkdkjh vFkok vfèkdkfj;k dh fjikV vu'kklfud çkfèkdkjh dk ekU; ugh g] io tkpk dk ijh rjg vikLr dju d fy, fu;e 15 e çkoèkku ugh gA vu'kklfud çkfèkdkjh d ikl fu;e 9 d vèkhu Lo; lk{; ij iufopkj dju vkj Lo; viu fu"d"k ij vku d fy, i;kIr 'kfDr gA***

9. ''नंद कुमार वर्मा बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, (2012)3 SCC 580, में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

> *"26. .... lkekU; fl)kr ij vopkj fo'k"k d fy, vkjki d lcèk e doy ,d tkp gk ldrh g vkj lkekU;r% fu;e Hkh ;gh çkoèkkfur djrk gA ;fn fdlh rduhdh vFkok vU; vPN vkèkkj] çfØ;kRed vFkok vU;Fkk] ij çFke tkp vFkok nM vFkok foefDr fofèk e nk"ki.k ik;h x;h g] dkb fl)kr ugh g fd nljh*

*tkp vkjHk ugh dh tk ldrh gA vr%] tc ijh dh x;h tkp dk;okgh dk l{ke Qkje }kjk rduhdh vkèkkj ij vFkok çfØ;kred ncyrk d vkèkkj ij vkLr fd;k tkrk g] mlh vkjki ij u;h dk;okgh vuK; gA***

10. मैं आगे पाता हूँ कि प्रतिशपथ पत्र में प्रत्यर्थीगण द्वारा किए गए प्रतिवाद पर वर्तमान कार्यवाही में विचार नहीं किया जा सकता है। **मोहिन्दर सिंह गिल एवं एक अन्य बनाम मुख्य चुनाव आयुक्त, नयी दिल्ली एवं अन्य, (1978)1 SCC 405,** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय की दृष्टि में वर्तमान कार्यवाही में दाखिल प्रति शपथ पत्र के माध्यम से अनुपूरित कारणों द्वारा आक्षेपित आदेश का समर्थन करने की छूट प्रत्यर्थीगण को नहीं है।

11. पूर्वोक्त की दृष्टि में, यह रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है, दिनांक 6.10.2012 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अभिखंडित किया जाता है। विधि के अनुरुप मामले में नया आदेश पारित करने की छूट प्रत्यर्थीगण को होगी।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

सूर्य मोहन साह

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 548 of 2013. Decided on 31st March, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 409, 467, 468, 471, 420 एवं 120B—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग, छल, कूटरचना और षडयन्त्र–याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया है यद्यपि अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध इसे दाखिल किया गया है–उसके बावजूद न्यायालय ने कोई कारण दिए बिना याची के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लिया–संज्ञान का आक्षेपित आदेश अपास्त किया गया और नए आदेश के लिए मामला संबंधित न्यायालय को वापस भेजा गया। (पैराएँ 4 एवं 5)

अधिवक्तागण.–M/s Rajiv Ranjan, Vishal Kr. Trivedi, For the Petitioners; A.P.P., For the State.

आदेश

याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. यह याचिका पथरगामा पी॰ एस॰ केस सं॰ 52 वर्ष 2012 (जी॰ आर॰ सं॰ 459 वर्ष 2012) में पारित दिनांक 12.7.2012 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409/467/468/471/420/120B के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है, के अभिखंडन के लिए दाखिल की गयी है।

3. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि उसमें यह अभिकथित करते हुए मामला दर्ज किया गया था कि तत्कालीन कनीय अधिवक्ता द्वारा माप-पुस्तिका में गलत प्रविष्टि की गयी थी जिसके आधार पर भुगतान किया गया था। यह अभिकथन भी है कि इस याची जो समय के प्रासंगिक बिंदु पर पंचायत सेवक के रूप में पदस्थापित था की ओर से मौनानुकूलता भी हो सकती है किंतु अन्वेषण के दौरान पुलिस ने इस याची की ओर से कोई सदोषता नहीं पायी थी यद्यपि कनीय अभियन्ता की ओर

से सदोषता पायी गयी थी और, इसलिए, कनीय अभियंता के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था किंतु याची को विचारण के लिए नहीं भेजा गया था। उसके बावजूद, न्यायालय ने कोई कारण दिए बिना याची के विरुद्ध अपराध का संज्ञान लिया और तद्द्वारा न्यायालय ने **नुपूर तलवार बनाम केंद्रीय जाँच ब्यूरो, (2012)2 SCC 188,** मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में और **मेसर्स जी॰ एच॰ सी॰ एल॰ कर्मचारी स्टॉक आप्शन ट्रस्ट बनाम मेसर्स इंडिया इंफोलाइन लिमिटेड, [2013 (2) East Crl. Cases, 326 (SC)** मामले में दिए गए निर्णय की दृष्टि में भी, जिसके द्वारा माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने संप्रेक्षित किया कि ऐसी स्थिति में न्यायालय को कारण देकर आदेश पारित करने की आवश्यकता है, अवैधता किया और चूँकि यह अभिनिर्धारित करने के लिए कोई कारण नहीं दिया गया है कि प्रथम दृष्टया सामग्री है, आक्षेपित आदेश अपास्त किए जाने योग्य है।

4. स्वीकृत रूप से, याची के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल नहीं किया गया है यद्यपि इसे अन्य अभियुक्तगण के विरुद्ध दाखिल किया गया है। उसके बावजूद, न्यायालय ने कोई कारण दिए बिना कि किस आधार पर वह इस निष्कर्ष पर आए हैं कि याची के विरुद्ध प्रथम दृष्टया सामग्री है, याची के विरुद्ध अपराधों का संज्ञान लिया।

5. उस स्थिति में, दिनांक 12.7.2012 का आक्षेपित आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है और विधि के अनुरुप नया आदेश पारित करने के लिए मामला संबंधित न्यायालय के पास वापस भेजा जाता है।

6. परिणामस्वरुप, यह याचिका निपटायी जाती है।

---

ekuuh; vij'k dekj flg] U;k;efr

बिपिन बिहारी सिंह

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 977 of 2012. Decided on 21st March, 2014.

सेवा विधि–वेतन–भूतलक्षी प्रभाव से उपनिदेशक एवं अपर निदेशक, खान के पद के लिए वेतन के बकाया की निर्मुक्ति के लिए याची के दावा से यह अभिनिर्धारित करते हुए कि भूतलक्षी तरीके से प्रार्थना किए गए लाभों को नहीं दिया जा सकता है, इनकार करने वाले आदेश के विरुद्ध रिट याचिका–कालक्रम जिसे निर्णय में उपदर्शित किया गया है विवादित नहीं है जहाँ तक खान के उपनिदेशक एवं अपर निदेशक के अतिरिक्त प्रभार के प्रदान का संबंध है–इस तथ्य के कारण कि याची को भूतलक्षी प्रभाव से खान के उपनिदेशक एवं अपर निदेशक के पद पर प्रोन्नत किया गया है और प्रोन्नति को प्रभावकारी बनाया गया है और याची पहले से ही पूर्वोक्तानुसार पद पर सेवा दे रहा था आक्षेपित आदेश संपोषित नहीं किया जा सकता है–वेतन के अंतर के बकाया को निर्मुक्त करने का निर्देश दिया गया–रिट याचिका अनुज्ञात।

(पैराएँ 5 से 9)

निर्णयज विधि.–W.P. (No.) 2986/2010—Followed.

अधिवक्तागण.–M/s R.M. Singh & Siddhartha Roy, For the Petitioner; Mr. Vaibhav Kumar, For the Respondents.

आदेश

पक्षों के विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. उप सचिव, खान एवं भू–गर्भशास्त्र विभाग, झारखंड सरकार, राँची, प्रत्यर्थी सं॰ 3 द्वारा जारी दिनांक 20.5.2010 के पत्र सं॰ 179, परिशिष्ट 12 में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश द्वारा क्रमशः दिनांक 15.11.2000 और दिनांक 15.11.2004 के प्रभाव से उपनिदेशक और अपर निदेशक, खान के पद के लिए वेतन के बकाया की निर्मुक्ति के लिए याची का दावा वित्त विभाग के सलाह पर और झारखंड सेवा संहिता के नियम 58 और वित्तीय नियमावली के नियम 74 की दृष्टि में अस्वीकार कर दिया गया है। उनके अनुसार, याची को भूतलक्षी तरीके से उक्त लाभ नहीं दिया जा सकता है। परिणामस्वरुप, याची ने ब्याज के साथ पूर्वोक्त परस्पर तिथियों के प्रभाव से वेतन के भुगतान के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश दिया जाना इप्सित किया है।

3. याची के अनुसार, जब वह दिनांक 15.12.1999 के परिशिष्ट–1 के तहत जिला खान अधिकारी के रूप में सेवा दे रहा था, उसको स्थानांतरित किया गया था और उप निदेशक, खान के रूप में पदस्थापित किया गया था जो प्रोन्नति का अगला पद है और उक्त पद के कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का निर्वहन करने के लिए प्राधिकृत किया गया था। याची ने परिशिष्ट–2 के तहत 20.12.1999 को उक्त पद पर योगदान दिया था विशेष सचिव, खान एवं भू–गर्भशास्त्र विभाग, झारखंड सरकार के हस्ताक्षर के अधीन जारी परिशिष्ट–3, दिनांक 31.7.2000 की अधिसूचना सं॰ 2759 के तहत एक बार फिर अपर निदेशक, खान के पद का अतिरिक्त प्रभार दिया गया था। दिनांक 31.7.2000 के प्रभार रिपोर्ट, परिशिष्ट–4 के तहत याची को पूर्व पदधारी द्वारा अपर निदेशक के पद का प्रभार सौंपा गया था। दिनांक 10.5.2005 के परिशिष्ट–5 के तहत याची को निदेशक, खान के पद का अतिरिक्त प्रभार दिया गया था और तुरन्त के प्रभाव से पदस्थापित किया गया था। उसी विभाग के दिनांक 31.3.2008 की अधिसूचना, परिशिष्ट–6 के तहत उसे प्रभारी निदेशक, खान बनाया गया था। उसने दिनांक 31.3.2008 के परिशिष्ट–7 के तहत उसने प्रभारी निदेशक, खान का प्रभार लिया। तत्पश्चात मेमो सं॰ 724 वाले दिनांक 28.5.2009 के अधिसूचना के तहत याची को स्वयं दिनांक 15.11.2000 के प्रभाव से पूर्व पुनरीक्षित 12000-16500/- रुपयों के वेतनमान में उपनिदेशक के पद पर अधिष्ठायी रूप से प्रोन्नत किया गया था। याची को उसी विभाग के दिनांक 23.12.2009 के मेमो सं॰ 1968 वाले एक अन्य अधिसूचना के तहत स्वयं दिनांक 15.11.2004 के प्रभाव से पूर्व पुनरीक्षित 14,300-18,300/- रुपयों के वेतनमान में अपर निदेशक के पद पर प्रोन्नत किया गया था और यह भी उपदर्शित किया गया था कि वह प्रभारी निदेशक, खान के रूप में बना रहेगा। पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में याची ने तिथियों, जिन पर क्रमशः परिशिष्ट–8 और 9 के मुताबिक दिनांक 15.11.2000 और दिनांक 15.11.2004 के प्रभाव से उक्त प्रोन्नति आदेश को प्रभावकारी बनाया गया था, से प्रोन्नत पदों के लाभों के प्रदान का दावा किया। प्रत्यर्थीगण द्वारा वित्त विभाग के सलाह पर और झारखंड सेवा संहिता के नियम 58 और वित्तीय नियमावली के नियम 74 की दृष्टि में दिनांक 3.2.2012 के आक्षेपित आदेश, परिशिष्ट–12, के तहत इसे अस्वीकार कर दिया गया है। याची के विद्वान अधिवक्ता ने अपने निवेदन कि याची का मामला स्पष्टतः उक्त निर्णय द्वारा आच्छादित है और तथ्य कमोबेश सदृश हैं, को आगे बढ़ाने के लिए **जयप्रकाश सिंह बनाम झारखंड राज्य एवं अन्य, डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 2986 वर्ष 2010** में दिनांक 20.8.2013 को दिए गए निर्णय पर विश्वास किया है। अतः, उपनिदेशक और अपर निदेशक, खान के पदों, जिस पर उसे पूर्वोक्तानुसार भूतलक्षी प्रभाव से प्रोन्नत किया गया था,

के वेतन के बकाया का भुगतान याची को दिए जाने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश देते हुए आक्षेपित आदेश को अभिखंडित करने की आवश्यकता है।

4. प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने झारखंड सेवा संहिता के नियम 58 और वित्तीय नियमावली के नियम 74 के प्रावधानों पर विश्वास किया है और निवेदन किया है कि सरकारी सेवक पद जिस पर उसे अधिष्ठायी रूप से प्रोन्नत किया गया है, से जुड़े वेतन और भत्ता को उस तिथि से पाने का हकदार है जिस तिथि पर उसे ऐसी प्रोन्नति प्रदान की गयी है। उन्होंने यह भी निवेदन किया है कि दिनांक 4.4.1985 के परिपत्र, परिशिष्ट–A, के मुताबिक स्वयं प्रत्यर्थी विभाग द्वारा प्रशासनिक अनुदेश के माध्यम से उक्त नियमों की व्याख्या की गयी है। ऐसी परिस्थितियों में, प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने परिशिष्टों 8 और 9 के तहत याची की प्रोन्नति के आदेश को जारी किए जाने के पूर्व तिथि से वेतन के अंतर के बकाया के प्रदान के लिए याची के दावा का प्रतिरोध किया है।

5. मैंने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर उपलब्ध प्रासंगिक सामग्रियों का परिशीलन किया है। कालक्रम, जिसे निर्णय के आरंभिक भाग में उपदर्शित किया गया है, विवादित नहीं है जहाँ तक याची को उपनिदेशक एवं अपर निदेशक, खान एवं भू–गर्भशास्त्र विभाग के अतिरिक्त प्रभार का संबंध है। यह भी सत्य है कि याची को परिशिष्टों 8 और 9 पर अंतर्विष्ट अधिसूचना के तहत भूतलक्षी प्रभाव से अर्थात् क्रमशः दिनांक 15.11.2000 और दिनांक 15.11.2004 के प्रभाव से क्रमशः उपनिदेशक और अपर निदेशक, खान के पद पर प्रोन्नत किया गया है। स्वीकृत रूप से, तिथि जिस पर पूर्वोक्त अधिसूचनाओं द्वारा प्रोन्नति प्रभावकारी बनायी गयी थी, से याची पहले से ही दिनांक 15.12.1999 के परिशिष्ट–1 की अधिसूचना और दिनांक 31.7.2000 परिशिष्ट–3 की अधिसूचना के मुताबिक उप निदेशक और अपर निदेशक के रूप में सेवा दे रहा था।

6. पूर्वोक्त स्वीकृत तथ्यों की दृष्टि में, वर्तमान रिट याचिका में उठाए गए विवाद्यक समरुप मामले में इस न्यायालय का ध्यान आकृष्ट करते प्रतीत होते हैं जिसे **जयप्रकाश सिंह (ऊपर)** के मामले में दिनांक 20.8.2013 के निर्णय के तहत विनिश्चित किया गया था। उक्त मामले में भी, याची स्वीकृत रूप से तिथियों, जिनके प्रभाव से खान एवं भूगर्भशास्त्र विभाग द्वारा भूतलक्षी तरीके से उसे प्रोन्नति प्रदान की गयी थी, पर उपनिदेशक एवं प्रभारी निदेशक की हैसियत से कार्यरत था। प्रत्यर्थीगण द्वारा उक्त याची का दावा अस्वीकार करने के आधार के रूप में उठाए जाने पर उक्त निर्णय में झारखंड सेवा संहिता के नियम 58 और वित्तीय नियमावली के नियम 74 को भी साक्ष्यित किया गया था। निर्णय के प्रासंगिक उद्धरण, जिनका वर्तमान विवाद्यक पर तात्विक प्रभाव है, को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:–

> *^^çR;Fkh x.k u viu çfr'kiFk i= e dFku fd;k g fd ,l k nkok foÙk foHkkx d vun'k ij vLohdkj fd;k x;k gA vk{kfir vkn'k lf{kIr vkn'k g tk doy ;g dgrk g fd Hkry{kh çkUufr l mnHkr gku oky foÙkh; ykHk dk fnukd 4.4.1985 d ldYi d vkèkkj ij vLohdkj fd;k tk jgk gA >kj[kM lok lfgrk d fu;e 58 ij e[;r% fo'ok l fd;k x;k g ft ldk iBu fuEufyf[kr g%*
>
> *"58 (a) bu fu;ek e fofufn"Vr% fd, x, vioknk d vkj bl fu;e d [kM (b) d çkoèkkuk d vè;ekhu ljdkjh lod ml frfFk] ft l ij og ml in d dr0;k dk èkkj.k djrk g] d çHkko l viu indky e tM oru vkj HkÙkk ikuk 'k: djxk vkj mudk ikuk cn djxk T;kgh og mu dr0;k dk fuogu djuk cn dj nrk gA*

(b) tc rd fdlh 0;fDrxr ekey e jkT; ljdkj vU;Fkk fun'k ugh nrh g] fon'k e Hkjrh fd;k x;k 0;fDr fuEufyf[kr :i l çFke fu;fDr ij oru ikuk vkjHk djxkW

(i) ml 0;fDr d ekey e tk Hkkjr e viu vkxeu dh frfFk l Hkkjr d fy, çFke J.kh ;k=k HkÙkk çkIr djrk g (cp tk ldu ;kX; foyc d fcuk viuk dr0; xg.k dju d fy, mld vkxeu d vè;èkhu)

*(ii) ml 0;fDr d ekey e tk Hkkjr d fy, viu çLFkku dh frfFk l Hkkjr vku d fy, f}rh; J.kh ;k=k HkÙkk çkIr djrk gA***

;kph d fo}ku vfèkoDrk u dnkj ukFk cuke >kj[kM jkT; ,o vU;] MCY;0 ihO (,lO) lO 1100 o"k 2007, e fnukd 22.6.2012 d bl U;k;ky; d fu.k; ij fo'okl fd;k g tgk mud vulkj mDr fu;e ij fopkj fd, tku d ckn mDr ;kph dk çkUur in ij oru dk ykHk yu dh vuefr nh x;h Fkh D;kfd mlu ml in dk çHkkj xg.k fd;k FkkA mDr ;kph fnukd 7.9.2001 d Hkry{kh çkUufr dh frfFk l çHkkjh e[; vfHk;rk d :i e LFkkukiUu :i l dk; dj jgk FkkA ;kph d fo}ku vfèkoDrk u bl U;k;ky; d è;ku e ;g Hkh yk;k g fd bl fu.k; d fo#) çR;Fkh jkT; }kjk nkf[ky yVl iVUV vihy ,y0 ihO ,0 lO 471 o"k 2012 Hkh fnukd 3.5.2013 d fu.k; d rgr [kkfjt dj nh x;h gA

i{kk d fo}ku vfèkoDrk dk luu d ckn vkj vfHky[k ij ekt n çkIfxd lkexh dk ifj'khyu dju ij ;g çrhr gkrk g fd ;kph igy l gh çR;Fkh HkxHk&'kkL= foHkkx e ml frfFk ft l ij ml Hkry{kh çHkko l çkUufr nh x;h Fkh vFkkr fnukd 1.7.2001 l çHkkjh mifun'kd d :i e dk; dj jgk FkkA ml frfFk ij ml vij fun'kd] HkxHk&'kkL= foHkkx] d in ij Hkry{kh çHkko l çkUufr nh x;h Fkh vFkkr fnukd 2.7.2007 l çHkkjh fun'kd d :i e dk; dj jgk FkkA ;kph d fo}ku vfèkoDrk }kjk fo'okl fd;k x;k fu.k; ;kph d ekey d leFku e Hkh gA rkRkod rF;k vkj vfèklpuk dh frfFk;k rFkk ijLij frfFk;k l ;kph }kjk çHkkj dk xg.k Hkh fu.k; d vkjfHkd Hkkx e minf'kr fd;k x;k g ft l çR;Fkx.k }kjk fookfnr ugh fd;k x;k gA mDr ifjfLFkfr;k e] mu vkèkkjk ftu ij >kj[kM lok lfgrk d fu;e 58 d vèkhu fo'okl fd;k x;k g dk oreku ekey e cuk;k x;k çrhr ugh gkrk gA ;kph LohÑr :i l fnukd 1.7.2001 dk mifun'kd dh gfl;r e vkj fnukd 2.7.2007 dk çHkkjh fun'kd dh gfl;r e dk;jr Fkk tc ml Øe'kW fnukd 29.6.2009 dh vfèklpuk] ifjf'k"V&5, d rgr vkj fnukd 16.12.2009 dh vfèklpuk] ifjf'k"V&6 d rgr vij fun'kd d :i e çkUur fd;k x;k FkkA

*vr% bu ifjfLFkfr;k e] vk{kfir vkn'k tk lf{kIr g vkj food d xj bLreky l ihfMr Hkh g] fofèk e vkj rF;k ij likf"kr ugh fd;k tk ldrk gA vr% bl vfHk[kfMr fd;k tkrk gA çR;Fkhx.k dk mifun'kd d in ij] ft l ij ml fnukd 1.7.2001 d Hkry{kh çHkko l çkUur fd;k x;k Fkk] ;kph d oru d vrj d cdk;k vkj fnukd 2.7.2007 d çHkko l] ft l in ij ml vij fun'kd d :i e Hkry{kh çHkko l çkUur fd;k x;k Fkk(oru d vrj d cdk;k fueDr dju dk fun'k fn;k tkrk gA mDr dk; bl vkn'k dh çekf.kr çfr dh çkIr dh frfFk l 12 llrkg dh vofèk d Hkhrj ijk fd;k tk,A***

7. तथ्यों एवं परिस्थितियों की पूर्वोक्त पृष्ठभूमि में, परिशिष्ट–12 पर दिनांक 3.2.2012 के आक्षेपित आदेश द्वारा दिनांक 15.11.2000 के प्रभाव से उपनिदेशक, खान के पद पर और दिनांक 15.11.2004 के प्रभाव से अपर निदेशक, खान के पद पर वेतन के अंतर के बकाया से इनकार करने के लिए प्रत्यर्थीगण द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण विधि की दृष्टि में और तथ्यों पर संपोषित नहीं किया जा सकता है। तद्नुसार, इसे अभिखंडित किया जाता है।

8. अत: प्रत्यर्थीगण को दिनांक 15.11.2000 के प्रभाव से उपनिदेशक, खान के पद पर और दिनांक 15.11.2004 के प्रभाव से अपर निदेशक, खान के पद पर, जब याची को भूतलक्षी प्रभाव से प्रोन्नत किया गया था, के वेतन के अंतर का बकाया याची को निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है।

9. उक्त कार्य इस आदेश की प्रमाणित प्रति की प्राप्ति की तिथि से 12 सप्ताह की अवधि के भीतर पूरा किया जाए।

10. तद्नुसार, पूर्वोक्त निबंधनों में रिट याचिका अनुज्ञात की जाती है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

सूदन चंद्र महतो एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr. Misc. No. 9520 of 2000. Decided on 10th April, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406 एवं 420—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धाराएँ 320 एवं 482—न्यास का दांडिक भंग एवं छल–पक्षों ने अपना धनीय विवाद सुलझा लिया है और सुलह कर लिया है–पक्षों के बीच विवाद निजी प्रकृति का है और कोई लोक नीति अंतर्ग्रस्त नहीं करता है–परिवाद मामला और संज्ञान लेने वाला आदेश अपास्त। (पैराएँ 5 एवं 6)

निर्णयज विधि.–(2008)2 SCC 750: (2008)4 SCC 582—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s Rajeev Ranjan, Shresth Gautam, For the Petitioners; Mr. S.S. Sahay, For the State; Mr. Tapas Kabiraj, For the Complainant/O.P. No.2.

आदेश

याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और वि॰ प॰ सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता और राज्य के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए।

2. परिवाद मामला सी॰/1 केस सं॰ 479 वर्ष 2000 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही सहित दिनांक 28.7.2000 के आदेश, जिसके द्वारा और जिसके अधीन विद्वान न्यायिक दंडाधिकारी, जमशेदपुर ने याचीगण के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 406 और 420 के अधीन दंडनीय अपराधों का संज्ञान लिया है, का अभिखंडन इस आधार पर इप्सित किया जा रहा है कि पक्षों ने अपना धनीय विवाद सुलझा लिया है और तद्द्वारा सुलह कर लिया है और इस प्रभाव का अंतर्वर्ती आवेदन भी दाखिल किया गया है।

3. याचीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता निवेदन करते हैं कि परिवादी के मामले के मुताबिक, परिवादी ने याचीगण, विकासकर्ता, के साथ विकास करार किया। जब वहाँ भवन खड़ा करके

भूमि विकसित की गयी थी, प्रश्नगत भवन में हिस्से के संबंध में परिवादी और याचीगण के बीच विवाद उद्भूत हुआ। उसके संबंध में वाद भी दाखिल किया गया था। अब पक्षों ने अपना विवाद सुलझा लिया है और, इसलिए, संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन करने की प्रार्थना की गयी है।

4. विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता स्वीकार करते हैं कि पक्षों ने सुलह कर लिया है और तद्द्वारा अंतर्वर्ती आवेदन आई॰ ए॰ सं॰ 2025 वर्ष 2014 के रूप में संयुक्त सुलह याचिका भी दाखिल की गयी है।

5. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि पक्षों के बीच विवाद निजी प्रकृति का होने के नाते कोई लोक नीति अंतर्ग्रस्त नहीं करता है और तद्द्वारा **मदन मोहन एबट बनाम पंजाब राज्य, (2008)2 Supreme 750) = 2008 (4) SCC 582,** मामले में अधिकथित निर्णयाधार की दृष्टि में यह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा यदि याचीगण को विचारण की कठोरता का सामना करने की अनुमति दी जाती है।

6. तद्नुसार, दिनांक 28.7.2000 के संज्ञान लेने वाले आदेश सहित परिवाद मामला सी॰/1 केस सं॰ 479 वर्ष 2000 की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही एतद् द्वारा अपास्त की जाती है जहाँ तक उक्त नामित याचीगण का संबंध है।

7. इस प्रकार, आई॰ ए॰ सं॰ 2025 वर्ष 2014 भी निपटाया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkr dekj ,o vferkHk dekj xIrk] U;k;efrx.k

चार्ल्स ओराँव एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (D.B.) No. 476 of 2003. Decided on 19th February, 2014.

सत्र विचारण सं॰ 325 वर्ष 1995 में अरुण कुमार, अपर न्यायिक आयुक्त, राँची द्वारा पारित दिनांक 28.2.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 4.3.2003 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302/34—हत्या–सामान्य आशय–दोषसिद्धि–मात्र इसलिए कि वे मृतक से संबंधित हैं, किसी गवाह के साक्ष्य को विचार क्षेत्र से बाहर नहीं फेंका जा सकता है–यदि बचाव पक्ष पर कोई प्रतिकूलता कारित नहीं हुई है, अन्वेषण अधिकारी का गैर-परीक्षण अभियोजन के मामले के लिए परिणामहीन है–बचाव पक्ष ने घटनास्थल को चुनौती नहीं दिया है–अभियोजन ने समस्त युक्तियुक्त संदेहों के परे अपीलार्थी के विरुद्ध लगाए गए आरोप को सिद्ध किया है–अपील खारिज। (पैराएँ 9 से 18)

अधिवक्तागण.–M/s Nilesh Kumar, Abhishekh Kr. Sinha, For the Appellant; Sri Hardeo Prasad Singh, For the Respondents.

प्रशांत कुमार, न्यायमूर्ति.–यह अपील क्रमशः दिनांक 28.2.2003 और दिनांक 4.3.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन अपीलार्थीगण को मंगरा ओराँव की हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया है और आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया है। अपीलार्थी सुकरा

ओराँव को 10,000/- रुपया जुर्माना का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था जबकि अपीलार्थीगण बलवा ओराँव एवं चार्ल्स ओराँव प्रत्येक को 5000/- रुपया जुर्माना का भुगतान करने का निर्देश दिया गया था। अवर न्यायालय ने आगे निर्देश दिया कि जुर्माना राशि की प्राप्ति पर मृतक के आश्रित को इसका भुगतान किया जाएगा।

2. प्राथमिकी के मुताबिक अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 6.2.1994 को शाम में सूचक अपने घर में उपस्थित था। यह अभिकथित किया गया है कि उस अवधि के दौरान अभियुक्तगण चार्ल्स ओराँव, बलवा ओराँव, सुकरा ओराँव, बंदे ओराँव और मदरु ओराँव भुजाली से लैस होकर आए और मंगरा ओराँव पर प्रहार किया। आगे यह कथन किया गया है कि उक्त प्रहार के कारण मंगरा ओराँव जमीन पर गिर गया। आगे यह कथन किया गया है कि उसने उन्हें ऐसा करने से मना किया किंतु उन्होंने उसका अनुरोध नहीं माना। यह कथन किया गया है कि उक्त प्रहार के कारण घटना स्थल पर मंगरा ओराँव की मृत्यु हो गयी। आगे यह कथन किया गया है कि जीता ओराँव, बरकी ओराइन और अन्य हल्ला सुन कर घटनास्थल पर आए और घटना देखा। यह कथन किया गया है कि घटना के पहले मृतक और अभियुक्तगण के बीच झगड़ा हुआ था और उस कारण वर्तमान घटना हुई।

3. पूर्वोक्त सूचना के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन मंदेर पी॰ एस॰ केस सं॰ 5 वर्ष 1994 संस्थित किया गया और पुलिस ने अन्वेषण किया। अन्वेषण के दौरान पुलिस ने मृतक के मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया और इसे शव परीक्षण के लिए भेजा। अन्वेषण पूरा करने के बाद पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपीलार्थीगण और दो अन्य के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। तत्पश्चात, विद्वान दंडाधिकारी ने अपराध का संज्ञान लिया और तब मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है। सुपुर्दगी के बाद मामले के अभिलेख को चतुर्थ अपर न्यायिक आयुक्त, राँची के न्यायालय को अंतरित किया गया था और प्राप्त किया गया था जिन्होंने भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपीलार्थीगण और दो अन्य के विरुद्ध आरोप विरचित किया और इसे अभियुक्तगण को स्पष्ट किया जिन्होंने निर्दोष होने का अभिवचन किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

4. विचारण के दौरान अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में कुल सात गवाहों का परीक्षण किया। अभियोजन ने अभिलेख पर प्रदर्श 1 (सूचक का हस्ताक्षर); प्रदर्श 1/1 (मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर सूचक का हस्ताक्षर); प्रदर्श 1/2 (मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर लगनू ओराँव का हस्ताक्षर); प्रदर्श 2 (शव परीक्षण रिपोर्ट) और प्रदर्श 3 (प्राथमिकी) लाया। यह प्रतीत होता है कि अभियोजन मामला बंद होने के बाद अपीलार्थीगण सहित अभियुक्तगण का बयान दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 313 के अधीन दर्ज किया गया। उनका बचाव पूरे इनकार का है। तब यह प्रतीत होता है कि बचाव ने भी अपने मामले के समर्थन में तीन गवाहों का परीक्षण किया है। आगे यह प्रतीत होता है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद विद्वान अवर न्यायालय ने सह-अभियुक्तगण मदरु ओराँव और बंदे ओराँव को उनके विरुद्ध लगाए गए आरोप से दोषमुक्त कर दिया। किंतु, विद्वान अवर न्यायालय ने अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया और उनको आजीवन कारावास भुगताने का दंडादेश दिया और जुर्माना का भुगतान करने का निर्देश दिया। दोषसिद्धि के पूर्वोक्त निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

5. अवर न्यायालय के आक्षेपित निर्णय का विरोध करते हुए अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि वर्तमान मामले में विद्वान अवर न्यायालय ने हितबद्ध गवाहों के साक्ष्य के आधार पर

अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध किया है। यह निवेदन किया गया है कि अ० सा० 1, अ० सा० 2, अ० सा० 3, अ० सा० 4 और अ० सा० 5 मृतक के निकट संबंधी हैं, अत: वे अभियोजन मामले में अत्यन्त हितबद्ध गवाह हैं। अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि पूर्वोक्त गवाहों का साक्ष्य घटना का तरीका, घटनास्थल के संबंध में संगत नहीं है और, इसलिए, वे विश्वसनीय गवाह नहीं हैं। यह निवेदन किया गया है कि अभियोजन गवाहों का साक्ष्य चिकित्सीय साक्ष्य से कोई संपुष्टि नहीं पाता है। यह निवेदन किया गया है कि इस मामले में अभियोजन द्वारा अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण नहीं किया गया है। यह निवेदन किया गया है कि अन्वेषण अधिकारी के गैर-परीक्षण के कारण बचाव पर गंभीर प्रतिकूलता कारित की गयी है, यह निवेदन किया गया है कि आई० ओ० का गैर-परीक्षण अभियोजन मामले के प्रति घातक है। तद्नुसार, अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश इस अपील में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

6. दूसरी ओर, विद्वान अपर ए० पी० पी० ने निवेदन किया कि अ० सा० 1, अ० सा० 2, अ० सा० 3, अ० सा० 4 और अ० सा० 5 के साक्ष्य के परिशीलन से यह स्पष्ट है कि वे घटना के चश्मदीद गवाह हैं। उन्होंने आगे निवेदन किया कि वे घटना के स्वाभाविक गवाह हैं क्योंकि उनके घर घटनास्थल के आस-पास स्थित हैं। विद्वान अपर ए० पी० पी० ने निवेदन किया कि अ० सा० 1, अ० सा० 2, अ० सा० 3, अ० सा० 4, और अ० सा० 5 के साक्ष्य को मात्र इसलिए ठुकराया नहीं जा सकता है कि वे मृतक के निकट संबंधी हैं। उन्होंने आगे निवेदन किया कि किसी अभियोजन गवाह के साक्ष्य को मात्र इसलिए अस्वीकार नहीं किया जा सकता है कि वे मृतक के निकट संबंधी हैं। उन्होंने आगे निवेदन किया कि विधि आवश्यक बनाती है कि हितबद्ध गवाह का साक्ष्य दोषसिद्धि का आधार बन सकता है यदि सूक्ष्म संवीक्षण पर इसे विश्वसनीय और स्वीकार्य पाया जाता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अ० सा० 1, अ० सा० 2, अ० सा० 3, अ० सा० 4 और अ० सा० 5 का साक्ष्य घटना के तरीका, घटना स्थल और घटना के समय के संबंध में संगत है। उनके साक्ष्य ने अ० सा० 6 डॉक्टर जिन्होंने मृत शरीर का शव परीक्षण किया के साक्ष्य से पूर्ण संपुष्टि पाता है। तद्नुसार, यह निवेदन किया गया है कि अ० सा० 1, अ० सा० 2, अ० सा० 3, अ० सा० 4 और अ० सा० 5 का साक्ष्य पूर्णत: विश्वसनीय और स्वीकार्य है। अत: विद्वान अवर न्यायालय ने पूर्वोक्त गवाहों के साक्ष्य के आधार पर सही प्रकार से अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध एवं दंडादेशित किया है। यह निवेदन किया गया है कि दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं है, इसलिए इस न्यायालय का हस्तक्षेप आवश्यक नहीं है।

7. निवेदनों को सुनने पर हमने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है।

8. अ० सा० 6 डॉ० निरंजन मिंज जिन्होंने मृतक मंगरा ओराँव के मृत शरीर का शव परीक्षण किया था, ने उसके शरीर पर कुल पाँच शवपूर्व कटा जख्म पाया। डॉक्टर ने मत दिया कि पूर्वोक्त उपहतियाँ भुजाली जैसे तेज धार वाले हथियार द्वारा कारित की गयी थी। इस गवाह ने आगे मत दिया कि मृतक की मृत्यु आघात एवं हेमरेज के कारण हुई। प्रति परीक्षण में ऐसा कुछ भी नहीं है जिस पर अ० सा० 6 के साक्ष्य पर अविश्वास किया जा सके। अ० सा० 6 का साक्ष्य मृतक के मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट से पूर्ण समर्थन पाता है। अत:, मैं पाता हूँ कि अभियोजन ने मृतक के मानववध मृत्यु को सिद्ध किया है।

9. अब हम अभिलेख पर उपलब्ध अन्य साक्ष्य पर विचार करने के लिए अग्रसर हो रहे हैं। अ० सा० 2 जीता ओराँव ने कथन किया है कि घटना की तिथि पर शाम में चार्ल्स, सुकरा, बलवा, मादरु और

बन्दे ने मंगरा ओराँव पर भुजाली से प्रहार किया था। उसने तब कथन किया कि जब वह मंगरा को बचाने गया, तब चार्ल्स ने उस पर भी भुजाली से प्रहार किया जिस कारण उसे अपने हाथ पर उपहति आयी। उसने यह कथन भी किया कि पुलिस ने उसकी उपहतियों को देखने के बाद उसका इलाज करवाया। इस प्रकार, बचाव पक्ष ने ऐसी कोई चीज नहीं निकाला है जिस पर उसके साक्ष्य पर अविश्वास किया जा सकता है।

10. अ॰ सा॰ 5 कैलाश ओराँव घटना का एक अन्य चश्मदीद गवाह है। उसने कथन किया है कि घटना के दिन शाम में चार्ल्स ने भुजाली से मंगरा पर प्रहार किया और जब वह गिर गया, बलवा और सुकरा ने बार-बार उस पर प्रहार किया जिस कारण उसके गर्दन, मस्तक और हाथ पर उपहति आयी। उसने आगे कथन किया कि जब जीता ओराँव मृतक को बचाने गया, उस पर भी चार्ल्स द्वारा भुजाली से प्रहार किया गया था जिस कारण उसे अपने हाथ पर उपहति आयी। उसने कथन किया कि उसके द्वारा पायी गयी उपहति के कारण मंगरा ओराँव की मृत्यु हो गयी। इस गवाह का विस्तारपूर्वक प्रति परीक्षण किया गया था किंतु अभियोजन ने ऐसी कोई सामग्री नहीं निकाला था जिस पर उसकी विश्वसनीयता पर संदेह किया जा सके।

11. अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 4 अर्थात् गोइंदी ओराँव और बुर्की ओराँव मृतक की चाची हैं। यह प्रतीत होता है कि अभियोजन द्वारा उन्हें पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है क्योंकि उन्होंने सह-अभियुक्तगण मदरु ओराँव और बन्दे ओराँव के विरुद्ध कुछ नहीं कहा है। किंतु दोनों गवाहों ने अपने मुख्य परीक्षण में स्पष्टत: कथन किया था कि चार्ल्स, सुकरा और बलवा ने भुजाली से मंगरा ओराँव पर प्रहार किया जिससे मंगरा की मृत्यु हो गयी। उन्होंने यह कथन भी किया कि जीता ओराँव मंगरा को बचाने गया था किंतु उस पर भी चार्ल्स ओराँव द्वारा प्रहार किया गया था। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, हम पाते हैं कि इन दो गवाहों ने अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 5 के बयान को पूर्णत: संपुष्ट किया है। हम पाते हैं कि अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 5 का साक्ष्य अ॰ सा॰ 6 जिन्होंने मृतक के मृत शरीर का शव परीक्षण किया था के साक्ष्य से पूर्ण समर्थन पाता है।

12. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता का निवेदन कि अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध करने के लिए अभियोजन गवाह के साक्ष्य पर विश्वास नहीं किया जा सकता है क्योंकि वे मृतक का संबंधी होने के नाते अभियोजन मामले में अत्यन्त हितबद्ध हैं, स्वीकार्य नहीं है। यह सुनिश्चित है कि किसी गवाह के साक्ष्य को मात्र इसलिए विचार क्षेत्र से बाहर नहीं किया जा सकता है कि वे हितबद्ध और/अथवा मृतक के संबंधी हैं। विधि आवश्यक बनाती है कि उनके साक्ष्य का सावधानीपूर्वक संवीक्षण किया जाए और यदि सावधानीपूर्वक संवीक्षण पर उनका साक्ष्य विश्वसनीय और स्वीकार्य पाया जाता है, तब उनके साक्ष्य पर दोषसिद्धि आधारित की जा सकती है।

13. वर्तमान मामले में, जैसा उपर गौर किया गया है; अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 5 जो घटना के चश्मदीद गवाह हैं का साक्ष्य संगत है जहाँ तक यह घटना के तरीका और घटनास्थल से संबंधित है। बचाव अभिलेख पर ऐसा कुछ भी लाने में विफल रहा है कि जिसके आधार पर उनकी विश्वसनीयता पर संदेह किया जा सके। हम आगे पाते हैं कि अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4 और अ॰ सा॰ 6 के साक्ष्य से अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 5 का साक्ष्य पूर्ण समर्थन पाता है। उक्त परिस्थिति के अधीन, हम पाते हैं कि अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 5 का साक्ष्य पूर्णत: विश्वसनीय और स्वीकार्य है, अत: विद्वान अवर न्यायालय ने अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध करने के लिए उनके साक्ष्य को सही प्रकार से स्वीकार किया है।

14. अपीलार्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा यह भी प्रतिवाद किया गया है कि वर्तमान मामले में, अन्वेषण अधिकारी का गैर परीक्षण अभियोजन मामले के प्रति घातक है। यह निवेदन भी स्वीकार्य नहीं है और अस्वीकार किए जाने का दायी है।

15. यह सुनिश्चित है कि यदि बचाव पक्ष पर प्रतिकूलता कारित नहीं की जाती है, तब उस स्थिति में, अन्वेषण अधिकारी का गैर-परीक्षण अभियोजन मामले के प्रति परिणामविहीन है।

16. वर्तमान मामले में, अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4 और अ॰ सा॰ 5 के प्रति परीक्षण के परिशीलन से हम पाते हैं कि बचाव पक्ष ने अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 5 से कोई विरोधाभास नहीं निकाला है जिसको अन्वेषण अधिकारी द्वारा सिद्ध किए जाने की आवश्यकता है। उक्त परिस्थिति के अधीन, हम पाते हैं कि अन्वेषण अधिकारी के गैर-परीक्षण के कारण बचाव पक्ष पर प्रतिकूलता कारित नहीं हुई है। तद्नुसार, हम पाते हैं कि अन्वेषण अधिकारी का गैर परीक्षण अभियोजन मामले के प्रति घातक नहीं है।

17. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, हम पाते हैं कि अभियोजन ने समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अपीलार्थीगण के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को सिद्ध किया था। इस प्रकार हम विद्वान अवर न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश में अवैधता और/अथवा अनियमितता नहीं पाते हैं और इसे एतद् द्वारा अभिपुष्ट किया जाता है।

18. परिणामस्वरुप, यह अपील विफल होती है और तद्नुसार इसे खारिज किया जाता है।

अमिताभ कुमार गुप्ता, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

---

ekuuh; vkjî vkjî çlkn] U;k;efr

शंकर प्रसाद सिंह

cuke

झारखंड राज्य निगरानी के माध्यम से

Cr. M.P. No. 2168 of 2013. Decided on 4th March, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 409, 420, 467, 468 एवं 471—भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988—धारा 13 (1) (d)—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—न्यास का दांडिक भंग, छल एवं कूटरचना–विलंब के आधार पर संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने के लिए याचिका–अधिकांश गवाहों का परीक्षण कर लिया गया है और केवल कुछ गवाहों का परीक्षण किया जाना बाकी है–अतः इस चरण पर कार्यवाही अभिखंडित करना वांछनीय नहीं होगा–इस आदेश की प्राप्ति की तिथि से तीन माह के भीतर विचारण समाप्त करने के लिए विचारण न्यायालय को निर्देश दिया गया–आवेदन निपटाया गया। (पैराएँ 6 से 8)

अधिवक्तागण.–Mr. Rajiv Kumar, For the Petitioner; Mr. Shailesh, For the Vigilance.

आदेश

सन्हा पी॰ एस॰ केस सं॰ 70 वर्ष 1997 (जी॰ आर॰ सं॰ 515/1997) की संपूर्ण दांडिक कार्यवाही, जिसमें याची को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 420, 467, 468 और 471 के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन भी आरोपों पर अभियोजित किया जा रहा है, का अभिखंडन त्वरित न्याय के अधिकार से इनकार के आधार पर इप्सित किया जा रहा है क्योंकि विगत दस वर्षों से याची को अभियोजित किया जा रहा है।

2. अभियोजन का मामला यह है कि याची, जब वह प्रखंड विकास अधिकारी, सन्हा के रूप में पदस्थापित था, को इंदिरा आवास निर्माण योजना के अधीन लाभार्थियों को चुनने और उनको अग्रिम देने का प्राधिकार दिया गया था। इंदिरा आवास निर्माण योजना के अधीन लाभ प्रदान करने के लिए गाँव बदला पंचायत, बदला को समूह गाँव के रूप में भी चुना गया था।

3. समय के अनुक्रम में, इस प्रभाव के अनेक परिवाद प्राप्त किए गए थे कि लाभार्थियों को पहली बार भुगतान किए गए 4000/- रुपयों में से विचौलियों द्वारा 1000/- से 3000/- रुपयों तक की राशि अवैध रूप से एकत्रित की गयी थी। लाभार्थियों में से कुछ अर्थात् नरेश राम, रमेश राम और अन्य ने परिवाद दर्ज किया कि ज्योंही करार निष्पादित किया गया था, 4000/- रुपयों का चेक दिया गया था और जब इसे भुनाया गया था, प्रदीप महतो ने 1,000/- रु॰ से 3,000/- रु॰ तक बलपूर्वक ईंट की आपूर्ति करने के बहाने ले लिया, पर ईंट की आपूर्ति कभी नहीं की गयी थी। जब उपायुक्त, लोहरदग्गा द्वारा स्थल सत्यापन किया गया था, लाभार्थियों से ली गयी राशि उनमें से कुछ को लौटा दी गयी थी। नवाटोली के लाभार्थियों से भी समरुप अभिकथन प्राप्त किए गए थे जिन्होंने भी किसी धीरेन्द्र मंडल, जनसेवक, द्वारा धन लिए जाने के बारे में परिवाद किया था जब उन्हें अग्रिम के रूप में 4000/- रुपया दिया गया था।

उक्त अभिकथनों पर, सन्हा पी॰ एस॰ केस सं॰ 70 वर्ष 1997 के रूप में प्राथमिकी दर्ज की गयी थी। मामले का अन्वेषण किया गया था। अन्वेषण पूरा होने के बाद, अभियुक्तगण में से कुछ अर्थात् धीरेन्द्र मंडल, प्रदीप महतो और राजकुमार महतो के विरुद्ध दिनांक 30.4.1999 को आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। इसके काफी बाद, इस याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 420, 467, 468, 471, 120B के अधीन पूरक आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिस पर उसके विरुद्ध दिनांक 10.11.2004 को अपराधों का संज्ञान लिया गया था। बाद में, दिनांक 31.8.2005 को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 409, 420, 467, 468, 471, 120B के अधीन और भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 13 (2) सह-पठित धारा 13 (1) (d) के अधीन भी तीसरा आरोप-पत्र दाखिल किया गया था। इसके काफी बाद दिनांक 12.11.2008 को आरोप विरचित किए गए थे। इस मामले के दाखिल किए जाने तक 17 गवाहों में से सात गवाहों का परीक्षण किया गया था जो याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के अनुसार इस तथ्य का उपदर्शक है कि विचारण घोंघे की गति से चल रहा है। यह भी इंगित किया गया है कि अन्य अभियुक्तगण जिनके विरुद्ध पहले आरोप-पत्र दाखिल किया गया है का विचारण किया गया था और काफी पहले वर्ष 2005 में दोषमुक्त कर दिया गया था।

इन परिस्थितियों के अधीन, संपूर्ण दांडिक कार्यवाही अभिखंडित करने के लिए यह मामला दाखिल किया गया है।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री राजीव कुमार निवेदन करते हैं कि उक्त कथित तथ्य स्वयं इसे त्वरित न्याय के अधिकार से इनकार के रूप में प्रदर्शित करते हैं क्योंकि अभियोजन ने 10 वर्ष बीतने के बावजूद विचारण समाप्त करने में सक्षम नहीं हुआ है। इसके अतिरिक्त, याची का विचारण पी॰ सी॰ अधिनियम के अधीन भी किया जा रहा है किंतु डी॰ एस॰ पी॰ की श्रेणी के नीचे के अधिकारी द्वारा किए गए अन्वेषण के आधार पर आरोप-पत्र दाखिल किया है और तद्द्वारा पी॰ सी॰ अधिनियम के अधीन अपराध के लिए संपूर्ण अभियोजन दूषित हो जाता है। इन परिस्थितियों के अधीन, यह न्यायालय की प्रक्रिया का दुरुपयोग होगा यदि याची को आगे विचारण की कठोरता का सामना करने की अनुमति दी जाती है।

5. इसके विरुद्ध, निगरानी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री शैलेष निवेदन करते हैं कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि इस याची को अभियोजित करने में अभियोजन द्वारा काफी वक्त लिया गया है, किंतु कार्यवाही लगभग अंतिम चरण पर पहुँच गयी है क्योंकि केवल कुछ गवाहों का परीक्षण किया जाना बचा है। गवाहों, जिनका परीक्षण अभी तक नहीं किया गया है, का परीक्षण यथासंभव शीघ्र किया जाएगा और इन परिस्थितियों के अधीन यह निवेदन किया गया था कि इस चरण पर कार्यवाही अभिखंडित करना समुचित और उचित नहीं होगा।

6. पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह पाया जा सकता है कि अभियोजन ने आरोप विरचित किए जाने की तिथि से पाँच वर्षों से अधिक का समय लिया है, किंतु अभी भी समस्त गवाहों का परीक्षण नहीं किया गया है। किंतु, निगरानी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता के अनुसार, अधिकतर गवाहों का परीक्षण किया जा चुका है और केवल कुछ गवाह परीक्षण किए जाने के लिए बाकी हैं। ऐसी स्थिति में, इस चरण पर कार्यवाही अभिखंडित करना वांछनीय नहीं होगा।

7. जहाँ तक इस तथ्य कि अन्वेषण डी॰ एस॰ पी॰ की श्रेणी के अधिकारी द्वारा अन्वेषण नहीं किया गया है, के कारण पी॰ सी॰ अधिनियम के अधीन अभियोजन दूषित हो जाने से संबंधित निवेदन का संबंध है, मैं इस चरण पर कोई मत अभिव्यक्त नहीं कर रहा हूँ बल्कि विचारण न्यायालय के समक्ष इसे उठाने के लिए याची के लिए इस विवाद्यक को खुला रखा जाता है।

8. इन तथ्यों और परिस्थितियों में, इस आदेश की प्रति की प्राप्ति/प्रस्तुति की तिथि से तीन माह की अवधि के भीतर विचारण समाप्त करने का निर्देश विचारण न्यायालय को देते हुए इस आवेदन को निपटाया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkr dekj ,o vferkHk dekj xIrk] U;k;efrx.k

गनौरी सिंह

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (D.B.) No. 659 of 2004. Decided on 28th January, 2014.

सत्र विचारण सं॰ 343/1993 में पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, डालटेनगंज, पलामू द्वारा पारित दिनांक 22.5.2001 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 23.5.2001 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 302 एवं 201—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 374—पत्नी की हत्या–दोषसिद्धि–किसी हेतु की अनुपस्थिति में अपीलार्थी को अपनी पत्नी की हत्या करने वाला उपधारित नहीं किया जा सकता है–इस मामले से जोड़ने वाले साक्ष्य गायब है–केवल इस आधार पर कि याची को अंतिम बार मृतका के साथ देखा गया था, यह उपधारित नहीं किया जा सकता है कि याची ने ही वर्तमान अपराध किया था और किसी अन्य ने नहीं–अभियोजन द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप संतोषजनक रूप से सिद्ध नहीं किया गया–अपीलार्थी को संदेह का लाभ दिया गया–अपील अनुज्ञात। (पैराएँ 11 से 14)

अधिवक्तागण.–Sri Ravi Prakash, For the Appellant; Sri G.S. Prasad, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील सत्र विचारण सं॰ 343 वर्ष 1993 में पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, डालटेनगंज, पलामू द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 22.5.2001 और दिनांक 23.5.2001 के दोषसिद्धि के

निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन उन्होंने अपीलार्थी को अपनी पत्नी गुनिया देवी की हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302/201 के अधीन अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया और उसको भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कारावास भुगतने और भारतीय दंड संहिता की धारा 201 के अधीन अपराध के लिए दो वर्षों का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया और निर्देश दिया कि दोनों दंडादेश साथ चलेंगे।

2. मनरुप सिंह (अ॰ सा॰ 1) के फर्दबयान के मुताबिक अभियोजन का मामला यह है कि मृतका गुनिया देवी का विवाह सात वर्ष पहले अपीलार्थी के साथ हुआ था। आगे यह कथन किया गया है कि अपीलार्थी सदैव चोरी–डकैती जैसा अपराध किया करता था जिसका विरोध मृतका गुनिया देवी द्वारा किया जाता था। आगे यह कथन किया गया है कि डकैती मामले के संबंध में अपीलार्थी को अभिरक्षा में लिया गया था और जब वह लौटा, मृतका ने पुनः उससे ऐसी बुरी आदतों को छोड़ने का अनुरोध किया जिस पर अपीलार्थी ने उस पर प्रहार किया। आगे यह कथन किया गया है कि तत्पश्चात मृतका अपने दांपत्य गृह से चली गयी और अपने माएके आ गयी। यह कथन किया गया है कि दिनांक 11.10.1991 को अपीलार्थी सूचक के घर आया और मृतका पर प्रहार किया और उससे पूछा कि वह क्यों अपने पिता का बैल चरा रही है। तब यह कथन किया गया है कि दिनांक 12.10.1991 को वह मृतका को घर के निर्माण के लिए लकड़ी लाने के बहाने जंगल ले गया। आगे यह कथन किया गया है कि सूचक की बहुओं अर्थात् मंजूरा देवी, ननका सिंह और रेशवा कुमारी ने अपीलार्थी को मृतका के साथ जंगल जाते देखा था। यह कथन किया गया है कि उस दिन मृतका वापस नहीं लौटी थी जिस पर सूचक और उसके परिवार के सदस्यों ने उसका तलाश किया। यह कथन किया गया है कि दिनांक 16.10.1991 को सूचक और सह–ग्रामीण जंगल गए, जहाँ उन्होंने मृतका का मृत शरीर पाया। तत्पश्चात मामला पुलिस को रिपोर्ट किया गया था।

3. पूर्वोक्त सूचना के आधार पर, पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/201 के अधीन दिनांक 18.10.1991 का लातेहार पी॰ एस॰ केस सं॰ 155 वर्ष 1991 संस्थित किया और अन्वेषण किया। अन्वेषण के दौरान, पुलिस ने मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया और शव परीक्षण के लिए मृत शरीर भेजा। अन्वेषण के दौरान, पुलिस ने गवाहों का बयान दर्ज किया और अन्वेषण पूरा करने के बाद, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/201 के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप पत्र दाखिल किया। यह प्रतीत होता है कि अपराध का संज्ञान लिया गया था और तब मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य है।

4. तब यह प्रतीत होता है कि विद्वान अपर सत्र न्यायाधीश ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/201 के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित किया और इसे अपीलार्थी को स्पष्ट किया, जिसके प्रति उसने निर्दोष होने का अभिवचन किया और विचारण किए जाने का दावा किया। तत्पश्चात, अभियोजन ने कुल 13 गवाहों का परीक्षण किया। अभियोजन ने प्रदर्श 1 श्रृंखला (अभिग्रहण सूची गवाहों के हस्ताक्षर), प्रदर्श 2 श्रृंखला (मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर गवाहों का हस्ताक्षर), प्रदर्श 3 (फर्दबयान), प्रदर्श 4 (औपचारिक प्राथमिकी), प्रदर्श 5 (अभिग्रहण सूची), प्रदर्श 6 मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट की कार्बन प्रति) और प्रदर्श 7 (शव परीक्षण रिपोर्ट) अभिलेख पर लाया। यह प्रतीत होता है कि अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद विद्वान अवर न्यायालय ने पूर्वोक्तानुसार अपीलार्थी को दोष सिद्ध और दंडादेशित किया। इसके विरुद्ध वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

5. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री रवि प्रकाश ने निवेदन किया कि घटना का कोई चश्मदीद गवाह नहीं है। तब उन्होंने निवेदन किया कि अपीलार्थी को इस मामले में परिस्थितिजन्य

साक्ष्य के आधार पर दोषसिद्ध किया गया है और अपीलार्थी के विरुद्ध एकमात्र परिस्थिति यह है कि उसे अंतिम बार मृतका के साथ देखा गया था। उन्होंने आगे निवेदन किया कि विद्वान अवर न्यायालय द्वारा विश्वास की गयी समस्त परिस्थितियों को समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध नहीं किया गया है। अतः, अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश अपास्त किए जाने की दायी है।

6. दूसरी ओर, विद्वान अपर पी॰ पी॰ निवेदन करते हैं कि अपीलार्थी के विरुद्ध मजबूत परिस्थितिजन्य साक्ष्य हैं और विद्वान अवर न्यायालय ने सही प्रकार से उन पर विश्वास किया है और अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया है। इस प्रकार, किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

7. निवेदनों को सुनने पर हमने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है।

वर्तमान मामले में, मृतका गुनिया देवी के मानव वध मृत्यु को चुनौती नहीं दी गयी है। अतः, इस मामले में विनिश्चित किया जाने वाला एकमात्र प्रश्न यह है कि क्या अपीलार्थी का वर्तमान अपराध में कोई हाथ है या नहीं?

8. यह स्वीकृत अवस्था है कि घटना का कोई चश्मदीद गवाह नहीं है। अभियोजन का संपूर्ण मामला परिस्थितिजन्य साक्ष्य पर टिका है। आक्षेपित निर्णय के परिशीलन से हम पाते हैं कि विद्वान अवर न्यायालय ने अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने के लिए मुख्यतः तीन परिस्थितियों पर विश्वास किया है अर्थात्

(i) gr]

(ii) vfHk;Dr dk vkpj.k]

(iii) vfHk;Dr dk vfre ckj Vkxh l yl gkdj erdk d lkFk n[kk x;k FkkA

9. अभिलेख के परिशीलन से, हम पाते हैं कि प्रथम दो परिस्थितियाँ अर्थात् अभियुक्त का हेतु और आचरण एक-दूसरे के साथ अंतर्संबंधित हैं। यह अभिकथित किया गया है कि अपीलार्थी अनेक अपराधों जैसे चोरी-डकैती में लिप्त था और मृतका अपीलार्थी के आचरण के बारे में विरोध करती थी। यह अभिकथित किया गया है कि अपीलार्थी मृतका से चिढ़ा हुआ था और इस कारण उसने वर्तमान अपराध किया। इस संबंध में, हम पाते हैं कि अभियोजन यह दर्शाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं लाया था कि अपीलार्थी को किसी दांडिक मामले के लिए अभियोजित किया गया था और/अथवा किसी अपराध की कारिता के लिए जेल भेजा गया था। इस मामले में अ॰ सा॰ 11 के रूप में अन्वेषण अधिकारी का परीक्षण किया गया था। उसने कथन नहीं किया था कि अपीलार्थी किसी अन्य दांडिक मामले में अंतर्ग्रस्त था। उक्त परिस्थिति के अधीन, सूचक (अ॰ सा॰ 1) और अन्य अभियोजन गवाहों द्वारा दिया गया विवरण कि अपीलार्थी दांडिक मामलों में अंतर्ग्रस्त था और मृतका उसके आपराधिक आचरण का विरोध करती थी, स्वीकार्य नहीं है। इस प्रकार, प्रथम दो परिस्थितियों अर्थात् अभियुक्त का हेतु और आचरण अभियोजन द्वारा समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे सिद्ध नहीं किया गया है।

10. अब तीसरी परिस्थिति पर आते हुए अर्थात् अपीलार्थी को अंतिम बार मृतका के साथ देखा गया था, यह उल्लेखनीय है कि अभियोजन ने अनेक गवाहों का परीक्षण करके पूर्वोक्त परिस्थिति को सिद्ध करने का प्रयास किया किंतु अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3, अ॰ सा॰ 4, अ॰ सा॰ 6 और अ॰ सा॰ 9 के साक्ष्यों के परिशीलन से, यह प्रतीत होता है कि वे अनुश्रुत गवाह हैं। यद्यपि अ॰ सा॰ 1 ने कथन किया कि उसने अपीलार्थी को मृतका के साथ जंगल की ओर जाते देखा था, किंतु अ॰ सा॰ 5 के प्रति परीक्षण के परिशीलन से हम पाते हैं कि प्रासंगिक समय पर वह अपने घर में उपस्थित नहीं था, बल्कि वह शाम में अपने घर लौटा था। उक्त परिस्थिति के अधीन, अ॰ सा॰ 1 का बयान विश्वास उत्पन्न नहीं करता है।

11. अब, अ॰ सा॰ 5 और अ॰ सा॰ 8 के साक्ष्यों पर आते हुए हम पाते हैं कि उन्होंने कथन किया कि अपीलार्थी टांगी से लैस होकर मृतका को जंगल में ले गया था। किंतु, अ॰ सा॰ 5 ने अपने प्रति परीक्षण में स्पष्टत: कथन किया था कि मृतका स्वयं अपनी इच्छा से अपीलार्थी के साथ जंगल गयी थी और उस समय उनका संबंध मधुर था। उक्त परिस्थिति के अधीन, भले ही मृतका अपीलार्थी के साथ जंगल गयी, इसमें कुछ भी असामान्य नहीं है क्योंकि वे पति-पत्नी हैं और घर के निर्माण के लिए लकड़ी लाने जंगल गए थे। इस प्रकार, किसी हेतु की अनुपस्थिति में यह उपधारित नहीं किया जा सकता है कि अपीलार्थी ने वर्तमान अपराध किया है।

12. मामले के उस दृष्टिकोण में, केवल इसलिए कि अपीलार्थी को अंतिम बार मृतका के साथ देखा गया था, हमारे दृष्टिकोण में यह उपधारित नहीं किया जा सकता है कि अपीलार्थी ने ही और न कि किसी अन्य ने वर्तमान अपराध किया था।

13. हमारे सुविचारित दृष्टिकोण में, इस मामले में जोड़ने वाले साक्ष्य गायब हैं। अत:, हम अपीलार्थी को संदेह का लाभ देने के इच्छुक हैं। इस प्रकार, हम निष्कर्षित करते हैं कि अभियोजन ने समस्त युक्तियुक्त संदेह के परे अपीलार्थी के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को सिद्ध नहीं किया है। अत:, दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और दंडादेश को इस अपील में संपोषित नहीं किया जा सकता है।

14. ऊपर चर्चा किए गए तथ्यों और परिस्थितियों में इस अपील को अनुज्ञात किया जाता है। सत्र विचारण सं॰ 343 वर्ष 1993 में विद्वान पंचम अपर सत्र न्यायाधीश, डालटेनगंज, पलामू, श्री अब्दुल समद द्वारा पारित दिनांक 22.5.2001 का दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दिनांक 23.5.2001 का दंडादेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी को उसके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी को पहले ही गृह विभाग के आदेश द्वारा दिनांक 19.10.2011 को निर्मुक्त कर दिया गया है, अत: निर्मुक्ति आदेश जारी करने की आवश्यकता नहीं है।

---

ekuuh; vkjh ckkuerkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

चक्रधर कुम्हार

cuke

मेसर्स बी॰ सी॰ सी॰ एल॰ एवं अन्य

L.P.A. No. 380 of 2013. Decided on 26th March, 2014.

श्रम एवं औद्योगिक विधि–सेवानिवृत्ति–जन्मतिथि–अपीलार्थी ने सेवा में प्रवेश करने के समय पर प्रबंधन के समक्ष एस॰ एल॰ सी॰ प्रस्तुत नहीं किया है–प्रत्यर्थी को सांविधिक फॉर्मों में उल्लिखित जन्म तिथि के मुताबिक सेवानिवृत्त किया गया था–अपीलार्थी ने शायद हेल्थ कार्ड, आदि में गलत जन्मतिथि प्रविष्ट करवाया था–फॉर्म बी॰ में अभिकथित प्रक्षेपांश को अधिमान नहीं दिया जा सकता था–एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेशों में दुर्बलता नहीं है–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज। (पैराएँ 7 से 11)

अधिवक्तागण.–Mr. Ashutosh Anand, For the Appellant; Mr. Ananda Sen, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–यह लेटर्स पेटेन्ट अपील डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6806 वर्ष 2011 में पारित दिनांक 9.8.2012 के आदेश के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसमें और जिसके द्वारा विद्वान एकल न्यायाधीश ने दिनांक 31.12.2011 को अपीलार्थी की अधिवर्षिता के आदेश में हस्तक्षेप करने से इनकार कर दिया।

2. अपीलार्थी को दिनांक 7.11.1991 के पत्र के तहत दिनांक 7.11.1991 को पीस रेटेड वर्कर ग्रुप I के रूप में प्रत्यर्थीगण द्वारा सेवा में नियुक्त किया गया था। अपीलार्थी के अनुसार, समस्त अभिलेखों में उसकी जन्मतिथि दिनांक 16.12.1961 के रूप में सम्यक रूप से प्रविष्ट की गयी थी। अक्टूबर, 2010 में नोटिस बोर्ड में वरीयता सूची प्रकाशित की गयी थी जिसमें अपीलार्थी की जन्मतिथि दिनांक 16.12.1951 के रूप में कथित की गयी थी। अपीलार्थी ने दिनांक 9.10.2010 के पत्र के तहत इस पर आपत्ति किया और इसको दिनांक 16.12.1961 के रूप में सुधारने के लिए अनुरोध किया। अपीलार्थी की शिकायत यह है कि प्रत्यर्थीगण ने गलत रूप से अपीलार्थी की जन्मतिथि को दिनांक 16.12.1951 के रूप में माना था और दिनांक 6.7.2011 के जारी अधिवर्षिता पत्र के मुताबिक उसको दिनांक 31.12.2011 को सेवानिवृत्त होने के लिए मजबूर किया। अपीलार्थी ने दिनांक 6.8.2011 को अपनी आपत्ति भी दाखिल किया किंतु कुछ नहीं किया गया है। अनिवार्य अधिवर्षिता के आदेश को चुनौती देते हुए अपीलार्थी ने डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 6806 वर्ष 2011 दाखिल किया और इसे दिनांक 9.8.2012 को यह अभिनिर्धारित करते हुए खारिज कर दिया गया था कि उस समय पर जब अपीलार्थी को पीस रेटेड कर्मकार के रूप में नियुक्त किया गया था, उसकी आयु 40 वर्ष कथित की गयी थी और परिणामस्वरुप उसकी सेवानिवृत्ति तिथि केवल दिनांक 31.12.2011 को है।

3. रिट याचिका की खारिजी के आदेश से व्यथित होकर, अपीलार्थी ने इस लेटर्स पेटेन्ट अपील को दाखिल किया है।

4. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश हेल्थ कार्ड, वेतनपर्ची, सेवा उद्धरण एवं अन्य दस्तावेजों, जो सारवान रूप से अपीलार्थी की जन्मतिथि को दिनांक 16 दिसंबर, 1961 के रूप में स्थापित करते हैं, को विचार में लेने में विफल रहे। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि विद्वान एकल न्यायाधीश विद्यालय निर्गम प्रमाण पत्र, जिसमें अपीलार्थी की जन्मतिथि दिनांक 16 दिसंबर, 1961 के रूप में उल्लिखित की गयी है, को भी विचार में लेने में विफल रहे हैं और प्रबंधन को ज्ञात कारणों से उन्होंने जन्मतिथि को दिनांक 16 दिसंबर, 1951 के रूप में परिवर्तित कर दिया है जिसने अपीलार्थी पर गंभीर प्रतिकूल प्रभाव डाला है और विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी द्वारा विश्वास किए गए दस्तावेजों को विचार में नहीं लिया था।

5. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि विद्वान एकल न्यायाधीश ने अपीलार्थी की जन्मतिथि में किए गए अभिकथित प्रक्षेपांश जो मूल फॉर्म बी॰ के कॉलम सं॰ 3 पर है को भी विचार में नहीं लिया था। यह निवेदन किया गया था कि मूल फॉर्म बी॰ समय के सभी बिंदुओं पर प्रत्यर्थीगण के कब्जे में था और यदि अपीलार्थी की जन्मतिथि के संबंध में कोई, प्रक्षेपांश फॉर्म बी॰ में किया गया है, प्रत्यर्थी प्रबंधन के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष निकाला जाना चाहिए था।

6. प्रत्यर्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री आनंदा सेन ने हमारा ध्यान सांविधिक फॉर्म कोयला खान भविष्य निधि फॉर्म और परिशिष्ट सी॰–कोयला खान पारिवारिक पेंशन योजना की ओर आकृष्ट किया है जिसमें अपीलार्थी की जन्मतिथि दिनांक 16 दिसंबर, 1951 के रूप में कथित की गयी है। विद्वान अधिवक्ता ने उन सांविधिक फॉर्मों को और समकालीन दस्तावेज अर्थात् उस समय के मेडिकल बोर्ड के रिपोर्ट जब अपीलार्थी ने सेवा ग्रहण किया जिसमें जन्मतिथि दिनांक 16 दिसंबर, 1951 के रूप में कथित की गयी है को भी निर्दिष्ट किया। विद्वान एकल न्यायाधीश ने सही प्रकार से अपीलार्थी की अधिवर्षिता तिथि दिनांक 31.12.2011 के रूप में मान्य ठहराया है।

7. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता के निवेदनों को सुना है। यद्यपि अपीलार्थी प्रतिवाद करता है कि विद्यालय निर्गम प्रमाण पत्र के मुताबिक उसकी जन्मतिथि दिनांक 16.12.1961 है, अपीलार्थी ने सेवा में प्रवेश करने के समय प्रबंधन के समक्ष विद्यालय निर्गम प्रमाण पत्र प्रस्तुत नहीं किया है। विद्वान

एकल न्यायाधीश ने रिट न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत विद्यालय निर्गम प्रमाण पत्र को प्रस्तुत नहीं किया है। मेडिकल बोर्ड के मत के मुताबिक, जिसे अपीलार्थी के परीक्षण पर उस समय दिया गया था जब उसने दिनांक 7 नवंबर, 1991 को सेवा ग्रहण किया था, परीक्षण के समय अपीलार्थी की आयु 40 वर्ष कथित की गयी थी। उपलब्ध समकालीन दस्तावेज के मुताबिक अपीलार्थी 40 वर्ष की आयु का था जब उसने दिनांक 7 नवंबर, 1991 को पदग्रहण किया।

8. जैसा प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा सही रूप से इंगित किया गया है, फॉर्म A कोयला खान भविष्य निधि फॉर्म में अपीलार्थी की जन्मतिथि दिनांक 16 दिसंबर, 1951 के रूप में कथित की गयी है। इसी प्रकार से, कोयला खान पारिवारिक पेंशन योजना में अपीलार्थी की जन्मतिथि दिनांक 16 दिसंबर, 1951 के रूप में कथित की गयी है। प्रत्यर्थीगण के प्राधिकारियों द्वारा इन समस्त सांविधिक फॉर्मों को रखा गया है। उन सांविधिक फॉर्मों में अपीलार्थी ने भी हस्ताक्षर किया है और तद्द्वारा अपनी जन्मतिथि दिनांक 16 दिसंबर, 1951 के रूप में अभिस्वीकृत किया है।

9. अन्य दस्तावेजों पर विश्वास करते हुए अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता प्रतिवाद करते हैं कि उन दस्तावेजों ने उसकी जन्मतिथि दिनांक 16 दिसंबर, 1961 के रूप में कथित की गयी है। जैसा- प्रत्यर्थीगण के विद्वान अधिवक्ता द्वारा सही रूप से प्रतिवाद किया गया है, अपीलार्थी ने शायद हेल्थ कार्ड, आदि में गलत जन्मतिथि प्रविष्ट करवाया होगा और वेतन पर्ची के प्रयोजन से गलत जन्मतिथि प्रस्तुत किया होगा अथवा उन दस्तावेजों में कुछ लिपिकीय गलती हो सकती थी, किंतु दस्तावेजों के सांविधिक फॉर्म A और B होने के नाते जिनमें अपीलार्थी ने स्वयं अपनी जन्मतिथि दिनांक 16 दिसंबर, 1951 के रूप में दर्ज करवाया है की दृष्टि में अपीलार्थी का प्रतिवाद कि उसकी जन्मतिथि दिनांक 16 दिसंबर, 1961 है, स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

10. हमने प्रत्यर्थी प्रबंधन द्वारा दाखिल प्रतिशपथ पत्र के साथ संलग्न फॉर्म B की छाया प्रतिलिपि का परिशीलन किया है। जन्मतिथि में कुछ प्रक्षेपांश है और सेवा समाप्ति/रोजगार छोड़ने की तिथि में कुछ प्रक्षेपांश है ताकि कॉलम सं॰ 3 में "16.12.1951" और कॉलम सं॰ 10 में 15.12.2011" पढ़ा जा सके। किंतु मात्र इसलिए कि कुछ प्रक्षेपांश है, प्रबंधन के विरुद्ध प्रतिकूल निष्कर्ष इस कारण से नहीं निकाला जा सकता है कि क्या ऐसा सुधार उस समय पर किया गया था जब दस्तावेज अर्थात् फॉर्म बी॰ अस्तित्व में आया। अन्य सांविधिक फॉर्मों अर्थात् कोयला खान भविष्य निधि फॉर्म और कोयला खान पारिवारिक पेंशन योजना को दृष्टि में रखते हुए, फॉर्म बी॰ में किए गए अभिकथित प्रक्षेपांश को अधिमान नहीं दिया जा सकता था।

11. हम विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश में दुर्बलता नहीं पाते हैं और तद्नुसार, लेटर्स पेटेन्ट अपील को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjh vkjh çlkn] U;k;efr

किशोर एक्का

cuke

झारखंड राज्य एवं एक अन्य

Cr.M.P. No. 2126 of 2012. Decided on 23rd January, 2014.

भारतीय दंड संहिता, 1860—धाराएँ 406, 467 एवं 468/34—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—छल एवं कूट रचना–संज्ञान–अनुदान और दान के रूप में प्राप्त सोसाइटी के विपुल

धन को दुर्विनियोजित करने का अभिकथन–याची को सोसाइटी की राशि दुर्विनियोजित करने में अभियुक्तगण के साथ दुरभिसंधि करता अभिकथित किया गया है–संज्ञान लेने वाले आदेश में हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है–आवेदन खारिज। (पैराएँ 17 एवं 18)

अधिवक्तागण.–Mr. B.M. Tripathy, For the Petitioner; A.P.P., For the State; Mr. Sumeet Gododia, For the O.P. No.2.

आदेश

यह आवेदन परिवाद मामला सं॰ 1917 वर्ष 2011 में न्यायिक दंडाधिकारी, प्रथम श्रेणी, राँची द्वारा पारित दिनांक 31.7.2012 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन याची के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 406, 420, 467, 468/34 के अधीन दंडनीय अपराध का संज्ञान लिया गया है।

2. परिवादी–विरोधी पक्षकार सं॰ 2 का मामला यह है कि परिवादी सिमडेगा के लोगों को शिक्षा देने में लगी पूर्त सोसाइटी है। यह सिमडेगा कैथोलिक डायोसीज के प्रशासनिक नियंत्रण के अधीन है। रेव॰ जोसेफ मिंज, अभियुक्त सं॰ 1, सिमडेगा डायोसीज का बिशप था। बिशप होने के नाते वह सोसाइटी का अध्यक्ष भी था और सोसाइटी का मुख्य कृत्यकारी था। वह दिनांक 10.4.2008 को अधिवर्षित हुआ। तत्पश्चात बिशप विनसेंट बरवा ने दिनांक 11.4.2008 को प्रभार लिया।

3. यह अभिकथित किया गया है कि उक्त रेव॰ जोसेफ मिज ने याची (अभियुक्त सं॰ 2) और अभियुक्त सं॰ 3 की मौनानुकूलता से सोसाइटी के विपुल धन, जिसे आम जनता से अनुदान और दान के रूप में प्राप्त किया गया था, का दुर्विनियोग किया।

4. इस संबंध में, यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तगण ने एक–दूसरे के साथ मौनानुकूलता में परिवादी सोसाइटी के नाम में दो बैंक खाता खोला। एक खाता, खाता सं॰ 6665, वर्ष 2006 में इंडियन ओवरसीज बैंक पुरुलिया रोड, राँची में खोला गया था। दूसरा बैंक खाता अभियुक्त सं॰ 1 द्वारा अधिवर्षित होने के बाद दिनांक 3.3.2009 को खाता सं॰ 39 के रूप में बैंक ऑफ इंडिया, झारखंड उच्च न्यायालय शाखा, राँची में खोला गया था। यद्यपि उन दोनों खातों को सोसाइटी के नाम में खोला गया था किंतु इन्हें अभियुक्त सं॰ 1 द्वारा चलाया जा रहा था और जो कोई भी संव्यवहार किया गया था, यह उसके निजी लाभ के लिए था। केवल तब जब परिवादी द्वारा खाता का विवरण प्राप्त किया गया था, यह जाना जा सका था कि विपुल दुर्विनियोग किया गया है। यह पता लगा था कि याची को 9.5 लाख रुपयों की राशि दी गयी थी। उसके अतिरिक्त, राशि जिसे इंडियन ओवरसीज बैंक के खाता में प्राप्त किया गया था अभियुक्त सं॰ 1 द्वारा इस याची और अन्य अभियुक्तगण की मौनानुकूलता से निकाल लिया गया था।

5. आगे यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्त सं॰ 1 ने कतिपय प्रशासनिक भवनों के निर्माण के लिए कुछ व्यक्तियों के साथ कपटपूर्ण संविदा किया था। याची उक्त करार के गवाह के रूप में हस्ताक्षर कर्ताओं में से एक था। समय के क्रम में, अपराध की कारिता के कारण समृद्धि बिल्डर ने मामला दर्ज किया था।

6. आगे यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तगण ने दस्तावेज कूटरचित करके स्वयं को सोसाइटी के अध्यक्ष के रूप में पेश किया और तब अन्य अभियुक्त से करार किया जिसके द्वारा याची

और अन्य अभियुक्तगण ने मुख्य भूमिका निभाया है। इस प्रकार, यह अभिकथित किया गया है कि अभियुक्तगण ने कूटरचना, न्यास के दांडिक भंग और छल का अपराध किया है।

7. ऐसे परिवाद पर जब पूर्वोक्तानुसार दिनांक 31.7.2012 के आदेश के तहत आपराधिक संज्ञान लिया गया था, इसे चुनौती दी गयी थी।

8. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री त्रिपाठी निवेदन करते हैं कि इस याची को जोसेफ मिंज जो समय के एक बिंदु पर सिमडेगा का बिशप था के साथ इस अभिकथन पर अभियुक्त बनाया गया था कि परिवादी सोसाइटी के नाम में दो बैंक खाता खोला गया था। अभियुक्तगण द्वारा उक्त खातों को चलाया जा रहा था, फिर भी यह अभिकथित किया गया है कि उक्त जोसेफ मिंज ने याची सहित अन्य अभियुक्तगण के साथ मौनानुकूलता में सोसाइटी के विपुल धन का दुर्विनियोग किया यद्यपि खाता चलाने में इस याची द्वारा निभायी गयी भूमिका के बारे में कोई अभिकथन बिल्कुल नहीं है।

9. आगे यह निवेदन किया गया है कि यह अभिकथित किया गया है कि याची जोसेफ मिंज और समृद्धि बिल्डर के बीच निष्पादित करार के हस्ताक्षरकर्ताओं में से एक था किंतु यह स्वयं में किसी सदोषता के बारे में नहीं कहता है। इसके अतिरिक्त, याची ने परिवादी और जोसेफ मिंज के विरुद्ध मामला दर्ज किया था क्योंकि उन्होंने याची और अन्य को धोखा देकर विपुल राशि संग्रहित किया था जब याची द्वारा यह पाया गया था कि धन कपटपूर्वक संग्रहित किया गया था और केवल तब याची को जोसेफ मिंज के साथ इस मामले में अभियुक्त बनाया गया है।

10. इन परिस्थितियों के अधीन, संज्ञान लेने वाला आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

11. परिवादी–विरोधी पक्षकार सं॰ 2 के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री गडोडिया निवेदन करते हैं कि दिनांक 11.4.2008 को सिमडेगा डायोसीज का प्रभार वर्तमान बिशप द्वारा लिए जाने के पहले अभियुक्त रेव॰ जोसेफ मिंज सिमडेगा के कैथोलिक डायोसीज का बिशप था और उस हैसियत में सोसाइटी का अध्यक्ष था।

12. प्रशासनिक अत्यावश्यकता के कारण शासी निकाय ने अपनी बैठक में रेव॰ जोसेफ मिंज को सोसाइटी के मुख्य कृत्यकारी के रूप में कृत्य करने के लिए प्राधिकृत किया किंतु वह प्राधिकृतकरण इस उपरिका के साथ था कि वह उस शक्ति का प्रयोग नहीं कर सकता है जो सोसाइटी और डायोसीज के हित के प्रतिकूल था। ऐसे प्राधिकृतकरण के कारण रेव॰ जोसेफ मिंज (अभियुक्त सं॰ 1) ने इस याची और अन्य अभियुक्तगण के मौनानुकूलता से अनेक संव्यवहार किया और तद्द्वारा अपने निजी लाभ के लिए विपुल राशि प्राप्त किया। किंतु, जब वर्तमान बिशप रेव॰ विनसेंट बरवा ने पूर्णरूपेण कृत्य करना शुरू किया, यह पता लगाया जा सका था कि रेव॰ जोसेफ मिंज ने किसी प्राधिकार के बिना अन्य व्यक्तियों के साथ अनेक संव्यवहार किया था और कूट रचना करके सोसाइटी के नाम में खाता खोला था।

13. इस संबंध में, यह निवेदन किया गया था कि जोसेफ मिंज को दिया गया प्राधिकृतकरण दिनांक 3.4.2009 को वापस ले लिया गया था, फिर भी उसने अनेक व्यक्तियों के साथ करार किया जो सोसाइटी के हित के प्रति हानिकारक था और याची उस करार के हस्ताक्षरकर्त्ताओं में से एक था यद्यपि उसके पास ऐसा करार करने का प्राधिकार नहीं था।

14. आगे यह निवेदन किया गया है कि यद्यपि मुख्य कृत्यकारी के रूप में कार्य करने का प्राधिकृतकरण अप्रिल, 2009 में प्रतिसंहृत कर लिया गया था, प्राधिकृतकरण से संबंधित दस्तावेज, जो

स्वीकृत रूप से नहीं था, के आधार पर खाता खोला गया था जो और इस प्रकार अभियुक्तगण ने झूठा और मनगढ़ंत दस्तावेज सृजित किया था।

15. आगे यह निवेदन किया गया था कि अन्य परिस्थितियाँ भी थी जो याची की जोसेफ मिंज के साथ मौनानुकूलता दर्शाती हैं।

16. पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता को सुनने पर यह प्रतीत होता है कि याची के अनुसार रेव॰ जोसेफ मिंज ने किसी प्राधिकार के बिना सोसाइटी के नाम में खाता खोला होगा और संव्यवहार किया होगा किंतु ऐसे कृत्य में याची को भूमिका निभाता हुआ कभी नहीं अभिकथित किया गया है और तद्द्वारा कूटरचना अथवा दुर्विनियोग का अपराध नहीं बनता है।

17. दूसरी ओर, विरोधी पक्षकार सं॰ 2 की ओर से अपनाया गया दृष्टिकोण यह है कि उक्त रेव॰ जोसेफ मिंज ने किसी प्राधिकार के बिना झूठे दस्तावेज पर दो खाता खोला था और कि उसने अनेक संव्यवहार किया था जो सोसाइटी के हित के प्रति हानिकारक था और संव्यवहारों में से एक में याची हस्ताक्षरकर्ताओं में से एक था यद्यपि उसे जानकारी थी कि रेव॰ जोसेफ मिंज के पास प्राधिकार नहीं है और आगे दृष्टिकोण यह है कि अभियुक्त सं॰ 1 ने याची और अन्य अभियुक्तगण की मौनानुकूलता से राशि का दुर्विनियोग किया है।

18. ऐसी स्थिति में, संज्ञान लेने वाले आदेश का अभिखंडन आवश्यक नहीं है। अत:, इस आवेदन को खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ ckueFkh] e[; U;k;kèkh'k ,o Jh pn'k[kj] U;k;efr

सरयू प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

L.P.A. No. 168 of 2013. Decided on 26th March, 2014.

सेवा विधि–वेतनमान–अपीलार्थीगण द्वारा दाखिल निवेदनों को अमान्य अभिनिर्धारित करते हुए विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के अभिखंडन के लिए अपील दाखिल की गयी–सेवानिवृत्ति के बाद 6500-10,500/- रुपयों के वेतनमान के प्रदान के लिए अपीलार्थीगण द्वारा प्रार्थना की गयी थी–अभिनिर्धारित, विद्वान एकल न्यायाधीश ने बिहार बोर्ड विविध नियमावली के नियम 37 एवं ट्रेजरी संहिता के अनेक प्रावधानों को ध्यान में लिया है और सही प्रकार से पाया है कि ये प्रावधान प्रासंगिक नहीं थे एवं अपीलार्थी के मामले का समर्थन नहीं करते थे–एल॰ पी॰ ए॰ खारिज।　　(पैराएँ 8 एवं 9)

अधिवक्तागण.–Mr. Bhaiya V. Kumar, For the Appellant; Mr. Bhola Nath Ojha, For the State.

आदेश

यह रिट याचिका दिनांक 1.1.1996 से दिनांक 30.11.1998 तक के प्रभाव से 6500/- 10,500/- रुपयों के पुनरीक्षित वेतनमान में पेंशन बकाया एवं अन्य सेवानिवृत्ति लाभों को निर्मुक्त करने के लिए प्रत्यर्थीगण को निर्देश इप्सित करते हुए अपीलार्थी द्वारा दाखिल की गयी है। रिट कार्यवाही में अपीलार्थी द्वारा वित्त आयुक्त, झारखंड द्वारा पारित दिनांक 27.5.2009 के आदेश का विरोध भी किया गया था। दिनांक 4.10.2012 के आदेश द्वारा रिट याचिका खारिज कर दी गयी थी और तद्द्वारा व्यथित होकर अपीलार्थी ने वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील दाखिल किया है।

2. मामले के संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी को दिनांक 2.8.1965 को 105-155/- रुपयों के वेतनमान में हजारीबाग समाहरणालय में निम्न श्रेणी लिपिक (एल॰ डी॰ सी॰) के पद पर नियुक्त किया गया था। अपीलार्थी को दिनांक 24.5.1976 के प्रभाव से उच्च श्रेणी लिपिक (यू॰ डी॰ सी॰) के पद पर प्रोन्नत किया गया था और वर्ष 1979 में उसे राँची खजाना में स्थानांतरित किया गया था। दिनांक 30.11.1998 को अधिवर्षिता की आयु प्राप्त करने के पहले अपीलार्थी को जूनियर सेलेक्शन ग्रेड और सीनियर सेलेक्शन ग्रेड भी दिया गया था। अपीलार्थी 1800-3300/- रुपयों के वेतनमान में अधिवर्षित हुआ। अपनी सेवानिवृत्ति के बाद अपीलार्थी ने दावा किया कि 'आवश्यकता आधारित पद' की दृष्टि में वह 6500-10500/- रुपयों के वेतनमान में वरीय लेखाकार के पद पर प्रोन्नत होने का हकदार था। अपीलार्थी ने अपना दावा इस आधार पर आधारित किया कि उससे कनिष्ठ अनेक व्यक्तियों अर्थात् लंकेश्वर राम, श्याम बिहारी लाल, जगरनाथ प्रसाद ठाकुर और कामेश्वर लाल दास को 6500-10500/- रुपयों का वेतनमान दिया गया था वैकल्पिक रूप से अपीलार्थी ने दावा किया कि यदि उसे वरीय लेखाकार के पद पर प्रोन्नति नहीं दी जाती है, तब भी उसके वेतनमान में विषमता से बचने के लिए उसका वेतनमान सुरक्षित किया जाना चाहिए। रिट कार्यवाही के दौरान, वित्त आयुक्त को पक्ष–प्रत्यर्थी के रूप में जोड़ा गया था और इस न्यायालय ने वित्त आयुक्त, झारखंड को अपीलार्थी के दावा पर विचार करने का निर्देश दिया। दिनांक 27.5.2009 के आदेश द्वारा वित्त आयुक्त, झारखंड द्वारा अपीलार्थी का दावा अस्वीकार कर दिया गया था और इस प्रकार, रिट न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी द्वारा दिनांक 27.5.2009 का आदेश आक्षेपित किया गया था।

3. विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित करते हुए कि अपीलार्थी के दावा का समर्थन करने के लिए अभिलेख पर सामग्री नहीं थी, रिट याचिका खारिज कर दिया। बिहार बोर्ड विविध नियमावली के नियम 37 और झारखंड खजाना संहिता के नियमों 4, 40 और 60 पर अपीलार्थी का विश्वास भी विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा मान्य नहीं पाया गया था। प्रत्यर्थीगण द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण को ध्यान में लेते हुए कि स्थान विशेष पर पद विशेष को आवश्यकता के अनुरुप मंजूर किया जाना होगा और राँची खजाना में वरीय लेखाकार का पद सृजित नहीं किया गया था, रिट याचिका गुणागुण रहित पायी गयी थी और तद्नुसार इसे खारिज कर दिया गया था।

4. हमने पक्षों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और अभिलेख पर मौजूद दस्तावेजों का परिशीलन किया है।

5. अपीलार्थी के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रतिवाद किया है कि प्रत्येक विभाग का एक अध्यक्ष होता है और खजाना कार्यालय की अध्यक्षता वरीय लेखाकार द्वारा की जाती है और (अपीलार्थी वरीयतम होने के नाते वरीय लेखाकार के रूप में काम कर रहा था जो पद 'आवश्यकता आधारित पद' है। यह निवेदन किया गया है कि खजाना अधिकारी ने दिनांक 23.10.2008 के पत्र के तहत अपर वित्त आयुक्त, वित्त विभाग, झारखंड सरकार से वरीय लेखाकार के उच्चतर वेतनमान अर्थात् 6500-10,500/- रुपयों के वेतनमान में भुगतान की मंजूरी के लिए अनुरोध किया। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया कि दिनांक 23.12.2008 का खजाना अधिकारी का पत्र स्पष्टतः प्रकट करता है कि दिनांक 1.4.1981 के पहले से ही वरीय लेखाकार का पद विद्यमान है और इसलिए, प्रत्यर्थीगण द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण कि राँची खजाना में वरीय लेखाकार का पद विद्यमान नहीं था, सरकारी परिपत्र के विपरीत है। पुनः, बिहार बोर्ड विविध नियमावली के नियम 37 और झारखंड खजाना संहिता के अनेक प्रावधानों पर विश्वास करते हुए अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया कि चूँकि वरीय लेखाकार के पद के अस्तित्व से इनकार नहीं किया जा सकता है, अतः अपीलार्थी राँची खजाना में कार्यरत वरीयतम लेखाकार होने के

नाते वरीय लेखाकार की श्रेणी में प्रोन्नति के हकदार था और इस प्रकार, उसे 6500-10,500/- रुपयों का वेतनमान दिया जाना चाहिए था। अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने दिनांक 28.3.2001 के पत्र को भी निर्दिष्ट किया।

6. उक्त के विरुद्ध, प्रत्यर्थीगण के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री भोलानाथ ओझा ने प्रतिवाद किया है कि एश्योर्ड करिअर प्रोग्रेशन (ए॰ सी॰ पी॰) योजना को दिनांक 9.8.1999 से प्रभाव में लाया गया था और अपीलार्थी ए॰ सी॰ पी॰ योजना के क्रियान्वयन के पहले ही दिनांक 30.11.1998 को सेवानिवृत्त हो गया और इस प्रकार वह ए॰ सी॰ पी॰ योजना के लाभ का हकदार नहीं था। यह निवेदन किया गया है कि अपीलार्थी से कनिष्ठ बताए गए अन्य व्यक्तियों को उनके सेवाकाल के दौरान कोई प्रोन्नति कभी नहीं दी गयी थी और इस प्रकार वे ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन धनीय लाभों के प्रदान के लिए हकदार थे और ऐसा होने के चलते अपीलार्थी को अधिक्रांत करने अथवा वेतन संरक्षण देने का प्रश्न नहीं है। आगे यह निवेदन किया गया है कि दिनांक 1.1.1996 के बाद राँची खजाना में 'आवश्यकता आधारित पद' की आवश्यकता नहीं थी जहाँ अपीलार्थी को लेखाकार के रूप में पदस्थापित किया गया था। यह निवेदन भी किया गया था कि राँची खजाना में वरीय लेखाकार का पद सृजित नहीं किया गया था।

7. दिनांक 28.3.2001 के पत्र जिस पर अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता ने विश्वास किया, का परिशीलन उपदर्शित करेगा कि केवल उन पदों को 'आवश्यकता आधारित पद' के रूप में उच्चतर वेतनमान में चिन्हित किया जा सकता है जिन्हें दिनांक 1.4.1981 के पहले उच्चतर वेतनमान मंजूर किया जा चुका था अथवा उन पदों को जिन्हें वित्त विभाग के पूर्वानुमोदन से सृजित किया गया था। दिनांक 23.10.2008 को अपर वित्त आयुक्त, वित्त विभाग को भेजी गयी खजाना अधिकारी की अनुशंसा भी प्रकट करती है कि केवल बिल संवीक्षण लिपिक और लेखाकार के पद को 'आवश्यकता आधारित पद' के रूप में माना गया था और वरीय लेखाकार का पद केवल प्रोन्नति का पद था। आगे यह प्रतीत होता है कि दिनांक 1.4.1981 के बाद वरीय लेखाकार का पद शेष नहीं था। उक्त पत्र में दिनांक 8.2.1999 के संकल्प के प्रति निर्देश किया गया है जिसके अधीन दिनांक 1.1.1996 के बाद पदों के पूर्व संरक्षण को समाप्त कर दिया गया है। स्वीकृत रूप से, अपीलार्थी दिनांक 30.11.1998 को सेवा से अधिवर्षित हुआ जबकि ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन लाभ दिनांक 9.8.1999 से प्रभावकारी बनाया गया था। प्रत्यर्थीगण ने विनिर्दिष्ट दृष्टिकोण अपनाया है कि वरीय लेखाकार का पद राँची खजाना में 'आवश्यकता आधारित पद' के रूप में मंजूर नहीं किया गया था। वित्त आयुक्त, झारखंड ने दिनांक 27.5.2009 के आदेश के तहत अपीलार्थी का दावा इस आधार पर अस्वीकार कर दिया कि अपीलार्थी को जूनियर सेलेक्शन ग्रेड और सीनियर सेलेक्शन ग्रेड में प्रोन्नति प्रदान की गयी थी और चूँकि वह ए॰ सी॰ पी॰ योजना के क्रियान्वयन के पहले ही दिनांक 30.11.1998 को सेवानिवृत्त हो गया, वह ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन लाभ का हकदार नहीं था। यह भी पाया गया है कि अपीलार्थी से कनिष्ठ अन्य व्यक्तियों को ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन लाभ प्रदान किया गया था क्योंकि उन्हें प्रोन्नति कभी नहीं दी गयी थी। वित्त आयुक्त ने यह भी पाया है कि दिनांक 1.1.1996 के पहले भी राँची खजाना में वरीय लेखाकार का पद नहीं था और दिनांक 1.1.1996 के बाद वरीय लेखाकार का 'आवश्यकता आधारित पद' मंजूर अथवा सृजित नहीं किया गया था।

8. पूर्वोक्त की दृष्टि में, हम अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता के प्रतिवाद में कोई सार नहीं पाते हैं कि चूँकि वरीय लेखाकार के पद के लिए 6500-10,500/- रुपयों का वेतनमान मंजूर किया गया है, अपीलार्थी वरीयतम लेखाकार के रूप में सेवानिवृत्त होने के नाते 6500-10500/- रुपयों के वेतनमान का हकदार था। विद्वान एकल न्यायाधीश ने बिहार बोर्ड विविध नियमावली के नियम 37 और झारखंड खजाना

संहिता के अनेक अन्य प्रावधानों को ध्यान में लिया है और सही प्रकार से पाया है कि बिहार बोर्ड विविध नियमावली और झारखंड खजाना संहिता के प्रावधान प्रासंगिक नहीं हैं और इस प्रकार अपीलार्थी के मामले का समर्थन नहीं करते हैं।

9. हम दिनांक 4.10.2012 के आक्षेपित आदेश में दुर्बलता नहीं पाते हैं और तद्नुसार, वर्तमान लेटर्स पेटेन्ट अपील खारिज किया जाता है।

---

ekuuh; vkjñ vkjñ çlkn] U;k;efr

झारखंड लोक सेवा आयोग, राँची

cuke

झारखंड राज्य

Cr. M.P. No. 46 of 2014. Decided on 7th March, 2014.

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 482—उत्तर पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा दिए गए निर्देश और आदेश वापस लेने के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा दाखिल आवेदन को अस्वीकार करने वाले आदेश के अभिखंडन के लिए आवेदन–विशेष न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर नहीं आए हैं कि जब तक उत्तर पुस्तिकाओं का पुनर्मूल्यांकन नहीं होगा, समुचित अन्वेषण नहीं हो सकता है–मार्गदर्शक सिद्धांतों में किसी प्रावधान की अनुपस्थिति में, परीक्षार्थियों के पास पुनर्मूल्यांकन का दावा अथवा मांग करने का अधिकार नहीं है–विशेष न्यायाधीश का आदेश अपास्त किया गया–आवेदन अनुज्ञात। (पैराएँ 16, 21 एवं 25)

निर्णयज विधि.–(2008)2 SCC 409—Referred; AIR 2000 SC 1731; 1981 Gau 18 (F.B.)—Relied.

अधिवक्तागण.–M/s A.K. Sinha, Sanjay Piprawal, For the Petitioner; Mr. Mokhtar Khan, For the CBI.

आदेश

यह आवेदन आर॰ सी॰ केस सं॰ 05 (A)/2012-AHD-R में विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, राँची द्वारा पारित दिनांक 23.4.2013 के आदेश के अभिखंडन के लिए दाखिल किया गया है जिसके द्वारा और जिसके अधीन न्यायालय ने झारखंड लोक सेवा आयोग (संक्षेप में जे॰ पी॰ एस॰ सी॰) को प्रथम संयुक्त सिविल सेवा परीक्षा की उत्तर पुस्तिकाओं का पुनर्मूल्यांकन करने का निर्देश दिया और साथ ही दिनांक 12.12.2013 के आदेश को भी चुनौती दी गयी है जिसके द्वारा दिनांक 23.4.2013 के आदेश को वापस लेने की जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ की प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी थी।

2. यह प्रतीत होता है कि इस न्यायालय ने डब्ल्यू॰ पी॰ (पी॰ आई॰ एल॰) सं॰ 3594 वर्ष 2011 एवं अन्य संबंधित मामलों में पारित दिनांक 14.6.2012 के अपने आदेश के तहत सी॰ बी॰ आई॰ को निगरानी पी॰ एस॰ केस सं॰ 23 वर्ष 2010 का अन्वेषण करने का निर्देश दिया जिसे इन अभिकथनों पर संस्थित किया गया था कि जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के तत्कालीन अध्यक्ष और जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के सदस्यों तथा साक्षात्कार बोर्ड के सदस्यों ने कतिपय व्यक्तियों जो द्वितीय सिविल सेवा परीक्षा में उपस्थित हुए थे को लाभ पहुँचाने के लिए कूटरचना, छल, दस्तावेज मिथ्या प्रमाणित करने, आदि का अपराध किया है। तद्नुसार, सी॰ बी॰ आई॰ ने निगरानी द्वारा दर्ज उक्त मामले का अन्वेषण किया। अन्वेषण के दौरान जब यह पता चला कि कुछ व्यक्तियों के मामले में अंकपत्रों को बदल दिया गया है और कि कुछ व्यक्ति वह अंक प्राप्त करने के हकदार नहीं थे जो दिए गए थे, विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰ के न्यायालय के समक्ष इस प्रभाव का आवेदन दाखिल किया गया था कि अनेक उम्मीदवारों की उत्तर पुस्तिकाओं पर

विभिन्न मूल्यांककों द्वारा पहले ही दिए गए अंकों को बाद में बढ़ाया गया था जिसे कुछ मूल्यांककों द्वारा स्वीकार भी किया गया है और उन्होंने यह भी स्वीकार किया है कि कुछ मामलों में अंक बढ़ाए गए हैं और, इसलिए, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के खास विशेषज्ञों, जिन्होंने तृतीय एवं चतुर्थ सिविल सेवा परीक्षा की उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन किया था, के पैनल द्वारा उत्तर पुस्तिकाओं को पुनर्मूल्यांकित करवाना अनिवार्य बन गया है और न कि उन मूल्यांककों द्वारा जिन्होंने प्रथम सिविल सेवा परीक्षा की उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन किया था ताकि मामले में न्यायोचित और तार्किक निष्कर्ष पर पहुँचा जा सके।

3. इन परिस्थितियों में, उस आवेदन के अधीन वर्णित मोडेलिटियों के अनुसार उत्तर पुस्तिकाओं को पुनर्मूल्यांकित करवाने के लिए अध्यक्ष, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰, राँची को निर्देश के लिए प्रार्थना की गयी थी। सफल उम्मीदवारों की उत्तर पुस्तिकाओं का पुनर्मूल्यांकन करवाने का निर्देश अध्यक्ष जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को देते हुए दिनांक 23.4.2013 के आदेश के तहत न्यायालय द्वारा वह प्रार्थना अनुज्ञात की गयी थी। बाद में, दिनांक 18.11.2013 को जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ की ओर से उसमें उक्त आदेश को वापस लेने की प्रार्थना करते हुए आवेदन दाखिल किया गया था क्योंकि कार्मिक, प्रशासनिक सुधार एवं राजभाषा विभाग, झारखंड सरकार द्वारा अनुमोदित सिविल सेवा परीक्षा की मुख्य परीक्षा से संबंधित मामले में जारी मार्गदर्शक सिद्धांत के खंड 13 की दृष्टि में जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ के लिए पुनर्मूल्यांकन करवाना अनुज्ञेय नहीं होगा बल्कि वह प्रावधान केवल पुनर्योगफल करने की अनुमति देता है। जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ की ओर से आगे की गयी आपत्ति यह है कि न्यायालय द्वारा पारित ऐसा कोई आदेश अन्वेषण में हस्तक्षेप करने के तुल्य होगा और इसलिए वह आदेश वापस लिए जाने योग्य है। किंतु, दिनांक 12.12.2013 के आदेश के तहत उसमें यह अभिनिर्धारित करते हुए वह प्रार्थना अस्वीकार कर दी गयी थी कि न्यायालय को अपना आदेश वापस लेने की शक्ति नहीं है। इस आवेदन में उन दो आदेशों को चुनौती दी गयी है।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता श्री ए॰ के॰ सिन्हा निवेदन करते हैं कि जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ संवैधानिक निकाय है और इसके विनियमन के अधीन परीक्षा संचालित की जाती है। जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा जारी मार्गदर्शक सिद्धांत के खंड 13 के मुताबिक केवल पुनर्योगफल निकालने के लिए और न कि उत्तर पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन के लिए प्रावधान बनाया गया है।

इस संबंध में यह निवेदन किया गया था कि मामलों में से एक में जब इस न्यायालय ने सिविल रिट आवेदन में पुनर्मूल्यांकन के लिए आदेश पारित किया था, उस आदेश को अंतरा-न्यायालय अपील के रूप में चुनौती दी गयी थी। इस न्यायालय की खंडपीठ ने इस तथ्य को ध्यान में लेने के बाद कि मार्गदर्शक सिद्धांत/नियम/परिपत्र के अधीन अंकों के पुनर्मूल्यांकन के लिए ऐसा कोई प्रावधान नहीं हैं, उस आदेश को अपास्त कर दिया। **प्रमोद कुमार श्रीवास्तव बनाम अध्यक्ष, बिहार लोक सेवा आयोग, पटना एवं अन्य, (2004)6 SCC 714,** मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उसमें यह अभिनिर्धारित करते हुए इसी सिद्धांत को अधिकथित किया गया है कि उत्तर पुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन के लिए किसी प्रावधान की अनुपस्थिति में परीक्षार्थियों के पास पुनर्मूल्यांकन का दावा अथवा मांग करने का अधिकार नहीं है।

5. अगला निवेदन यह है कि सी॰ बी॰ आई॰ को अन्वेषण करने की विपुल शक्ति है। ऐसी स्थिति में, यह विशेष न्यायाधीश के न्यायालय के पास जाने और न्यायालय द्वारा इस प्रकार का आदेश पारित करवाने के लिए सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से अति उत्साही कृत्य था और कि भले ही सी॰ बी॰ आई॰ की प्रार्थना पर न्यायालय द्वारा आदेश पारित किया गया है, वह निश्चय ही अन्वेषण में हस्तक्षेप के तुल्य होगा जबकि यह सुनिश्चित किया गया है कि न्यायालय अन्वेषण एजेंसी को अन्वेषण करने के तरीके के बारे में निर्देश नहीं दे सकता है। इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने **आर॰ सरला बनाम टी॰ एम॰ वेलू एवं अन्य, AIR 2000 SC 1731,** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है।

6. इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि जब उत्तर पुस्तिका के पुनर्मूल्यांकन के लिए कोई प्रावधान नहीं है, सी॰ बी॰ आई॰ को उत्तर पुस्तिका पुनर्मूल्यांकित करवाने के लिए निर्देश पाने के लिए न्यायालय के पास नहीं जाना चाहिए था और कि न्यायालय ने सी॰ बी॰ आई॰ की प्रार्थना अनुज्ञात करके अवैधता किया है।

7. इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता निष्पक्षत: निवेदन करते हैं कि जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ मामले के अन्वेषण में सी॰ बी॰ आई॰ के साथ पूरा सहयोग करेगा। सी॰ बी॰ आई॰ द्वारा अन्वेषण का जो भी ढंग अपनाया जाता है, सी॰ बी॰ आई॰ जिस किसी से अंकों का पुनर्मूल्यांकन करवाने का आशय रखेगा, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ अपना सहयोग देगा और कि समस्त पुस्तिकाओं जिनकी सी॰ बी॰ आई॰ को आवश्यकता होगी, दिया जाएगा और कि जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ किसी सामग्री को नहीं छुपाएगा जिनकी आवश्यकता सी॰ बी॰ आई॰ को अन्वेषण के लिए है और ऐसी स्थिति के अधीन, आक्षेपित आदेश अभिखंडित किए जाने योग्य है।

8. इसके विरुद्ध, सी॰ बी॰ आई॰ के विद्वान अधिवक्ता श्री मुख्तार खान निवेदन करते हैं कि जहाँ तक उत्तर पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन के लिए मार्गदर्शक सिद्धांतों के अधीन की गयी वर्जना से संबंधित निवेदन है, वह दांडिक कार्यवाही से संबंधित मामला नहीं है, बल्कि वह प्रभावी हो सकता है जहाँ तक सिविल कार्यवाही का संबंध है और, इसलिए, याची की ओर से किया गया कोई भी निवेदन स्वीकार किए जाने योग्य नहीं है।

9. सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से आगे किया गया निवेदन यह है कि अन्वेषण एजेंसी मामले के सत्य का पता लगाने के लिए कोई भी कदम उठा सकती है जिसे संहिता में विनिर्दिष्टत: वर्णित नहीं किया गया है और यदि वह कदम उठाया जाता है अथवा शक्ति का प्रयोग किया जाता है, इसे अवैध कभी नहीं कहा जा सकता है। इस संबंध में, विद्वान अधिवक्ता ने **अरविंद दास बनाम असम राज्य, AIR 1981 Gau 18 (FB),** मामले के पैराग्राफ 22 में किए गए संप्रेक्षण को निर्दिष्ट किया है। इन स्थिति के अधीन, यदि सी॰ बी॰ आई॰ सत्य पर आने के लिए अन्वेषण के मामले में आवश्यक सहमति पाने के लिए न्यायालय के पास गया, इसने अवैधता नहीं किया है।

10. आगे निवेदन यह है कि अन्य पक्ष का दृष्टिकोण यह है कि दंडाधिकारी द्वारा पारित आदेश अन्वेषण में हस्तक्षेप के तुल्य है किंतु इसे उस रूप में कभी नहीं माना जा सकता है क्योंकि न्यायालय ने अपने आदेश द्वारा केवल सत्य का पता लगाने में सी॰ बी॰ आई॰ की सहायता की है और, इसलिए, जो भी निर्णय उपर निर्दिष्ट किया गया है, वह इस मामले में स्वीकार्य नहीं है।

11. विद्वान अधिवक्ता आगे निवेदन करते हैं कि शक्ति जिसका प्रयोग दंडाधिकारी ने किया है, को प्रावधान जैसा दं॰ प्र॰ सं॰ की धारा 156 (3) में अंतर्विष्ट है के निबंधनानुसार प्रयोग किया जाता कहा जा सकता है, क्योंकि दंडाधिकारी को समुचित अन्वेषण सुनिश्चित करने की व्यापक शक्ति है और आदेश जिसे दंडाधिकारी द्वारा पारित किया गया है, समुचित अन्वेषण सुनिश्चित करने के दिशा में है क्योंकि केवल उस स्थिति में जब सी॰ बी॰ आई॰ उत्तर पुस्तिका का मूल्यांकन करवाएगा, अभियुक्तगण की सह-अपराधिता पायी जाएगी।

12. इस संबंध में विद्वान अधिवक्ता ने **सकिरी वसु बनाम उत्तर प्रदेश राज्य एवं अन्य, (2008)2 SCC 409,** में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट किया है। इस प्रकार, यह निवेदन किया गया था कि दंडाधिकारी द्वारा जो भी आदेश पारित किया गया है, वह बिल्कुल विधि के अनुरुप हैं और इसलिए इसमें हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है।

13. इस प्रकार, प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या इन तथ्यों और परिस्थितियों में दंडाधिकारी द्वारा पारित आदेश किसी अवैधता से पीड़ित है?

14. आरंभिक/मुख्य परीक्षा संचालित करने के लिए जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा सिलेबस जारी किया गया है। इसका भाग B मुख्य परीक्षा से संबंधित है। अध्याय 13 अनुबंधित करता है कि उम्मीदवार जो परीक्षा में उपस्थित हुए हैं परिणाम की घोषणा के 60 दिनों के भीतर अंकों के पुनर्योगफल निकालने के लिए आवेदन दाखिल कर सकते हैं।

15. याची की ओर से कथन किया गया है कि उत्तर पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन के लिए कोई प्रावधान नहीं है। सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से इस तथ्य का खंडन नहीं किया गया है। ऐसा प्रावधान होने की दृष्टि में, उत्तर पुस्तिका के मूल्यांकन के लिए पारित कोई आदेश उक्त प्रावधान के अनुकूल नहीं होगा।

16. इस संबंध में, मैं **प्रमोद कुमार श्रीवास्तव (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसमें अभिनिर्धारित किया गया था कि किसी प्रावधान की अनुपस्थिति में परीक्षार्थियों को पुनर्मूल्यांकन का दावा अथवा मांग करने का अधिकार नहीं है।

17. किंतु, सी॰ बी॰ आई॰ की ओर से दिया गया तर्क यह है कि सिविल कार्यवाही के मामले में और न कि दांडिक कार्यवाही के मामले में वर्जना होगी।

18. मैं इस प्रतिपादना से सहमत हो सकता हूँ कि अन्वेषण एजेंसी पर पुनर्मूल्यांकन करवाने के लिए वर्जना अथवा अवरोध नहीं हो सकता है। अभियुक्तगण की सदोषता का पता लगाने के लिए पुनर्मूल्यांकन करवाना भी अन्वेषण एजेन्सी की शक्ति के अंतर्गत है, यद्यपि विनियमन के अधीन यह वर्जना है किंतु सिविल कार्यवाही अथवा दांडिक कार्यवाही में न्यायालय द्वारा पारित आदेश अनुज्ञेय नहीं होगा जैसा सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उपर निर्दिष्ट मामले में अभिनिर्धारित किया गया है यद्यपि यह दांडिक कार्यवाही से संबंधित नहीं था।

19. चूँकि मैंने पहले ही अभिनिर्धारित किया है कि उत्तर पुस्तिकाओं के पुनर्मूल्यांकन के लिए अध्यक्ष, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ को निर्देश देते हुए ऐसे किसी आदेश को पारित करना न्यायालय की ओर से अनुज्ञेय नहीं था, मामले के अन्य पहलू पर विचार करने की आवश्यकता मुझे नहीं होगी कि क्या विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश हस्तक्षेप के तुल्य है या नहीं। फिर भी, मैं **सकिरी वसु (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसमें माननीय न्यायाधीशों ने संप्रेक्षित किया है कि दंडाधिकारी के पास ऐसा आदेश पारित करने की पर्याप्त शक्ति है जो अन्वेषण के लिए समुचित और न्यायोचित प्रतीत हो और कि यदि न्यायालय को यह प्रतीत होता है कि समुचित अन्वेषण नहीं किया गया है, वह ऐसा आदेश पारित कर सकता है।

20. इस प्रतिपादना पर विवाद नहीं है कि यदि दंडाधिकारी महसूस करता है कि अन्वेषण समुचित रूप से नहीं किया गया है, वह ऐसा आदेश पारित कर सकता है जिसे वह समुचित और योग्य समझता हो ताकि समुचित अन्वेषण किया जा सके।

21. वर्तमान मामले में, विशेष न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर नहीं आए हैं कि जब तक उत्तर पुस्तिका का पुनर्मूल्यांकन नहीं किया जाएगा, समुचित अन्वेषण नहीं हो सकता है बल्कि यह सी॰ बी॰ आई॰ का मत था।

22. आगे, मैं **अरबिन्द दास (ऊपर)** मामले में दिए गए निर्णय को निर्दिष्ट कर सकता हूँ जिसमें पैराग्राफ 22 में माननीय न्यायाधीशों ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया है:–

> *^^gekjk n< er g fd tgk lfofèk 'kfDr nrh g] ,lh 'kfDr foof{kr djrh g fd ml 'kfDr dk ç;kx dju d fy, leLr oèk dne mBk, tk ldr g ;fi mu dnek dk lfofèk e of.kr ugh fd;k x;k gA tgk fu;e cuku okyk çkfèkdkj dfri; çkfèkdkjh dk ykd pfj= dk dN Hkh dju dh 'kfDr nrk g] ,l çkfèkdkjh dk viu vfre dne e 'kfDr d ç;kx dk çHkko nu d fy, eè;orh dne mBku*

dh 'kfDr feyuh pkfg, vU;Fkk vfre 'kfDr ek;ki.k] migkli.k vkj vçHkkoh cu tk,xh tk fu;e cuku oky çkfèkdkjh dk vk'k; ugh gk ldrk FkkA

*;g fofuf'pr dju e fd lkfofèkd çkfèkdkjh }kjk nkok dh x;h 'kfDr lofèk }kjk vfHk0;Dr :i l çnÙk 'kfDr d vku"kfxd vfHkfuèkkfjr dh tk ldrh g] U;k;ky; dk u doy ;g n[kuk gkxk fd D;k lofèk d çkoèkkuk l ;fDr;Dr foo{kk }kjk 'kfDr ik;h tk ldrh g] cfYd ;g Hkh n[kuk gkxk fd D;k ,lh 'kfDr lofèk d çkoèkkuk d ç;ktu dk ijk dju d fy, vko';d g tk ,lh 'kfDr d ç;kx e çkfèkdkjh ij 'kfDr çnÙk djrh gA***

23. इसके पठन से यह प्रतीत होता है कि भले ही संविधि मौन है, उद्देश्य प्राप्त करने के लिए वैध कदम बिल्कुल उठाया जा सकता है।

24. यहाँ स्थिति कुछ भिन्न प्रतीत होती है। सी॰ बी॰ आई॰ की शक्ति पर विवाद नहीं है कि न्यायोचित और तार्किक निष्कर्ष पर आने के लिए यह पुनर्मूल्यांकन करवा सकता है किंतु उत्तर पुस्तिका मूल्यांकित करवाने के लिए अध्यक्ष, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ द्वारा जारी मार्गदर्शक सिद्धांत के विरुद्ध कहा जा सकता है। इन परिस्थितियों के अधीन, न्यायालय ने ऐसा आदेश पारित करके अवैधता किया है और तद्द्वारा दिनांक 23.4.2013 का आदेश अवैधता से पीड़ित है।

25. तद्नुसार, आर॰ सी॰ केस सं॰ 05(A)/2012-AHD-R में विशेष न्यायाधीश, सी॰ बी॰ आई॰, राँची द्वारा पारित दिनांक 23.4.2013 का आदेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है।

26. किंतु, जे॰ पी॰ एस॰ सी॰ न्यायालय में दिए गए वचन के मुताबिक सी॰ बी॰ आई॰ को समस्त आवश्यक दस्तावेज जिनकी आवश्यकता इसे हो सकती है को प्रदान करके और मूल्यांककों की सूची जिसे पाने का आशय सी॰ बी॰ आई॰ रख सकती है और ऐसी अन्य सूचना अथवा सामग्री जिनकी आवश्यकता सी॰ बी॰ आई॰ को हो सकती है, प्रस्तुत करके सी॰ बी॰ आई॰ के साथ पूरा सहयोग करेगी।

27. परिणामस्वरुप, यह आवेदन अनुज्ञात किया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkr dekj ,o vferkHk dekj xlrk] U;k;efrx.k

सहदेव मांझी

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (D.B.) No. 255 of 2004. Decided on 28th January, 2014.

सत्र विचारण सं॰ 347 वर्ष 2000 में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 1 जे॰ एस॰ आर॰, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 13.10.2003 की दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 14.10.2003 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 374—सौतेली माता की हत्या–दोषसिद्धि–एक अ॰ सा॰ के एकमात्र परिसाक्ष्य पर दोषसिद्धि का आदेश पारित किया गया–स्वतंत्र स्रोत से संपुष्टि की अनुपस्थिति में अ॰ सा॰ का साक्ष्य पूर्णतः विश्वसनीय नहीं है–अ॰ सा॰ के बयान को संपुष्ट करने के लिए अभिलेख पर कुछ भी मौजूद नहीं है–दोषसिद्धि का आदेश एवं दंडादेश अपास्त। (पैराएँ 10 एवं 11)

अधिवक्तागण.–Sri G.S. Prasad, For the Appellant; Sri Ravi Prakash, For the Respondent.

न्यायालय द्वारा.–यह अपील अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट, सं॰ 1, जमशेदपुर, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित क्रमश: दिनांक 13.10.2003 और दिनांक 14.10.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन उन्होंने अपीलार्थी को बुधनी देवी की हत्या करने के लिए भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध किया और उसको आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया और आगे उसको 5000/- रुपयों के जुर्माना का भुगतान करने का निर्देश दिया और जुर्माना के भुगतान के व्यतिक्रम में उसे आगे निर्देश दिया गया था कि अपीलार्थी तीन माह की अवधि का कठोर कारावास भुगतेगा।

2. संक्षेप में, सूचक (अ॰ सा॰ 3) के फर्दबयान के मुताबिक अभियोजन का मामला यह है कि दिनांक 5.3.1999 को वह अपने कमरे में सो रहा था जबकि उसकी सौतेली माता बुधनी देवी (मृतका) दूसरे कमरे में सो रही थी। उसने आगे कथन किया कि उस समय उसका पिता सहदेव माँझी कुछ अत्यावश्यक काम से गाँव जेहराटोली गया था। आगे यह कथन किया गया है कि उसका पिता मध्यरात्रि 12 बजे वापस आया और दरवाजा खटखटाया। यह कथन किया गया है कि जब मृतका ने दरवाजा खोलने में विलंब किया, अपीलार्थी क्रोधित हो गया और उसको गाली देने लगा। इस पर मृतका ने उसे गाली देने से मना किया, तब अपीलार्थी ने लाठी से उस पर प्रहार किया जिस कारण उसने पीठ, दोनों हाथों और दोनों पैरों पर उपहतियाँ प्राप्त किया और जमीन पर गिर गयी और छटपटाने लगी। प्रहार के कारण मृतका को अपनी जाँघ पर फ्रैक्चर उपहति आयी। यह कथन किया गया है कि कुछ समय बाद उसकी मृत्यु हो गयी। तब यह कथन किया गया है कि हल्ला सुनने के बाद निकट रहने वाले लोग आए और घटना देखा।

3. पूर्वोक्त बयान के आधार पर, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन मानगो पी॰ एस॰ केस सं॰ 229 वर्ष 1999 संस्थित किया गया और पुलिस ने अन्वेषण किया। यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण के दौरान पुलिस ने मृत शरीर का मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार किया। तत्पश्चात, इसे शव परीक्षण के लिए भेजा। आगे यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण अधिकारी ने घटनास्थल से कुछ वस्तुओं को जब्त किया और अभिग्रहण सूची तैयार किया। अन्वेषण पूरा करने के बाद पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। तब यह प्रतीत होता है कि विद्वान सी॰ जे॰ एम॰ द्वारा अपराध का संज्ञान लिया गया था। तत्पश्चात, मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द किया गया था क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारण योग्य था।

4. केस की प्राप्ति के बाद, इसे प्रथम अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, जमशेदपुर के फाइल में अंतरित किया गया था जिन्होंने दिनांक 1.6.2001 के अपने आदेश के तहत भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपीलार्थी के विरुद्ध आरोप विरचित किया और इसे उसको स्पष्ट किया जिसके प्रति उसने निर्दोष होने का अभिवचन किया और विचारण किए जाने का दावा किया।

5. यह प्रतीत होता है कि अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में कुछ छह गवाहों का परीक्षण किया था। अभियोजन ने प्रदर्श 1 (मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर गवाहों का हस्ताक्षर), प्रदर्श 2 (शव परीक्षण रिपोर्ट), प्रदर्श 3 (फर्दबयान), प्रदर्श 4 श्रृंखला (फर्दबयान पर पृष्ठांकन), प्रदर्श 5 (अभिग्रहण सूची पर हस्ताक्षर), प्रदर्श 6 (केस डायरी का पृष्ठ 16 से 24) और प्रदर्श 7 (मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट) अभिलेख पर लाया था। अवर न्यायालय ने अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद अपीलार्थी को पूर्वोक्तानुसार दोषसिद्ध और दंडादेशित किया। उसके विरुद्ध अपील दाखिल की गयी है।

6. अवर न्यायालय के निर्णय का विरोध करते हुए विद्वान न्यायमित्र श्री जी॰ एस॰ प्रसाद निवेदन करते हैं कि वर्तमान मामले में अभियोजन के मामले के समर्थन में विधिक साक्ष्य बिल्कुल नहीं हैं। वह आगे निवेदन करते हैं कि अ॰ सा॰ 1 अनुश्रुत गवाह है जबकि अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 4 पक्षद्रोही गवाह हैं। अ॰ सा॰ 5 डॉक्टर है और अ॰ सा॰ 6 अन्वेषण अधिकारी है। वह आगे निवेदन करते

हैं कि विद्वान अवर न्यायालय ने अ॰ सा॰ 3 जो पक्षद्रोही गवाह है के एकमात्र परिसाक्ष्य पर अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने में गंभीर अवैधता किया है। इस प्रकार, वह निवेदन करते हैं कि दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दंडादेश अपास्त किए जाने का दायी है।

7. विद्वान अपर ए॰ पी॰ पी॰ निवेदन करते हैं कि यद्यपि अ॰ सा॰ 3 पक्षद्रोही घोषित कर दिया गया है किंतु उसने अभियोजन मामले का समर्थन किया है, अत:, विद्वान अवर न्यायालय ने सही प्रकार से अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य के आधार पर अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया है।

8. निवेदनों को सुनने पर, हमने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है।

अ॰ सा॰ 5 डॉक्टर है जिन्होंने मृतका बुधनी देवी के मृत शरीर का शव परीक्षण किया और उसके शरीर पर कड़े एवं भोथरे पदार्थ द्वारा कारित कुल 9 शवपूर्व उपहतियों को पाया है। उन्होंने आगे मत दिया कि पूर्वोक्त उपहतियों के कारण मृतका की मृत्यु हुई। अ॰ सा॰ 5 का पूर्वोक्त विवरण मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट से पूरा समर्थन पाता है। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, हम निष्कर्षित करते हैं कि मृतका की मानव वध मृत्यु हुई है। अब विनिश्चयकरण के लिए प्रश्न उद्भूत होता है कि क्या अपीलार्थी ने वर्तमान अपराध किया है या नहीं?

9. अवर न्यायालय के अभिलेख से प्रकट होता है कि तथ्य के चार गवाह अर्थात् अ॰ सा॰ 1, अ॰ सा॰ 2, अ॰ सा॰ 3 और अ॰ सा॰ 4 हैं। अ॰ सा॰ 1 अनुश्रुत गवाह है और उसने स्पष्टत: कथन किया है कि उसने स्वयं अपनी आँखों से घटना नहीं देखा था। अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 4 पक्षद्रोही गवाह हैं और उन्होंने अभियोजन मामले का समर्थन नहीं किया है। अ॰ सा॰ 3 जो सूचक और अपीलार्थी का पुत्र है को भी पक्षद्रोही घोषित किया गया था क्योंकि उसने अभियोजन मामले का पूरा समर्थन नहीं किया है। अ॰ सा॰ 3 के साक्ष्य के परिशीलन से हम पाते हैं कि उसने अपने मुख्य परीक्षण के पैराग्राफ सं॰ 1 पर कथन किया था कि उसने घटना देखा था किंतु पैराग्राफ सं॰ 2 पर उसने स्पष्टत: कथन किया कि उसने प्रहार नहीं देखा था। इस प्रकार, यह प्रतीत होता है कि वह विभिन्न चरणों पर विभिन्न बयान दे रहा था। यह प्रतीत होता है कि विद्वान अवर न्यायालय ने अ॰ सा॰ 3 के एकमात्र परिसाक्ष्य पर अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया।

10. यह सुनिश्चित है कि एकमात्र चश्मदीद गवाह का साक्ष्य दोषसिद्धि का एकमात्र आधार बन सकता है यदि उसका साक्ष्य पूर्णत: विश्वसनीय, स्वीकार्य और विश्वासयोग्य है। जैसा उपर गौर किया गया है, वर्तमान मामले में, अ॰ सा॰ 3 का बयान पूर्णत: विश्वसनीय नहीं है क्योंकि कभी वह कथन करता है कि उसने घटना देखा था जबकि कभी वह कथन करता है कि उसने घटना नहीं देखा था। इस प्रकार, हमारे दृष्टिकोण में उसका एकमात्र परिसाक्ष्य स्वतंत्र स्रोत से किसी संपुष्टि की अनुपस्थिति में, अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने का आधार नहीं बन सकता है। वर्तमान मामले में, अभिलेख पर कोई अन्य सामग्री बिल्कुल नहीं लायी गयी है जो अ॰ सा॰ 3 के परिसाक्ष्य को संपुष्ट करे। इस प्रकार, हम पाते हैं कि विद्वान अवर न्यायालय ने अ॰ सा॰ 3 के एकमात्र परिसाक्ष्य के आधार पर अपीलार्थी को दोषसिद्ध करने में गंभीर अवैधता किया है। अत: आक्षेपित निर्णय संपोषित नहीं किया जा सकता है।

11. जैसा ऊपर चर्चा की गयी है, इन तथ्यों और परिस्थितियों में यह अपील अनुज्ञात की जाती है। सत्र विचारण सं॰ 347 वर्ष 2000 में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश, फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ 1, जे॰ एस॰ आर॰, पूर्वी सिंहभूम द्वारा पारित दिनांक 13.10.2003 का दोषसिद्धि का आक्षेपित निर्णय और दिनांक 14.10.2003 का दंडादेश एतद् द्वारा अपास्त किया जाता है। अपीलार्थी अर्थात् सहदेव माँझी को अपने विरुद्ध लगाए गए समस्त आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है। यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी अभिरक्षा में है, अत:, उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

ekuuh; Mhñ ,uñ mikè;k;] U;k;efr

ओरियेन्टल इंश्योरेंस कं॰ लि॰

cuke

श्रीमती वेणु कामकार एवं अन्य

AFOO No. 410 of 2006. Decided on 19th February, 2014.

दावा केस सं॰ 72 वर्ष 1996 में श्री आर॰ के॰ जुमनानी, बीसवें अपर न्यायिक आयुक्त-सह-मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, राँची द्वारा पारित दिनांक 2.8.2006 के निर्णय एवं अधिनिर्णय के विरुद्ध।

सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908—आदेश 6 नियम 1–अभिवचन–दुर्घटना दावा कार्यवाही–किसी पक्ष को अभिवचनों के परे साक्ष्य देने की अनुमति नहीं दी जाएगी किंतु न्यायालय की अनुमति से विशेष मामले में पक्ष साक्ष्य दे सकता है–अभिवचनों में आने वाले बयान अंतर्ग्रस्त विवाद्यक के तथ्यों को गठित अथवा उपदर्शित करते हैं और उसे पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य के आधार पर विनिश्चित किया जाना है–पक्षों को विवाद्यक के तथ्यों से संबंधित अपने अभिवचनों में सकारात्मक विवरण देना होगा–किसी पक्ष द्वारा अभिवचनों में दिए गए मनमौजी बयान पर अनन्य रूप से विश्वास करते हुए निश्चयात्मक निष्कर्ष नहीं दिया जा सकता है–आक्षेपित निर्णय एवं अधिनिर्णय अपास्त। (पैराएँ 14, 21 से 24)

अधिवक्तागण.–Mr. G.C. Jha, For the Appellant; M/s Nutan Sharma, N.K. Jaiswal, For the Respon. 1.

डी॰ एन॰ उपाध्याय, न्यायमूर्ति.–अपीलार्थी द्वारा यह विविध अपील दुर्घटना दावा सं॰ 72 वर्ष 1996 के संबंध में विद्वान न्यायिक आयुक्त-सह-मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, राँची द्वारा पारित दिनांक 2.8.2006 के निर्णय एवं अधिनिर्णय के विरुद्ध दाखिल किया गया है जिसके द्वारा दावेदारों प्रत्यर्थी सं॰ 1 से 4 को दिनांक 6.12.2003 से वास्तविक भुगतान की तिथि तक 6% वार्षिक दर पर सरल ब्याज के साथ 5,22,000/- रुपयों के मुआवजा का भुगतान करने का निर्देश दिया गया है। अधिकरण ने आगे अधिनिर्णीत राशि को वितरित करने का निर्देश दिया और अपीलार्थी को उक्त निर्णय की तिथि से साठ दिनों के भीतर सभी दावेदारों के नाम में उनके हिस्से के अनुसार चार पृथक चेकों का भुगतान करने का निर्देश दिया। उक्त मुआवजा राशि दावेदारों को पहले ही भुगतान किए जा चुके तदंतरिम मुआवजा से कटौती के अध्यधीन है। अपीलार्थी को वाहन स्वामी से उक्त राशि वसूल करने की अनुमति दी गयी है।

2. प्रत्यर्थीगण सं॰ 1 से 4 द्वारा दाखिल दावा आवेदन के अनुसार मामले के तथ्य ये हैं कि दिनांक 25.2.1988 को मृतक मंटू लाल कर्माकर, प्रत्यर्थी सं॰ 1 का पति, उर्दू पुस्तकालय, मेनरोड, राँची के निकट दुर्घटनाग्रस्त हुआ। रजिस्ट्रेशन सं॰ BPV 9019 वाले उल्लंघनकारी वाहन ने उक्त मंटू लाल कर्माकर को धक्का मारा जिसके परिणामस्वरुप उसे उपहतियाँ आयी और उसे सदर अस्पताल, राँची ले जाया गया था जहाँ से उसे नागरमल मोदी सेवा सदन ले जाया गया था जहाँ दिनांक 1.3.1988 को उसकी मृत्यु हो गयी। मामला हिंदपीढ़ी पुलिस थाना को रिपोर्ट किया गया था जहाँ हिंदपीढ़ी पी॰ एस॰ सं॰ 129 वर्ष 1988 दिनांक 25.2.1988 भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 279/337 के अधीन दर्ज किया गया था। पुलिस ने सम्यक अन्वेषण के बाद भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 279/338 के अधीन आरोप-पत्र सं॰ 29 वर्ष 1988 दिनांक 12.5.1988 (जी॰ आर॰ सं॰ 548 वर्ष 1988) दर्ज किया।

श्रीमती बेनू कर्माकर, मंटुलाल कर्माकर की विधवा ने अपनी और अपनी तीन अवयस्क पुत्रियों (प्रत्यर्थीगण सं॰ 2 से 4) की ओर से दिनांक 10.6.1996 को मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के

अधीन याचिका दाखिल करने का अधिकार रखते हुए नो–फॉल्ट दायित्व के आधार पर 50,000/- (पचास हजार) रुपयों का तदंतरिम अनुतोष पाने के लिए मोटर यान अधिनियम की धारा 140 के अधीन याचिका दाखिल किया जिसे मुआवजा केस सं॰ 72 वर्ष 1996 के रूप में दर्ज किया गया था। उक्त याचिका के अनुसार, मृतक एम॰ एल॰ कर्माकर को दिनांक 25.2.1988 को रजिस्ट्रेशन सं॰ BPV 9019 वाले उल्लंघन करने वाले वाहन द्वारा कारित धक्का के कारण मेन रोड, राँची पर हुई सड़क दुर्घटना में अनेक उपहतियाँ आयी। उक्त याचिका में उल्लंघन करने वाले वाहन के चालक को और बीमाकर्ता को भी विरोधी पक्षकार सं॰ 1 और 2 बनाया गया था। उक्त याचिका के लंबित रहने के दौरान दिनांक 4.1.2000 को प्रत्यर्थी दावेदार सं॰ 1 से 4 ने पाँच लाख रुपयों की सीमा तक मुआवजा प्रदान के लिए मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन एक अन्य याचिका दाखिल किया। यह प्रतिवाद किया गया था कि मृतक अपनी मृत्यु के समय पर हेवी इंजीनियरिंग कॉरपोरेशन (एच॰ ई॰ सी॰) का कर्मचारी था और उसकी आयु लगभग 33 वर्ष थी।

नोटिस के तामील के बाद, विरोधी पक्षकार उपस्थित हुए और कारण बताओ दाखिल किया। अपीलार्थी बीमा कंपनी ने भी मोटर यान अधिनियम की धारा 140 के अधीन दाखिल याचिका के विरुद्ध अतिरिक्त कारण बताओ दाखिल किया और आगे मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन दावेदारों द्वारा दाखिल याचिका के विरुद्ध विस्तृत कारण बताओ दाखिल किया।

3. विद्वान अधिकरण ने अभिवचनों पर विचार करने के बाद विवाद्यक विरचित किया, दस्तावेज ग्रहण किया और दोनों पक्षों की ओर से दिए गए साक्ष्य को दर्ज किया और अंत में आक्षेपित अधिनियम पारित किया जैसा उपर उपदर्शित किया गया है और इसलिए यह अपील दाखिल की गयी है।

4. बीमा कंपनी/अपीलार्थी ने आक्षेपित निर्णय और अधिनिर्णय का विरोध मुख्यत: इस आधार पर किया है कि दिनांक 25.2.1988 को हुई घटना में, जिसके लिए हिंदपीरी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129/1988 (जी॰ आर॰ सं॰ 548 वर्ष 1988 के तत्सम) दर्ज किया गया था, मंटू लाल कर्माकर (मृतक) के रूप में ज्ञात व्यक्ति ने कोई उपहति प्राप्त नहीं किया था और मृतक का नाम उक्त मामला अभिलेख में पूरी तरह अज्ञात है। वस्तुत:, उक्त दुर्घटना में किसी अशोक कुमार पोद्दार को उल्लंघन करने वाले वाहन सं॰ BPV 9019 के चालक के लापरवाह एवं उपेक्षापूर्ण चालन के कारण उपहतियाँ आयी थी। हवलदार सुरेन्द्र प्रसाद सिंह, बी॰ एम॰ पी॰ 11 जो तब उर्दू पुस्तकालय, मेन रोड, राँची के निकट प्रतिनियुक्त था द्वारा सूचना दर्ज की गयी थी। उक्त प्राथमिकी की संक्षिप्त विषय वस्तु यह है कि दिनांक 25.2.1988 को प्रात: लगभग 6 बजे रजिस्ट्रेशन सं॰ BPV 9019 वाला ट्रेकर डोरंडा की ओर से आ रहा था और इसे लापरवाही और उपेक्षा से चलाया जा रहा था और जब वाहन उर्दू पुस्तकालय, मेन रोड, राँची के निकट पहुँचा, इसने पैदल चलने वाले को धक्का मारा जिसके कारण उसे अपने पैर पर फ्रैक्चर की उपहति आयी और गिर गया। चालक वाहन पर अपना नियंत्रण खो बैठा जो डिवाइडर से टकराने के बाद पलट गया था। घायल ने अपना नाम अशोक कुमार पोद्दार प्रकट किया और उसे राहगीरों की मदद से सदर अस्पताल, राँची ले जाया गया था। उक्त हवलदार एस॰ पी॰ सिंह द्वारा दर्ज सूचना के आधार पर ट्रेकर के चालक के विरुद्ध दिनांक 25.2.1988 का हिंदपीड़ी केस सं॰ 129 वर्ष 1988 दर्ज किया गया था। सम्यक अन्वेषण के बाद चालक हरेन्द्र यादव के विरुद्ध दिनांक 12.5.1988 का आरोप–पत्र सं॰ 29 वर्ष 1988 दाखिल किया गया था।

कि मामले के संस्थापन की तिथि और आरोप–पत्र की दाखिल की तिथि के बीच उक्त हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 के संबंध में अन्वेषण अधिकारी के समक्ष न तो मृतक और न ही दावेदारों में से कोई उपस्थित हुआ था। मृतक मंटूलाल कर्माकर उक्त मामला अभिलेख से अजनबी है।

एम॰ एल॰ कर्माकर के मृत शरीर का शव परीक्षण उक्त हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129/1988 के संबंध में अथवा किसी अन्य मामले के संबंध में कभी नहीं किया गया था। यह दर्शाने के लिए उपहति रिपोर्ट नहीं है कि उक्त दुर्घटना में मृतक एम॰ एल॰ कर्माकर को अपने शरीर पर उपहति आयी थी। परिशिष्ट–3 के अनुसार, दावेदार बेनू कर्माकर ने स्वयं को मृतक एम॰ एल॰ कर्माकर की पत्नी होने का दावा करते हुए दिनांक 2.3.1988 को हिंदपीड़ी पी॰ एस॰, राँची के प्रभारी अधिकारी के समक्ष हिंदी में टंकित सूचना उसमें यह प्रकट करते हुए दर्ज किया था कि दिनांक 27.2.1988 को उसके पति मंटू लाल कर्माकर को मेन रोड, राँची में सड़क दुर्घटना में उपहति आयी थी और उल्लंघन करने वाला वाहन BPV 9019 था। एम॰ एल॰ कर्माकर को सदर अस्पताल ले जाया गया था और इलाज के बाद उसे किशोरगंज अवस्थित उसके घर भेजा गया था। दिनांक 1.3.1988 को जब उक्त एम॰ एल॰ कर्माकर की दशा बिगड़ गयी, उसे नागरमल मोदी सेवा सदन, राँची ले जाया गया था जहाँ रात्रि लगभग 10-11 बजे उसकी मृत्यु हो गयी। (परिशिष्ट–3) दावेदार बेनू कर्माकर ने दिनांक 27.12.2000 को आरक्षी अधीक्षक, ग्रामीण, राँची को भी सूचित किया। उस सूचना में भी घटना की तिथि दिनांक 27.2.1988 उपदर्शित की गयी है। अपीलार्थी ने समस्त दावेदारों द्वारा हस्ताक्षरित हस्तलिखित पत्र भी संलग्न किया जो भी घटना की तिथि दिनांक 27.2.1988 उपदर्शित करता है।

5. कि दावेदारों ने सुखदेव नगर पी॰ एस॰, राँची के प्रभारी अधिकारी द्वारा दिया गया इस प्रभाव का प्रमाण पत्र भी प्रस्तुत किया था कि मंटू लाल कर्माकर, पुत्र जीत लाल कर्माकर को सड़क दुर्घटना में उपहति आयी थी जिसके लिए भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 279/337 के अधीन दिनांक 25.2.1988 का हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 दर्ज किया गया था। यह प्रतिवाद किया गया है कि सुखदेव नगर पी॰ एस॰ के प्रभारी अधिकारी को मृत्यु प्रमाण पत्र जारी करने का अधिकार नहीं था और वह भी उस मामले में जो हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ की अधिकारिता के अधीन आता था (परिशिष्ट–4)। परिशिष्ट 4/1 को निर्दिष्ट करते हुए यह इंगित किया गया था कि एम॰ एल॰ कर्माकर, पुत्र जीतू कर्माकर को दिनांक 27.2.1988 को उसके इलाज के लिए सदर अस्पताल, राँची लाया गया था और सं॰ 2167/(17) के तहत प्रविष्टि की गयी थी।

6. प्रत्यर्थी दावेदारों ने नागरमल मोदी सेवा सदन द्वारा जारी मृत्यु प्रमाण पत्र प्रस्तुत किया था जिसके अनुसार दिनांक 1.3.1988 को एम॰ एल॰ कर्माकर की मृत्यु हो गयी थी। उक्त अस्पताल (नागरमल मोदी सेवा सदन) में भरती की तिथि उसमें उपदर्शित नहीं की गयी है।

7. अपीलार्थी ने पूर्वोक्त दस्तावेजों और अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया है कि विद्वान अधिकरण ने पुलिस अधिकारी द्वारा जारी मृत्यु प्रमाण पत्र पर विश्वास करने में गलती किया है जो स्वीकृत रूप से ऐसा करने के लिए प्राधिकृत नहीं है। अभिलेख पर शव परीक्षण रिपोर्ट नहीं लाया गया था। हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 से संबंधित प्राथमिकी और आरोप–पत्र उक्त घटना में किसी व्यक्ति की मृत्यु प्रकट नहीं करते थे। वस्तुतः, रिपोर्ट और प्राथमिकी उपदर्शित करता है कि किसी अशोक कुमार पोद्दार ने उपहतियाँ पायी थी और पुलिस द्वारा उसका परीक्षण किया गया था और आरोप–पत्र में उसे गवाह के रूप में उद्धृत किया गया था।

8. यह कहना गलत है कि अपीलार्थी बीमा कंपनी ने स्वीकार किया था कि मंटूलाल कर्माकर की मृत्यु सड़क दुर्घटना जो दिनांक 25.2.1988 को हुई थी में उसको आयी उपहतियों के कारण हो गयी जिसके लिए हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 दर्ज किया गया था। अपीलार्थी ने विवाद्यक में अंतर्ग्रस्त समस्त तथ्यों को चुनौती दिया था और मोटर यान अधिनियम की धारा 140 के अधीन दाखिल याचिका और मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन दाखिल याचिका के विरुद्ध दाखिल कारण बताओ के समर्थन में दस्तावेजों को प्रस्तुत किया था और साक्ष्य दिया था। आगे यह प्रतिवाद किया गया है कि यह प्रत्यर्थीगण का स्वीकृत मामला है कि घटना वर्ष 1988 में हुई थी किंतु मोटर यान अधिनियम

की धारा 140 के अधीन दावा आवेदन लगभग आठ वर्ष बाद वर्ष 1996 में दाखिल किया गया था और धारा 166 के अधीन याचिका वर्ष 2000 में दाखिल की गयी थी और याचिकाओं को दाखिल करने में ऐसे विलंब के विरुद्ध कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है। आवेदन में दावेदारों द्वारा दिए गए बयान को प्राथमिकी द्वारा अथवा आरोप-पत्र द्वारा अथवा उपहति रिपोर्ट द्वारा अथवा शव परीक्षण रिपोर्ट द्वारा संपुष्ट नहीं किया गया था और, इस प्रकार, विद्वान अधिकरण के निष्कर्ष ऐसे तथ्य पर आधारित हैं जो अभिलेख पर उपलब्ध नहीं है। आक्षेपित निर्णय एवं अधिनिर्णय अत्यंत गलत है और, इसलिए, अपास्त किए जाने के दायी हैं।

9. दूसरी ओर, प्रत्यर्थी दावेदारों के विद्वान अधिवक्ता ने तर्क का जोरदार विरोध किया है और विद्वान अवर न्यायालय में अपीलार्थी द्वारा दाखिल अतिरिक्त कारण बताओ को निर्दिष्ट करते हुए निवेदन किया है कि अपीलार्थी ने घटना स्वीकार किया था और इसलिए वे इस चरण पर इस अपील में इसी विवाद्यक को नहीं उठा सकते हैं। चश्मदीद गवाह लक्ष्मण विश्वकर्मा का साक्ष्य अत्यन्त स्पष्ट है कि एम॰ एल॰ कर्माकर को दिनांक 25.2.1988 को उर्दू पुस्तकालय, मेन रोड, राँची के निकट सड़क दुर्घटना में उपहति आयी थी और उल्लंघन करने वाले वाहन का नंबर BPV 9019 था। नागरमल मोदी सेवा सदन द्वारा जारी मृत्यु प्रमाण पत्र स्पष्टत: दर्शाता है कि मंटूलाल कर्माकर को तीन दिन पहले हुई सड़क दुर्घटना में उपहति आयी थी और दिनांक 1.3.1988 को उसकी मृत्यु हो गयी। सुखदेव नगर पी॰ एस॰ के प्रभारी अधिकारी ने एम॰ एल॰ कर्माकर की मृत्यु, जो सड़क दुर्घटना में हुई जिसके लिए हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 दर्ज किया गया था, के संबंध में प्रमाण पत्र भी दिया था। जी॰ आर॰ रजिस्टर की प्रति भी उपदर्शित करती है कि दुर्घटना जो मेन रोड, उर्दू पुस्तकालय, राँची के निकट हुई थी के लिए दो सूचनाएँ दर्ज की गयी थी। आगे यह प्रतिवाद किया गया था कि बेनू कर्माकर बंगला बोलने वाली महिला है और उसे बहुत कम हिंदी आती है और इसलिए वह नहीं जानती है कि पुलिस द्वारा क्या सूचना दर्ज की गयी थी और उसने केवल हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ के प्रभारी अधिकारी और ग्रामीण एस॰ पी॰ राँची के समक्ष दाखिल याचिका के नीचे अपना हस्ताक्षर किया था।

10. विद्वान अधिवक्ता ने यह निवेदन भी किया है कि अपीलार्थी बीमा कंपनी संपूर्ण मुआवजा राशि का भुगतान करने की दायी है और दायित्व पुराने मोटर यान अधिनियम के मुताबिक पचास हजार रुपयों की सीमा तक निर्बंधित नहीं है। विद्वान अधिकरण ने सही प्रकार से अपीलार्थी को मुआवजा राशि का भुगतान करने का दायी अभिनिर्धारित किया है और इस अपील में गुणागुण नहीं है जो खारिज किये जाने की दायी है।

11. मैंने अपील परिशिष्टों के मेमो, आक्षेपित निर्णय एवं अधिनिर्णय, अवर न्यायालय अभिलेख और दोनों पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य एवं दस्तावेजों का परिशीलन किया है। इस अपील में अंतर्ग्रस्त विवाद्यकों पर निष्कर्षों पर चर्चा करने के पहले मैं उन दस्तावेजों को निर्दिष्ट करना चाहूँगा जो विवादित नहीं है अथवा जिन्हें संबंधित पक्षों द्वारा स्वीकार किया गया है।

(i) दावेदारों ने मोटर यान अधिनियम की धारा 140 के अधीन और धारा 166 के अधीन भी अधिकरण के समक्ष दावा आवेदनों को उसमें यह कथन करते हुए दाखिल किया था कि मृतक मंटूलाल कर्माकर की मृत्यु सड़क दुर्घटना में हुई जो दिनांक 25.2.1988 को उर्दू पुस्तकालय, मेन रोड, राँची के निकट हुई थी जिसके लिए दिनांक 25.2.1988 को रजिस्ट्रेशन सं॰ BPV 9019 वाले उल्लंघन करने वाले वाहन के चालक के विरुद्ध भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 279/337 के अधीन दिनांक 25.2.1988 का हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ सं॰ 129 वर्ष 1988 दर्ज किया गया था।

(ii) हिंदीपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 के संबंध में दाखिल दिनांक 12.5.1988 के आरोप-पत्र सं॰ 29 की प्रमाणित प्रति जिसके अनुसार भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 279/338 के अधीन अभियुक्त चालक हरेन्द्र यादव के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया गया था (प्रदर्श 2)। उक्त आरोप-पत्र

के आधार पर दिनांक 23.5.1988 को धारा 279/338 के अधीन विद्वान सी॰ जे॰ एम॰ द्वारा संज्ञान लिया गया था। (प्रदर्श 1)।

(iii) सुखदेव नगर पी॰ एस॰, राँची के प्रभारी अधिकारी द्वारा जारी मंटूलाल कर्माकर का मृत्यु प्रमाण पत्र (प्रदर्श 3)

(iv) मंटूलाल कर्माकर का आय प्रमाण पत्र (प्रदर्श 4)

(v) दिनांक 25.2.1988 के हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 (जी॰ आर॰ सं॰ 548 वर्ष 1988) की प्राथमिकी की प्रति (अपील मेमो का परिशिष्ट 1)

(vi) घटना जो दिनांक 27.2.1988 को हुई थी जिसके लिए दावेदार बेनू कर्माकर ने दिनांक 2.3.1988 को हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ के प्रभारी अधिकारी के समक्ष सूचना दर्ज किया था के संबंध में सूचना की प्रति (परिशिष्ट 3 श्रृंखला)

(vii) दिनांक 27.2.1988 की घटना जिसमें मंटूलाल कर्माकर को उपहति आयी थी के संबंध में दावेदार बेनू कर्माकर, मंटूलाल कर्माकर की विधवा, द्वारा ग्रामीण एस॰ पी॰, राँची को भेजी गयी सूचना की प्रति (परिशिष्ट 3 श्रृंखला)

(viii) घटना जो दिनांक 27.2.1988 को हुई जिसमें मंटूलाल कर्माकर को उर्दू पुस्तकालय, मेन रोड, राँची के निकट रजिस्ट्रेशन सं॰ BPV 1920 *(sic* BPV 9019?) वाले वाहन द्वारा उसको कारित धक्के के कारण उपहतियाँ आयी थी को प्रकट करते हुए समस्त दावेदारों द्वारा हस्ताक्षरित हस्तलिखित पत्र।

(ix) यह उपदर्शित करते हुए कि मंटूलाल कर्माकर, पुत्र जीतलाल कर्माकर, को दिनांक 27.2.1988 को प्रात: लगभग 8 बजे घायल दशा में सदर अस्पताल लाया गया था और प्रात: 8 से रात्रि 12 बजे के बीच इलाज किया गया था, सदर अस्पताल द्वारा रखे गए रजिस्टर में प्रविष्टि (परिशिष्ट 41)।

12. दावेदारों/प्रत्यर्थियों ने अपीलार्थी बीमा कंपनी द्वारा दाखिल अतिरिक्त कारण बताओ के पैरा 1 पर विश्वास किया है और जोरदार निवेदन किया है कि यह उनकी ओर से ''स्वीकरण'' था कि मंटूलाल दिनांक 25.2.1988 को दुर्घटनाग्रस्त हुआ और दिनांक 1.3.1988 को उसकी मृत्यु हो गयी और इसलिए अपीलार्थी इस अपील में इस माननीय न्यायालय के समक्ष इसी विवाद्यक को नहीं उठा सकता है। इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए, यह समझना आवश्यक है कि अभिवचन क्या है, विवाद्यकग्रस्त तथ्य क्या है, प्रासंगिक तथ्य क्या है और तब स्वीकरण क्या होगा।

13. सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश VI निम्नलिखित परिकल्पित करता है:–

1. ***vfHkopu-*** *&^^vfHkopu** l okni= ;k fyf[kr dFku vfHkçr gkxkA*

2. ***vfHkopu e rkfRod rF;k dk] u fd lk{; dk] dFku gkxk-*** *&(1) gj vfHkopu e mu rkfRod rF;k dk] ftu ij vfHkopu dju okyk i{kdkj] ;FkkfLFkfr] viu nko ;k viuh çfrj{kk d fy, fuHkj djrk g vkj doy mu rF;k dk] u fd mI lk{; dk ftl d }kjk o lkfcr fd, tku g] lf{klr dFku vUrfo"V gkxkA*

(2) gj vfHkopu vko';drkulkj ijkvk e foHkDr fd;k tk,xk] tk ;FkkØe l[;kfdr fd, tk,xA gj vfHkdFku lfoèkkulkj iFkd] ijk e fd;k tk,xkA

*(3) vfHkopu e rkjh[k] jkf'k;k vkj l[;k, vdk vkj 'kCnk e Hkh vfHk0;Dr dh tk,xhA***

14. अभिवचनों में दिए गए बयानों को मौखिक अथवा दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा सिद्ध करने की आवश्यकता होती है। यह विधि का सुनिश्चित सिद्धांत है कि किसी पक्ष को अभिवचनों के परे साक्ष्य

देने की अनुमति नहीं दी जाएगी, किंतु विशेष मामले में न्यायालय की अनुमति से पक्ष ऐसा कर सकता है। अभिवचनों में आने वाले बयान विवाद्यक में अंतर्ग्रस्त तथ्य गठित अथवा उपदर्शित करते हैं और इन्हें विवाद्यक में तथ्यों से संबंधित अपने बयानों के समर्थन में पक्षों द्वारा दिए गए साक्ष्य के आधार पर विनिश्चित किया जाना है।

यहाँ वर्तमान मामले में, दावेदारों के अभिवचन ये हैं कि मृतक मंटूलाल कर्माकर को सड़क दुर्घटना में जो दिनांक 25.2.1988 को हिंदपीड़ी पुलिस थाना की अधिकारिता के अंतर्गत उर्दू पुस्तकालय, मेन रोड, राँची के निकट उपहतियाँ आयी जिसके लिए हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 दर्ज किया गया था, किंतु दावेदारों द्वारा दाखिल आवेदन में दिया गया बयान हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 से संबंधित प्राथमिकी से समर्थन नहीं पाता था; बल्कि प्राथमिकी में किया गया प्रतिवाद उपदर्शित करता है कि उक्त घटना में किसी अशोक कुमार पोद्दार को अपने पैर पर उपहति आयी थी और हवलदार एस॰ पी॰ सिंह, बी॰ एम॰ पी॰ 11 द्वारा दर्ज सूचना के आधार पर भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 279/337 के अधीन मामला दर्ज किया गया था। उसी मामले में भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 279/338 के अधीन आरोप-पत्र दाखिल किया गया था जिसके आधार पर मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा संज्ञान लिया गया था। अतः, हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 (जी॰ आर॰ सं॰ 548 वर्ष 1988) से संबंधित मामला अभिलेख प्रकट नहीं करता था कि मंटूलाल कर्माकर के रूप में नामित किसी व्यक्ति ने उसी घटना में कभी कोई उपहति प्राप्त किया था। पुनः मैं कहना चाहूँगा कि विवाद्यक के तथ्य से संबंधित अभिवचनों में दिए गए बयानों को मौखिक अथवा दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा सिद्ध किया जा सकता है। मौखिक साक्ष्य वह साक्ष्य है जिसे गवाह द्वारा व्यक्तिगत रूप से देखा जाता है अथवा किसी अन्य व्यक्ति जिसके पास घटना के बारे में जानकारी है या थी से उसको दी गयी थी या विवाद्यक में तथ्यों के संबंध में सूचना। यदि विवाद्यक तथ्य अथवा प्रासंगिक तथ्यों से संबंधित अभिवचनों में दिए गए बयानों या दस्तावेजों पर विश्वास किया जाता है, उस दस्तावेज को विधि के अनुरुप सिद्ध करना होगा और केवल तब मामले में न्यायोचित निष्कर्ष/निर्णय पर आने के लिए उक्त दस्तावेज का पठन साक्ष्य में किया जाएगा। यहाँ वर्तमान मामले में दावेदारों ने हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 के तहत दिनांक 25.2.1988 को दर्ज प्राथमिकी; दाखिल किए गए आरोप पत्र और लिए गए संज्ञान पर विश्वास किया है। किंतु ये दस्तावेज समर्थन नहीं करते हैं कि मंटूलाल कर्माकर को उक्त घटना में उपहति आयी थी।

दावेदारों ने यह अभिवचन भी किया है कि मंटूलाल कर्माकर द्वारा उपहति प्राप्त करने के बाद उसे दिनांक 25.2.1988 को इलाज के लिए सदर अस्पताल ले जाया गया था किंतु इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए अभिलेख पर मेडिकल रिपोर्ट नहीं लाया गया है। इसके विपरीत, अपीलार्थी ने अभिलेख पर परिशिष्ट 4/1 लाया है जो दर्शाता है कि मंटूलाल कर्माकर को दिनांक 27.2.1988 को उसके इलाज के लिए सदर अस्पताल लाया गया था और प्रविष्टि सं॰ 2167 (17) के तहत प्रातः 8 से 12 बजे के बीच उसका इलाज किया गया था।

15. दावेदारों ने मौखिक साक्ष्य देकर विवाद्यक में तथ्यों को सिद्ध करने का प्रयास भी किया है और लक्ष्मण विश्वकर्मा अ॰ सा॰ 2 जो उनके अनुसार चश्मदीद गवाह है का साक्ष्य भी निर्दिष्ट किया गया है। उक्त गवाह के बयान (पैरा 1) के अनुसार दिनांक 25.2.1988 को प्रातः लगभग 11 बजे जब वह बाजार की ओर जा रहा था और सड़क पार कर रहा था, उसने हटिया की ओर से आता ट्रेकर देखा था जिसे लापरवाही और उपेक्षा से चलाया जा रहा था और इसने मंटूलाल कर्माकर को धक्का मारा जिसके परिणामस्वरुप वह गिर गया और उपहति आयी। उल्लंघन करने वाले वाहन को पुलिस द्वारा पकड़ा गया था। मंटूलाल कर्माकर को इस गवाह द्वारा राहगीरों की मदद से सदर अस्पताल ले जाया गया था। अस्पताल

में पुलिस द्वारा मंटूलाल कर्माकर का बयान दर्ज किया गया था और तत्पश्चात पुलिस ने उसे उसके घर पहुंचा दिया था। अपने प्रति परीक्षण में, वह कहता है कि वह अस्पताल में उल्लंघन करने वाले वाहन का नंबर जान सका था और केवल घटना की तिथि पर वह मंटूलाल कर्माकर का नाम जान पाया था।

अ॰ सा॰ 2 का मौखिक साक्ष्य सदर अस्पताल, राँची के चिकित्सीय साक्ष्य से अथवा हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 के संबंध में दर्ज प्राथमिकी से समर्थन नहीं पाता है। अत:, यह बयान कि मंटूलाल कर्माकर को अपनी मृत्यु की ओर ले जाने वाली दिनांक 25.2.1988 की सड़क दुर्घटना में उपहति आयी थी, मौखिक अथवा दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा सिद्ध नहीं किया गया है।

16. दावेदार प्रत्यर्थीगण ने आगे अभिवचन किया है कि दिनांक 25.2.1988 को हुई सड़क दुर्घटना में उसको कारित उपहतियों के कारण दिनांक 1.3.1988 को मंटूलाल कर्माकर की मृत्यु हो गयी, किंतु वे ऐसे प्रतिवाद के समर्थन में अभिलेख पर किसी शव परीक्षण रिपोर्ट को लाने में विफल रहे हैं। यह सिद्ध करने के लिए कि दिनांक 25.2.1988 को हुई सड़क दुर्घटना में उसको कारित उपहतियों के कारण दिनांक 1.3.1988 को मंटूलाल कर्माकर की मृत्यु हो गयी, सुखदेव नगर पी॰ एस॰ के प्रभारी अधिकारी द्वारा जारी मृत्यु प्रमाण पत्र (प्रदर्श 3) दाखिल किया गया था। मैं यह समझने में विफल हूँ कि किसी प्रावधान अथवा प्राधिकार के अधीन सुखदेव नगर पी॰ एस॰ के प्रभारी अधिकारी ने मृत्यु प्रमाण पत्र जारी किया था। वह अपने प्रतिवाद का समर्थन करने के लिए आगे नहीं आया था। यह कहना अनावश्यक है कि घटना हिंदपीड़ी पुलिस थाना के अंतर्गत हुई थी और सुखदेव नगर पी॰ एस॰ द्वारा प्रमाण पत्र जारी किया गया था। पुन:, यह दोहराया गया है कि हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 के संबंध में भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 279/338 के अधीन आरोप पत्र दाखिल किया गया था और संज्ञान लिया गया था और इसलिए आरोप-पत्र दाखिल किए जाने तक किसी व्यक्ति की मृत्यु मंटूलाल कर्माकर की मृत्यु की तो बात ही दूर, बिल्कुल अज्ञात थी और भा॰ दं॰ सं॰ की धाराओं 279/338 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए अभियुक्त के विरुद्ध विचारण अग्रसर हुआ। उपर की गयी चर्चा की दृष्टि में दावेदारगण अभिलेख पर यह लाने में विफल रहे हैं कि दुर्घटना जो दिनांक 25.2.1988 को हुई में मंटूलाल ने उपहति पाया जिस कारण उसकी मृत्यु हो गयी।

17. दावेदारों ने नागरमल मोदी सेवा सदन, राँची से प्राप्त मेडिकल प्रमाण पत्र दाखिल किया है जो उपदर्शित करता है कि दिनांक 1.3.1988 को मंटूलाल कर्माकर अस्पताल में भरती किया गया था और रात्रि 8 बजे उसकी मृत्यु हो गयी। यह मेडिकल प्रमाण पत्र प्रदर्शित नहीं किया गया है और व्यक्ति जो मरीज लाया था का बयान उपदर्शित करता है कि यह सड़क दुर्घटना का मामला था जो तीन दिन पहले हुई थी।

18. अब वर्तमान अपील के परिशिष्ट 3 श्रृंखला और परिशिष्ट 4/1 पर आते हुए। ये दस्तावेज उपदर्शित करते हैं कि दावेदारों ने घटना की तिथि दिनांक 27.2.1988 के रूप में प्रकट किया है और उन्होंने परिशिष्ट 3 श्रृंखला के अधीन दस्तावेज में कहीं पर भी यह कथन नहीं किया है कि मंटूलाल कर्माकर को दिनांक 25.2.1998 को सड़क दुर्घटना में उपहति आयी थी। सदर अस्पताल द्वारा जारी प्रमाण पत्र परिशिष्ट 4/1 समर्थन करता है कि मंटूलाल कर्माकर को दिनांक 27.2.1988 को उपहति आयी और उसे इलाज के लिए सदर अस्पताल लाया गया था। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि दावेदारों/प्रत्यर्थियों ने इन दस्तावेजों अर्थात् परिशिष्ट 3 श्रृंखला और 4/1 को चुनौती नहीं दिया है; बल्कि यह तर्क किया गया था कि मृतक की पत्नी बंगला बोलने वाली महिला है और उसे हिंदी का अल्प ज्ञान है। परिशिष्ट 3 श्रृंखला के अधीन दस्तावेज पर दावेदार बेनू कर्माकर का हिंदी में हस्ताक्षर है और हस्तलिखित पत्र पर समस्त दावेदारों का अंग्रेजी में हस्ताक्षर है। उन्होंने तर्क के समय इन दस्तावेजों की अधिप्रमाणिकता से इनकार नहीं किया है।

19. ऊपर निर्दिष्ट किए गए साक्ष्य और दस्तावेज की दृष्टि में, यह प्रकट है कि दावेदारगण अभिलेख पर यह लाने में विफल रहे हैं कि मंटूलाल को सड़क दुर्घटना में उपहति आयी थी जो दिनांक 25.2.1988 को उर्दू पुस्तकालय, मेन रोड, राँची के निकट रजिस्ट्रेशन सं॰ BPV 9019 वाले वाहन के लापरवाह एवं उपेक्षापूर्ण चालन के कारण हुई जिसके लिए धाराओं 279/337 के अधीन हिंदीपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 दर्ज किया गया था। इस प्रकार, दावेदारों के अभिवचनों का यह भाग मौखिक साक्ष्य अथवा दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा असिद्ध बना रहा।

20. दावादारों/प्रत्यर्थियों ने अपीलार्थी द्वारा दाखिल अतिरिक्त कारण बताओ के पैरा 1 को निर्दिष्ट किया है और निवेदन किया है कि यह अपीलार्थी बीमा कंपनी की ओर से स्वीकरण था और इसलिए इस तथ्य को सिद्ध करने की आवश्यकता नहीं थी। स्वीकरण क्या है, इस पर आने के पहले, अपीलार्थी बीमा कंपनी द्वारा मोटर यान अधिनियम की धारा 140 के अधीन दाखिल याचिका के विरुद्ध और एम॰ भी॰ अधिनियम की धारा 166 के अधीन दाखिल याचिका के विरुद्ध दाखिल विस्तृत कारण बताओ पर विचार करने की आवश्यकता है। दोनों कारण बताओ में, अपीलार्थी बीमा कंपनी ने जोरदार चुनौती दिया है कि मंटू लाल कर्माकर नाम वाले किसी व्यक्ति को दिनांक 25.2.1988 को उर्दू पुस्तकालय, मेन रोड, राँची के निकट हुई सड़क दुर्घटना में उपहति नहीं आयी थी और मंटूलाल कर्माकर का नाम हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 के लिए पूरी तरह अजनबी था। कोई शव परीक्षण रिपोर्ट दाखिल नहीं किया गया था। अत:, अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिया गया तर्क बिल्कुल स्वीकार योग्य प्रतीत होता है कि अपीलार्थी ने विवाद्यक तथ्य को और प्रासंगिक तथ्यों को चुनौती दिया है जिसे सिद्ध करने में प्रत्यर्थी दावेदारगण स्पष्ट रूप से विफल रहे हैं। दिनांक 27.11.2002 और दिनांक 4.9.2004 के दो विस्तृत कारण बताओ हैं जिसमें अपीलार्थी ने दावेदारों द्वारा अपने अभिवचनों में किए गए प्रकथनों को चुनौती दिया है। इसे अभिलेख पर लाने के लिए कि दावेदारों द्वारा अभिकथित घटना की तिथि पुराने मोटर यान अधिनियम [धारा 95(2)] द्वारा शासित होगी और बीमा कंपनी पर दायित्व, यदि डाला जाता है, केवल पचास हजार रुपयों की सीमा तक निर्बंधित होगा, अतिरिक्त कारण बताओ दाखिल किया गया था जिसमें पैराग्राफ 1 में कथन किया गया था कि दिनांक 25.2.1988 को मंटूलाल कर्माकर दुर्घटनाग्रस्त हुआ और दिनांक 1.3.1988 को उसकी मृत्यु हो गयी और पैरा 1 में किए गए उस प्रतिवाद को स्वीकरण के रूप में नहीं माना जा सकता है।

21. सिविल प्रक्रिया संहिता का आदेश XII 'स्वीकरण' पर विचार करता है। सिविल प्रक्रिया संहिता के आदेश XII के प्रावधान का पालन वर्तमान मामले में कभी नहीं किया गया था और न ही दावेदारों ने ऐसा करने के लिए कोई कदम उठाया था।

पहले के पैराग्राफों में मैंने उपदर्शित किया है कि 'अभिवचन' क्या है और अभिवचन किस बयान को अंतर्विष्ट करेगा और ऐसे बयान को विवाद्यक तथ्य अथवा प्रासंगिक तथ्यों को उपदर्शित करना ही होगा और विवाद्यक में ऐसे तथ्य को सिद्ध करने के लिए किस प्रकार साक्ष्य दिया जाना है ताकि किसी जाँच, कार्यवाही अथवा विचारण में विवाद्यक विनिश्चित किया जा सके। पक्षों को साक्ष्य देकर उनके द्वारा सिद्ध किए जाने के लिए आवश्यक विवाद्यक तथ्य अथवा प्रासंगिक तथ्य से संबंधित अपने अभिवचनों में सकारात्मक बयान देना होगा। वर्तमान मामले में दावेदार का बयान कि मंटूलाल कर्माकर को दिनांक 25.2.1988 को लापरवाही एवं उपेक्षा से वाहन चलाए जाने के कारण उर्दू पुस्तकालय, मेन रोड, राँची के निकट सड़क दुर्घटना में उपहति आयी जिसके लिए हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 दर्ज किया गया था, उनके द्वारा विश्वास किए गए दस्तावेजों (अर्थात् प्राथमिकी, आरोप-पत्र, सी॰ जे॰ एम॰ द्वारा संज्ञान का आदेश) से असमर्थित बना रहा। ऐसी विपरीत परिस्थितियों में, यदि दावेदारगण अपीलार्थी बीमा कंपनी द्वारा अतिरिक्त कारण बताओ में दिए गए बयान पर विश्वास कर रहे थे, उन्हें सी॰ पी॰ सी॰ के

आदेश XII के प्रावधान का सहारा लेना चाहिए था किंतु उन्होंने ऐसा नहीं किया था। ऊपर उपदर्शित परिस्थितियों में, अन्य पक्ष द्वारा अभिवचन में दिए गए ऐसे मनमौजी बयान पर विश्वास करना सुरक्षित कभी नहीं होगा और ऐसे स्वीकरण पर अनन्य रूप से विश्वास करते हुए कोई निश्चयात्मक निष्कर्ष दिया जाना सुरक्षित कभी नहीं हो सकता था। अत:, इस संदर्भ में दावेदारों प्रत्यर्थियों के विद्वान अधिवक्ता द्वारा दिया गया तर्क स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

22. मैंने अंतर्ग्रस्त लगभग समस्त विवाद्यकों और दोनों पक्षों की ओर से दिए गए तर्कों पर विस्तारपूर्वक चर्चा किया है, किंतु अब तक यह संप्रेक्षित नहीं किया गया है कि किस प्रकार असावधानीपूर्वक, उपेक्षापूर्वक और लापरवाह तरीके से विद्वान अधिकरण ने अंतर्ग्रस्त विवाद्यकों को विनिश्चित किया था। दावेदारों के मुताबिक, अभिकथित घटना फरवरी, 1988 को हुई थी किंतु एम॰ वी॰ अधिनियम की धारा 140 के अधीन मुआवजा दिए जाने के लिए आवेदन आठ वर्ष बीतने के बाद वर्ष 1996 में दाखिल किया गया था और वह भी ऐसे विलंब के लिए कोई भी कारण दिए बिना। मोटर यान अधिनियम की धारा 166 के अधीन याचिका वर्ष 2000 में दाखिल की गयी थी और वह भी किसी स्पष्टीकरण के बिना कि इसे मोटर यान अधिनियम की धारा 140 के अधीन दाखिल याचिका के साथ दाखिल क्यों नहीं किया गया था। दावेदारों ने हिंदपीड़ी पी॰ एस॰ केस सं॰ 129 वर्ष 1988 से संबंधित आरोप-पत्र, संज्ञान आदेश जैसे दस्तावेजों को प्रस्तुत किया है। मृतक मंटूलाल कर्माकर का नाम उन अभिलेखों में बिल्कुल अज्ञात था और उक्त घटना में किसी व्यक्ति की मृत्यु नहीं हुई थी, किंतु विद्वान अधिकरण ने अपनी आँखें मूंद कर और विवेक के इस्तेमाल के बिना आक्षेपित आदेश पारित किया है। क्यों और कैसे विद्वान अधिकरण ने ऐसा प्रमाण पत्र जारी करने की अधिकारिता और प्राधिकार नहीं रखने वाले पुलिस अधिकारी द्वारा जारी मृत्यु प्रमाण पत्र पर विश्वास किया है, यह ऐसे न्यायिक अधिकारी के ज्ञान और दक्षता पर बड़ा प्रश्न चिन्ह लगाता है।

23. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मुझे यह संप्रेक्षित करने में कोई संकोच नहीं है कि आक्षेपित निर्णय और अधिनिर्णय विकृत है, गलत तथ्यों और दस्तावेजों पर आधारित है और अपास्त किए जाने योग्य है।

24. परिणामस्वरुप, यह अपील अनुज्ञात की जाती है और दावा मामला सं॰ 72 वर्ष 1996 में विद्वान अपर न्यायिक आयुक्त-सह-मोटर दुर्घटना दावा अधिकरण, राँची द्वारा पारित दिनांक 2.8.2006 का निर्णय एवं अधिनिर्णय एतद्द्वारा अपास्त किया जाता है।

---

ekuuh; ç'kkUr dekj ,o vferkHk dekj xIrk] U;k;efrx.k

रबिन्द्र नाथ तिवारी एवं अन्य

cuke

झारखंड राज्य

Criminal Appeal (D.B.) No. 1185 of 2003. Decided on 25th February, 2014.

सत्र विचारण सं॰ 82 वर्ष 1990/सत्र विचारण सं॰ 7 वर्ष 1991 में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश सह-फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ II, गुमला द्वारा दिनांक 29.7.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दिनांक 31.7.2003 के दंडादेश के विरुद्ध।

भारतीय दंड संहिता, 1860—धारा 302—दंड प्रक्रिया संहिता, 1973—धारा 374—दहेज मृत्यु-क्रूरता एवं षडयन्त्र-मृतका ने धन की अविधिपूर्ण मांग के लिए अपीलार्थी द्वारा क्रूरता के अध्यधीन किए जाने के चलते अपने विवाह के सात वर्षों के भीतर आत्महत्या किया-अपीलार्थी

ने उसको आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया–अपीलार्थी को भा॰ दं॰ सं॰ की धारा 306 के अधीन अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया गया–जहाँ तक अन्य अपीलार्थीगण का संबंध है, उनके विरुद्ध साक्ष्य नहीं है कि उन्होंने षडयन्त्र रचा था–अपीलार्थी की दोषसिद्धि एवं दंडादेश उपांतरित किया गया–अपील जहाँ तक यह अन्य अपीलार्थीगण से संबंधित है अनुज्ञात की गयी और उनके विरुद्ध पारित दोषसिद्धि का आदेश और दंडादेश अपास्त किया गया–चूँकि अपीलार्थी ने अधिनिर्णीत दंडादेश पूरा किया है, उसे तुरन्त निर्मुक्त किए जाने का निर्देश दिया गया–अपील अंशतः अनुज्ञात। (पैराएँ 22 से 25)

अधिवक्तागण.–M/s B.M. Tripathy, Nutan Sharma & N.K. Jaiswal, For the Appellant; Sri Amresh Kumar, For the Respondents.

प्रशान्त कुमार, न्यायामूर्ति.–यह अपील सत्र विचारण सं॰ 82 वर्ष 1990/सत्र विचारण सं॰ 7 वर्ष 1991 में अपर जिला एवं सत्र न्यायाधीश-सह-फास्ट ट्रैक कोर्ट सं॰ II, गुमला द्वारा पारित क्रमशः दिनांक 29.7.2003 और दिनांक 31.7.2003 के दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश के विरुद्ध निर्देशित है जिसके द्वारा और जिसके अधीन अपीलार्थीगण को भारतीय दंड संहिता की धाराओं 304 (B) और 498 (A) सह-पठित धारा 120B के अधीन अपराध के लिए दोषसिद्ध किया गया था। यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी सं॰ 1 रबिन्द्र नाथ तिवारी को भारतीय दंड संहिता की धारा 304 (B) के अधीन आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था–जबकि अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 अर्थात् क्रमशः राजेश्वर नाथ तिवारी, सुरेन्द्र नाथ तिवारी और श्रीमती स्वीकीर्ति देवी को भारतीय दंड संहिता की धारा 304B/120B के अधीन अपराध के लिए सात वर्ष का कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था। समस्त अपीलार्थीगण को आगे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 498A/120B के अधीन अपराध के लिए तीन वर्ष की अवधि का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था।

2. अ॰ सा॰ 1 (सूचक) की लिखित रिपोर्ट के मुताबिक अभियोजन का मामला यह है कि उसकी पुत्री अंबुज देवी का विवाह जून, 1988 में अपीलार्थी सं॰ 1 रविन्द्र नाथ तिवारी के साथ हुआ था। तब यह अभिकथित किया गया है कि विगत कुछ समय से सूचक की पुत्री शिकायत कर रही थी कि उसका पति उसको अपने माता-पिता से और धन लाने के लिए यातना दिया करता था। तब यह अभिकथित किया गया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने ठेकेदारी के प्रयोजन से सूचक से 30,000/- रुपया मांगा था। आगे यह कथन किया गया है कि दिनांक 16.3.1990 को प्रातः 1 बजे राजेश्वर तिवारी और भुनेश्वर पांडे उसके घर आए और सूचित किया कि उसकी पुत्री अंबुज को जलन उपहति आयी थी और उसे मिशन अस्पताल, मन्दार में भरती किया गया था। तत्पश्चात, सूचक और अन्य मंदार गए और उन्हें पता चला कि उनकी पुत्री की मृत्यु हो गयी थी। उसे रविन्द्रनाथ तिवारी पर संदेह हुआ और उसने अभिकथित किया कि उसने धन की मांग पूरी नहीं होने के कारण उसकी पुत्री की हत्या कर दी थी।

3. पूर्वोक्त लिखित रिपोर्ट के आधार पर भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3, 4 और 5 के अधीन दिनांक 16.3.1990 का गुमला पी॰ एस॰ केस सं॰ 33/1990 संस्थित किया गया था और पुलिस ने अन्वेषण किया। अन्वेषण के दौरान, मृतका अंबुज के मृत शरीर की मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट तैयार की गयी थी और उसका मृत शरीर शव परीक्षण के लिए राजेन्द्र मेडिकल कॉलेज एन्ड हॉस्पिटल, राँची भेजा गया था। यह प्रतीत होता है कि अन्वेषण पूरा करने के बाद पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/120B और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3, 4 और 5 के अधीन अपीलार्थीगण के विरुद्ध आरोप-पत्र दाखिल किया। यह प्रतीत होता है कि विद्वान मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी ने पूर्वोक्त अपराधों का संज्ञान लिया और तत्पश्चात्, मामला सत्र न्यायालय को सुपुर्द

कर दिया क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध अनन्य रूप से सत्र न्यायालय द्वारा विचारणीय है।

4. सुपुर्दगी के बाद, अपर सत्र न्यायाधीश–II, गुमला के न्यायालय में अभिलेख प्राप्त किया गया था जिन्होंने दिनांक 10.9.1991 के आदेश के तहत भारतीय दंड संहिता की धाराओं 302/120B/34, 304B/498A/34 के अधीन और दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धाराओं 3/4/5 के अधीन अपीलार्थीगण के विरुद्ध आरोप विरचित किया। पूर्वोक्त आरोपों को अपीलार्थीगण को हिंदी में स्पष्ट किया गया था जिनके प्रति उन्होंने निर्दोषिता का अभिवचन किया और विचारण किए जाने का दावा किया। तत्पश्चात्, अभियोजन ने अपने मामले के समर्थन में कुल 16 गवाहों का परीक्षण किया। अभियोजन ने अनेक दस्तावेजों अर्थात् फर्दबयान (प्रदर्श 1) मृतका द्वारा लिखे गए पत्र (प्रदर्श 2), मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट पर हस्ताक्षर (प्रदर्श 4 श्रृंखला), मृतका द्वारा लिखे गए पत्र की छाया प्रतिलिपि (प्रदर्श 5), औपचारिक प्राथमिकी (प्रदर्श 6), जब्ती सूची (प्रदर्श 7) और शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 8) को अभिलेख पर लाया। बचाव पक्ष ने भी एक गवाह अर्थात् नेहा तिवारी का परीक्षण किया। अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य पर विचार करने के बाद विद्वान न्यायालय ने पूर्वोक्तानुसार अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध और दंडादेशित किया जिसके विरुद्ध वर्तमान अपील दाखिल की गयी है।

5. आक्षेपित निर्णय का विरोध करते हुए वरीय अधिवक्ता श्री बी॰ एम॰ त्रिपाठी ने निवेदन किया कि यह दर्शाने के लिए अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 के विरुद्ध साक्ष्य नहीं है कि उन्होंने दहेज मांगा है और/अथवा उक्त मांग के लिए मृतका को यातना दिया है। इस प्रकार, उनके विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धाराओं 304B/498A के अधीन अपराध नहीं बनता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि यह दर्शाने के लिए साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 ने दहेज मांगने के लिए और/अथवा दहेज मांग के लिए अपीलार्थी सं॰ 1 के साथ षडयंत्र रचा है। इस प्रकार, भारतीय दंड संहिता की धाराओं 304B/498A/120B के अधीन अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 के विरुद्ध अपराध नहीं बनता है। तब यह निवेदन किया गया है कि जहाँ तक अपीलार्थी सं॰ 1 का संबंध है, ठेकेदारी के प्रयोजन से धन की तथाकथित मांग को दहेज के रूप में माना नहीं जा सकता है। इस प्रकार, अपीलार्थी सं॰ 1 के विरुद्ध धारा 304B के अधीन अपराध नहीं बनता है। आगे यह निवेदन किया गया है कि अ॰ सा॰ 4 जो मृतका का भाई है ने कथन किया था कि मृतका के साथ अपीलार्थीगण का संबंध मधुर था। इस प्रकार, धारा 498A के अधीन अपराध नहीं बनता है। यह निवेदन किया गया है कि मृतका ने खाना पकाते समय जलन उपहतियाँ प्राप्त किया था और इस प्रकार उसकी मृत्यु दुर्घटनावश हुई है। अत:, समस्त अपीलार्थीगण अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किए जाने के हकदार हैं।

6. दूसरी ओर, विद्वान अपर पी॰ पी॰ श्री अमरेश कुमार ने निवेदन किया है कि अ॰ सा॰ 1 के साक्ष्य में आया है कि विवाह के एक वर्ष बाद से ही अपीलार्थीगण धन की मांग के लिए मृतका को यातना दे रहे थे। उन्होंने आगे निवेदन किया है कि यह विवादित नहीं है कि मृतका की मृत्यु जलन उपहति के कारण उसके दांपत्य गृह में उसके विवाह के सात वर्षों के भीतर हो गयी। उक्त परिस्थितियों के अधीन, अपीलार्थीगण के विरुद्ध दहेज मृत्यु की उपधारणा है। विद्वान अपर पी॰ पी॰ ने आगे निवेदन किया कि अपीलार्थीगण द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण कि मृतका को खाना पकाते समय आग लगी स्वीकार नहीं किया जा सकता है क्योंकि घटनास्थल बरामदा है और अन्वेषण अधिकारी ने घटनास्थल पर भोजन सामग्री, बर्तन अथवा स्टोव नहीं पाया है। तद्नुसार, विद्वान अपर पी॰ पी॰ ने निवेदन किया कि यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध है कि अपीलार्थीगण ने अ॰ सा॰ 1 की पुत्री को जला दिया था। इस प्रकार, उन्होंने निवेदन किया कि उन्हें सही प्रकार से विद्वान अवर न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध और दंडादेशित किया गया है।

7. निवेदनों को सुनने पर मैंने मामले के अभिलेख का परिशीलन किया है।

8. शव परीक्षण रिपोर्ट (प्रदर्श 8), मृत्यु समीक्षा रिपोर्ट (प्रदर्श 3) और अभिलेख पर उपलब्ध अन्य मौखिक साक्ष्य के परिशीलन से, मैं पाता हूँ कि जलन उपहतियों के कारण मृतका की मृत्यु हुई।

9. जैसा ऊपर गौर किया गया है, विद्वान अवर न्यायालय ने भारतीय दंड संहिता की धारा 304(B) के अधीन दहेज मृत्यु के लिए अपीलार्थीगण को दोषसिद्ध किया है। भारतीय दण्ड संहिता की धारा 304(B) के अधीन दहेज मृत्यु को परिभाषित किया गया है जो निम्नलिखित है:–

*"**ngst eR;q**-&tgk¡ fdlh L=h dh eR;q fdlh nkg ;k 'kkjhfjd {kfr }kjk dkfjr dh tkrh gS ;k mlds fookg ds lkr o"kZ ds Hkhrj lkekU; ifjfLFkfr;ksa ls vU;Fkk gks tkrh gS vkSj ;g nf'kZr fd;k tkrk gS fd mldh eR;q ds dN iwoZ mlds ifr us ;k mlds ifr ds fdlh ukrsnkj us] ngst dh fdlh ekax ds fy,] ;k mlds lEcU/k esa] mlds lkFk Øwjrk dh Fkh ;k mls rax fd;k Fkk ogk¡ ,slh eR;q dks ^^ngst eR;q** dgk tk,xk] vkSj ,sls ifr ;k ukrsnkj mldh eR;q dkfjr djus okyk le>k tk,xkA**"*

***Li"Vhdj.k**-&bl mièkkjk ds i;kstuksa ds fy, ^^ngst** dk ogh vFkZ gS tks ngst ifr"kèk vfèkfu;e] 1961 (1961 dk 28) dh èkkjk 2 esa gSA*

*(2) tks dksbZ ngst eR;q dkfjr djsxk og dkjkokl ls] ftldh vofèk lkr o"kZ ls de dh ugha gksxh fdUrq tks vkthou dkjkokl rd dh gks ldsxh] nf.Mr fd;k tk,xkA**"*

10. पूर्वोक्त धारा के परिशीलन से मैं पाता हूँ कि दहेज मृत्यु के दो आवश्यक अवयव हैं जैसा धारा 304B के अधीन परिभाषित किया गया है:–

(i) efgyk dh eR;q fdlh tyu vFkok 'kkjhfjd migfr }kjk dkfjr gbZ gS vFkok lkekU; ifjfLFkfr;ksa ls fHkUu ifjfLFkfr esa gbZ g(

(ii) efgyk dks fdlh ngst ekax ds fy, vFkok blds lEcèk esa mlds ifr vFkok mlds ifr ds fdlh lEcèkh }kjk Øwjrk vFkok ij'kkuh ds vèÙ;èkhu fd;k x;k gS

11. पूर्वोक्त प्रावधान से संलग्न स्पष्टीकरण प्रावधानित करता है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन उल्लिखित दहेज का वहीं अर्थ होगा जैसा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 2 के अधीन परिभाषित किया गया है। दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 2 के अधीन दी गयी दहेज की परिभाषा निम्नलिखित है:–

***ngst dh ifjHkk"kk**-&bl vfèkfu;e esa ^^ngst** ls rkRi;Z gS&*

(a) fookg ds ,d i{k }kjk nwljs i{k ds fy,] ;k

(b) fookg ds fdlh i{k ds ekrk&firk ;k vU; O;fDr }kjk fookg ds nwljs i{k ;k fdlh vU; O;fDr ds fy,]

(c) fookg djus ds lEcèk esa fookg ds le; ;k mlds iwoZ ;k i'pkr fdlh le; çR;{k ;k vçR;{k nh tkus okyh ;k nh tkus ds fy, çfrKkr dh xbZ fdlh lEifÙk ;k ewY;oku çfrHkwfr ls gS fdUrq blesa mu O;fDr;ksa dh n'kk esa egj lfEefyr ugha gksxk ftu ij eqfLye O;fDrxr fofèk 'kjh;r ykxw gksrk gSA

***Li"Vhdj.k II**– ^^eY;oku çfrHkwfr** ls ogh rkRi;Z gksxk] tks fd Hkkjrh; n.M lafgrk dh èkkjk 30 esa vèkhu gksrk gSA*

12. दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 2 के अधीन दी गयी दहेज की पूर्वोक्त परिभाषा की व्याख्या माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **अप्पा साहेब एवं एक अन्य बनाम महाराष्ट्र राज्य, (2007)9 SCC**

721 में की गयी थी। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के अनुसार, यदि विवाह पर अथवा इसके पहले अथवा किसी समय बाद और विवाह के संबंध में प्रत्यक्षत: अथवा अप्रत्यक्षत: कोई संपत्ति अथवा बहुमूल्य प्रतिभूति दी जाती है अथवा दिए जाने के लिए सहमत हुआ जाता है, केवल तब संपत्ति का लेन-देन दहेज बनेगा। दूसरे शब्दों में, दी अथवा ली गयी संपत्ति अथवा बहुमूल्य प्रतिभूति का पक्षों के बीच विवाह के साथ कुछ संबंध होना ही चाहिए। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पूर्वोक्त निर्णय में अभिनिर्धारित किया है कि दंड प्रावधान होने के नाते भारतीय दंड संहिता की धारा 304B का कठोरतापूर्वक अर्थ लगाने की आवश्यकता है। उक्त निर्णय में, माननीय न्यायाधीशों ने आगे अभिनिर्धारित किया कि किसी वित्तीय कठिनाई के कारण अथवा किसी अत्यावश्यक खर्चीले विनिमय को पूरा करने के लिए अथवा खाद खरीदने के लिए धन की मांग को दहेज की मांग के रूप में नहीं माना जा सकता है।

13. मोदिनसब कसीमसब कंचागर बनाम कर्नाटक राज्य एवं एक अन्य, (2013)2 East Cr. Cases 155 (SC) में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समरुप दृष्टिकोण अपनाया गया है। इस मामले में माननीय न्यायाधीशों ने अभिनिर्धारित किया है कि समाज के कर्ज के पुनर्भुगतान के लिए अभियुक्त द्वारा राशि की कोई मांग का विवाह से संबंध नहीं है। अत:, धारा 304B के अधीन अपराध नहीं बनता है।

14. वर्तमान मामले में, मैं पाता हूँ कि मृतका की मृत्यु जलन उपहति के कारण उसके विवाह के सात वर्षों के भीतर हो गयी। इस प्रकार, दहेज मृत्यु का प्रथम अवयव पूरा हुआ है। जहाँ तक दहेज मृत्यु के द्वितीय अवयव का संबंध है, मैं पाता हूँ कि अ॰ सा॰ 1 ने अपने अभिसाक्ष्य में कथन किया है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने अ॰ सा॰ 4 के तिलक समारोह के दौरान 30,000/- रुपया मांगा है। उसने आगे अभिसाक्ष्य दिया है कि जब उसने उससे कहा कि वह अपने पुत्र के विवाह के बाद पूर्वोक्त राशि भुगतान करेगा, वह क्रोधित हो गया और अनेक संबंधियों के सामने मृतका को गाली दिया और उसकी पतिव्रता पर लांछन लगाया। इस तथ्य का समर्थन अ॰ सा॰ 2 और अ॰ सा॰ 4 द्वारा किया गया है जो मृतका के भाई हैं। किंतु अ॰ सा॰ 4 ने अपने अभिसाक्ष्य में कथन किया था कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने ठेकेदारी के प्रयोजन से पूर्वोक्त धन मांगा था। अ॰ सा॰ 1 द्वारा अपने लिखित रिपोर्ट में भी इस तथ्य का कथन किया गया है। उक्त परिस्थिति के अधीन, मैं पाता हूँ कि 36,000/- रुपयों की मांग का विवाह के साथ संबंध नहीं है और इस प्रकार, यह दहेज के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत नहीं आता है जैसा दहेज प्रतिषेध अधिनियम की धारा 2 के अधीन परिभाषित किया गया है। यह प्रतीत होता है कि उक्त मांग ठेकेदारी व्यवसाय में निवेश के लिए की गयी थी, अत: यह दहेज की परिभाषा के अंतर्गत नहीं आएगा।

15. अ॰ सा॰ 1 ने यह कथन भी किया था कि मृतका ने शिकायत किया था कि अपीलार्थी सं॰ 1 धन की मांग के लिए उसको यातना देता था। किंतु उसने यह कथन नहीं किया है कि उक्त मांग का विवाह के साथ कोई संबंध था। इसके अतिरिक्त, अ॰ सा॰ 4 द्वारा पूर्वोक्त तथ्य का समर्थन नहीं किया गया है जिसने अभिसाक्ष्य के पैराग्राफ सं॰ 17 पर विनिर्दिष्टत: कथन किया कि तिलक समारोह के पहले उसे अपीलार्थी सं॰ 1 से कोई शिकायत नहीं थी। अ॰ सा॰ 4 के अनुसार, तिलक समारोह के पहले अपीलार्थी सं॰ 1 का मृतका के साथ मधुर संबंध था। अ॰ सा॰ 1 ने अपने प्रतिपरीक्षण में पैराग्राफ सं॰ 18 पर भी कथन किया है कि उसकी पुत्री उसके साथ अपने ससुराल वालों के बारे में बात करती थी और उस अवधि के दौरान उसने कोई शिकायत नहीं किया था। अ॰ सा॰ 1 ने अपने प्रति-परीक्षण में कथन किया है कि उसकी पुत्री ने उसकी पत्नी के सामने धन की मांग के लिए यातना के बारे में कथन किया है। किंतु इस मामले में अ॰ सा॰ 1 के समर्थन में सूचक की पत्नी का परीक्षण नहीं किया गया था। पूर्वोक्त परिस्थिति के अधीन, अ॰ सा॰ 1 का बयान कि विवाह के एक वर्ष बाद मृतका ने अपीलार्थी सं॰ 1 के विरुद्ध शिकायत किया था कि वह उसको धन की मांग के लिए यातना देता था, स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

16. पूर्वोक्त चर्चा की दृष्टि में, मैं पाता हूँ कि ठेकेदारी व्यवसाय के प्रयोजन से 30,000/- रुपयों की मांग दहेज के कार्यक्षेत्र के अंतर्गत नहीं आएगी, किंतु साथ ही मेरे दृष्टिकोण में इसे विधिविरुद्ध मांग माना जाएगा। उक्त परिस्थिति के अधीन, मेरा दृष्टिकोण है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 304B के अधीन अपराध नहीं बनता है।

17. अब प्रश्न उद्भूत हुआ कि अपीलार्थी सं॰ 1 के विरुद्ध कौन-सा अपराध बनता है?

18. जैसा ऊपर गौर किया गया है, अपीलार्थी सं॰ 1 ने व्यवसाय के प्रयोजन से अ॰ सा॰ 1 से 30,000/- रुपयों का विधिविरुद्ध मांग किया है। आगे यह साक्ष्य में आया है कि जब अ॰ सा॰ 1 ने तुरन्त पूर्वोक्त मांग पूरा करने में अपनी अक्षमता अभिव्यक्त किया और बाद में इसे पूरा करने का वादा किया, जिसके बाद अपीलार्थी सं॰ 1 क्रोधित हो गया और अनेक संबंधियों के सामने मृतका को गाली दिया और उसकी पतिव्रता पर लांछन लगाया। अ॰ सा॰ 5 जो स्वतंत्र गवाह है के साक्ष्य में आया है कि मृतका अच्छे चरित्रवाली महिला थी। उक्त परिस्थिति के अधीन, यदि पति उसके पिता, माता, भाई और अन्य संबंधियों के सामने उसके पतिव्रता पर प्रश्न करता है, तब उसकी मानसिक व्यथा को समझा जा सकता है। इस प्रकार, मुझे यह अभिनिर्धारित करने में संकोच नहीं है कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने 30,000/- रुपयों की अवैध मांग के लिए मृतका को क्रूरता के अध्यधीन किया। मामले के उस दृष्टिकोण में, मेरा सुविचारित मत है कि भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन अपराध अपीलार्थी के विरुद्ध बनता है।

19. यह स्वीकृत अवस्था है कि मृतका की मृत्यु उसके विवाह के सात वर्षों के भीतर अपने दांपत्य गृह में जलन उपहति के कारण हो गयी। अपीलार्थीगण द्वारा दिया गया स्पष्टीकरण कि उसने खाना पकाते समय जलन उपहति प्राप्त किया था, इस मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में स्वीकार नहीं किया जा सकता है। अन्वेषण अधिकारी अ॰ सा॰ 13 ने घटना स्थल का निरीक्षण किया था और पाया है कि घटना बरामदे में हुई थी। उसने घटना स्थल पर कोई बर्नर, भोजन सामग्री और बर्तन नहीं पाया था। इस प्रकार, मेरे दृष्टिकोण में, खाना पकाते समय दुर्घटनावश जलन उपहति पाने की कहानी को स्वीकार नहीं किया जा सकता है। उसकी मानसिक दशा और घटनास्थल के इर्द-गिर्द की स्थिति के साथ मृतका द्वारा पायी गयी उपहति स्थापित करती है कि मृतका ने आत्महत्या किया और उसकी मृत्यु दुर्घटनावश मृत्यु नहीं थी। साक्ष्य अधिनियम की धारा 113A को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:-

> ***fdlh fookfgr L=h }kjk vkRegR;k d n"ij.k d ckj e mièkkj.kk-*** *&tc i'u ;g g fd fdlh L=h }kjk vkRegR;k dk djuk mld ifr ;k mld ifr d fdlh ukrnkj }kjk n"ifjr fd;k x;k g vkj ;g nf'kr fd;k x;k g fd mlu fookg dh rkjh[k l lkr o"k dh vofèk d Hkhrj vkRegR;k dh Fkh vkj ;g fd mld ifr ;k mld ifr d ,l ukrnkj u mld ifr Øjrk dh Fkh] rk U;k;ky; ekey dh lHkh vU; ifjfLFkfr;k dk è;ku e j[kr g, mièkkj.kk dj ldxk fd ,lh vkRegR;k mld ifr ;k mld ifr d ,l ukrnkj }kjk n"ifjr dh x;h FkhA*

20. इस प्रकार, साक्ष्य अधिनियम की धारा 113A में अंतर्विष्ट प्रावधान की दृष्टि में, न्यायालय उपधारित कर सकता है कि महिला ने अपने पति अथवा उसके संबंधियों के दुष्प्रेरण पर आत्महत्या किया है यदि यह दर्शाया जाता है कि उक्त आत्महत्या उसके विवाह के सात वर्षों के भीतर की गयी थी और उसके पति अथवा ऐसे अन्य संबंधियों ने उसे क्रूरता के अध्यधीन किया था जैसा भारतीय दंड संहिता की धारा 498A के अधीन परिभाषित किया गया है।

21. वर्तमान मामले में, यह स्थापित किया गया है कि मृतका ने अपने विवाह के सात वर्षों के भीतर आत्महत्या किया था। मैं इस निष्कर्ष पर भी आया हूँ कि अपीलार्थी सं॰ 1 ने 30,000/- रुपयों की विधिविरुद्ध मांग के लिए उसको क्रूरता के अध्यधीन किया था। मामले के उस दृष्टिकोण में न्यायालय उपधारित कर सकता है कि विधि के अधीन अपीलार्थी सं॰ 1 ने उसको आत्महत्या करने के लिए दुष्प्रेरित किया है। इस प्रकार, मेरे दृष्टिकोण में, अपीलार्थी सं॰ 1 भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन अपराध का दोषी है।

22. अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण साक्ष्य के परिशीलन से मैं पाता हूँ कि यह दर्शाने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है कि अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 ने कोई दहेज मांगा था और अथवा मृतका और अथवा उसके माता–पिता से विधि विरुद्ध मांग किया था। यह दर्शाने के लिए अभिलेख पर कुछ भी नहीं है कि अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 ने मृतका को यातना दिया था। यह दर्शाने के लिए अभियोजन द्वारा कोई साक्ष्य नहीं दिया गया है कि अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 ने मृतका अथवा उसके माता–पिता से विधि विरुद्ध मांग और/अथवा दहेज की मांग के लिए अपीलार्थी सं॰ 1 के साथ षडयंत्र रचा और ऐसे षडयंत्र के निष्पादन में उन्होंने मृतका को यातना दिया था। मामले के उस दृष्टिकोण में, मुझे यह अभिनिर्धारित करने में संकोच नहीं है कि अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 के विरुद्ध अपराध नहीं बनता है। अतः, अवर न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धाराओं 304B/120B/498A/120B के अधीन विचारण न्यायालय द्वारा उनकी दोषसिद्धि पूर्णतः अवैध और अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के विरुद्ध है। अतः, इसे संपोषित नहीं किया जा सकता है।

23. ऊपर की गयी चर्चा की दृष्टि में, मैं इस अपील को अनुज्ञात करता हूँ जहाँ तक यह अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 से संबंधित है और उनके विरुद्ध पारित दोषसिद्धि के निर्णय और दंडादेश को अपास्त करता हूँ। यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी सं॰ 2, 3 और 4 जमानत पर हैं, अतः उन्हें उनके जमानत बंधकों के दायित्व से उन्मोचित किया जाता है।

24. अपीलार्थी सं॰ 1 अर्थात् रविन्द्रनाथ तिवारी की अपील अंशतः अनुज्ञात की जाती है। धारा 304B के अधीन अपीलार्थी सं॰ 1 की दोषसिद्धि अपास्त की जाती है और उसे भारतीय दंड संहिता की धाराओं 306 और 498A के अधीन दोषसिद्ध किया जाता है और भारतीय दंड संहिता की धारा 306 के अधीन दस वर्षों का कारावास भुगतने का दंडादेश दिया जाता है। उसे आगे भारतीय दंड संहिता की धारा 498 (A) के अधीन तीन वर्षों का कारावास भुगतने का दंडादेश दिया जाता है। दोनों दंडादेश साथ–साथ चलेंगे।

25. यह प्रतीत होता है कि अपीलार्थी सं॰ 1 दोषसिद्धि की तिथि अर्थात् दिनांक 31.7.2003 से अभिरक्षा में है। इस प्रकार, उसने यहाँ ऊपर अधिनिर्णीत दंडादेश पूरा कर लिया है। तद्नुसार, उसे तुरन्त निर्मुक्त करने का निर्देश भी दिया जाता है यदि किसी अन्य मामले में उसकी आवश्यकता नहीं है।

अमिताभ कुमार गुप्ता, न्यायमूर्ति.–मैं सहमत हूँ।

---

ekuuh; Jh pn'k[kj] U;k;efr

उमा प्रसाद

cuke

झारखंड राज्य एवं अन्य

W.P. (S) No. 6834 of 2005. Decided on 16th January, 2014.

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के अधीन एक आवेदन के मामले में।

सेवा विधि–धनीय लाभ–निलंबन अवधि का वेतन एवं ए॰ सी॰ पी॰ का लाभ–यह स्वीकार किया गया है कि याची के पति की मृत्यु सेवारत रहते हो गयी और उसके विरुद्ध लगाये गये आरोपों को सिद्ध नहीं किया जा सका था–याची के मृतक पति के विरुद्ध दुर्विनियोग का आरोप लगाया गया था और इस प्रकार केवल अपचारी कर्मचारी ऐसे आरोप का प्रत्युत्तर दे सकता था–चूँकि याची के पति की मृत्यु पहले ही हो गयी है, प्रत्यर्थीगण द्वारा ए॰ सी॰ सी॰ लाभ से इन्कार करने वाला आक्षेपित आदेश पारित नहीं किया जा सकता था–आदेश अभिखंडित किया गया और निलंबन अवधि के लिए ए॰ सी॰ पी॰ के लाभ और वेतन, आदि प्रदान करने का निर्देश दिया गया। (पैराएँ 9 से 11)

निर्णयज विधि.–AIR 1968 SC 240; 2000 (3) PLJR 41; 2003 (4) PLJR 71—Referred.

अधिवक्तागण.–Mr. Manoj Tandon, For the Petitioner; Mr. Rakesh Kumar Shahi, For the Respondents.

न्यायालय द्वारा.–पक्षों के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता सुने गए और अभिलेख पर उपलब्ध दस्तावेजों का परिशीलन किया गया।

2. याची के पति को दिनांक 1.8.1984 को सहायक के पद पर नियुक्त किया गया था और दिनांक 8.10.2004 को सेवारत रहते उसकी मृत्यु हो गयी। मृतक कर्मचारी की पत्नी याची को पारिवारिक पेंशन एवं अन्य सेवानिवृत्ति देयों का भुगतान नहीं किया गया था और इसलिए, उसने इस न्यायालय में डब्ल्यू॰ पी॰ (एस॰) सं॰ 1856 वर्ष 2005 दाखिल किया जिसे दिनांक 27.4.2005 के आदेश द्वारा प्रत्यर्थीगण को मृत्यु–सह–सेवानिवृत्ति लाभों को ब्याज के साथ निर्मुक्त करने का निर्देश देते हुए निपटाया गया था। झारखंड राज्य द्वारा एल॰ पी॰ ए॰ सं॰ 527 वर्ष 2005 में आदेश को चुनौती दी गयी थी जिसे दिनांक 13.12.2005 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था। झारखंड राज्य द्वारा दाखिल विशेष अनुमति याचिका भी दिनांक 20.5.2009 के आदेश द्वारा खारिज कर दी गयी थी। माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नलिखित संप्रेक्षित किया:–

> *fdr] vfHky[k ij fopkj fd, tku ij] ge ikr g fd erd Lo0 fcjUn çlkn dk fnukd 26.9.1998 dk mik;Dr] NkVkukxij fMfotu] jkph d vkn'k ij fuycu d vèkhu fd;k x;k Fkk vkj ,d vU; vkn'k }kjk fnukd 16.6.2000 dk mldk fuycu çfrlâr fd;k x;k FkkA rRi'pkr] dyk] lLÑfr] ØhMk ,o ;ok dk;dyki foHkkx] lfpoky; e lgk;d d :i e dk;jr jgr g, fnukd 8.10.2004 dk mldh eR; gk x;hA og voLFkk gku d ukr vkj pfd çR;Fkh d fo}ku vfèkoDrk ge mDr erd d fo#) dkb vkjki&i= tkjh dju e l{ke çkfèkdkjh }kjk ikfjr dkb vkn'k n'kku e v{ke jg g] erd fcjUn çlkn d lokfuofÙk ykHkk l fdlh jkf'k dh olyh ugh dh tk ldrh FkhA ;g n'kku d fy, dkb vfHky[k ugh g fd mldh eR; d igy erd d fo#) foHkkx }kjk dkb foHkkxh; dk;okgh dh x;h FkhA ge >kj[kM mPpU;k;ky; d [kMihB vkj fo}ku ,dU;k;kèkh'k }kjk ikfjr fu.k;k e xyrh ugh ikr gA bl vihy e x.kkx.k ugh g vkj bl [kkfjt fd;k tkrk gA*
>
> *ge lfpr fd;k x;k g fd oreku vihy d yfcr jgu d nkjku çR;Fkh dk 1,00,000/- (,d yk[k) #i;k dk Hkxrku fd;k x;k Fkk ftl vc çR;Fkh dk Hkxr; n;k d fo#) lek;kftr fd;k tk,xkA leLr lok ykHkk ,o vU; n;k ftUg çR;Fkh dk Hkxrku dju dh vko';drk g bldk Hkxrku bl vkn'k dh çfr dh çkfIr dh frfFk l nk ekg dh vofèk d Hkhrj fd;k tk,xkA***

3. याची माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की प्रति के साथ प्राधिकारियों के पास गयी और दिनांक 18.6.2009 को प्राधिकारियों द्वारा ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन लाभ के प्रदान के दावा

पर विचार किया गया था। दिनांक 18.6.2009 के पत्र द्वारा ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन लाभ के प्रदान को मृतक कर्मचारी को देने का आदेश दिया गया था। किंतु, दिनांक 31.7.2009 के आदेश द्वारा ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन लाभ के प्रदान को वापस लेते हुए वह आदेश वापस ले लिया गया था। इस बीच, दिनांक 16.7.2005 के दोनों आदेशों द्वारा यह आदेश दिया गया था कि मृतक कर्मचारी केवल निलंबन की अवधि के दौरान निर्वाह भत्ता का हकदार रहेगा और उसे ए॰ सी॰ पी॰ योजना का लाभ प्रदान नहीं किया जाएगा। इन आदेशों को चुनौती देते हुए मृतक कर्मचारी की याची पत्नी पुन: इस न्यायालय के पास आयी है।

4. याची के लिए उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि स्वीकृत रूप से याची के मृत पति के विरुद्ध आरंभ की गयी विभागीय कार्यवाही निष्कर्षित नहीं की गयी थी और इसलिए, याची के पति को जारी दिनांक 23.9.1998 का कारण बताओ नोटिस केवल अभिकथन बना रहा और चूँकि, याची के पति के विरुद्ध अभिकथन कभी नहीं सिद्ध किया गया था, प्रत्यर्थी प्राधिकारी द्वारा आक्षेपित आदेशों को पारित नहीं किया जा सकता था। विद्वान अधिवक्ता ने आगे निवेदन किया है कि इस न्यायालय और माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेशों को अनदेखा करके दिनांक 16.7.2005 और दिनांक 31.7.2009 के आक्षेपित आदेशों को पारित किया गया है।

5. उक्त के विरुद्ध, प्रत्यर्थी राज्य के विद्वान अधिवक्ता ने निवेदन किया है कि याची के पति के जीवन काल के दौरान दिनांक 23.9.1998 को कारण बताओ नोटिस जारी किया गया था और चूँकि जाँच के लंबित रहने के दौरान याची के पति की मृत्यु हो गयी, याची के पति के विरुद्ध कार्यवाही निष्कर्षित नहीं की जा सकी थी। किंतु, चूँकि यह पाया गया है कि याची के पति ने 3,79,930.55/- रुपयों का दुर्विनियोग किया था, आक्षेपित आदेशों को पारित किया गया था और याची के पति को ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन लाभ से इनकार किया गया था।

6. स्वीकृत रूप से, याची के पति की मृत्यु सेवारत रहते हो गयी और याची के विरुद्ध विरचित आरोपों को सिद्ध नहीं किया जा सका था, क्योंकि याची के पति की मृत्यु के कारण विभागीय कार्यवाही समाप्त हो गयी थी। पूर्व कार्यवाही में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने झारखंड राज्य द्वारा दाखिल विशेष अनुमति याचिका प्रत्यर्थीगण को याची को सेवानिवृत्ति देयों को निर्मुक्त करने का निर्देश देते हुए खारिज कर दिया। विशेष अनुमति याचिका के लंबित रहने के दौरान यह प्रतीत होता है कि दिनांक 16.7.2005 के दोनों आक्षेपित आदेशों को प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित किया गया था। मैं पाता हूँ कि प्रत्यर्थीगण ने इस न्यायालय के समक्ष अथवा माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष इस तथ्य को प्रकट नहीं किया था। इसके अतिरिक्त, निलंबन की अवधि के दौरान वेतन, भत्ता, आदि से इनकार करने वाले दिनांक 16.7.2005 के आदेश सं॰ 225 में अंतर्विष्ट आक्षेपित आदेश याची को कारण बताओ नोटिस जारी किए बिना पारित किया गया है। मेरा मत है कि झारखंड सेवा संहिता के नियम 97 के उपनियम 3 और उपनियम 4 का सहारा लेने के पहले प्रत्यर्थीगण को कारण बताओ नोटिस जारी करने की आवश्यकता थी जिसे स्वीकृत रूप से इस मामले में जारी नहीं किया गया है। झारखंड सेवा संहिता का नियम 97 मूल नियम 54 का समविषयक है। बिहार सेवा संहिता के नियम 97 को यहाँ नीचे उद्धृत किया जाता है:

> *^^fu;e 97 (1) tc ljdkjh lod ftls c[kkLr fd;k x;k g] gVk;k x;k g vFkok fuyfcr fd;k x;k g] dk iucgky fd;k tkrk g] iucgkyh dk vkn'k nu okyk l{ke çkfèkdkjh dk&*
>
> *(a) dr0; ls mldh vuifLFkfr dh vofèk d fy, ljdkjh lod dk Hkxrku fd, tku okyk oru rFkk HkÙkk d lEcUèk e] rFkk*

(b) D;k mDr vofèk dk dÙk0; ij fcrk;h x;h vofèk ekuh tk,xh ;k ugh d lcèk e fopkj djuk gkxk vkj fofufn"V vkn'k ikfjr djuk gkxkA

(2) tgk mifu;e (1) e mfYyf[kr çkfèkdkjh dk er g fd ljdkjh lod dk i.kr% foeDr dj fn;k x;k g] vFkok fuycu dh fLFkfr e] fd ;g i.kr% vU;k;kfpr Fkk] ljdkjh lod dk ijk oru vkj HkÙkk ft ldk og gdnkj gkrk ;fn ml ;FkkfLFkfr c[kkLr ugh fd;k tkrk] gVk;k ugh tkrk vFkok fuyfcr ugh fd;k tkrk] nuk gkxkA

(3) vU; ekeyk e ljdkjh lod dk ,l oru vkj HkÙkk dk ,lk vuikr fn;k tk,xk tlk ,lk l{ke çkfèkdkjh fofgr djA

ijUr ;g fd [kM (2) vFkok [kM (3) d vèkhu HkÙkk dk Hkxrku vU; leLr 'krk d vè;èkhu gkxk ft ld vèkhu ,lk HkÙkk xkg; gA

(4) [kM (2) d vèkhu vku oky ekey e dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dk leLr ç;ktu l dr0; ij fcrk;h x;h vofèk d :i e ekuk tk,xkA

(5) [kM (2) d vèkhu vku oky ekey e dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dr0; ij fcrk;h x;h vofèk d :i e ugh ekuh tk,xh tc rd ,lk l{ke çkfèkdkjh fofufn"Vr% fun'k ugh nrk g fd bl fdlh fofufn"V ç;ktu l ,lk ekuk tk,xk%

ijUr ;g fd ;fn ljdkjh lod ,lk pkgrk g ,lk çkfèkdkjh fun'k n ldrk g fd dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dk ljdkjh lod dk n; rFkk xkg; fdlh çdkj d vodk'k e lifjofrr dj fn;k tk,xkA**

ey fu;e 54 fuEufyf[kr g%

^^(1) tc ljdkjh lod ftl c[kkLr fd;k x;k g] gVk;k x;k g vFkok fuyfcr fd;k x;k g] dk iucgky fd;k tkrk g(iucgkyh dk vkn'k nu oky l{ke çkfèkdkjh&

(a) dr0; l mldh vuifLFkfr dh vofèk d fy, ljdkjh lod dk Hkxrku fd, tku oky oru ,o HkÙkk d lEcUèk e(,o

(b) D;k mDr vofèk dÙk0; ij fcrk;h x;h vofèk ekuh tk,xh ;k ugh d lcèk e fopkj djxk vkj fofufn"V vkn'k ikfjr djxkA

(2) tgk mifu;e (1) e mfYyf[kr çkfèkdkjh dk er g fd ljdkjh lod dk i.kr% foeDr dj fn;k x;k g] vFkok fuycu dh fLFkfr e] fd ;g i.kr% vU;k;kfpr Fkk] ljdkjh lod dk ijk oru vkj HkÙkk ft ldk og gdnkj gkrk ;fn ml ;FkkfLFkfr c[kkLr ugh fd;k tkrk] gVk;k ugh tkrk vFkok fuyfcr ugh fd;k tkrk] nuk gkxkA

(3) vU; ekeyk e ljdkjh lod dk ,l oru vkj HkÙkk dk ,lk vuikr fn;k tk,xk tlk ,lk l{ke çkfèkdkjh fofgr djA

ijUr ;g fd [kM (2) vFkok [kM (3) d vèkhu HkÙkk dk Hkxrku vU; leLr 'krk d vè;èkhu gkxk ft ld vèkhu ,lk HkÙkk xkg; gA

ijUr ;g Hkh fd ,l oru ,o HkÙkk dk ,lk vuikr fu;e 53 d vèkhu xkg; fuokg HkÙkk rFkk vU; HkÙkk l de ugh gkxkA

(4) [kM (2) d vèkhu vku oky ekey e dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dk leLr ç;ktu l dr0; ij fcrk;h x;h vofèk d :i e ekuk tk,xkA

(5) [kM (3) d vèkhu vku oky ekey e dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dr0; ij fcrk;h x;h vofèk d :i e ugh ekuh tk,xh tc rd ,lk l{ke çkfèkdkjh fofufn"Vr% fun'k ugh nrk g fd bl fdlh fofufn"V ç;ktu l ,lk ekuk tk,xk%

*ijUr ;g fd ;fn ljdkjh lod ,lk pkgrk g fd ,lk çkfèkdkjh fun'k n fd dr0; l vuifLFkr jgu dh vofèk dk ljdkjh lod dk n; rFkk xkg; fdlh çdkj d vodk'k e lifjofrr dj fn;k tk,xkA***

7. एम॰ गोपालकृष्ण नायडू बनाम मध्य प्रदेश राज्य, AIR 1968 SC 240, मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मूल नियम 54 का परीक्षण करते हुए निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है:–

"6. ;g lR; g fd ,Q0 vkj0 54 d vèkhu vkn'k bl vFk e ikfj.kkfed vkn'k g fd bl iucgkyh d vkn'k d ckn ikfjr fd;k tk,xkA fdr ;g rF; fd ikfj.kkfed vkn'k bl ç'u dk fofuf'pr ugh djrk g fd D;k ljdkjh lod dk dkj.k crku dk volj fn;k tkuk gkxk ;k ughA ;g Hkh lR; g fd ,l ekey e tgk foHkkxh; tkp d ckn iucgkyh dk vkn'k fn;k tkrk g] ljdkjh lod dk lkekU; r% dkj.k crku dk volj gkxkA ,l ekey e] fu%lng çkfèkdkjh d le{k ljdkjh lod }kjk fn, x, Li"Vhdj.k lfgr li.k vfHky[k gkxk ft l l çkfèkdkjh d le{k ekey d leLr rF; vkj ifjfLFkfr;k gkxh vkj ft l l og er fufer dj ldrk g fd D;k ml i.kr% foeDr fd;k x;k Fkk ;k ugh vkj fuycu d ekey e fd D;k ,lk fuycu i.kr% U;k;kfpr Fkk ;k ughA ,l ekey e] oreku ey fu;e t l fu;e d vèkhu ikfjr vkn'k dk foHkkxh; tkp d ckn ikfjr ikfj.kkfed vkn'k dgk tk ldrk gA fdr ekey d rhu ox g] t l k vuPNn 311 e ijUrd }kjk vfèkdfFkr fd;k x;k g] tgk foHkkxh; tkp ugh dh tk,xh vFkkr (a) tgk 0;fDr dk vkpj.k tk nkfMd vkjki ij mldh nk"kflf) dh vkj y x;k g d vkèkkj ij c[kkLr fd;k tkrk g] gVk;k tkrk g vFkok J.kh e ?kVk;k tkrk g] (b) tgk 0;fDr dk c[kkLr dju d fy, vFkok gVku d fy, vFkok J.kh e ?kVku d fy, l'kDr cuk;k x;k çkfèkdkjh fyf[kr e nt fd, tku oky dkj.kk l lr"V g fd ,lh tkp djuk ;fDr;Dr :i l 0;ogkfjd ugh g vkj (c) tgk jk"Vifr vFkok jkT; iky] ;FkkfLFkfr] lr"V g fd jkT; dh lj{kk d fgr e ,lh tkp djuk lehphu ugh gA pfd ekeyk d bu oxk e tkp ugh gkxh] çkfèkdkjh d le{k ljdkjh lod }kjk fn;k x;k Li"Vhdj.k ugh gkxkA ,l ekeyk e çkfèkdkjh dk ek= mu rF;k ij] tk lcfèkr foHkkx }kjk mld le{k çLrr fd, tk ldr Fk] fopkj djuk gkxk vkj vkn'k ikfjr djuk gkxkA ,l ekey e vkn'k ,d i{kh; gkxk D;kfd çkfèkdkjh d le{k fp= dk nljk igy ugh gkxkA ,l ekeyk e vkn'k] ft l ,lk çkfèkdkjh ikfjr djxk] ikfj.kkfed vkn'k ugh gkxk tk ml ekey d foijhr g tgk foHkkxh; tkp dh x;h gA vr%] ey fu;e 54 d vèkhu ikfjr

vkn'k lno ikfj.kkfed vkn'k ugh g vkj u gh , lk vkn'k depkjh d fo#) dh x;h foHkkxh; dk;okgh dh fujrjrk gA

7. ;g lR; g] tlk Jh lu u bfxr fd;k] fd ,Q0 vkj0 54 vfHk0;Dr 'kCnk e ;g vfèkdfFkr ugh djrk g fd çkfèkdkjh dk vkn'k ikfjr dju d igy lcfèkr depkjh dk dkj.k crku dk volj nuk gkxkA fQj Hkh] ç'u ;g g fd D;k fu;e foo{kk }kjk çkfèkdkjh ij ,lk dr0; Mkyrk gA vkn'k fd D;k fn;k x;k ekeyk ey fu;e d [kM 2 vFkok [kM 5 d vèkhu vkrk g] çkfèkdkjh }kjk ekey d leLr rF;k vkj ifjfLFkfr;k ij vkj nk rkfF;d fu"d"kk l mld er fufer dju ij fuHkj djxk(D;k depkjh dk i.kr% foeDr fd;k x;k Fkk vkj fuycu d ekey e D;k ;g ijh rjg vU;;kfpr FkkA bld vfrfjDr] bl fu;e d vèkhu ikfjr vkn'k Li"Vr% ljdkjh lod dk çfrdy :i l çHkkfor djxk ;fn bl [kM 3 vkj 5 d vèkhu ikfjr fd;k x;k gA bl fu;e d vèkhu vufpru] tlk fd ;g ,l rF;k vkj ifjfLFkfr;k ij mudh li.krk e fuHkj djrk g] ,l rF;k vkj ifjfLFkfr;k e igp x, rkfF;d fu"d"k d vkèkkj ij vkn'k ikfjr fd;k tkuk vkj ,l vkn'k dk ljdkjh lod dk dkfjr vkfFkd gkfu e ifj.kr gkuk oLrijd :i l vkj u fd0;fDrijd :i l vfHkfuèkkfjr djuk gkxkA dk; dh çÑfr U;kf;d :i l ÑR; dju dk dr0; foof{kr djrh gA ,l ekey e ;fn çLrkfor dkjokb d fo#) dkj.k crkvk dk volj ugh fn;k tkrk g] tlk LohÑr :i l oreku ekey e ugh fd;k x;k g] vkn'k bl vkèkkj ij voèk d :i e fo[kfMr fd, tku dk nk;h g fd ;g ulfxd U;k; d fl)krk d mYy?ku e gA**

8. रामाश्रय प्रसाद सिंह बनाम बिहार राज्य एवं अन्य, 2000 (3) PLJR 41, में यह अभिनिर्धारित किया गया है कि केवल संबंधित कर्मचारी को कारण बताने का अवसर दिए जाने के बाद ही बिहार सेवा संहिता के नियम 97 के अधीन निलंबन की अवधि के लिए वेतन के निर्बंधित भुगतान का आदेश पारित किया जा सकता है। **श्री महाबीर प्रसाद बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,** 1988 PLJR 82, और **विश्वनाथ मित्रा बनाम बिहार राज्य एवं अन्य,** 2003 (4) PLJR 71, में उच्च न्यायालय द्वारा समरुप दृष्टिकोण अपनाया गया है।

9. मेरा मत यह भी है कि याची के पति की मृत्यु के बाद ए॰ सी॰ पी॰ के लाभ से इनकार करने वाला दिनांक 16.7.2005 के आदेश सं॰ 226 में अंतर्विष्ट आदेश प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित नहीं किया जा सकता था। याची द्वारा आक्षेपित आदेश उपदर्शित करता है कि याची के मृत पति के विरुद्ध दुर्विनियोग का आरोप लगाया गया है और इसलिए केवल अपचारी कर्मचारी ऐसे आरोप का प्रत्युत्तर दे सकता था। किंतु, चूँकि याची के पति की मृत्यु पहले ही दिनांक 8.10.2004 को हो गयी थी, दिनांक 16.7.2005 अथवा दिनांक 31.7.2009 के आक्षेपित आदेशों को प्रत्यर्थीगण द्वारा पारित नहीं किया जा सकता था।

10. पूर्वोक्त की दृष्टि में, आक्षेपित आदेशों को अभिखंडित किया जाता है। प्रत्यर्थीगण को उस अवधि जिसके दौरान याची का पति निलंबित बना रहा के लिए याची के पति को ग्राह्य वेतन, भत्ता आदि को निर्मुक्त करने का निर्देश दिया जाता है। प्रत्यर्थीगण को याची के पति को ए॰ सी॰ पी॰ योजना के अधीन लाभ प्रदान करने का निर्देश भी दिया जाता है। पूर्वोक्त राशि का भुगतान 10% की दर पर वार्षिक ब्याज के साथ याची को किया जाएगा।

11. पूर्वोक्त निबंधनों में इस रिट याचिका को निपटाया जाता है।